

पुस्तक मिलनेका पता—

श्रीजैनग्रंथरत्नाकर कार्यालय

हीरावाग, पो० गिरगांव-धंवाई ।

## प्रस्तावना ।



पाठक महाशय, एक विद्वान्ने कहा है कि—

कोशश्चैव महीपानां कोशश्च विदुषामपि ।  
उपयोगो महानेप क्लेशस्तेन विना भवेत् ॥

अर्थात् जिस प्रकार राजाओंके लिये कोश (सूजाना) आवश्यक है, उसके विना उनका काम नहीं चल सकता है—उन्हे श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकारसे विद्वानोंके लिये कोश (शब्दभांडार) आवश्यक है । कोशके विना विद्वानोंका काम नहीं चल सकता है वे अपने हृदयके भाव दूसरोंपर सुचारुरूपसे प्रगट नहीं कर सकते हैं । इससे आप समझ सकते हैं कि, कोशकी कितनी उपयोगता है ।

संस्कृतका शब्दभांडार यद्यपि अब भी कम नहीं है, तो भी पुरा तत्त्वज्ञ विद्वानोंका अनुमान है कि, वह पूर्व समयमें इससे भी बहुत भा-  
जपा था । संस्कृतका प्रचार धीरे २ कम हो जानेसे और विविध विष-  
यके सैकड़ों ग्रन्थोंके लुप्त हो जानेसे वह बहुत मामूली रह गया है ।

इस समय संस्कृतभाषामें जो शब्दसमूह पाया जाता है, उसके रक्षण और पोषणमें कोश ग्रन्थकारोंने प्रधान सहायता पहुंचाई है और आज जब कि संस्कृत बोलचाल की भाषा नहीं है, इन्हीं कोशकारोंकी वृत्तसे हम संस्कृत ग्रन्थोंका अध्ययन तथा परिशीलन कर सकते हैं ।

संस्कृतमें काव्यसाहित्य अलंकारादि ग्रन्थोंके समान कोश ग्रन्थ भी बहुत हैं । डा० भांडारकर महाशयने अमरकोषकी भूमिकामें कोश ग्रन्थोंकी एक विस्तृत सूची प्रकाशित की है । परन्तु खेद है कि, अभी तक उनमेंसे बहुत ही थोड़े ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं । कई वर्ष पहिले बम्बईके निर्णय-  
सागर प्रेससे एक अल्पसंख्यक नामका श्रेणीज्ञ उपन्यास ग्रंथम हुआ था और उससे आशा हुई थी कि, संस्कृतका कोशसमूह धीरे २ प्रकाशित हो जायगा, परन्तु दुर्भाग्यसे दो ही भाग प्रकाशित हुए, और कोई भाग

प्रकाशित नहीं हुआ और तबसे अब तक इस विषयमें कहींसे कोई प्रयत्न हुआ सुनाई नहीं पडा । हमारी समझमें संस्कृत साहित्यको सुस्पष्ट सुस्पष्ट और विभवशाली बनानेके लिये कोशग्रन्थोंके प्रकाशित होनेकी बहुत बड़ी आवश्यकता है, इसलिये संस्कृत साहित्यके उपासकोंको इस विषयमें फिर प्रयत्न करना चाहिये ।

यह विश्वरोचन वा मुक्तामली कोश उक्त आवश्यकताकी ही यत्किञ्चित् पूर्ति करनेके लिये प्रकाश किया जाता है । इसकी एक प्रति ईडर ( महीकाठा ) के सुप्रसिद्ध सरस्वती भवनसे प्राप्त हुई थी । इसकी उत्तमता और अन्य कोशग्रन्थोंसे जो इसमें विलक्षणता है, उसे देखकर प्रसिद्ध विद्याप्रचारक सेठ रामचन्द्र नाथाजी ( नाथारगजीनाले ) ने इसको प्रकाशित करनेकी इच्छा प्रगट की और साथ ही श्रीयुक्त पं० घनालालजी काशलीवाल, पं० पद्मालालजी वाकलीवाल और नाथूराम प्रेमी आदिकी सम्मतिसे आपने यह भी चाहा कि, इसकी भाषाटीका भी हो जाय, तो भाषा जाननेवालोंको भी इससे लाभ पहुँचे । तदनुसार सेठजीने इस ग्रन्थके सशोधनका तथा भाषाटीकाका कार्य मुझे सौंपा और मैंने अपनी शक्तिके अनुसार इसे सम्पादन करके आपके सम्मुख उपस्थित किया है । जब ईडरकी एक प्रतिसे इसके सशोधनका कार्य न चल सका, नानाप्रकारकी कठिनाइयाँ उपस्थित होने लगीं, तब एक प्रति सरस्वतीभवन आगसे, और दो प्रतियाँ पं० जवाहरलालजी शास्त्रीके द्वारा जयपुरके विन्हीं दो भहारोंसे मगाई गईं । इस तरह इन चार प्रतियोंसे इस ग्रन्थका सम्पादन किया गया है । इनमें जयपुरकी एक प्रति औरोंकी अपेक्षा विशेष शुद्ध थी । इसके सशोधन कार्यमें मुझे जो परिश्रम पडा है, उसका अनुभव वे पाठक अच्छी तरहसे कर सकेंगे, जो इसको प्यानपूर्वक देखेंगे और इस बातसे परिचित होंगे कि, एक अप्रकाशित अपरिचित ग्रन्थका सम्पादन करना और ऐसे प्रतियोंपरसे जो कि बहुत ही अशुद्ध हों, कितना कठिन कार्य है । मैं यह स्वीकार करता हूँ कि, मेरी बुद्धिके प्रमादसे अब भी इसमें बहुतसी अशुद्धियाँ रह गई होंगी और

उनके लिये मैं पाठकोंसे क्षेमा भी चाहता हूँ, तो भी इतना कहे बिना नहीं रहूँगा कि, मैंने इसमें परिश्रम करनेमें कमी नहीं की है। -

इस ग्रन्थके रचयिता श्रीधरसेन नामके जैन विद्वान् हैं। इनके गुरुका नाम श्रीमुनिसेन था, जो कि सेनसंघके आचार्य थे और बड़े भारी कवि तथा नैयायिक थे। दिगम्बर सम्प्रदायके मुनियोंके जो चार संघ हैं, सेन उनमेंसे एक है। श्रीधरसेन नानाशास्त्रोंके पारगामी विद्वान् थे और बड़े २ राजा लोग उनपर श्रद्धा रखते थे। वे काव्यशास्त्रके मर्मज्ञ तथा कवि भी थे। उन्होंने नाना कवियोंके रचे हुए कोशोंसे तथा ग्रन्थोंसे संग्रह करके इस यथार्थतया विश्वलोचन कोशकी रचना की है। इन सब बातोंका परिचय इस कोशकी प्रशस्तिके निम्न लिखित श्लोकोंसे मिलता है:-

सेनान्वये सकलसत्त्वसमर्पितश्रीः  
 श्रीमानजायत कविर्मुनिसेननामा ।  
 आन्वीक्षिकी सकलशास्त्रमयी च विद्या  
 यस्यास चादपदवी न दवीयसी स्यात् ॥ १ ॥  
 तस्मादभूदखिलवाङ्मयपारहृश्व  
 विश्वासपात्रमवनीतलनायकानाम् ।  
 श्रीश्रीधरः सकलसत्कविगुम्फितत्त्व-  
 पीयूषपानकृतनिर्जरभारतीकः ॥ २ ॥  
 तस्यातिशायिनि कवेः पथि जागरूक-  
 धीलोचनस्य गुरुशासनलोचनस्य ।  
 नानाकवीन्द्ररचितानभिधानकोशा-  
 नाकृष्य लोचनमिवायमदीपि कोशः ॥ ३ ॥  
 साहित्यकर्मकवितागमजागरूकै-  
 रालोकितः पदविदां च पुरे निवासी ।

वर्त्मन्यधीत्य मिलितः प्रतिभान्वितानां  
चेदस्ति दुर्जनवचो रहितं तदानीम् ॥ ४ ॥

यत्नो मयायमनपायमशेषविद्या  
विद्याधरीपरिवृढस्य मतौ नियोक्तुम् ।  
त्यक्त्वा पुनर्विमलकौस्तुभरत्नमन्यो  
लक्ष्मीविनोदरसिको रसिकोस्ति धन्यः ॥ ५ ॥

नागेन्द्रसंग्रथितकोशसमुद्रमध्ये  
नानाकवीन्द्रमुखशुक्तिसमुद्रवेयम् ।  
विद्वद्गहादभरनिर्मितपट्टसूत्रे  
मुक्तावली विरचिता हृदि संनिधातुम् ॥ ६ ॥

वीतरागस्य सुरभेर्यशःकुसुमशालिनः ।  
श्रितोस्मि चरणस्थानं यः पुंनागत्वमागतः ॥ ७ ॥

श्रीधरसेनाचार्य किस समयमें हुए हैं, इस बातका पता न तो इस प्रशस्तिसे लगता है और न किसी अन्य ग्रन्थसे । हमने इस विषयमें जो सामान्य प्रयत्न किया था, उसमें हमें सफलता प्राप्त नहीं हुई । परन्तु यदि कोई ऐतिहासिक पंडित इन महानुभाव कोशकारका समयनिर्णय करनेका तथा इनके अन्यान्य ग्रन्थोंके पता लगानेका परिश्रम उठावेंगे, तो उन्हें अवश्य सफलता होगी ।

‘ दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्ता और उनके ग्रन्थ ’ नामक पुस्तकसे मात्स्य होता है कि, जैनियोंमें श्रीधर, श्रीधरसेन आदि नामके कई विद्वान् हो गये हैं और उनके बनाये हुए श्रुतावतार, भविष्यदत्तचरित्र, नागकुमार कथा आदि कई ग्रन्थ हैं, परन्तु उक्त ग्रन्थोंके देखे बिना यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि, वे इन श्रीधरसेनसे पृथक् हैं अथवा यही हैं ।

यह नानार्थकोश है । संस्कृतमें कई नानार्थकोश हैं, परन्तु जहां तक हम जानते हैं, कोई भी इतना बड़ा और इतने अधिक अर्थोंको बतलानेवाला नहीं है । इसमें एक २ शब्दको जितने अर्थोंका वाचक बतलाया है, दूसरोंमें इससे प्रायः कम ही बतलाया है । उदाहरणके लिये एक 'रुचक' शब्दको ही लीजिये । जहां अमरमें चार, मेदिनीमें दश इसके अर्थ बतलाये हैं, तहां इसमें १२ अर्थ बतलाये हैं । यही इस कोशमें विशेषता है ।

यथा—

एरण्ड उरुवूकश्च रुचकश्चित्रकश्च सः ।

अमरकोश द्वितीयकाण्ड वनौषधिवर्ग श्लोकांक ५१.

फलपूरो धीजपूरो रुचको मातुलङ्गके ।

• अमरकोश द्वितीयकाण्ड वनौषधिवर्ग श्लोकांक ७८.

सौवर्चलेक्षरुचके । अमरकोश द्वितीयकाण्ड वैश्यवर्ग श्लोकांक ४३.

सौवर्चलं स्याद्रुचकम् । अमरकोश द्वितीयकाण्ड वैश्यवर्ग श्लोकांक १०९.

रुचको धीजपूरे च निष्के दन्तकपोतयोः ।

न द्वयोः सर्जिकाक्षारे पश्चाभरणमाल्ययोः ।

सौवर्चलेऽपि माद्गल्यद्रव्ये चाप्युत्कटेऽपि च ।

मेदिनीकोश कत्रिक श्लोकांक १४६-१४७.

रुचकं मातुलङ्गव्ये दन्ते सौवर्चले स्रजि ।

उत्कटे चाश्वभूपायां विडङ्गे कण्ठभूषणे ॥

धीजपूरेऽपि दीनारे रोचनादेववृक्षयोः ।

विश्वलोचनकोश कर्तृतीय श्लोकांक १४६-४७.

आशा है कि, विद्वज्जन निष्पक्षदृष्टिसे इस ग्रन्थके महत्त्वको समझकर लाम उठावेंगे और इसके प्रचार करनेका प्रयत्न कर मेरे और प्रकाशक-महाशयके परिश्रम तथा अर्थव्ययको सफल करेंगे। अलमतिविस्तरेण प्राज्ञेषु ।

धम्बई  
ता० १५ मई १९१२. }

नन्दलाल शर्मा ।



श्रीपरमात्मने नमः ।

कविपण्डित-श्रीश्रीधरसेन-विरचितः

विश्वलोचनकोशः ।

( मुक्तावली )



मंगलाचरणम् ।

जयति भगवानास्तां धर्मः प्रसीदतु भारती  
वहतु जगती प्रेमोद्धारं तरन्त्वशुभं जनाः ।  
अयमपि मम श्रेयान्गुम्फस्तनोतु मनोमुदं  
किमधिकमितस्त्यक्तावेगा भवन्तु विपश्चितः ॥ १ ॥

परिभाषा ।

स्वरकादिक्रमादादिनिर्णीतोऽन्तश्च कादिमिः ।  
द्वितीयेऽप्यत्र वर्णेऽपि नियमः काद्यनुक्रमात् ॥ २ ॥

ग्रन्थकर्ताका मंगलाचरण ।

भगवान् जिनेन्द्रदेव जयवन्त वर्तते हैं, धर्म स्थित रहे, सरस्वती प्रसन्न हो, पृथ्वी प्रसन्नताको धारण करे, जन अशुभ ( पाप ) रहित हों, और वह मेरा प्रबंध सबको आनंद देनेवाला हो, और यहा अहित कदा कहीं विद्वान् वेदोंके त्यागनेवाले अर्थात् निराकुल हों ॥ १ ॥



अथ कान्तवर्गः ।

कैकम् ।

को ब्रह्मानिलसूर्याग्निमात्मघोतवर्हिषु ।

कं सुखे वारि शीर्षे च कुः शब्दे ना मुवि स्त्रियाम् ॥ ३ ॥

कद्वितीयम् ।

अकं दुःखाघयोरङ्गो रेखायां चिह्नलक्ष्मणोः ।

नाटकादिपरिच्छेदोत्सङ्गयोरपि रूपके ॥ ४ ॥

चित्रयुद्धेऽन्तिके मन्तौ स्थानभूषणयोरपि ।

अर्कः सूर्येऽर्कपणेऽपि शक्रे स्फटिकताम्रयोः ॥ ५ ॥

एकस्तु स्यात्त्रिषु श्रेष्ठे केवलेतरयोरपि ।

कंकः खगे लोहपृष्ठे कृतान्ते कपटद्विजे ॥ ६ ॥

परिभाषार्थः ।

इस ग्रन्थमें स्वर वर्ण और ककार आदि वर्णके क्रमसे आदि (शब्दोंकी आदि) निर्णय की गई है और अत भी ककार आदिसे निर्णय किया गया है जैसे कि—“को ब्रह्माऽनिलसूर्याग्नि—” और दूसरे वर्णविषय भी ककार आदिके क्रमका नियम किया गया है जैसे कि—“अक दु खाऽघयोरङ्गो रेखायां चिह्नलक्ष्मणोः” ॥२॥

कैक ।

क—ब्रह्मा, वायु, सूर्य, अग्नि, धर्मराज,  
आत्मा, प्रकाश, मयूरपक्षी (पुलिंग)

क—सुख, जल, मस्तक, ( नपुंसक )

कु—शब्द, ( पुं० ) कु—पृथ्वी,  
( स्त्रीलिङ्ग ) ॥ ३ ॥

कद्वितीय ।

अक—दुःख, पाप, ( न० ) ॥ ४ ॥

अकं—रेखा, चिह्न, लक्षण, नाटक

आदि ग्रंथका विभ्रामस्थल, गोद,  
रूपक, सङ्ख्या, चित्रयुद्ध, समीप,  
अपराध, स्थान, भूषण, ( पुं० )

अर्क—सूर्य, आकका पत्ता, इंद्र, स्फटि-  
कमणि, तावा, ( पुं० ) ॥ ५ ॥

एक—श्रेष्ठ, केवल ( अद्वितीय ),  
इतर ( दूसरा ), ( त्रिलिङ्गी )

कंक—वाकविशेष, धर्मराज, कपट-  
से बना हुआ माहाजन, ( पुं० ) ॥६॥

कर्कः कर्केतने घहौ श्वेताश्वे मुकुरे घटे ।  
 कल्कोऽस्त्री पापविद्रुकिट्टदोपदम्भविभीतके ॥ ७ ॥  
 पापाश्रयेऽपि काकस्तु वायसे पीठसर्पिणि ।  
 शिरोवक्षालने घृष्टे मानद्वीपद्रुमान्तरे ॥ ८ ॥  
 काका स्यात्काकजंघायां काकोलीकाकनासयोः ।  
 काकमाचीकाकतुण्डीमलपूरक्तिकासु च ॥ ९ ॥  
 काकं काकसमूहे स्यात्स्त्रीणां च रतबन्धने ।  
 किष्कुर्वितस्तौ हस्ते च प्रकोष्ठे कुत्सिते पुमान् ॥ १० ॥  
 कोकश्चक्रे वृके ज्यैष्ठ्यां सर्जूरीभेकविष्णुषु ।  
 छेकस्तु गृहसंसक्तविश्वस्तमृगपक्षिणोः ॥ ११ ॥  
 नागरे त्रिषु वक्रे च टङ्कोऽस्त्री ग्रावदारणे ।  
 टङ्कणे ग्रावभित्तौ च मानभेदाऽभिधानयोः ॥ १२ ॥

कर्क-रत्नविशेष, अग्नि, श्वेतअश्व, दंपण, घट, ( पुं० )

कल्क-पाप, विघ्ना, किट्ट (खलीआदि) दोष, दंभ, घहेडा ॥ ७ ॥ पापी, ( पुं० न० )

काक-काक, पीठसर्पिन् (खंजता लंगडा) शिरका घोना, घृष्टपुरुष, प्रमाण (तोळ), द्वीप, वृक्षविशेष (पुं०) ॥ ८ ॥

काका-गुंजावृक्ष, काकोली, विकंटक-वृक्ष, मकोय, काकादनी, कट्टमरवृक्ष गुजा, ( स्त्री० ) ॥ ९ ॥

काक-काकसमूह, स्त्रियोंका रतबंधन, ( न० )

किष्कु-वालित्प्रमाण, हस्तप्रमाण, पहुँचा, निन्दित, (पुं०) ॥ १० ॥

कोक-चकवा, भेडिया, मुलहटी, राजूरवृक्ष, मँढक, विष्णु, ( पुं० )

छेक-परमें पालाहुआ मृग, और पक्षी, ( पुं० ) ॥ ११ ॥

नागरमें होनेवाला विद्रुध पुरुष, टेढा पुरुषआदि, ( त्रि० ) ।

टंक-पत्थरको फोडनेवाला औजार, मुहागा, पत्थरकी भीत, प्रमाण तोळविशेष, नाम ॥ १२ ॥

कपित्थान्तरजङ्घाऽसिकोपकोपखनित्रके ।

तर्कः काङ्गावितर्कैर्हे कर्मशास्त्रमभेदयोः ॥ १३ ॥

तोकं त्वपत्ये पुत्रे च तौका दुहितरि स्त्रियाम् ।

त्रिका कूपस्य नेमौ स्वात्रिकं पृष्ठधरे त्रये ॥ १४ ॥

द्विकः स्वाच्चक्रवाकेऽपि नाङ्गे काकेऽपि संमतः ।

नाकुः पुंसि मुनेर्भेदे नाकुर्वल्मीकशैलयोः ॥ १५ ॥

नाकः स्वर्गेऽन्तरिक्षे च निष्कोऽस्त्री हेमकर्षयोः ।

अष्टाधिकस्वर्णशते वक्षोऽलङ्करणे पले ॥ १६ ॥

हेमः पलेऽपि दीनारे न्यङ्कुर्क्षपे मुनौ मृगे ।

पङ्कोऽस्त्री कर्दमे पापे पाकस्तु पवने शिशौ ॥ १७ ॥

पाको जरापरीपाके स्यात्पदादौ क्लेदनिष्ठयोः ।

घकः कङ्के शिवमह्यां रक्षोभेदकुबेरयोः ॥ १८ ॥

नीला कैयट्ट, ( पु० न० ) पिङ्गुली,  
( स्त्री० ) खज्ज, खजाना, खोद-  
नेका औजार, ( पु० न० ) ।

तर्क-दृच्छा, विशेषतर्ककरना, खंडन-  
मंडन, कर्म, न्यायशास्त्र, ( पुं० ) ॥ १३ ॥

तोक-सतानमात्र, पुत्र, ( न० )  
तौका पुत्री ( स्त्री० )

त्रिका-त्रैका चाक, ( स्त्री० ) पीठमें  
नीचेका अस्थि, ३ सत्या ( न० ) १४

द्विक-चक्रवा, २ सत्या, काकपक्षी, ( पुं० )  
नाकु-मुनिविशेष, सर्पकी बाँबी, पर्वत,  
( पु० ) ॥ १५ ॥

नाक-स्वर्ग, आकाश, ( पु० )  
निष्क-मुवर्ण, दोतोले परिमाण,

एकसौ आठ स्वर्ण ( दोसौ सोलह  
तोलापरिमाण ) मुवर्णका सिका, हृद-  
यका आभूषण, चारतोलापरिमाण  
( पु० न० ) ॥ १६ ॥

न्यङ्कु-मत्स्यविशेष, एकमुनि, मृग,  
( पु० )

पङ्क-कीच, पाप, ( पु० न० )

पाक-वायु, शिशु ( बालक ) ॥ १७ ॥  
वृक्षपना, बरतनमें अमकी खुरचन,  
स्थिति, ( पुं० ) ।

घक-नाकविशेष पक्षी, गूसा-आँसप,  
घकनामक राक्षस, कुबेर, ( पु० )  
॥ १८ ॥

वङ्कस्तु पुंसि नद्यादिभङ्गपर्याणभागयोः ।  
 भङ्गुरे वाच्यवद्वङ्को बल्कं बल्कलखण्डयोः ॥ १९ ॥  
 भूकश्चिद्रेऽवकाशे च भेको मण्डूकमेघयोः ।  
 मुष्कोऽण्डकोशे वृन्दे च मुष्को मोक्षकशाखिनि ॥ २० ॥  
 मूकस्त्ववाब्मतो दीने रङ्कः कृपणमन्दयोः ।  
 अथ राका दृष्टरज कन्यायां सरिदन्तरे ॥ २१ ॥  
 पूर्णेन्दुपूर्णिमायां च कच्छूरोगेऽपि दृश्यते ।  
 रेको विरेके शङ्कायामधमे त्वभिधेयवत् ॥ २२ ॥  
 रोकं दत्त्वा क्रये रन्ध्रे नावि रोकस्तु रोचिपि ।  
 लङ्का रक्ष पुरे शाखाकुलटाशाकिनीष्वपि ॥ २३ ॥  
 लोको जनेऽपि भुवने स्यादवात्तु विलोकने ।  
 शङ्कुः कीले शिवे सङ्घ्यायादोऽस्त्रभिदि किल्बिषे ॥ २४ ॥

बङ्क—नदीआदिका बाकापना, अश्वके  
 जीनका भाग, ( पु० ) नष्टहोने  
 वालीवस्तु ( त्रि० )

बल्क—वृषका छिलका, टुकडा ( न० )  
 ॥ १९ ॥

भूक—छिद्र, पोल, ( पु० )

भेक—भेङ्क, मेघ, ( पु० )

मुष्क—अण्डकोश, समूह, मोर  
 ( कठपाडर ) वृक्ष ( पु० ) ॥ २० ॥

मूक—गूंगा, दीन, ( पु० )

रङ्क—कृपण, मन्द, ( पु० )

राका—रजखला कन्या, नदीका मध्य-  
 भाग, ॥ २१ ॥

पूर्णचद्रमावाली पूर्णिमा, खजू रोग,  
 ( स्त्री० )

रेक—दस्तलग्ना, शंका, ( पु० )  
 नीच ( त्रि० ) ॥ २२ ॥

रोक—द्रव्यदेकर खरीदना, छिद्र, नौका  
 ( न० ) दीप्ति प्रकाश ( पु० )

लङ्का—राक्षसपुरी, वृक्षशाखा, कुलटा  
 स्त्री, शाकिनी, ( स्त्री० ) ॥ २३ ॥

लोक—जन, भुवन, अवलोक-  
 देशना ( पु० ) ।

शङ्कु—याष्ट्रआदिका बीला, महादेव,  
 एक गिन्ती, जलजन्तु, अस्त्रविशेष,  
 पाप, ( पु० ) ॥ २४ ॥

शङ्का त्रासे वितर्के च शल्कं शकलबल्कयोः ।  
 चूर्णे शाकस्तु शक्तौ स्याद्दृक्षद्वीपनृपान्तरे ॥ २५ ॥  
 शाकं हरितके क्लीबे पत्रपुष्पफलादिके ।  
 शुकः कीरे व्यासपुत्रे रावणस्थ च मन्त्रिणि ॥ २६ ॥  
 शुकं तु ग्रन्थिपर्णे स्याच्छिरीपे शोणकेऽपि च ।  
 शुल्कं घट्टादिदेयेऽस्त्री जामातुरपि वन्धके ॥ २७ ॥  
 शूकः स्यादनुकम्पाया शूकः शुक्लेऽपि पुंस्ययम् ।  
 शोकः स्याच्छुभसङ्घाते स्त्रीणा च करणान्तरे ॥ २८ ॥  
 श्लोको यद्गसि पद्ये स्यादुपहास्य उपात्परः ।  
 सूको वातोत्पलशरे स्तोकः स्याद्घातकाल्पयोः ॥ २९ ॥

चतुर्थीयम् ।

अणुको निपुणेऽल्पेऽस्त्री त्वनीकं रणसैन्ययोः ।

अनूकं शीलकुलयोरनूकं गतजन्मनि ॥ ३० ॥

शंका-त्रास, विशेषतर्क, ( स्त्री० )  
 शल्क-टुकसा, वृक्षका छिलका, चूना,  
 ( न० )

शाक-शक्ति, एकप्रकारका वृक्ष, एक  
 द्वीप, एक राजा, ( पु० ) ॥ २५ ॥

हरितशाक, पत्र, पुष्प, फल आदि ( न० )

शुक-सूवा पक्षी, व्यासपुत्र, रावणका  
 मन्त्री, ( पु० ) ॥ २६ ॥

शुक-गठिवन नामक वृक्ष, सिरस  
 वृक्ष, सोनापाठा-वृक्ष ( न० )

शुल्क-घाटआदिपर देनेका कर, जामा  
 ताको देनेका दायजा ( न० ) ॥ २७ ॥

शूक-रया, षडकावृक्ष, ( पु० ) ।

शोक किसीवस्तुकी हानिआदिसे दुःख,  
 खियोंके चित्तका व्यापार विशेष २८  
 श्लोक-यश, छन्दोबद्धकविता, और  
 उपउपसंगसेपरे उपश्लोक-उप  
 हास अर्थात् टट्टा ( पु० )

शूक-वायु, कमल, बाण, ( पुं० )

स्तोक-पपीहा-पक्षी, ( पु० ) अल्प  
 ( नि० ) ॥ २९ ॥

चतुर्थीय ।

अणुक-निपुण, अल्प, ( पु०न० )

अनीक-रण, सेना, ( न० )

अनूक-शील, कुल, पदीतहुवा जन्म  
 ( न० ) ॥ ३० ॥

अन्तिकं निकटे चुल्ल्यामन्तिका शातलौषधौ ।  
 नाट्योक्तौ चांतिका ज्येष्ठमगिन्यां परिकीर्तिता ॥ ३१ ॥  
 अन्धिका कैतवे सिद्धे शर्वर्यामन्धयोषिति ।  
 अभीको निर्भयकूरकविकामिपु वाच्यवत् ॥ ३२ ॥  
 अम्बिका पार्वती पाण्डुजननीजननीष्वपि ।  
 तिन्तिडीकाचुक्रिकयोरम्लोद्गारेपि चाऽम्लिका ॥ ३३ ॥  
 अर्भकस्तु मतो डिम्भे मूर्खे ऋणे कृशेपि च ।  
 कुबेरस्यालका पुर्यामलकश्चूर्णकुन्तले ॥ ३४ ॥  
 अलर्को घवलार्के स्याद्योगोन्मत्तककुक्षुरे ।  
 अलीकं त्रिदिवे क्लीबं मिथ्यायामाप्रिये त्रिपु ॥ ३५ ॥  
 अशोको वञ्जले माने द्रुमेऽशोकं तु पारदे ।  
 अशोका कटुरोहिण्यां शोकशून्ये तु वाच्यवत् ॥ ३६ ॥

अन्तिक (का)—समीप, चूल्हा, ( न० ) धूररक्षका भेद, नाट्यमं, बडी बहन ( स्त्री० ) ॥ ३१ ॥	अलका—कुबेरकी पुरी, ( स्त्री० ) अलक—डेढे केश-जुल्फें ( पुं० ) ॥ ३४ ॥
अन्धिका—कपट, सिद्ध, रात्रि, अन्धी स्त्री, ( स्त्री० )	अलर्क—सफेद आकका वृक्ष, प्रयोगसे किया वावला कुत्ता, ( पुं० )
अभीक—भयरहित, कूर, कवि, कामी- पुरुष ( त्रि० ) ॥ ३२ ॥	अलीक—स्वर्ग, ( न० ) असत्य, लंबार्इ, अप्रिय, ( त्रि० ) ॥ ३५ ॥
अम्बिका—पार्वती, पाण्डुराजाकी माता, माता, ( स्त्री० )	अशोक—अशोक-वृक्ष, परिमाणभेद, तिनिश ( त्रिवस ) वृक्ष, ( पुं० ) पारा ( न० )
अम्लिका—अमली, चूका शाक, लट्टी डकार, ( स्त्री० ) ॥ ३३ ॥	अशोका—कटुरोहिणी, ( स्त्री० ) शोकरहित ( त्रि० ) ॥ ३६ ॥
अर्भक—बालक, मूर्ख, गर्भ, दुबला, ( पुं० )	

आढको मानभेदेऽस्त्री तुवर्यामाढकी स्मृता ।  
 आतङ्को रोगसन्तापशङ्कासु मुरजध्वनौ ॥ ३७ ॥  
 आनकः पटहे भेर्या मृदङ्गे ध्वनदम्बुदे ।  
 आलोको दर्शनेऽपि स्यादुद्योते वंदिभाषणे ॥ ३८ ॥  
 आह्निकं दिननिर्वर्त्ये भोजने नित्यकर्मणि ।  
 इक्ष्वाकुः कडुतुव्या स्त्री सूर्यान्वयनृपे पुमान् ॥ ३९ ॥  
 उदर्क एष्यत्कालीयफले मदनकण्टके ।  
 उलूकः पेचके शक्रे कुरुयोधेऽपि सम्मतः ॥ ४० ॥  
 उष्णकम्त्वातुरे तप्ते क्षिप्रकारिनिदाघयोः ।  
 उष्ट्रिका मृत्तिकाभाण्डभेदे करभयोपिति ॥ ४१ ॥  
 ऊर्मिका त्वङ्गुलीये स्यात्तरङ्गे मधुपध्वनौ ।  
 ऊर्मिका वल्लभङ्गेऽपि तथोद्वाहुलकेऽपि च ॥ ४२ ॥

आढक—२५६ तोलेका परिमाण, (पु०)  
 आढकी—अरहर ( स्त्री० ) ।  
 आतङ्क—रोग, सन्ताप, शका, मृद-  
 गका शब्द ( पु० ) ॥ ३७ ॥  
 आनक—डोल, भेरी, मृदङ्ग, गर्जता-  
 हुवा भेष ( पु० )  
 आलोक—दर्शन, देखना, प्रकाश,  
 वदिजनोक्तरके विरद कहना, (पु०)  
 ॥ ३८ ॥  
 आह्निक—दिनभरका किया कर्म,  
 भोजन, नित्यकर्म, ( न० )  
 इक्ष्वाकु—कडवी मूँची, ( स्त्री ) सूर्य

वंशमें होनेवाला एकराजा  
 ( पुं० ) ॥ ३९ ॥  
 उदर्क—अगाडी होनेवाला फल, औं-  
 पधि विशेष, ( पुं० )  
 उलूक—उलू पक्षी, इन्द्र, कुरुदलमे  
 होनेवाला एक योधा ( पुं० ) ॥ ४० ॥  
 उष्णक—भातुर, तप्तहुवा, शीघ्रता  
 करनेवाला, शीघ्र ऋतु, ( पुं० )  
 उष्ट्रिका—मृत्तिकापात्रविशेष, ऊँटनी,  
 ( स्त्री० ) ॥ ४१ ॥  
 ऊर्मिका—अंगूठी, तरंग, भौंरोंका शब्द,  
 वल्लभङ्ग, वल्लरचनाविशेष, मुजा  
 उठानेवाला, ( स्त्री ) ॥ ४२ ॥

अंशुकं सूक्ष्मवसने वस्त्रमात्रोत्तरीययोः ।  
 कञ्चुकः कवचे वाणवारे निर्मोकिचोलके ॥ ४३ ॥  
 हर्षादात्ताङ्गवस्त्रे च कञ्चुकी त्वौपधान्तरे ।  
 कटकोष्ठी राजधान्यां सानौ सेनानितम्बयोः ॥ ४४ ॥  
 धलये सिन्धुलवणे दन्तिदन्तविभूषणे ।  
 कटुकं कटुरोहिण्यां व्योषेऽपि कटुमात्रके ॥ ४५ ॥  
 कटाकुस्तु दुराधर्षे दुःशीले ना विलेशये ।  
 गोधूमचूर्णे कणिकः स्त्रियां सूक्ष्माऽग्निमन्थयोः ॥ ४६ ॥  
 कण्टकोऽस्त्री द्रुमाङ्गेऽथ दूषके कर्णिदूषके ।  
 रोमाञ्चे क्षुद्रशत्रौ च भारौ मीनादिकीकसे ॥ ४७ ॥  
 कनकं हेम्नि धतूरे चम्पके नागकेसरे ।  
 किंशुके काञ्चनारे च कालीयेऽपि कचिन्मतः ॥ ४८ ॥

अंशुक-बारीक वस्त्र, डुपडा, ( न० )	वस्त्रमात्र,	कुटाकु-तेजस्वी, दुःशील, सर्प, (पुं०)
कञ्चुक-कवच, वाणोंकीं निवारणकरने- वाला द्रव्य, सर्पकी कांचली, अंग- रखा ( बंध ) की हर्षसे प्राप्तहुए वस्त्रवाला, ( पुं० ) ॥ ४३ ॥		कणिक-गेहूँका आटा, ( पुं० ) सूक्ष्म- मान, अरणी ( अगेथू ) वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ४६ ॥
कञ्चुकि-न् औषधिविशेष ( पुं० ) ४४		कण्टक-वृक्षका कांटा, दूषक पुष्प, कर्णिदूषक रोग, रोमांच, तुच्छ शत्रु, भारीरोग, मच्छी आदिनी हठी, ( न० ) ॥ ४७ ॥
कटक-राजधानी, पर्वतशिखर, सेना, नितम्ब ( चूतङ्ग ), बंगन, समुद्रन- मक, हायोदौतका आभूषण ( पुं० )		कनक-सुवर्ण, धतूरा, चम्पा, नाग- केसर, केसू पुष्प, कचनार, और यष्टी रोग, यह कहीं कहीं, माना है ( न० ) ॥ ४८ ॥
कटुक-कटुरोहिणी, सूट-भिरच-पी- पल, कडवी ओषधी मात्र ( न० ) ४५		



करकोऽस्त्री करङ्के स्वात्कुण्ड्यां चाय पुमान्स्वगे ।  
 कुसुम्भे दाडिमे हस्ते करका तु घनोपले ॥ ४९ ॥  
 करङ्कः सस्यसन्त्यक्तनालिकेराऽस्थिमस्तके ।  
 कर्णिका कर्णमूपायां गुवाकादिच्छटांशके ॥ ५० ॥  
 फरिहस्ताग्रभागे च करमध्याद्गुलावपि ।  
 नलिनीबीजकोशे च कुट्टिन्यामपि कुत्रचित् ॥ ५१ ॥  
 कलङ्कोऽङ्के कालायसमले दोषाऽपवादयोः ।  
 कावृकः कृकवाकौ स्यात्पीतमस्तककोकयोः ॥ ५२ ॥  
 कामुकः कामिनि ख्यातोऽशोकवृक्षाऽतिमुक्तयोः ।  
 कारकः कर्तारि ज्ञेयः कर्मादौ कारकं मतम् ॥ ५३ ॥  
 कारिका विवृतिश्लोके यातनायां कृतावपि ।  
 नटस्त्रियां नापितादिशिल्पे कर्त्र्या च कारिका ॥ ५४ ॥

करक—नाथेकी खोपरी, बूँडी या  
 कमंडलु, ( पुं० न० ) पक्षिनिशेष,  
 वसुंमा अनार, हाथ, ( पु० )

करका—ओला ( स्त्री० ) ॥ ४९ ॥

करक—कड़व बाँठला, नालीरकी लो  
 हरी, मस्तकनी खोपरी ( पुं० )

कर्णिका—कर्णका आभूषण, गुगरी  
 आदिका टुकडा ॥ ५० ॥

हाथोकीसूँडका अग्रभाग, मध्यमा—  
 अगुली, कुमोदनीका बीजकोश,  
 कुट्टिनी ली ( स्त्री० ) ॥ ५१ ॥

कलङ्क—चिह्न, लोहेका मल, दोष,  
 निन्दा, ( पुं० )

कावृक—मुरगा पक्षी, पीतमस्तक पक्षी  
 ( कावरी ), चकवा पक्षी ( पुं० )  
 ॥ ५२ ॥

कामुक—कामो पुरुष, अशोक वृक्ष,  
 माधवीलता, ( पुं० )

कारक—कुछभी करनेवाला पुरुष, ( पुं० )  
 कर्मआदि कारक ( न० ) ६ ॥ ५३ ॥

कारिका—व्याख्याकरनेवाला—श्लोक,  
 पीडा, वृत्ति, नटकी स्त्री, नाईआ-  
 दिकी कारीगरी, कुछभी करनेवाली  
 स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ५४ ॥

वंशे ना कार्मुकं चापे कर्मशक्ते तु वाच्यवत् ।  
 कालिका चण्डिकायां स्याद्योगिनीभेदकाप्पर्ययोः ॥ ५५ ॥  
 पश्चाद्वातव्यमूल्ये च पटोलकलतान्तरे ।  
 रोमालीधूमरीमांसीकाकीवृश्चिकपत्रके ॥ ५६ ॥  
 घनावलावलं धूमप्रभेदे नवनीरदे ।  
 किम्पाकस्तु महाकालफले मूर्खे च कीचकः ॥ ५७ ॥  
 दैत्येवातध्वनिध्वंसे शुष्कवंशे द्रुमान्तरे ।  
 कीटकः कृमिजातौ स्यान्निष्ठुरेऽपि च कीटकः ॥ ५८ ॥  
 कुलकस्तु कुलश्रेष्ठे वल्मीके काकतिन्दुके ।  
 कुलकं श्लोकसम्बद्धगुच्छकेऽपि पटोलके ॥ ५९ ॥  
 कुलिको नागभेदे स्यात्कुलश्रेष्ठे द्रुमान्तरे ।  
 कुशिकस्तु मुनौ तैलशेषे सर्जे कलिद्रुमे ॥ ६० ॥

कार्मुक-बाँसका वृक्ष, धनुष ( पुं० )  
 कर्ममें समर्थ, ( त्रि० )  
 कालिका-चंडिका देवी, योगिनी  
 विशेष, कालापना ॥ ५५ ॥  
 पीछे दियाजानेवाला वस्तुका मूल्य,  
 परवलकी बैल, रोमावली, एक  
 किप्ररी, जटामांसी-औषधी, कागन  
 पत्ती, बौहूका डंक, ॥ ५६ ॥  
 भेषावली, धूमविशेष, नवीनभेष,  
 ( स्त्री० ),  
 किम्पाक-बडेकालका फल, मूर्ख, ।  
 ( पुं० ) ॥ ५७ ॥

कीचक-दैत्यविशेष, वायुसे उखा-  
 डाहुचा और बाजताहुचा सूखा वांस,  
 वृक्षविशेष, ( पुं० ) ।  
 कीटक-कृमिजाति, कठोर, ( पुं० ) ५८  
 कुलक-कुलमें श्रेष्ठ पुरुष, बाँसी,  
 मकरतँडुवानामक वृक्षविशेष, ( पुं० )  
 श्लोकसंबद्धगुच्छा, परवल, ( न० )  
 ॥ ५९ ॥  
 कुलिक-नागविशेष, कुलमें श्रेष्ठ,  
 वृक्षभेद ( तालमखाना ) ( पुं० )  
 कुशिक-मुनि, तैलकी बँची सलीभादि  
 शालवृक्ष, बहेडावृक्ष, ( पुं० ) ॥ ६० ॥

कुपाकु मर्कटे मानौ बृहद्भानौ पुमास्त्रिपु ।  
 परोचापिन्यापि मतं कूर्चिका सूचिकान्तरे ॥ ६१ ॥  
 तूलिका क्षीरविकृतिकुञ्चिकाकुञ्जलेषु च ।  
 कूपको गुणवृक्षे स्यात्तैलपात्रे कुकुन्दरे ॥ ६२ ॥  
 कूपे जलस्वग्रावादौ स्याच्च तुर्या तु कूपिका ।  
 कूलकः पुसि बल्मीके स्तूपेऽस्त्री कूलकं तटे ॥ ६३ ॥  
 कृपकः कर्पके पुसि फालेऽपि कृपके पुमान् ।  
 पारदारकरकेऽपि नि खेऽपि त्रिपु कञ्चुकः ॥ ६४ ॥  
 कोरकः कुञ्जले न स्त्री षक्कोलकमृणालयो ।  
 कोशाङ्गस्तु करीरे स्यादिक्षौ कीटान्तरेऽपि च ॥ ६५ ॥  
 कौतुकं त्वभिलाषेऽपि कुसुमे नर्महर्षयो ।  
 परम्परासमायाते मङ्गले चातिशायिनि ॥ ६६ ॥

कुपाकु-बन्दर, सूर्य, भ्रमि, (पु०) दमरौद्यो कष्टदेनेवाला (त्रि०)	(पु० न०) नदीआदिका तट (न०) ॥ ६१ ॥
कूर्चिका सूईभेद ॥ ६१ ॥ चिन खेचनेकी कलम, दुग्धविकार(मलाई), चावी, कुञ्जल (कूलकली) (स्त्री०)	कृपक-खेचनेवाला पुरष, खेतीकर नेवाला, हल्की फाल, परस्त्रीमें आसक्त (पु०)
कूपक-नावका सभा, तेलका पात्र (कूप), नितबों (चूतलों) में पहाहुवा खड़ा, कूबों, जलमें स्थित पत्थरआदि, (पु०)	कञ्चुक-द्व्यरहित (त्रि०) ॥ ६४ ॥ कोरक-बिनासिली फूलकी कली, क्कोलक, कमल (पु० न०)
कूपिका-कपसा घुननेका औजार (स्त्री०) ॥ ६२ ॥	कोशाङ्ग-कैरका वृक्ष, ईस, कीटविशेष, (पु०) ॥ ६५ ॥
कूलक-बैवी (पु०) मिठीका समुद्र,	कौतुक-अभिलाषा, पुष्प, टहाके वचन, आनंद, परंपरासे प्राप्तहुवा मंगल, वतिशय ॥ ६६ ॥

विवाहसूत्रे विषयाभोगकाले समुत्सवे ।  
 कौशिको गुग्गुलुद्रुकनकुलेष्वहितुण्डिके ॥ ६७ ॥  
 इन्द्रे च विश्वामित्रे च कोशज्ञे चाथ कौशिकी ।  
 चण्डिकायां नदीभेदे क्रमुको भद्रमुस्तके ॥ ६८ ॥  
 गुवाकपट्टिकालोभ्रकूर्पासप्रसदारुपु ।  
 खट्टिकः सौनिकेऽपि स्वान्माहिपक्षीरफेनके ॥ ६९ ॥  
 खनकश्चित्तत्त्वज्ञे सन्धिवैरेऽवदारके ।  
 मूपके खुल्लकस्तु स्यात्स्वल्पे नीचे कनीयसि ॥ ७० ॥  
 खोलकः पाकवल्मीकपूगकोशे शिरस्त्रके ।  
 गणिका यूथिकावेद्यातर्कारीकरिणीष्वपि ॥ ७१ ॥  
 अग्निमन्थेऽपि गणिका दैवज्ञे गणकः पुमान् ।  
 गण्डकः खङ्गिनि ख्यातः सङ्ख्याविद्याप्रभेदयोः ॥ ७२ ॥

विवाहसूत्र, विषयोंके भोगनेका काल, उत्सव, ( न० )	खनक-चित्तके तत्त्वको जाननेवाला, सन्धि (सुरंग) लगानेवाला चोर, खोदनेका औजार, मूसा, ( पुं० )
कौशिक-गुग्गुलुद्रुक, उडूपक्षी, नीला, संपंपकइनेवाला, ॥ ६७ ॥ इन्द्र, विश्वामित्रऋषि, कोश ( राजाना ) का जाननेवाला ( पुं० )	खुल्लक-स्वल्प, नीचे, बहुतछोटा, ( पु० ) ॥ ७० ॥
कौशिकी-चण्डिका ( देवी ), नदी-भेद, ( स्त्री० )	खोलक-पाक, बॉबी, गुमारीफल, शिरस्त्र, ( पुं० )
क्रमुक-भद्रमोथा-वृक्ष ( पुं० ) ॥ ६८ ॥ गुमारी वृक्ष, लाललोध, साधारण-लोध, त्रिबोकीकमुकी, तूलवृक्ष, ( पुं० )	गणिका-जूही झाड, वेद्या, सांयन-टाहाकल वृक्ष, हयिनी, ॥ ७१ ॥ अरणीवृक्ष, ( स्त्री )
खट्टिक-कसाई, भेंसका दूधके ज्ञाय, ( पुं० ) ॥ ६९ ॥	गणक-ज्योतिषी ( पुं० ) गण्डक-गंडा, सङ्ख्याविद्येय, विद्या-विशेष, ( पुं० ) ॥ ७२ ॥

गृह्यको गोपिते यक्षे गृह्यकरुकेकनिम्नयोः ।  
 नैरिकं धातुभेदे स्याद्धानुमात्रे च काञ्चने ॥ ७३ ॥  
 गोरङ्कुः पक्षिजातौ च नम्रके श्रुतिपाठके ।  
 गोलको मणिके जाराद्विघवातनये गुडे ॥ ७४ ॥  
 ग्रन्थिकस्तु करीरे स्याद्दैवज्ञे गुग्गुलुद्रुमे ।  
 माद्रेयेप्यद्वयोर्ग्रन्थिपर्णीपिप्पलिमूलयोः ॥ ७५ ॥  
 ग्राहको घातिविहगे ग्रहीतरि तु वाच्यवत् ।  
 चटकः कलत्रिकः स्यात्तत्पुत्रीयोपितोः स्त्रियाम् ॥ ७६ ॥  
 चतुष्की मशकहर्ष्या यष्टिकावेश्मभेदयोः ।  
 चुलुकः प्रसृतौ च स्याच्चुलुका भाजनान्तरे ॥ ७७ ॥  
 चपकोऽस्त्री पानपात्रे मधुमद्यप्रभेदयोः ।  
 चारकः पालकेऽश्वदेः स्यात्सञ्चारकबन्धयोः ॥ ७८ ॥

गृह्यक—रसाकियाहुवा, यक्ष-देव-  
 योनि, ( पुं० )  
 गृह्यक—पालाहुवा पक्षीआदि, अधीन  
 पुरुषआदि ( पुं० )  
 नैरिक—धातुभेद ( गेरु ), धातुमात्र,  
 सुवर्ण, ( न० ) ॥ ७३ ॥  
 गोरङ्कु—पक्षिविशेष, मंगापुरुष, बंदी-  
 जनका पटना, ( पुं० )  
 गोलक—गोला, जारसे उत्पन्नहुवा  
 विघवाका पुत्र, शुड, ( पुं० ) ॥ ७४ ॥  
 ग्रन्थिक—नैरङ्कु, ज्योतिषी, गुग्गु-  
 लु, माद्रीका पुत्र, ( पुं० ) ग्रन्थि-  
 पर्णी. ( गंडरद्व ), पीपलामूल,  
 ( न० ) ॥ ७५ ॥

ग्राहक—पक्षी मारनेवाला पक्षी, ( पुं० )  
 सर्प आदिकोंका पकडनेवाला ( त्रि० )  
 चटक—चिडापक्षी, ( पुं० )  
 यष्टिका चिडाकी पुत्री और स्त्री  
 ( स्त्री० ) ॥ ७६ ॥  
 चतुष्की—मसैरी—पलंगपरताननेकी,  
 छडी, एकप्रकारका पत्थर ( स्त्री० )  
 चुलुक—प्रसृति ( पत्तो ) ( पुं० )  
 चुलुका—पात्रविशेष ( स्त्री० ) ॥ ७७ ॥  
 चपक—जलआदिपीनेका पात्र ( प्याला ),  
 दाहद, मदिराभेद, ( पुं० )  
 चारक—घोडा आदिका चरानेवाला,  
 राजाका गुप्तदूत,—सञ्चारकरनेवाला,  
 बन्ध, ( पु० ) ॥ ७८ ॥

चित्रकं तिलके क्लीवं वहिसंज्ञेतु चित्रकः ।

एरण्डे चालवाले च चित्रकः श्वापदान्तरे ॥ ७९ ॥

चीरको विक्रियालेखे शिल्लिकायां तु चीरिका ।

चुम्बकः कामुके धूर्ते बहुविधोपजीवने ॥ ८० ॥

मतः पुंसेव चुलुकः प्रसृते भाजनान्तरे ।

चुलुकी शिशुमारं स्यात्कुण्डीभेदे कुलान्तरे ॥ ८१ ॥

चूतकोऽन्धौ रसाले च कपिपूर्वः कपीतने ।

चूलिका नाटकाङ्गे स्यात्कर्णमूले च हस्तिनाम् ॥ ८२ ॥

जतुकाऽजिनपत्रायां जतुकं हिङ्गुलाक्षयोः ।

जनकः स्नातराजर्षौ जनकः करणान्तरे ॥ ८३ ॥

जम्बुकः फेरवेऽपि स्यान्नीचे पश्चिमदिक्पतौ ।

जालकः कोरके दम्भप्रभेदे जालिनीफले ॥ ८४ ॥

गिरिसारे जलौकायां जालिका विधिवत्स्त्रियाम् ।

भटानामश्मरचिताङ्गरक्षिण्यां च जालिका ॥ ८५ ॥

चित्रक-तिलकविशेष, ( न० ) चीता  
( ओपधि ), अरंडवृक्ष, खैवला,  
चीता ( सिंहभेद ) ( पुं० ) ॥ ७९ ॥

चीरक-विकारलेखन ( पु० )

चीरिका भंभीरी-प्राणी ( स्त्री० )

चुम्बक-कामीपुरुष, धूर्त, बहुविधो  
पजीवी, ( पु० ) ॥ ८० ॥

चुलुक-पस्सो, पात्रविशेष, ( पुं० )

चुलुकी-शिशुमार-जलजन्तु, कुंडी-  
भेद, कुलविशेष ( स्त्री० ) ॥ ८१ ॥

चूतक-बूवा, आम कपि शब्दसे परे  
कपिचूतक-अँवाडा ( पु० )

चूलिका-नाटकका एक अंग, ह-

स्त्रियोंका कर्णमूल ( स्त्री० ) ॥ ८२ ॥

जतुका-चमगोदड पक्षी ( बाघल ),  
( स्त्री० )

जतुक-हिंग, लाल, ( न० )

जनक-ज्ञानक्रियापुरुष, एकराजा,  
वरण, ( पुं० ) ॥ ८३ ॥

जम्बुक-भीदड, नींबुपुष्प, बरुन,  
( पुं० )

जालक-पुष्पकी विनाखिर्डीहुई कली,  
दम्भविशेष, छोटी तोरईके बीज,

॥ ८४ ॥ लोहा या रँग, जोक, ( पुं० )

जालिका-पथरकी बनाईहुई जोधा-  
ओधी अंगरक्षिणी, ( स्त्री० ) ॥ ८५ ॥

जाहको घोड्मार्जारखजाकातुण्डिकायु च ।

जीवको वृक्षभेदे स्यात्माणकेऽप्यहितुण्डिके ॥ ८६ ॥

पीतशाले क्षणके वृद्धिजीविनि सेवके ।

जीविकामाहुराजीवे जीवन्त्यामपि जीविका ॥ ८७ ॥

झिह्वीका झिह्विकाऽप्येव विलेपनमले स्मृत ।

चीरिकायामपि भवेदातपस्य च रोचिषि ॥ ८८ ॥

दुच्छको गन्धकुट्या स्याद्यवहाराऽभ्यवकाशके ।

दुण्डुकः शोणकेऽल्पे च क्रूरके त्वभिधेयवत् ॥ ८९ ॥

डिण्डिको नम्रके दार्ये स्त्रीचोरे तु रतात्परः ।

डिम्बिका जलविम्बे स्यात्कोणके कामुकस्त्रियाम् ॥ ९० ॥

तण्डकोऽस्त्री तरुस्कन्धे समासप्रायवाचिके ।

गृहदारौ पुमास्तु स्या त्फेनखजनमायिषु ॥ ९१ ॥

जाहक—घोस (जाहा), मार्जार, (पु०)  
कडली, कन्दूरी—औषधि, ( स्त्री )

जीवक—जीवक—वृक्ष, निवानेवाला,  
सर्प पकड़नेवाला, ( पु० ) ॥ ८६ ॥  
पीला सालका वृक्ष, जैनमुनि, बड़ी  
आयुवाला, सेवक, ( पु० )

जीविका—आजीवन, गिलेय बेल,  
( स्त्री० ) ॥ ८७ ॥

झिह्वि ( ह्वी ) का—भैंसीरी प्राणी-  
विशेष, विलेपनमल, धूपकी दीप्ति,  
( स्त्री० ) ॥ ८८ ॥

दुच्छक—मुरानामक गन्धद्रव्य, व्यव-  
हार, अवकाश, ( पु० )

दुण्डुक—सोना—वृक्ष, अल्प, ( पु० )  
क्रूर, ( त्रि० ) ॥ ८९ ॥

डिण्डिक—बदीजन, स्त्रीरत,  
रतडिण्डिक—स्त्रीचोर ( पु० )

डिम्बिका—जलविंब, वीणाआदिवाजा  
बजानेका गज, रति इच्छावाली स्त्री,  
( स्त्री० ) ॥ ९० ॥

तण्डक—वृक्षस्कन्ध, समासप्रायवाची,  
घरका वृक्ष, शाय, खजन पक्षी,  
मायावी—पुरुष, ( पु० ) ॥ ९१ ॥

तर्ककः काद्विणि ख्यातस्त्रकेऽर्के गृध्रपक्षिणि ।

तक्षको नागभेदे स्याद्द्वर्द्धकिद्रुमभेदयोः ॥ ९२ ॥

तारको दैत्यमित्कर्णधारयोर्दृशि तारकम् ।

ऋक्षे कनीनिकायां च तारकं तारिकाऽपि च ॥ ९३ ॥

तिलकं द्रुमभेदे च रोगे च तिलकालके ।

क्लीवं सौवर्चले क्लोम्नि ललामेऽस्त्री तु चित्रके ॥ ९४ ॥

तुलकः तुलकायां स्यात्तथा दधिकपक्षिणि ।

तुरुष्कः सिंहके म्लेच्छभेदस्त्रीवासयोरपि ॥ ९५ ॥

तूलिका चित्रविन्यासलेखन्यां तूलतल्पयोः ।

त्रिशंकुर्नृपभेदेऽपि शलभे वृषदंशके ॥ ९६ ॥

दर्शकस्तु प्रतीहारे दर्शयितृप्रवीणयोः ।

दारको भेदकेऽपत्ये कूपके तु विपूर्वकः ॥ ९७ ॥

तर्कक-इच्छावाला, तर्क, सूर्ये, गृध्र-  
पक्षी, ( पु० )

तक्षक-नागभेद, वटई, पृक्षभेद  
( पु० ) ॥ ९२ ॥

ता ( रिका ) रक-एकदैत्य, नावको  
चलानेवाला ( पु० ) नेत्र, ( न० ) नक्षत्र,  
नेत्रतारा, ( न० स्त्री० ) ॥ ९३ ॥

तिलक-गृक्षभेद ( तिल ), रोग,  
शरीरपर तिलका श्यामचिह्न, ( न० )  
कालानोन, पुण्डुस्य, श्रेष्ठ, स्त्रियो-  
का तिलकविशेष ( पुं० न० ) ९४

तुलक-तुली, दधिक ( पक्षि-  
श्रेय ) ( पु० )

तुरुष्क-हींग, म्लेच्छजाति, स्त्रियो-  
का निवासस्थान, ( पु० ) ॥ ९५ ॥

तूलिका-चित्रलेखनेकी कलम, हई,  
शय्या, ( स्त्री० )

त्रिशंकु-एकराजा, टीठी, बिलाव  
( पु० ) ॥ ९६ ॥

दर्शक-पौलिया मनुष्य, बुद्धिभी दिसा-  
नेवाला, चतुर, ( पुं० )

दारक-पाडनेवाला, सन्तान,

विदारक-नदीसूखनेपर जलकेडिये  
खोदाहुवा लडा, ( पु० ) ॥ ९७ ॥



दीपको वागलङ्कारे प्रदीपे दीप्तिकारके ।  
 दीप्यकं त्वजमोदे स्याद्यवानीवर्हिचूडयोः ॥ ९८ ॥  
 दूपिका लोचनमले तूलिकाया च दूपिका ।  
 द्रावकस्तु शिलाभेदे विदग्धे घोषकेऽपि च ॥ ९९ ॥  
 धनिकः साधुधान्यारूपवेपु धनिका स्त्रियाम् ।  
 धावको जवके राजगतिकर्मणि योगिनि ॥ १०० ॥  
 धेनुका तु भवेद्धेनौ करिपत्नीप्रसूतयो ।  
 धेनुकं करणे स्त्रीणा धेनुवृन्देऽपि धेनुकम् ॥ १०१ ॥  
 नग्नको बन्दिनि ग्रन्थे नग्ने गौर्या तु नग्निका ।  
 नन्दको हरिखड्गेऽपि हर्षके कुलपालके ॥ १०२ ॥  
 नरको निरयेऽपि स्यान्नरको दानवान्तरे ।  
 नर्तकः पोटगलके चारणे केलके नटे ॥ १०३ ॥

दीपक-वाणीका अलङ्कार ( दीपक  
 नामक), दापक, प्रकाश करनेवाला  
 ( ५० )

दीप्यक-अजमोद-औषधि, अजवा-  
 यन, मोरकी चोटी ( न० ) ॥ ९८ ॥

दूपिका नेत्रमल, शय्यासाधन, ( स्त्री० )

द्रावक-शिलाभेद, चतुर, तोरई  
 ( ५० ) ॥ ९९ ॥

धनि ( का )-साधुजन, धनिया,  
 स्वामी, ( ५० ) धनिका स्त्री, ( स्त्री० )

धावक-शीघ्रचलनेवाला, राजाकी  
 गति कर्मवाला, योगी, ( ५० ) १००

धेनुका-गौ, हथिनी, प्रसूतिका स्त्री,  
 ( स्त्री० )

धेनुक-स्त्रियोंका उपस्करण, गौवों-  
 का समूह, ( न० ) ॥ १०१ ॥

नग्नक-बदीजन, ग्रन्थ, नगापुरुष, ( पु० )

नग्निका-कन्या ( स्त्री० )

नन्दक-विष्णुका पत्नी, आनन्ददाता,  
 कुलकी रक्षाकरनेवाला ( पुं० ) ॥ १०२ ॥

नरक-नरक-लोक, नरकनामक  
 दानव, ( पु० )

नर्तक-नट या देवनल, चारण-जाति,  
 कला-पृथ, नट, ( पु० ) ॥ १०३ ॥

नर्तकी लासिकायां स्यात्करिष्यामपि नर्तकी ।  
 नायको नेतरि श्रेष्ठे हारमध्यमणावपि ॥ १०४ ॥  
 नालीकः पिण्डजेऽप्यज्ञे नालीकः शरशल्ययोः ।  
 नालीकं पद्मखण्डेऽपि नाडीकं सरसीरुहे ॥ १०५ ॥  
 निपाकः पवने खेदेऽप्यसत्कर्मफलेऽपि च ।  
 निर्मोको ज्योति सन्नाहे मोचने सर्पकशुके ॥ १०६ ॥  
 वारकोऽथे महामात्ये हस्तिसङ्घेऽपि नीटकः ।  
 नीलिका नीलिनीक्षुद्ररोगसेफालिकासु च ॥ १०७ ॥  
 पताका स्याद्वैजयन्त्यां सौभाग्येऽप्यध्वजेऽपि च ।  
 पद्मकं पद्मकोशेऽपि करिबिन्दुषु पद्मजे ॥ १०८ ॥  
 पराको व्रतमात्रेऽपि पराकः शयकेऽपि च ।  
 उभौ पर्यङ्कपल्यङ्कौ वृष्यां पर्यस्त्रिखण्डयोः ॥ १०९ ॥

नर्तकी-वृत्तकरनेवाली-स्त्री, हस्तिनी,  
 ( स्त्री० )

नायक-प्रेरणाकरनेवाला-पुंस, श्रेष्ठ  
 पुंस, हारकेषांचर्ची मति ( पुं० )  
 ॥ १०४ ॥

नालीक-विशेषे उपग्रहेनेवाला, मूरंग,  
 नालीक-वाक, शल्य ( भन्ता ) ( पुं० )  
 नालीक-कमलगमूह, ( न० )

नालीक-व्रत, ( न० ) ॥ १०५ ॥  
 निपाक-अणु, पर्याय, सौभाग्यमंका  
 ५१ ( पुं० )

निर्मोक-भाष्य, वरुण, पौष्टना,

सर्पकीर्षीजुली ॥ १०६ ॥ रोरनेवाला  
 अभ, व्रतमंत्रां, ( पु )

नीटक हस्तिमुद्र ( पु० )  
 नीलिका-नीलवर्णी-वृत्त, क्षुद्ररोग,  
 निगुण्डीवृत्त, ( स्त्री० ) ॥ १०७ ॥

पताका-दक्षी पञ्चा, सौभाग्य, नाट-  
 कका भंग, पञ्चा-मात्र, ( स्त्री० )

पद्मक-कमलद्वय, हस्तीका शरीरके  
 बिन्दु, कमल, ( न० ) ॥ १०८ ॥

पराक-व्रतमात्र, सौभाग्य ( पुं० )  
 पर्यङ्क-पल्यङ्क-वृष्या, चन्द्राई,  
 विपुना, वृष्या ( पुं० ) ॥ १०९ ॥

पार्श्वद्वारि सपक्षे च पक्षे पार्श्वे च पक्षकः ।  
 पाटकस्तु महाकिष्कौ वायेऽपि कटकान्तरे ॥ ११० ॥  
 अक्षादिचालने मूलद्रव्यापचयकूलयोः ।  
 पातुकः पतयालौ स्यात्प्रपाते जलहस्तिनि ॥ १११ ॥  
 पालंकः शाकभेदेऽपि शल्लकीवाजिपक्षिणि ।  
 पावकोऽग्नौ सदाचारे भङ्गातकवितङ्कयोः ॥ ११२ ॥  
 चित्रकेऽप्यग्निमन्थेऽपि त्रिषु पाचनकारिणि ।  
 पिण्याकः शिङ्गे हिङ्गौ तिलकृत्केऽपि कुङ्कुमे ॥ ११३ ॥  
 पिनाको हरकोदण्डे शूलेऽस्त्री पांसुवर्षणे ।  
 पिष्टको यवधान्यादिचमसे चक्षुषो रुजि ॥ ११४ ॥  
 पुत्रकः शरभे पुत्रे धूर्ते वृक्षनगान्तरे ।  
 पुत्रिका पुत्तलीपुत्र्योस्तथा यावकतूलिके ॥ ११५ ॥

**पक्षकः**—पसवादाका दरवाजा, पक्षवाला,  
 पक्ष, पसवादा, ( पु० )

**पाटकः**—हस्तप्रमाण, वाजा, वकणभेद  
 ॥ ११० ॥ पाशा आदिका डालना,  
 मूलद्रव्यका खर्च, नदीके किनारे ( पु०

**पातुकः**—पड़नेके स्वभाववाला, पर्वतमें  
 गिरनेका स्थान, जलहस्ती, ( पु० )  
 ॥ १११ ॥

**पालंकः**—पालक मामका शाक, सेह-  
 प्राणी, वाज पक्षी, ( पुं० )

**पावकः**—अग्नि, सदाचार, मिलावा,  
 वितक वृक्ष, ॥ ११२ ॥ चीता  
 औषधि, अरह या अगेधु-वृक्ष,  
 ( पु० ) पाचक औषधि ( त्रि० )

**पिण्याकः**—गन्धद्रव्यविशेष (शिलारस),  
 हींग, तिलोंकी खली, बेसर,  
 ( पु० ) ॥ ११३ ॥

**पिनाकः**—महादेवका धनुष, त्रिशूल,  
 ( पुं० न० ) धूलिठगानेवाला ( त्रि० )

**पिष्टकः**—यवधान्यआदिका चमस ( अ-  
 ग्निमें होमनेका द्रव्य ), नेत्ररोग,  
 ( पुं० ) ॥ ११४ ॥

**पुत्रकः**—रोस-पशु, पुत्र, धूर्त, वृ-  
 क्षविशेष, पर्वतविशेष, ( पु० )

**पुत्रिका**—पूतली-वाष्टआदिनी, पुत्री,  
 जौकी गुनी ( नाडी ), ( स्त्री० )  
 ॥ ११५ ॥

पुलकः कृमिभेदे स्यान्मणिदोषे शिलान्तरे ।  
 गजान्नपिण्डे रोमाञ्चे गल्वर्कहरितालयोः ॥ ११६ ॥  
 पुलाकस्तुच्छधान्ये स्यात्संक्षेपे भक्तशिक्षके ।  
 पुष्पकं तु कुबेरस्य विमाने रत्नकङ्कणे ॥ ११७ ॥  
 नेत्ररोगे च कासीसे चीरिकायां रसाञ्जने ।  
 मृदङ्गारशकट्यां च लोहकासे च पुष्पकम् ॥ ११८ ॥  
 पूर्णकः स्वर्णचूडे स्यान्नासच्छिद्य्यां च पूर्णिका ।  
 पृथुकश्चिपिटे बाले पृदाकुस्तु सरीसृपे ॥ ११९ ॥  
 पृदाकुर्वृश्चिकेऽपि स्याद्याम्रचित्रकयोरपि ।  
 उल्लके गजलाङ्गूलमूलप्रान्तेऽपि पेचकः ॥ १२० ॥  
 पेटकोऽस्त्री पुस्तकादेर्मञ्जूपाया फदम्बके ।  
 प्रतीकं प्रतिकूले त्रिप्वेरुदेशविलोमयोः ॥ १२१ ॥  
 प्रमादेऽवयवे चाथ प्रसेकः सेचने च्युतौ ।  
 प्राणकः सत्त्वजातीये बोलके जीवकद्रुमे ॥ १२२ ॥

पुलक-कृमिविशेष, मणिदोष, एकप्रकारका पत्थर, हस्तीके अन्नका पिण्ड, रोमाच, मद्यपानपात्र, हरिताल (पुं०) ॥ ११६ ॥

पुलाक-तुच्छधान्य, संक्षेप, भातका माँड, (पुं०)

पुष्पक कुबेरका विमान, रत्नजटितकङ्कण, (न०) ॥ ११७ ॥ नेत्ररोग, कासीस, भैंसीरी-प्राणी, रसोत, मिट्टीकी सिगडी, लोहा, कासी-धातु (न०) ॥ ११८ ॥

पूर्णक-काबरी-पक्षी, (पुं०)

पूर्णिका-नाकछिदावाली, (स्त्री०)

पृथुक-चूडा-धानरा, बालर, (पुं०)

पृदाकु-सर्प, ॥ ११९ ॥ बीछ, बघेरा, चीता, (पुं०) ।

पेचक-उरू-पक्षी, हस्तीसी पूँछका मूलभाग, (पुं०) ॥ १२० ॥

पेटक-पुस्तकआदिकोंकी सन्दूक, समूह, (पुं० न०)

प्रतीक-प्रतिकूल, एकदेश, विलोम (उलटा) ॥ १२१ ॥ प्रमाद, अवयव (अंग) (त्रि०)

प्रसेक-सेचन करना, गिरना, (पुं०)

प्राणक-प्राणीमात्र, बोलनामक द्रव्य, जायापोता-वृक्ष (पुं०) ॥ १२२ ॥

प्रियकस्तु कदम्बे स्यादलिचित्रकुरङ्गयोः ।  
 प्रियज्ञौ पीतशाले च बृङ्गुमप्रिययोरपि ॥ १२३ ॥  
 फलकं चित्रविन्यासे पट्टिकात्रणभेदयोः ।  
 वराको वाच्यवच्छोच्येऽनुकम्प्ये सङ्गरे पुमान् ॥ १२४ ॥  
 वसुकः शिवमहयां स्यादर्कपर्णेऽपि शैमके ।  
 बहुकोऽर्के कर्कटके दात्यूहे जलखादके ॥ १२५ ॥  
 वारकोऽश्वविशेषे च गतावपि निषेधके ।  
 वार्द्धकं वृद्धसंघाते वृद्धत्वे वृद्धकर्मणि ॥ १२६ ॥  
 बालकोऽग्नौ शिशौ केशे बाजिवारणबालधौ ।  
 साद्बालकं तु हीरे पारिहाय्यागुलीयके ॥ १२७ ॥  
 घालिका बालुका बाला पिँडोलकर्णभूषणे ।  
 बालुका सिकताऽपि स्याद्बालुकं त्वेलबालुके ॥ १२८ ॥

प्रियक—कदंब वृक्ष भौरा, चित्रमृग,  
 कंगुनीधान, विजयसार वृक्ष, केसर,  
 प्रियवस्तु ( स्त्री० ) ॥ १२३ ॥

फलक—मुखादिपर चित्रविन्यास, पट्टी-  
 काष्ठभादिकी, त्रणभेद, ( न० )

वराकं—शोचकरनेयोग्य ( त्रि० ) द-  
 याकरनेयोग्य, मुद्र ( पुं० ) ॥ १२४ ॥

वसुक—बडीमौलसिरी, भाकवे पत्ते,  
 साँभरनमक, ( पुं० )

बहुक—आक, कर्कट—प्राणी, जलकाक,  
 जलखादक—पक्षी ( पुं० ) ॥ १२५ ॥

वारक—अश्वविशेष, अश्वकी गतिवि-  
 शेष, ( पुं० ) रोकनेवाला, ( त्रि० )

वार्द्धक—वृद्धसमूह, वृद्धपना, वृद्धका  
 कर्म, ( न० ) ॥ १२६ ॥

बालक—मिलावाका वृक्ष, बालक, केश,  
 अश्व हस्तीकी पूँछमें मोटाभाग, ( पुं० )

बालक—नेत्रबाला—औषध, पहुँचेका  
 आभूषण, वैंगलीका आभूषण, ( न० )  
 ॥ १२७ ॥

घालिका—बालुका, स्त्री १६ वर्ष-  
 की, कडा, कर्णभूषण, ( स्त्री० )

बालुका—बाल—मिट्टी, ( स्त्री० )

बालुक—एलवा—ओषधी, ( न० )  
 ॥ १२८ ॥

वृश्चिकः शूककीटेऽपि द्रुणे राशयोपधीभिदोः ।  
 भस्मकं भस्मरोगे स्याद्विडङ्गकलघौतयोः ॥ १२९ ॥  
 भालाङ्को रोहिते शाकप्रभेदे कच्छपे हरे ।  
 महालक्षणसम्पूर्णपुरुषे करपत्रके ॥ १३० ॥  
 स्याद्भूतीकं तु भूनिम्बमालातृणकरुचृणे ।  
 यवान्यामपि कर्पूरे भूतीकं कट्फलेऽद्वयोः ॥ १३१ ॥  
 भूमिका रचनाया स्यान्मूर्त्यन्तरपरिग्रहे ।  
 भ्रामकः फेरवे धूर्ते सूर्यावर्तशिलान्तरे ॥ १३२ ॥  
 मण्डूको दर्दुरे बन्धप्रभेदे शोणकेऽप्यथ ।  
 मण्डूकपर्ण्या मण्डूकी मधुको यष्टिकाह्वये ॥ १३३ ॥  
 बन्दिपक्षिप्रभेदे च मधुपर्ण्या स्त्रियामपि ।  
 मल्लिको मल्लिका चैव राजहंसान्तरे द्वयम् ॥ १३४ ॥

<p>           वृश्चिक-केंचुवा ( कसर ), वीहू,            वृश्चिकराशि, ओपधी विशेष, ( पु० )            भस्मक-भस्मरोग, वायविडग, सुप            णं ( न० ) ॥ १२९ ॥            भालाङ्क-हरीडा-वृक्ष, शाकभेद, क-            द्युवा, महादेव, बडेलक्षणसे            पूर्ण मनुष्य, करौत ( बडईका धौजा-            र ) ( पु० ) ॥ १३० ॥            भूनिम्ब-चिरायता, बचकेसमान ज-            लतृण, सुगन्ध-रौहिसतृण, अज-            वान, कपूर, कायफल, ( न० )            ॥ १३१ ॥         </p>	<p>           भूमिका रचना, खँगयनाना, ( स्त्री० )            भ्रामक-गीदड, धूर्त, सूर्यावर्त-मणि,            शिलाभेद, ( पु० ) ॥ १३२ ॥            मण्डूक-मैडक, बन्धविशेष, सोना-            पाठा, ( पु० )            मण्डूकी-मण्डूकर्णा, मुलहटी, ( स्त्री० )            मधु( का ) क-मुलहटी, ॥ १३३ ॥            बदीचन, पक्षिविशेष, गिलोय,            ( पु० स्त्री० )            मल्लि( का ) क-राजहंस, ( पु०            स्त्री० ) ॥ १३४ ॥         </p>
--	--

मल्लिका तृणशून्येऽपि मीनमृत्पात्रभेदयोः ।

मशकः क्षुद्रजन्तूनां प्रभेदेऽपि गदान्तरे ॥ १३५ ॥

मातृका धात्रिकायां स्यात्करणे मातरि खरे ।

मामकं ममतायुक्तं मातृभ्रातरि मामकः ॥ १३६ ॥

मालिका पुष्पमालायां मालिका सरिदन्तरे ।

मालिको गरुडेऽपि स्यान्मालिका कण्ठभूषणे ॥ १३७ ॥

मेचकः श्यामले वर्हिचन्द्रे ध्वान्तेऽथ मेचकम् ।

वाच्यवरकृष्णवर्णं स्यान्मोचकः कदलीतरौ ॥ १३८ ॥

तत्प्रसूनेऽपि शिग्रौ च निर्मोचकविरागिणोः ।

मौदको न स्त्रिया खाद्यप्रभेदे हर्षकेऽन्यवत् ॥ १३९ ॥

यमकं संयमे शब्दाऽलङ्कारे यमजे त्रिषु ।

याजको यागशीले स्यात्पूजके राजकुञ्जरे ॥ १४० ॥

मल्लिका-मल्लिका ( मोगरा ) पुष्प,  
मच्छी, मिट्टीका पात्रविशेष, ( स्त्री० )

मशक-मच्छर, रोगविशेष ( पुं० )  
॥ १३५ ॥

मातृका-धाय ( दूधप्यानेवाली ),  
करण ( साधक ), माता, वर्णमाला,  
( स्त्री० )

मामक-ममतायुक्त द्रव्य, ( त्रि० )  
माताका भाई ( मामा ) ( पुं० )  
॥ १३६ ॥

मालिका-पुष्पमाला, नदीविशेष,  
( स्त्री० )

मालिक-गरुडं ( पुं० ) मालिका  
कण्ठभूषण ( माला ) ( स्त्री० ) ॥ १३७ ॥

मेचक-श्यामवर्ण, मोरवा चन्दा,  
( पुं० ) अन्धकार, ( न० )  
कालारगवाला द्रव्य, ( त्रि० )

मोचक-केला-वृक्ष, ॥ १३८ ॥  
केलाका-पुष्प, सहैजना-वृक्ष,  
छुडानेवाला, विरागी-पुरुष ( पुं० )

मौदक-खाद्यविशेष ( लडू ) ( पुं०-न० )  
आनन्ददेनेवाला ( त्रि० ) ॥ १३९ ॥

यमक-शब्दालंकार, ( पुं० ) किसी-  
द्रव्यका जोडा ( त्रि० )

याजक-यागशील-पुरुष, पूजाकरने-  
वाला, राजाओंमें धेठ, ( पुं० )  
॥ १४० ॥

याज्ञिको याजके दमें यज्ञकार्योपजीविनि ।  
युतकं यौतके युग्मे चलनाग्रेऽपि सशये ॥ १४१ ॥  
वस्त्रान्तरे वधूवस्त्राञ्चले युक्ते तु वाच्यवत् ।  
यूथिका तु मता यूथ्यामम्लानकुसुमे कचित् ॥ १४२ ॥  
रक्तकोऽम्लानबन्धूकरक्तवस्त्रे तु रागिणि ।  
रजको धावके पुसि कीरेऽपि रजकः पुमान् ॥ १४३ ॥  
रसिका तु रसालाया काञ्चीरसनयोरपि ।  
लेखाकेदारयो राजसर्पपेऽपि च राजिका ॥ १४४ ॥  
रात्रकस्तत्र यो वेश्यागृहे गमितवत्तरः ।  
रात्रकं पञ्चरात्रेऽथ रुचको मातुलङ्गके ॥ १४५ ॥  
रुचकं मातुलद्रव्ये दन्ते सौवर्चलस्रजि ।  
उत्कटे चाश्वभूपाया विडङ्गेकण्ठभूषणे ॥ १४६ ॥

याज्ञिक-यज्ञकरानेवाला, कुशा, यज्ञ-  
कार्यसे आजीवन करनेवाला, (पु)  
युतक-वरवधूके देनेको वस्त्रादि,  
दो वस्तु ( जोडा ),  
स्त्रियोंके उत्तम जघावस्त्रका अप्र-  
भाग सदेह, ॥ १४१ ॥  
वस्त्रविशेष, वधूवस्त्रका अचल, युक्त  
( संयुक्त ) ( श्री० )  
यूथिका-जूही-वृक्ष, अच्छाखिलाहु  
वा-पुष्प, ( स्त्री० ) ॥ १४२ ॥  
रक्तक-काटेदारसेवती, दुपहरिया पुष्प,  
रक्तवस्त्र, झेदकरनेवाला, ( पु० )  
रजक-धोबी, सूवा-( तोता ) पक्षी,  
( पु० ) ॥ १४३ ॥

रसिका-शिखरन, ऊस-( गन्ना ),  
करधनी ( पटिभूषण ), जिह्वा,  
( स्त्री० )  
राजिका-रेखा ( लकीर ), श्वेत स-  
रसौं, राई ( स्त्री० ) ॥ १४४ ॥  
रात्रक-जो वेश्याके घरमें एक वर्ष  
रहे वह पुरुष ( पु० )  
रात्रक-पञ्चरात्र ( प्रथमविशेष ) ( पु० )  
रुचक-बिजोरा-वृक्ष ॥ १४५ ॥  
धतूरा-झाड, दाँत, कालानमक,  
सजीसार, उत्कट, अश्वकाआभूषण,  
बायविडग, कटभूषण, ॥ १४६ ॥



बीजपूरेऽपि दीनारे रोचनादेववृक्षयोः ।

रुण्डिका रणभूर्द्धारपिण्डिकादूतिकार्थिका ॥ १४७ ॥

जमदग्निप्रियायां च हरेण्वामपि रेणुका ।

लम्पाकः पुंसि देशे स्याल्लम्पको लम्पटे त्रिषु ॥ १४८ ॥

लासको लसके लास्यकारकेऽपि मयूरके ।

लूनकः स्यात्पशौ भिन्ने लोचको नेत्रतारके ॥ १४९ ॥

मांसपिण्डे च पिण्डे च योषिद्भालविभूषणे ।

कज्जले नीलचोले च मौर्व्या भ्रूक्षयचर्मणि ॥ १५० ॥

कदल्यां कर्णपूरे च निर्वुद्धिनृषु लोचकः ।

वञ्चकस्तु खले धूर्ते गृहवधौ च फेरवे ॥ १५१ ॥

वन्धकः स्याद्विनिमये वसासत्योस्तु वन्धकी ।

वन्धूकं वन्धुजीवे स्याद्वन्धूकः पीतशालके ॥ १५२ ॥

सुवर्णसिका, कुंकुम-केसरआदि,  
देवदार-वृक्ष ( न० )

रुण्डिका-रणभूमि, द्वारपिंडी ( देहली ),  
दूती, मागनेवाली, ( स्त्री० ) ॥ १४७ ॥

रेणुका-जमदग्निऋषिकी स्त्री, मटर-  
धान्य, ( स्त्री० )

लम्पाक-देशविशेष ( पु० ) लम्पट,  
( त्रि० ) ॥ १४८ ॥

लासक-शोभावान, वृत्त्यकरनेवाला,  
मौर, ( पुं० )

लूनक-विदारणक्रिया पशु, ( पुं० )  
लोचक-नेत्रका तारा ॥ १४९ ॥

मांसपिण्ड, पिण्ड, स्त्रीकेभालका  
आभूषण, कज्जल, नीला वस्त्र, ध-

नुपकी प्रलंघा, भृकुटीकी ढीली च-  
मडी, ॥ १५० ॥

केला, वर्णका आभूषण, निर्वुद्धि  
मनुष्य ( पुं० )

वञ्चक-खल ( खोटा मनुष्य ), धूर्त  
मनुष्य, गृहमें घालाहुवा

नौला ( प्राणी ), गीदड, ( पुं० )  
॥ १५१ ॥

वन्धक-दोषस्तुवोका बदलाकरना,  
( गिरवी ) ( पु० )

वन्धकी-वसा, व्यभिचारिणी स्त्री,  
( स्त्री० )

वन्धूक-दुपहरिया पुष्प, ( न० )  
पीला शालका वृक्ष ( पुं० ) ॥ १५२ ॥

वर्तको वर्तिका पक्षिप्रभेदेऽश्वखुरे पुमान् ।  
 वर्णको बन्दिनि कवौ चारणेऽस्त्री तु वर्णके ॥ १५३ ॥  
 विलेपनादौ चित्रादौ लिपिमस्या च चन्दने ।  
 वर्णिका कठिनीमस्योर्लेखन्यामपि वर्णिका ॥ १५४ ॥  
 वल्मीको वामल्लरे स्यान्मुनिरोगविशेषयो ।  
 वार्षिकं त्रायमाणाया वर्षाकालमवेन्यवत् ॥ १५५ ॥  
 गोवाहके तु वाहीको वाहीको पृक्देशजे ।  
 वाहीको वाहिकोऽथे च देशभेदे ह्ये पुमान् ॥ १५६ ॥  
 वाहीकं वाहिकं द्वे च न द्वयोर्हिर्द्वीवीरयो ।  
 वितर्कः सशयेऽप्यूहे विचारे च कचिन्मत ॥ १५७ ॥  
 विपाकः परिणामेऽपि खेदे स्वादुनि दुर्गतौ ।  
 विवेकस्तु विचारे स्याज्जलद्रोण्या रहस्यपि ॥ १५८ ॥

वर्तक-घोडेकां सुम्, ( पु० )  
 वर्तिका-बत्तख पक्षी, ( स्त्री० )  
 वर्णक-यदीन, कवि, चारण, का  
 लापीलारंग ( पु० न० ) ॥ १५३ ॥  
 विलेपनआदि, चित्रआदि लिखने  
 कीस्वाही, चदन ( पु० न० )  
 वर्णिका-लिखनेकी सडिया मिटी,  
 लिखनेकी स्वाही, कलम ( स्त्री० )  
 ॥ १५४ ॥  
 वल्मीक-वाँची, मुनि, रोगविशेष,  
 ( पु० )  
 वार्षिक-त्रायमाण नामक-आँपधि,  
 ( न० ) वर्षाकालमें होनेवाला द्रव्य,  
 ( त्रि० ) ॥ १५५ ॥

वाहीक-वैलआदि से बोझा बहने  
 वाला, पृक्देशमें होनेवाला ( पु० )  
 वाही ( हि ) क-अश्वभेद, देशभेद,  
 अश्वमात्र, ( पु० ) ॥ १५६ ॥  
 वाही ( हि ) क-हाँग, कालीमिरच,  
 ( न० )  
 वितर्क-सदेह, खलनमडन, विचार  
 ( पु० ) ॥ १५७ ॥  
 विपाक-परिणाम फल, खेद, स्वा  
 दिष्ठ वस्तु, दुर्गति, ( पु० )  
 विवेक-विचार, जल्का बडा  
 पात्र, एकात, ( पु० ) ॥ १५८ ॥

वृषाङ्कः शङ्करे साधौ मल्लातकमहोक्षयोः ।

वैजिकं शिमुतैलेऽपि हेतौ सद्योऽङ्कुरेऽपि च ॥ १५९ ॥

व्यलीकं विप्रियाकार्यवैलक्ष्येष्वपि पीडने ।

ह्रीवमेव व्यलीकस्तु नागरे वाच्यलिङ्गकः ॥ १६० ॥

शंखकं बलये कंठौ शिरोरोगे च शङ्खकः ।

शम्बुको गजकुम्भान्ते शम्बूकः शुक्तिकान्तरे ॥ १६१ ॥

दैत्यभेदेऽपि शम्बूकः शम्बूका जलशुक्तिषु ।

शलाका तु शरे शल्ये चात्पत्राणपञ्जरे ॥ १६२ ॥

तर्कुकाष्ट्या च मदने शारिकाश्वाविदोरपि ।

शल्लकी श्वाविद्भूमयो शायकः शरखङ्गयोः ॥ १६३ ॥

शार्ककः शर्करापिण्डे दुग्धफेने च शार्ककः ।

शिशुकः शिशुमारे च शिशौ पश्चादुल्लपिनि ॥ १६४ ॥

वृषाङ्क-महादेव, साधु, मिलावा, बडाबैल ( सॉडबैल ) ( पु० )

वैजिक-सहजनेका तेल, हेतु ( चरण ), तत्कालके वृक्षका अङ्कुर ( न० ) ॥ १५९ ॥

व्यलीक-अप्रिय, अकार्य, विलक्षणता, पीडा, ( न० ) नागर ( विदग्धजन ) ( त्रि० ) ॥ १६० ॥

शंखक-कंकण, शंख, ( न० ) शिरका रोग, ( पु० )

शम्बूक-दत्तिकुम्भका प्रान्त, शुक्तिका जीव ॥ १६१ ॥ दैत्यभेद, ( पु० )

शम्बूका-जलशुक्ति ( शखला ) ( स्त्री० )

शलाका-बाण, शल्य ( भाला ), छत्र, पिंजरा, ॥ १६२ ॥ चरखा, मेनफल-वृक्ष, मैना-वक्षी, सेह-प्राणी, ( स्त्री० )

शल्लकी-सेह-जीव, वृक्षविशेष ( साल ) ( स्त्री० )

शायक-बाण, खड्ग ( पुं० ) ॥ १६३ ॥

शार्कक-शकरका पीडा, दूधके हाग, ( पु० )

शिशुक-शिशुमार ( मच्छ ), बालक, शिशुमारके आकार मछली ( पुं० ) ॥ १६४ ॥

शीतकः सुस्थिते शीतकालेऽनागतदर्शिनि ।  
 शूककः प्रावटप्रहौ शूककः पारदेऽपि च ॥ १६५ ॥  
 कृतमालस्तु शम्याकः शम्याकस्तर्कुघृष्टयोः ।  
 सम्पर्कः स्यान्निधुवने संसर्गे स्पर्शनेऽपि च ॥ १६६ ॥  
 सरकः स्यादविच्छिन्नपान्थपङ्क्तौ शरे पुमान् ।  
 अस्त्रियां सीधुपाने च सीधुपात्रे च सीधुनि ॥ १६७ ॥  
 सस्यको नालिकेरादिसारे खड्गे मणावपि ।  
 सूचकः खलकाकौतुसूचीषु शुनि बोधके ॥ १६८ ॥  
 सूतकं जन्मनि क्लीबं सूतकः पारदेऽस्त्रियाम् ।  
 सृदाकुर्दावकुलिशाऽनिलेषु प्रतिसूर्यके ॥ १६९ ॥  
 सेचकः सेक्तरि भवे त्रिषु पुंसि तु वारिदे ।  
 सेवको बलकीभान्तवक्रकाष्ठेऽनुजीविनि ॥ १७० ॥

शीतक-सुस्थित, शीतकाल, धाल  
 सी, ( पुं० )  
 शूकक-गहरा कुंवाँ, पारा, ( पुं० )  
 ॥ १६५ ॥  
 शम्याक-अमलतास वृक्ष, ताकू,  
 घृष्ट पुरुष ( पुं० )  
 सम्पर्क-निधुन, संसर्ग, स्पर्श, ( पुं० )  
 ॥ १६६ ॥  
 सरक-चलनेवालोंसी अविच्छिन्न  
 पंक्ति, शर, ( पुं० ) सीधु ( म-  
 दिरा या आसव ) का पीना,  
 सीधुका पात्र, सीधु ( आसव ),  
 ( पुं० न० ) ॥ १६७ ॥  
 सस्यक-नारियल आदिका सार, सड्ड,

मणिविशेष ( हरीमणि ) ( पुं० )  
 सूचक-खल ( चुगलखोर मनुष्य ),  
 वाग, विलाव, सूवा ( ई ), कुत्ता,  
 सूचना करनेवाला, ( पुं० ) ॥ १६८ ॥  
 सूतक-जन्म होना ( न० ) पारा  
 ( पुं० न० )  
 सृदाकु वनअग्नि, वज्र, वायु, प्रति-  
 सूर्य ( वर्षाकालमे सूर्यकेपास कदा-  
 चित् दीसनेवाला सूर्य प्रतिबिंबके  
 सदृश ) ( पुं० ) ॥ १६९ ॥  
 सेचक-सेचनकरनेवाला, भव, ( त्रि० )  
 मेघ, ( पुं० )  
 सेवक-बीणाका डेडाकाष्ठ या तूया,  
 नौकर, ( पुं० ) ॥ १७० ॥

स्यमीका नीलिजायां स्यात्स्यमीको नाकुवृक्षयोः ।  
 स्वस्तिको मङ्गलद्रव्ये चतुष्कगृहभेदयोः ॥ १७१ ॥  
 स्वस्तिकः पिष्ठकस्याऽपि प्रभेदे रततालिके ।  
 स्थासको गन्धवज्रायां जलादेरपि बुद्बुदे ॥ १७२ ॥  
 सेनायां समवेत्तेऽपि सेनारक्षेऽपि सैनिकः ।  
 हारकस्तु शठे चौरं गद्यविज्ञानभेदयोः ॥ १७३ ॥  
 हुडुको वाद्यभेदे स्याद्वात्युहे च मदोत्कटे ।  
 हेरुको बुद्धभेदेऽपि महाकालगणे तथा ॥ १७४ ॥  
 क्षारको जालके पक्षिमत्स्यादिपिटकेऽपि च ।  
 क्षुरकः फोफिलाक्षे स्याद्गोक्षुरे तिलकद्रुमे ॥ १७५ ॥  
 कचतुर्यम् ।  
 अस्त्री त्वङ्गारकोद्गारे पुंसि भौमे कुरण्टके ।  
 अङ्गारिका त्विक्षुकाण्डे तथा किंशुककोरके ॥ १७६ ॥

स्यमीका—नीलीका वृक्ष, (स्त्री०) वादी, वृक्ष, (पुं०)	हेरुक—बुद्धभेद, महाकालका गण, (पुं०) ॥ १७४ ॥
स्वस्तिक—मंगलद्रव्य, चतुष्क (आ- सन), गृहभेद, ॥ १७१ ॥ पीठी विशेष, रततालिका, (पुं०)	क्षारक—पुष्पकी नवीनकली, पक्षी, मच्छी आदिके पकडनेकी पिटारी (पुं०)
स्थासक—एक प्रकारका आभूषण, जल आदिका बुदबुदा (पुं०) १७२	क्षुरक—तालमखानाके बीज, गोसरु, तिलक वृक्ष (पुं०) ॥ १७५ ॥ कचतुर्यम् ।
सैनिक—सेना, मिलाहुवा, सेनाकी रक्षाकरनेवाला, (पुं०)	अंगारक—आधा जलाहुवाकाठ आदि, चिनगारी, (पुं० न०) भौम- मह, कोरटा, (पुं०)
हारक—शठ, चोर, गद्य (कान्य) विशेष, विज्ञान विशेष, (पुं०) १७३	अंगारिका—ऊस-गाम्ना, केसूकी कली, (स्त्री०) ॥ १७६ ॥
हुडुक—वाद्यविशेष, जलवाक, मद्दो- न्मत्त, (पुं०)	

पुमान्(लि)लमको भेके मधुकेऽम्बुजके खरे ।  
 पिकेऽप्यलिपकस्तु स्यात्पिकालिरतहिण्डके ॥ १७७ ॥  
 अथाऽश्मन्तकमुद्धाने मल्लिकाच्छदनेऽपि च ।  
 आकालिकं क्षणध्वंसन्यकालकृतसम्भवे ॥ १७८ ॥  
 आकल्पकस्तमोमोहग्रन्थावुत्कलिकामुदोः ।  
 विशेष्याखनिकस्तु स्याच्चोरमूपकदंष्ट्रिषु ॥ १७९ ॥  
 आक्षेपकस्तु पवनव्याधौ व्याधे च निन्दके ।  
 भवेदुत्कलिका हेलोरुण्ठासलिलव्रीचिषु ॥ १८० ॥  
 एडमूकस्त्रिषु ख्यातः शठे वाक्श्रुतिवर्जिते ।  
 पुनर्नवाकारवेहपर्णासेषु कठिलुकः ॥ १८१ ॥  
 कनिष्ठाऽङ्गुलिकानेत्रतारयोस्तु कनीनिका ।  
 कपर्दकस्तु भूतेश जटाजूटे वराटके ॥ १८२ ॥

अ(लि)लमक-मैंडक, महुवा-शुद्ध,  
 कमल केसर, (पुं०)

अलिपक-थोयल-पक्षी, भौंरा, छी-  
 चोर (पुं०) ॥ १७७ ॥

अश्मन्तक-चूल्हा, मल्लिकावा पत्ता,  
 (न०)

आकालिक-क्षणमात्रमें नष्ट होने-  
 वाला, विनासमय होनेवाला  
 (पुं०) ॥ १७८ ॥

आकल्पक-तमोगुण, मोह, ग्रन्थि,  
 उत्कंठा (उत्तर) (पुं०)

आखनिक-मिता, खोदनेवाला मनुष्य,  
 चोर, मूसा (चूल्हा), सूकर (पुं०)

आक्षेपक-वायु, व्याधि, व्याधा  
 (हिंसक), निदाकरनेवाला ॥ १७९ ॥

उत्कलिका-क्रीडा, उत्कण्ठा, जलके  
 तरंग, (स्त्री०) ॥ १८० ॥

एडमूक-शठ, वाणी और कर्णेंद्रि-  
 यसे रहित (गूंगा) (पुं०)

कठिलुक-साँठी, करेला, एकशाक  
 या तुलसी (पुं०) ॥ १८१ ॥

कानीनिका-कनिष्ठा (सबसे छोटी)  
 उँगली, नेत्रतारा, (स्त्री०)

कपर्दक-शिवका जटाजूट, कौडी,  
 (पुं०) ॥ १८२ ॥

कर्कोटकः काद्रवेयप्रभेदे श्रीफलेऽपि च ।

कलविङ्को भवेद्भ्रामचटकेऽपि कलिङ्गके ॥ १८३ ॥

काकरूक उल्लकेऽथे स्त्रीजि तेऽपि दिगम्बरे ।

दम्मेऽपि काकरूकस्तु त्रिषु भीरुदरिद्रयोः ॥ १८४ ॥

कार्पटिकोऽन्यमर्मज्ञे छात्रे स्यात्कालदेशिनि ।

कुरचकः पुंसि शोणक्षिण्टिकाऽम्लानभेदयोः ॥ १८५ ॥

कृकवाकुस्ताम्रचूडे कृकलासे च केकिनि ।

कोशातकः कचे ज्योस्त्रीपटोल्यां घोषकेऽस्त्रियाम् ॥ १८६ ॥

कौकुट्टिको दाम्भिके स्याद्दूरप्रेरितेक्षणे ।

कौलेयको भवेदिन्द्रे महाकामिकुलीनयोः ॥ १८७ ॥

ग्रामणीभण्डिनाराचोपधाने तु खरालिकः ।

भवेद्गुणनिकाऽभ्यासे शून्याङ्के पाठनिश्चये ॥ १८८ ॥

कर्कोटक—नागविकोप, विल्वका  
वृक्ष, (पुं०)

कलविक—घरमें रहनेवाला विडा  
(चिडिया) इन्द्रजव, (पु) ॥ १८३ ॥

काकरूक—उल्लू पक्षी, अथ, स्त्रीसे  
जीताहुवा मनुष्य, नम-मनुष्य, दर्भ,  
(पुं०) डरपोरजन, दरिद्र जन (त्रि०)  
॥ १८४ ॥

कार्पटिक—अन्यके मर्मको जानने-  
वाला, विद्यार्थी, समयको बताने  
वाला, (पुं०)

कुरचक—भींडी, सोनापाठा, षट्सरीया  
और सेवतीका भेद, (पुं०)  
॥ १८५ ॥

कृकवाकु—मुर्गा, किरलकाट (गिर-  
घट), मीर, (पु०)

कोशातक—केश, (पु०) कोशातकी  
परबल, शिमनीलता या तोरई,  
(स्त्री०) ॥ १८६ ॥

कौकुट्टिक—नजदीकसे देखनेवाला  
मनुष्य, दंभी-मनुष्य, (पुं)

कौलेयक—इन्द्र, महाकामी-पुरुष,  
उत्तम कुलमें होनेवाला, (पुं) १८७

खरालिक—ग्राममें मुख्य मनुष्य,  
सिरस-वृक्ष, वाण, तकिया, (पु०)

गुणनिका—अभ्यासररना, शून्यअक,  
पाठका निश्चय, नृत्सकरना, (स्त्री०)  
॥ १८८ ॥

नृत्यान्तरे त्वप्यथो गोकण्टको गोकुरे पुमान् ।  
 गवां गमनसम्भृतशुष्कस्थपुटकेऽपि च ॥ १८९ ॥  
 गोकुणिकः केकरे स्यात्पङ्कस्यगव्युपक्षके ।  
 गोमेदकः पीतमणौ काकोले पत्रकेऽपि च ॥ १९० ॥  
 स्मृता घर्घरिका क्षुद्रघण्टिकावाद्यभेदयोः ।  
 भृष्टधान्ये सरिद्धेदे तथा वादित्रदण्डके ॥ १९१ ॥  
 चांडालिकौपधीभेदे गौरीकिंदिरयोरपि ॥  
 जटारुको जलानूके नागयष्टिपटीरयोः ॥ १९२ ॥  
 जटारुकन्तथाशाखाहरिणेऽपि तुलाधरे ।  
 जर्जरीकम्बिषु भवेद्बहुच्छिद्रे जरातुरे ॥ १९३ ॥  
 जीवन्तिका तु जीवाख्यशाक्यन्दागुडुचिषु ।  
 जैवातृकः शशिन्यायुष्मति दिव्यौषधे कृशे ॥ १९४ ॥

<p>गोकण्टक-गोरारु औषधि, गौबोके गमनसे उत्पन्न हुआ और सूखा ऊँचानीचा स्थल, (पुं०) ॥ १८९ ॥</p>	<p>चांडालिका-औषधिविशेष, गौरी, चंडाल वादित्र (बाजा) (स्त्री०)</p>
<p>गोकुणिक-वाणा-मनुष्य, गौके की चमै धमनेपर नहीं निफलनेवाला,</p>	<p>जटारुक-जलके स्वभाववाला, नागके आकार एक बेल, सैरका वृक्ष ॥ १९२ ॥ बन्दर, तराजू धारण करनेवाला, (पु०)</p>
<p>गोमेदक-पीलीमनि, या म्यावरकाल विय, काकोली, सेत्रपात, (पुं०) ॥ १९० ॥</p>	<p>जर्जरिक-बहुत लियेवाला, बुटा- पासे व्याकुल (पुं०) ॥ १९३ ॥</p>
<p>घर्घरिका-छोटापटा, वाद्यविशेष, भूनाहुषा धान्य, नदीविशेष (पापर), एचका रंट (हॉडा) (स्त्री०) ॥ १९१ ॥</p>	<p>जीवन्तिका-जीवापोता-शाक, अ- मरखेल, गिलोय, (स्त्री०)</p>
	<p>जैवातृक-चरमा, बडी आयुवाला मनुष्य, दिव्य औषध, दुबला- मनुष्य, (पुं०) ॥ १९४ ॥</p>



तर्तरीकः पारगे स्यात्तर्तरीकं बहित्रके ।

तिक्तशाकस्तु वरुणे सदिरे पत्रसुन्दरे ॥ १९५ ॥

त्रिवर्णकं त्रिकटुके त्रिफलायां च गोक्षुरे ।

दन्दशूकस्तु यक्षे स्याद्दन्दशूको भुजङ्गमे ॥ १९६ ॥

दलाढकः स्वयंजाततिले चाम्पेयकुन्दयोः ।

शिरीषपृश्निकावात्यास्वातकेषु महचरे ॥ १९७ ॥

गैरिके करिकर्णे च फेनेऽग्निकणसंहतौ ।

द्रोणे च कार्यकूटे च क्वचिद्दृष्टो दलाढकः ॥ १९८ ॥

दासेरकस्तु करमे दासीपुत्रेऽपि धीवरे ।

नियामकः पोतवाहे कर्णधारे नियन्तरि ॥ १९९ ॥

निर्ग्रन्थिकस्तु क्षपणे निष्फलेऽप्यपरिच्छदे ।

निश्चारकोऽनिले स्वैरे पुरीषस्य क्षयेऽपि च ॥ २०० ॥

तर्तरीक—पारपहुचनेवाला, (पुं०)  
जहान आदि (न०)

तिक्तशाक—वरुणा, शैर, पत्रसुन्दर,  
(शिमा शाक) (पु०) ॥ १९५ ॥

त्रिवर्णक—सूँट मिरच पीपल, हरड-  
बहेडा-आरला, गोशरु, (न०)

दन्दशूक—यक्ष जाति, सर्प, (पुं०)  
॥ १९६ ॥

दलाढक—स्वयं उत्पन्न हुये तिल,  
चपा, कुन्द, सिरस वृत्र, पृष्टिपर्णी,  
वायुसमूह, खोदाहुवा, बहुत बडा,  
॥ १९७ ॥ गेरु, हायीका कान,  
शाग, अमिकणोंरा समूह, काग-

पक्षी, कार्यमे इष्ट धोल्नेवाला  
(पु०) ॥ १९८ ॥

दासेरक—ऊँट, दासीपुत्र, क्षीमर-  
जाति, (पुं०)

नियामक—नावसे दुष्टजन्तुओंको व-  
चानेवाला मद्राह, मौंका धलाने-  
वाला, प्रेरणाकरनेवाला, (पुं०)  
॥ १९९ ॥

निर्ग्रन्थिक—क्षपणक मुनिभेद, नि-  
ष्फल, ब्रह्मादिसे रहित, (पुं०)

निश्चारक—वायु, यथेच्छ-मनुष्य,  
विद्याशा नष्ट होना, (पुं०) २००

पञ्चालिका भवेद्वस्त्रपुत्रिकागीतभेदयोः ।  
 पिण्डीतकस्तु तगरे मदनाद्रौ फणिज्जके ॥ २०१ ॥  
 स्नानवृन्ते पिप्पलकः क्लीबं सीवनसूत्रके ।  
 पुण्डरीकोऽग्निदीप्ताङ्गे व्याघ्रभेदेक्षुभेदयोः ॥ २०२ ॥  
 पुण्डरीकं सितच्छत्रे सिताम्भोजेऽपि भेषजे ।  
 पुष्कलको गन्धमृगे कीलके क्षपणेऽपि च ॥ २०३ ॥  
 क्लीबं पूर्णानकं पूर्णपात्रे पटहपात्रयोः ।  
 पोतक्यां विचलत्पोताधाने पोतीनकं मतम् ॥ २०४ ॥  
 प्रकीर्णकं ग्रन्थभेदे प्रशस्ते चामरे ह्ये ।  
 प्रवर्तकः शराघाते बर्हे पुष्पभुजङ्गयोः ॥ २०५ ॥  
 फर्फरीकश्चपेटे स्यात्फर्फरीकं तु मर्दिवे ।  
 वकेरुका वृद्धीभेदे वातावर्जितपल्लवे ॥ २०६ ॥

पञ्चालिका-वस्त्रकीपुतली, गीतभेद,  
 ( स्त्री० )

पिण्डीतक-तगर-वृक्ष, मैन-वृक्ष, जं-  
 भीरीभेद, ( पुं० ) ॥ २०१ ॥

पिप्पलक-स्तनोद्य अग्रभाग, ( पुं० )  
 गौनेके त्रिये सूत्र, ( न० )

पुण्डरीक-अग्निसे दीप्त अंगवाला,  
 व्याघ्रभेद, इधु ( मन्ना ) भेद,  
 ( पुं० ) ॥ २०२ ॥

पुण्डरीक-गणेशदत्त, सनेदहमल,  
 औदधि, ( न० )

पुष्कलक-गन्धमृग, बोला, शरण  
 ( मुर्धे ) ( पुं० ) ॥ २०३ ॥

पूर्णानक-पूर्णपात्र, पटह ( बाजा ),  
 पात्र, ( न० )

पोतीनक-पोतरी ( शत्रुनविडिया ),  
 छोटी मलटियावाला हुंड आदि,  
 ( न० ) ॥ २०४ ॥

प्रकीर्णक-ग्रंथविशेष, धेष्ट, चैत्र,  
 अभ, ( न० )

प्रवर्तक-यागका पाव, मोरपंख,  
 पुत्र, सर्प, ( पुं० ) ॥ २०५ ॥

फर्फरीक-पुष्प, ( पुं० ) कोनरता  
 न० )

वकेरुका-वृद्धीभेद ( बटेर-पक्षी ), वा-  
 मुसे हिलादेहुए पत्र ( स्त्री० ) ॥ २०६ ॥

कपर्दरज्जुराजीवबीजकोशे घराटकः ।  
 वरण्डकस्तु मातङ्गवेद्यां यौवनरुण्टके ॥ २०७ ॥  
 तथा संवर्तुले घर्त्तरूकस्तु सरिदन्तरे ।  
 जलावटे काकनीडे दण्डवासिन्यपीप्यते ॥ २०८ ॥  
 वर्वरीको महाकाले केशविन्यासशाकयोः ।  
 वलाहको वारिवाहे नागदैत्यान्तरे गिरौ ॥ २०९ ॥  
 वाणिजिको वणिज्यंके मृगाङ्गे कामिनीरते ।  
 और्वेऽनुरागवाद्ये च मतो वाणिज्यकः पुमान् ॥ २१० ॥  
 वृन्दारकः सुरे श्रेष्ठे मनोज्ञे यूथघातिनि ।  
 अथो वृहतिका कण्टकारीवस्त्रान्तरोरुपु ॥ २११ ॥  
 भट्टारकः सुरे पुंसि क्षमापाले च तपोधने ।  
 भयानकस्तु शार्दूले सैहिकेये विभीषणे ॥ २१२ ॥

घराटक—श्रीडी, रज्जु, कमलका बीज  
कोश, (पुं०)

वरण्डक—हस्तीकी वेदी (बैठनेका  
ऊँचा स्थान), जवानीसे मुखपर  
होनेवाला फोड़ाविशेष, ॥ २०७ ॥  
गोल आकारवाला, (पुं०)

घर्त्तरूक—नदीविशेष, जलमा स्रष्टा,  
कागका घँसला, दंडवासी, (पुं०)  
॥ २०८ ॥

घर्वरीक—बटा काल, केशरचना,  
शाकविशेष, (पुं०)

वलाहक—मेघ, नागविशेष, दैत्य-  
विशेष, पर्वत, (पुं०) ॥ २०९ ॥

वाणिजिक—वणिक चिह्न, चन्द्रमा,  
स्रोमं आसक्त, जलका अग्नि, प्रीतिसे  
बहने योग्य (पुं०) ॥ २१० ॥

वृन्दारक—देवता, श्रेष्ठ, सुंदर, समू-  
हको मारनेवाला (पुं०)

वृहतिका—बटेहली, बल्लभेद, ऊरु  
(जंघा) (स्त्री०) ॥ २११ ॥

भट्टारक—देवता, राजा, मुनि, (पुं०)  
भयानक—व्याघ्र, राहु, भयंकर,  
(पुं०) ॥ २१२ ॥

भार्याटिको भवेद्भार्यानिर्जिते हरिणान्तरे ।  
 अमरकोऽग्रे मधुपे च जाले चूर्णकुन्तले ॥ २१३ ॥  
 मण्डोदकं चित्ररागे भवेदालिम्पनेऽपि च ।  
 मतं मण्डलकं विन्धे कुष्ठभेदे च दर्पणे ॥ २१४ ॥  
 मयूरकोऽप्यपामार्गे तुत्यके तु मयूरकम् ।  
 मदनद्रौ मरुवकः पुष्पभेदे फणिज्जके ॥ २१५ ॥  
 माणवको हारभेदे वाले कुपुरुषे वटौ ।  
 मृष्टेरुको वदान्ये स्यान्मृष्टाशिन्यतिथिद्विषि ॥ २१६ ॥  
 रतर्द्धिकं सुखस्नानेऽप्यष्टमङ्गलके दिने ।  
 राधरङ्कुस्तु ना सीरे शीकरे जलदोपले ॥ २१७ ॥  
 लतालिकस्तु लाटाग्रे वज्रमुस्तौ च पुंस्ययम् ।  
 लालाटिकः स्यात्करणातरेऽप्यालिङ्गनान्तरे ॥ २१८ ॥

भार्याटिक-स्त्रीसे जीताहुवा पुरुष,  
 मृगभेद, ( पु० )

अमरक-मेघ, भौरा, जाल, जुल्फ-  
 केश, ( पुं० ) ॥ २१३ ॥

मण्डोदक-विचित्ररंग, लीपनेका द्रव्य  
 ( न० )

मण्डलक-प्रतिविध, कुष्ठभेद, दर्पण  
 ( शीशा ) ( न० ) ॥ २१४ ॥

मयूरक-कैगा या चिरचटा, ( पुं० )  
 नीलायोधा, ( न० )

मरुवक-मैनवृक्ष, या धतूरा, मरुवा पु-  
 ष्पभेद, वनतुलसी, ( पुं० ) ॥ २१५ ॥

माणवक-हारभेद, वालक, कुपुरुष,  
 वटी ( गोली ) ( पु० )

मृष्टेरुक-अतिउदार, शोधित अन्न  
 आदि भोजन करनेवाला, अभ्या-

गतसे द्वेष करनेवाला, ( पुं० )  
 ॥ २१६ ॥

रतर्द्धिक-सुखस्नान, अष्टमंगलव  
 दिन ( न० )

राधरङ्कु-आगेचलनेवाला, जलकी  
 फुँवार, ओला, ( पुं० ) ॥ २१७ ॥

लतालिक-आम्रभेद, हीरा, नागर-  
 मोथा ( पुं० )

लालाटिक-चित्र भेद, आलिगनभेद,  
 ॥ २१८ ॥

कार्याक्षमे प्रभोर्भावदर्शिन्यपि तु वाच्यवत् ।  
 त्रिपु लेखीलको लेखहारे यश्च विलेखयेत् ॥ २१९ ॥  
 स्वहस्तपरहस्तेन लेखे लेखीलकः स च ।  
 वितुघ्नकं तु धान्याके मतं ज्ञातामलेऽपि च ॥ २२० ॥  
 विदूषकश्चाटुवटौ परनिन्दाविधायिनि ।  
 विनायको जिने बुद्धे ताक्ष्ये हेरम्भविघ्नयोः ॥ २२१ ॥  
 गुरौ विमानकं तु स्यान्माने शून्येऽभिधेयवत् ।  
 विमानकं देवयाने सप्तभूमगृहे स्त्रियाम् ॥ २२२ ॥  
 विशेषकोऽक्षी तिलके विशेषावाहके द्रुमे ।  
 चैतालिको बोधकरे खेटृताले च कीर्तितः ॥ २२३ ॥  
 वैदेहको वाणिजके शूद्राद्वेद्यासुतेऽपि च ।  
 वैनाशिकस्तु क्षणिके परतघ्नोर्णनाभयोः ॥ २२४ ॥

कार्य करनेमें असमर्थ, ( पुं० )  
 खांसीका भाव जाननेवाला ( त्रि० )  
 लेखीलक-लेखको पहुँचानेवाला,  
 ( त्रि० ) अपने तथा दूसरेके हाथसे  
 लिखाहुवा लेखपर लिखनेवाला  
 ( पुं० ) ॥ २१९ ॥  
 वितुघ्नक-धनियाँ, भुँई आँवला  
 ( न० ) ॥ २२० ॥  
 विदूषक-मौटा बोलनेवाला लडका,  
 दूसरोकी निन्दा करनेवाला-मनुष्य,  
 ( पु० )  
 विनायक-जिन भगवान्, बुद्ध भग-  
 वान्, गुरु, गणेश, विघ्न, गुरु  
 ( पुं० ) ॥ २२१ ॥

विमानक-देवयान ( विमान ), सात  
 मंजुलका भवान्, ( पुं० न० )  
 ॥ २२२ ॥  
 विशेषक-तिलक, ( पुं० न० ) वि-  
 शेषता करनेवाला, ( तिलक-नृक्ष  
 ( पुं० )  
 चैतालिक-बोध करानेवाला, क्रीडा-  
 करके तालदेना ( पुं० ) ॥ २२३ ॥  
 वैदेहक-वाणिजक ( धनजी करनेवाला )  
 शूद्रसे उत्पन्न हुवा वैद्यापुत्र  
 ( पुं० )  
 वैनाशिक-क्षणमें उत्पन्न और नष्ट  
 होनेवाला, पराधीन, मक्की-जन्तु,  
 ( पु० ) २२४ ॥

शतानीको मुनेर्भेदे वृद्धे शालावृकः मुनि ।  
 शृगाले वानरे वाऽथ विले चान्द्रे शिलाटकः ॥ २२५ ॥  
 शृङ्गाटको भवेद्धारिकण्टके च चतुष्पथे ।  
 सद्घाटिका युगे नासाकुट्टिनीजलकण्टके ॥ २२६ ॥  
 सन्तानिका दधिकीरसारे मर्कटजालके ।  
 संदंशिका तु मुकुटीलोहयन्त्रप्रभेदयोः ॥ २२७ ॥  
 स्यात्सुप्रतीक ईशानदिग्गजे दिव्यविग्रहे ।  
 शृगालिका शिवाया स्यान्नासादपि पलायने ॥ २२८ ॥  
 क्लीबे सैकतिकं मातृयात्रामङ्गलसूत्रयोः ।  
 त्रिषु सन्यस्तसदेहजीविक्षपणिकेप्विदम् ॥ २२९ ॥  
 पुमान् सैकतिको गन्धकुट्ट्या सिन्धोश्च सैकते ।  
 स्वभार्या परहस्तस्था यो न साधयितु क्षम ॥ २३० ॥

शतानीक—एकमुनि, वृद्ध, ( पु० )  
 शालावृक—कुत्ता, गीदड, वन्दर, ( पु० )  
 शिलाटक—बिल, चन्द्रकान्तमणि,  
 या चद्रशाला, ( पु० ॥ २२५ ॥  
 शृङ्गाटक—मानू जलका काटा ( सिं  
 घाडा ), चोराहा अर्थात् चार तर-  
 फरा रास्ता, ( पु० )  
 सद्घाटिका—जोश, नासिका, कुट्टिनी  
 छीं, सिंघाडा, ( स्त्री० ) २२६ ॥  
 सन्तानिका—दधि दुग्धरा सार,  
 यन्दरका जाल, ( स्त्री० )  
 संदंशिका—सडाधी, लोहका यत्र  
 विशेष, ( स्त्री० ) ॥ २२७ ॥

सुप्रतीक ईशानदिशाम होनेवाला  
 हस्ती, सुदर अगवाला मनुष्य  
 ( पु० )  
 शृगालिका—गीदडो, भयसे भागना,  
 ( स्त्री० ) ॥ २२८ ॥  
 सैकतिक—मातृयात्रा, मङ्गलसूत्र,  
 ( न० ) सन्यासा, सदेहजीवी, मुनि,  
 ( त्रि० ) ॥ २२९ ॥ मुरा नाम वीपध,  
 समुद्रका रेतीला स्थल ( पु० ) दूस-  
 रेके हाथमें गई हुई अपनी स्त्रीको  
 लेनेमें जो समर्थ न हो वह, भोजन-  
 के लिये हुवा सन्यासी ॥ २३० ॥

तत्र संन्यासमात्रेण क्षुधा च कृतभोजने ।

सोमवल्कः पुमान् श्वेतखदिरे कट्फलेऽपि च ॥ २३१ ॥

सौगन्धिकं तु वहारे पद्मरागे च कत्तूणे ।

गन्धके गान्धिके पुंसि त्रिषु सौगन्धिकं क्रमात् ॥ २३२ ॥

कपधमम् ।

अनेहमूकः कितवे त्रिषु वायश्रुतिवर्जिते ।

स्यादाच्छुरितकं हासनखाघातविशेषयोः ॥ २३३ ॥

मातोपकारिका राजमन्दिरे पिष्टकान्तरे ।

उपकर्ष्यामपीय स्यादथ स्यात्कटखादकः ॥ २३४ ॥

खादके काचकलशे बलिपुष्टशृगालयोः ।

स्यात्कक्षावेक्षको धीरे शुद्धान्तोद्यानपालयोः ॥ २३५ ॥

अपि पिष्टे कवौ रक्षाजीविनि द्वारपालके ।

स्यात्कृमीकण्टकं चित्राविडङ्गोदुम्बरेष्वपि ॥ २३६ ॥

सोमवल्क—सफेद खैरे, कायफल  
( पुं० ) ॥ २३१ ॥

सौगन्धिकः—सध्यासमय खिलनेवाला  
कमल, माणिक्य-रत्न, सौगन्धिक-  
तृण या गंजाण, ( न० ) गन्धक,  
गार्भी, ( पुं० ) गंधवाल द्रव्य  
( त्रि० ) ॥ २३२ ॥

कपंचम ।

अनेहमूक—छलकरनेवाला, वाणी और  
कर्णोन्द्रियसे रहित, ( त्रि० )

आच्छुरितक—हँसना, नखोंसे आघात  
विशेष, ( न० ) ॥ २३३ ॥

उपकारिका—माता, राजमन्दिर,  
पिष्टका भेद, उपकारकरनेवाली स्त्री,  
( स्त्री० )

कटखादक—खानेवाला काचकलश,  
बाग, मोदक, ( पुं० ) ॥ २३४ ॥

कक्षावेक्षक—धीर, रनवाल और ब-  
गीचाकी रक्षा करनेवाला, ॥ २३५ ॥  
धूर्त, कवि, कपडा रंगनेवाला  
( रंगरेज ), द्वारपाल ( पुं० )

कृमी(मी)कण्टक—चोता, कायविहंग,  
गूलर, ( न० ) ॥ २३६ ॥

गोजागरिकमित्याहुर्मङ्गले कन्दुकारके ।  
 कण्ठीविशेषखद्योतविद्युत्सु चिलिमीलिका ॥ २३७ ॥  
 शृङ्गाटके जलगृहे पृश्न्यां च जलकण्टकः ।  
 जलतापिक इल्लीशकाकोलीमत्स्ययोर्मतः ॥ २३८ ॥  
 भवेज्जलकरङ्कुस्तु नालिकेरफलेऽम्बुदे ।  
 कंजे जललतायां च भवेन्नवफलिका पुनः ॥ २३९ ॥  
 नव्ये भव्ये प्रसूनादौ नवजातरजःस्त्रियाम् ।  
 नागवारिकमिच्छन्ति हस्तिपे राजहस्तिनि ॥ २४० ॥  
 ताक्ष्ये गणस्यराजेऽपि चित्रमेखलके क्वचित् ।  
 शोधन्याभिगुदे लोकयात्रायां व्यवहारिका ॥ २४१ ॥  
 स्याद्व्रीहिराजिकः पुंसि कामिनीचीनधान्ययोः ।  
 शतपर्षिका च दूर्वायां वचायां शतपर्षिका ॥ २४२ ॥

गोजागरिक-मंगल, कन्दुकारक  
 ( सिन्धुवनानेवाला ), ( न० )  
 चिलिमीलिका कठीविशेष, पट्टवी-  
 जना ( जुगनु ), विजली, ( स्त्री० )  
 ॥ २३७ ॥  
 जलकण्टक-सिंघाडा, जलगृह, छोटे  
 अंगवाला, ( पुं० )  
 जलतापिक-कामोलीभेद, मत्स्य  
 ( पुं० ) ॥ २३८ ॥  
 जलकरङ्क-नारियलकाफल, मेघ,  
 कमल, जललता, ( पुं० ) ॥ २३९ ॥

नवफलिका-नवीन और सुंदर पुष्प-  
 आदि, प्रथमकृतुधर्मवाली स्त्री  
 ( स्त्री० ) ॥ २४० ॥  
 नागवारिक-फौलवान, राजहस्ती,  
 गरुड गणराज, चित्रमेखलक ( मोर-  
 पक्षी ) ( पुं० )  
 व्यवहारिका-नीली-औषध, गोंद-  
 नी, लोकाचार, ( स्त्री० ) ॥ २४१ ॥  
 व्रीहिराजिक-दारुहलदी, चीनाषा-  
 न्य, ( पुं० ) ॥ २४२ ॥  
 शतपर्षिका-दूध, वच-औषध ( स्त्री० )



शीतचम्पकशब्दोऽयमातर्पणकदीपयोः ।

सुवसन्तकमिच्छन्ति वासन्त्यां मदनोत्सवे ॥ २४३ ॥

स्याद्धेमपुष्पिका यूथ्यां चम्पके हेमपुष्पकः ।

कपष्ठम् ।

ग्राममहुरिका शृङ्ग्यां ग्रामयुद्धे च दृश्यते ॥ २४४ ॥

भवेन्मदनशलाका तु सार्यां कामोदयौषधी ।

भवेन्मातुलजे धूर्तफले मातुलपुत्रकः ॥ २४५ ॥

लूतामर्कटिका पुञ्यां नवमालप्लवङ्गयोः ।

श्लोकच्छायाहरे चोरे भवेद्धर्णविलोडकः ॥ २४६ ॥

सिन्दूरतिलको नागे सिन्दूरतिलकखियाम् ।

चतुर्मासोपवासी यः स स्यात्स्नानचिकित्सकः ॥ २४७ ॥

शीतचम्पक—शातर्पण ( तृप्तिकरने  
वाली औषधी ), दीप ( चंपा ) ( पु० )

सुवसन्तक—रत्नमोगरा, मदनउ-  
त्सव, ( पु० ) ॥ २४३ ॥

हेमपुष्पिका—शुद्धी, ( स्त्री० )

हेमपुष्पक—चम्पा ( पु० )

कपष्ठम् ।

ग्राममहुरिका—शृङ्गी—मत्स्य, ग्राम-  
युद्ध, ( स्त्री० ) ॥ २४४ ॥

मदनशलाका—मैना—पक्षी, कामो-  
दीपकऔषधि, ( स्त्री० )

मातुलपुत्रक—मामाकापुत्र, धतूराका  
फल, ( पुं० ) ॥ २४५ ॥

लूतामर्कटिका—पुत्री, ( स्त्री० )

लूतामर्कटक—नवीनमालवाला, व-  
न्दर, ( पु० )

धर्णविलोडक—श्लोकच्छायाको हरने-  
वाला, चोर, ( पुं० ) ॥ २४६ ॥

सिन्दूरतिलक—हस्ती, ( पु० )

सिन्दूरतिलका—सिन्दूरतिलक राली  
स्त्री, ( स्त्री० )

स्नानचिकित्सक—चतुर्मासका उप-  
वास करनेवाला, ( पुं० ) ॥ २४७ ॥

तपस्विपुष्पयोश्चैव मतं स्नानचिकित्सकम् ॥ २४८ ॥

इति कविपण्डितश्रीश्रीधरसेनविरचिते मुक्तावलीखपरामिधाने-  
विश्वलोचने स्वरकाद्यादिकान्तवर्गः ।

### अथ स्वान्तवर्गः ।

लैकम् ।

खमाकाशे दिवि सुखे बुद्धौ संवेदने पुरे ।

शून्यवदिन्द्रियक्षेत्रे कुशाहलफले क्वचित् ॥ १ ॥

खद्वितीयम् ।

उखा निरुद्धभार्यायामुखा स्थाल्यामपि स्मृता ।

नखस्तु करजे शुक्तौ गन्धद्रव्ये नखी नखम् ॥ २ ॥

न्युह्वः सम्यग्मनोज्ञे च साम्नः पट्प्रणवेष्वपि ।

प्रेह्वाः पर्यटने नृत्वे दोलायां वाजिनां गतौ ॥ ३ ॥

स्नानचिकित्सक-तपस्वी, पुत्र,  
( पुं० न० ) ( ॥ २४८ ॥

इस प्रकार कविपण्डित श्रीधरसेन-  
विरचित मुक्तावली ऐसा दूसरा-  
नामवाला विश्वलोचनकी  
भापाटीकामें स्वरकाद्या-  
दिकान्त कातवर्ग  
समाप्तहुवा ॥

अथ स्वान्तवर्गः ।

लैक ।

ख-आकाश, स्वर्ग, मुखा, बुद्धि, पीडा,  
पुर, यौल ( शून्य ) वाला द्रव्य,

इन्द्रिय, क्षेत्र, बुध, हलकी फाल,  
( न० ) ॥ १ ॥

खद्वितीय ।

उखा-अनिरुद्धकी त्री, स्थाली (तंदुल  
आदि पकानेका बर्तन) ( स्त्री० )

नख-नख ( नाखून ) सीपी, ( पुं० )  
गन्धद्रव्य, नख ( स्त्री० न० ) ॥२॥

न्युह्व-बहुत सुन्दर, सामवेदके छः  
अक्षर, ( पु० )

प्रेह्वा-देशान्तरोंमें जाना, नृत्य, हि-  
डोला, अभ्यंशे गतिविशेष, ( स्त्री० )  
॥ ३ ॥

चिह्ना गत्यन्तरे नृत्ये शूकशिम्ब्यां च दृश्यते ।

मुखं वक्त्रे निःसरणेऽप्युपायाऽऽरम्भयोरपि ॥ ४ ॥

लेखो लेख्ये सुरे लेखा रेखाराजीलिपिष्वपि ।

शङ्खः कम्बुललाटास्थिनखीनिधिषु न स्त्रियाम् ॥ ५ ॥

शाखा स्यात्पल्लवे वेदविभागेऽप्यन्तिके भुजे ।

शाखा पक्षान्तरे चाथ शिखा शाखाभ्ररश्मिषु ॥ ६ ॥

शिखा शिखायां चूडायां चूडायां च शिखण्डिनः ।

ज्वालायां लाङ्गलिक्यां च सखा मित्रसहाययोः ॥ ७ ॥

सुखं शर्मण्यपि स्वर्गे सुखा पुर्यां प्रचेतसः ।

खतृतीयम् ।

गोमुखं कुटिलामारे वाद्यमाण्डोपलेपयोः ॥ ८ ॥

चिह्न-गतिविशेष, नृत्य, कौच,  
( स्त्री० )

मुखे-मुख, गृहद्वार, उपाय, आरंभ,  
( न० ) ॥ ४ ॥

लेख-लिखने शोभ्य, देवता, ( पु० )

लेखा-रेखा, पंक्ति, रेखा, ( स्त्री० )

शङ्ख-शंख, ललाटका अस्थि, नखी  
( गंधशब्द ), खजाना भेद ( पु०  
न० ) ॥ ५ ॥

शाखा-टहनी या पल्लव, वेदविभाग,  
समीप, भुजा ( बाहु ), पक्षवि-  
शेष, ( स्त्री० )

शिखा-शाखा, अप्रभाग, विरप  
( स्त्री० ) ॥ ६ ॥

शिखा-नृक्षकी जड़, चोटी, मोरकी  
चोटी, अमिनी ज्वाला, कलिहारी-  
रक्ष, ( स्त्री० )

सखा-मित्र, सहायक, ( पु० ) ॥ ७ ॥

सुख-कल्याण, स्वर्ग, ( न० )

सुखा वरुणकी पुरी ( स्त्री० )

खतृतीय ।

गोमुख-टेढापर, वाजाका भांडा,  
केनन, ( न० ) ॥ ८ ॥

त्रिशिखो रक्षसो भेदे क्लीवं भूपात्रिशूलयोः ।  
 दुर्मुखो मुखरे नागराजे शाखामृगाश्वयोः ॥ ९ ॥  
 प्रमुखः प्रथमे श्रेष्ठे मयूखो ज्वालरुक्करे ।  
 स्कन्दे तर्के विशाखः स्याद्विशिखा भे कठिल्लके ॥ १० ॥  
 विशिखस्तोमरे बाणे विशिखा खनिरक्ष्ययोः ।  
 नलिकायां च विशिखा वैशाखो राघमन्ययोः ॥ ११ ॥  
 सुमुखस्ताक्षर्यतनये पण्डिते भुजगान्तरे ॥ १२ ॥

सचतुर्थम् ।

भवेदग्निमुखो देवे द्विजे पावकसम्भवे ।  
 भल्लातके त्वग्निमुखी कचिदग्निमुखोऽपि च ॥ १३ ॥  
 लाङ्गलिक्यां त्वग्निशिखा कुङ्कुमेऽग्निशिखं स्मृतम् ।  
 इन्दुलेखा शशिकलाऽमृतासोमलतासपि ॥ १४ ॥

<p>त्रिशिख-एकराक्षस, ( पुं० ) आम्-                  पण, त्रिशूल ( ०न ),                  दुर्मुख-बहुत बोलनेवाला ( त्रि० )                  नागराज ( नागभेद ) या अनत,                  वन्दर, घोडा, ( पुं० ) ॥ ९ ॥                  प्रमुख-पहला, श्रेष्ठ, ( पु० )                  मयूख-ज्वाला, शोभा, किरण, ( पु० )                  विशाख-सामिकार्तिक, तर्क, ( पुं० )                  विशाखा विशाखा नामक नक्षत्र,                  करेला-शाक, ( स्त्री० ) ॥ १० ॥                  विशिखा-तोमर ( गुर्ज ), बाण, ( पुं० )                  खान-चादी आदिकी, गली, नाली,                  ( स्त्री० )</p>	<p>वैशाख-वैशाख मास, दधि मयनेवा,                  दंडा ( रई ) ( पुं० ) ॥ ११ ॥                  सुमुख-गरुडका पुत्र, पंडित, सर्पभेद                  ( पुं० ) ॥ १२ ॥                  सचतुर्थम् ।                  अग्निमुख-देवता, ब्राह्मण, कसूभा,                  ( पुं० )                  अग्निमुखी(ख)-भिलावा, ( स्त्री०                  न० ) ॥ १३ ॥                  अग्निशिखा-कलिहारी, ( स्त्री० )                  केसर, ( न० )                  इन्दुलेखा-चन्द्रकला, गिलोय, सोम-                  लता, ( स्त्री० ) ॥ १४ ॥</p>
--	--

पुंसि पञ्चनखः कूर्मे गजे गोधादिषु क्वचित् ।  
 वद्धशिखोच्चटायां स्याद्बाले वद्धशिखस्त्रिषु ॥ १५ ॥  
 महाशङ्खो नरास्थि स्यान्निधिसङ्घचाप्रभेदयोः ।  
 शिलीमुखो भवेद्भृङ्गे मार्गणे च शिलीमुखः ॥ १६ ॥

सपंचमम् ।

स्यान्मलिनमुखः प्रेते गोलाङ्गुले खलेऽनले ।  
 मतः शीतमयूखोऽपि शशिकर्पूरयोरयम् ॥ १७ ॥  
 सर्वतोमुखमाख्यातं क्लीवमाकाशपाथसोः ।  
 क्षेत्रज्ञविधिरुद्रेषु स पुमान् सर्वतोमुखः ॥ १८ ॥  
 इति विश्वलोचने खान्तवर्गः ॥

### अथ गान्तवर्गः ।

गैकम् ।

गो गन्धर्वे गणेशेऽर्के गं गीते शास्त्रगातरि ।  
 गौः पुमान् वृषभे स्वर्गे खण्डवज्रहिमांशुषु ॥ १ ॥

पंचनख—कलत्रा, हस्ती, गोधा (गोह) आदि, (पुं० स्त्री०)	सर्वतोमुख—आकाश, जल, (न०) आरमा, ब्रह्मा, रुद्र, (पुं०) ॥१८॥ इसप्रकार विश्वलोचनकी भाषाटी- कामें खातवर्ग समाप्त हुवा ।
वद्धशिखा—गुंजा (चिरमटी) (स्त्री०) बालक, (त्रि०) ॥ १५ ॥	
महाशंख—मनुष्यका अस्थि, खजाना- भेद, सरयाभेद, (पुं०)	
शिलीमुख—भौरा, बाण, (पुं०) ॥१६॥ सपंचमम् ।	
मलिनमुख—प्रेत, गौकी पूंठ, खल- मनुष्य, अभि, (पुं०)	
शीतमयूख—चंद्रमा, कपूर (पुं०) ॥ १७ ॥	ग—गन्धर्व, गणेश, सूर्य, (पुं०) गीत, शास्त्रना गानेवाला, (न०) गो—बैल, स्वर्ग, राड (डुकडा), वज्र, चन्द्रमा, (पुं०) ॥ १ ॥

अथ गान्तवर्गः ।

गैकम् ।

स्त्री गवि भूमिदिग्नेत्रवाग्याणसलिले स्त्रियः ॥ २ ॥

गद्वितीयम् ।

अगः स्यान्नगवद्वृक्षे शैले मानुभुजङ्गयोः ।

अङ्गा नीवृत्प्रभेदे स्युरङ्गो देशेङ्गमन्तिके ॥ ३ ॥

गात्रोपायाप्रधानेषु प्रतीकेष्वङ्गवत्वपि ।

अङ्ग संबोधनेऽसङ्गचं पुनरर्थप्रमोदयोः ॥ ४ ॥

इङ्गः स्यादिङ्गिते ज्ञाने जङ्गमाद्भुतयोरपि ।

खगो विहङ्गे विशिखे खगः सूर्ये सुरे ग्रहे ॥ ५ ॥

खङ्गः खङ्गिनि निखिंशे खङ्गिशृङ्गे जिनान्तरे ।

गाङ्गः पडानने भीष्मे गङ्गाभूते तु वाच्यवत् ॥ ६ ॥

चङ्गस्तु शोभने दक्षे टङ्गोऽस्त्री स्यात्स्वनित्रके ।

तथैवास्त्रान्तरेऽप्यस्त्री जङ्गायां खङ्गभेदके ॥ ७ ॥

गो-गौ, भूमि, दिशा, नेत्र, वाणी,  
(स्त्री०) जल, ( स्त्री० बहुवचनान्त )  
॥ २ ॥

गद्वितीय ।

अग-[ नगवेसमान ] वृक्ष, पर्वत,  
सूर्य सर्प, ( पुं० )

अंग-देशभेद ( पुं० बहुवचनान्त )  
देश ( पुं० ) समीप, ( न० ) ॥३॥

शरीर, उपाय, अप्रधान, मूर्ति,  
अंगवाला, ( त्रि० )

इंग-संबोधन, 'पुनः' अव्ययका अर्थ,  
आनंद, ( अव्यय ) ॥ ४ ॥

इंग-चेष्टित, ज्ञान, जंगम, अद्भुत(पुं०)  
खग-पक्षी, वाण, सूर्य, देवता, ग्रह,  
( पुं० ) ॥ ५ ॥

खङ्ग-गैडा, खङ्ग ( तलवार ), गैडाका  
सींग, जिनभेद ( बुद्ध ) ( पुं० )

गांग-स्वामिचार्तिक, भीष्म, ( पुं० )  
गंगासे उत्पन्नहुए ( त्रि० ) ॥ ६ ॥

चंग-सुन्दर, चतुर, ( पुं० )

टंग-खोदनेका औजार, अस्त्रभेद,  
पिंडुली, खङ्गभेद, ( पुं० न० )  
॥ ७ ॥

उन्नते वाच्यवत्तुङ्गस्तुङ्गः पुत्रागशैलयोः ।

वर्षरानिशयोस्तुङ्गी त्यागो दाने च वर्जने ॥ ८ ॥

दुर्गः स्याद्दुर्गमे दुर्गा चण्डीनीलिकयोर्मता ।

नगस्तु पर्वते वृक्षे नगो भानुमुजङ्गयोः ॥ ९ ॥

नागः पन्नगपुत्रागनागकेसरदन्तिषु ।

नागदन्तकजीमूतमुस्तके क्रूरकर्मणि ॥ १० ॥

देहाऽनिलान्तरे श्रेष्ठे श्रेष्ठ एवोत्तरस्थितः ।

नागं तु सीसके रङ्गे स्त्रीबन्धकरणान्तरे ॥ ११ ॥

पिङ्गः पिशङ्गे पिङ्गी तु शम्या पिङ्गं तु बालके ।

पिङ्गा रामठनील्या स्यादुमारोचनयोरपि ॥ १२ ॥

पूगस्तु निकुरम्बे स्यात्पूगः क्रमुकपादपे

फल्गुर्मलप्वामाख्याता निष्फले फल्गु वाच्यवत् ॥ १३ ॥

तुङ्ग—केंचा, (त्रि०) चंपा, पर्वत, (पु०)

तुङ्गी—वर्बरी ( तिलवणी ) शाक,  
हलदी, ( स्त्री० )

त्याग—दान वर्जना, ( पुं० ) ॥ ८ ॥

दुर्ग—दुर्गमस्थान ( त्रि० ) ( पु० )

दुर्गा—चंडी ( देवी ), नीलीका वृक्ष,  
( स्त्री० )

नग—पर्वत, वृक्ष, सूर्य, सर्प, ( पुं० ) ॥ ९ ॥

नाग—सर्प चंपा, नागवेसर, हस्ती,

हाथी दौत, मेघ, नागरमोघा, क्रूर-

कर्म करनेवाला, ॥ १० ॥ शरीरमें

रहनेवाला एक वायु, श्रेष्ठ, किसी

शब्दके आगे जुड़ा हुआ श्रेष्ठको ही

बहनेवाला, ( पु० ) सीसा, रौंग,

त्रियोंके धाँधनेका उपकरण ( न० )

॥ ११ ॥

पिङ्ग—पिङ्गलवर्ण ( पु० ) पिङ्गी जौट-

वृक्ष, ( स्त्री० ) बालक, ( न० )

पिङ्गा—होंग, नीला—वृक्ष, उमा ( देवी )

गोरोचन, ( स्त्री० ) ॥ १२ ॥

पूग—समूह, सुपारीका वृक्ष, ( पुं० )

फल्गु—कटूमर वृक्ष, ( स्त्री० ) निष्फल

( नि सार ) ( त्रि० ) ॥ १३ ॥

भगं तु जानयोनीच्छायशोमाहात्म्यमुक्तिपु ।  
 ऐश्वर्यवीर्यवैराग्यधर्मश्रीरत्नमानुपु ॥ १४ ॥  
 भङ्गस्तरङ्गरुग्मेदे दम्भे जयविपर्यये ।  
 भङ्गा शणाख्यसस्ये स्याद्भागो रूपार्धकाशयो ॥ १५ ॥  
 एतद्देशे च भाग्ये च विपूर्वस्तु विभङ्गने ।  
 भृगुः शुके प्रपाते च जमदग्निं पिनाकिनि ॥ १६ ॥  
 भृङ्गः पुष्पत्वपे खिङ्गे तथा धूम्याटपक्षिणि ।  
 नपुसक तु भृङ्गं स्यात्केशराजभृगूटयो ॥ १७ ॥  
 पुसि भोगः सुखेऽपि स्यादहेक्ष्य फणकाययो ।  
 निवेशे गणिकादीना भोजने पालने घने ॥ १८ ॥  
 मार्गोऽग्रहायणे वाटे कस्तूरीविषयोरपि ।  
 मृगः कुरङ्गेऽपि पशौ मृगयामृगशीर्षयो ॥ १९ ॥

भग-ज्ञान, योनि, इच्छा, यश,  
 माहात्म्य, मुक्ति, ऐश्वर्य, वीर्य,  
 वैराग्य, धर्म, श्री ( सम्पत्ति ),  
 रत्न, सूर्य, ( पु० न० ) ॥ १४ ॥

भग-तरंग, रोगभेद, दम्भ, हारना,  
 ( पु० )

भङ्गा-भङ्ग, ( स्त्री० )

भाग किसी वस्तुका आधाभाग, बाँटा  
 ( हिस्सा ) ॥ १५ ॥ एकदेश,  
 भाग्य, ( पु० ) और विपूर्वक  
 अर्थात् 'विभाग' विभजन ( तोड़ना ),

भृगु-शुक-प्रह, पर्वतमें नहीं ठहरनेको

जगह, जमदग्नि-ऋषि, महादेव,  
 ( पु० ) ॥ १६ ॥

भृगु-भौंरा, कामीपुरुष ( धूर्त ),  
 पपीहा-पक्षी, ( पु० ) भँगरा,  
 दालचीनी ( न० ) ॥ १७ ॥

भोग-सुख, सर्पका फण और शरीर,  
 वेश्या आदिका भोगना, भोजन,  
 पालन, घन, ( पु० ) ॥ १८ ॥

मार्ग-मार्गशिर-मास, मार्ग, कस्तूरी,  
 विष, ( पु० )

मृग-हरिण, पशु, मृगया ( शिकार ),  
 मृगशिर नक्षत्र ॥ १९ ॥



हस्तिभेदेऽपि याच्नायां मृगी स्यान्नायिकान्तरे ।  
 प्रशस्तरथसाराङ्गं युग्मेऽपि स्यात्कृतादिषु ॥ २० ॥  
 युगं हस्तचतुष्केऽपि वृद्धिनामौषधेऽपि च ।  
 योगः संनाहसंधानसङ्गतिध्यानकर्मणि ॥ २१ ॥  
 विष्कम्भादिषु सूत्रे च द्रव्ये विश्वस्तथातिनि ।  
 चरे चापूर्वलाभेऽपि भेषजोपाययुक्तिषु ॥ २२ ॥  
 रागोऽनुरागमात्सर्षे क्लेशादौ लोहितादिषु ।  
 गान्धारादौ नृपे नागे रोगः कुष्ठौषधे गदे ॥ २३ ॥  
 लङ्गः खिङ्गेऽपि सङ्गेऽपि लिङ्गं चिह्नाऽनुमानयोः ।  
 मेहने शिवभेदे च साह्योक्तप्रकृतावपि ॥ २४ ॥  
 वङ्गो देशान्तरे भण्टातकीकार्पासयोः पुमान् ।  
 वङ्गं रङ्गे च नागे च वङ्गा पुंभृञ्चि नीवृति ॥ २५ ॥

हस्तिभेद, याचना, ( पुं० )

मृगी-झी-भेद, ( स्त्री० )

युग-श्रेष्ठ, रथ और हलका अंग (जूता),

दो सत्या तथा सत्येय, सत्ययुगा-

दिजुग, चारहाथके प्रमाणवाला,

वृद्धि नामक औषध, ( न० ) ॥ २० ॥

योग-कवच आदिका धौधना, शर-

आदिका संधान करना, संगति,

ध्यानकर्म, ॥ २१ ॥ विष्कम्भ आदि-

कयोग, सूत्र, द्रव्य, विधासघाती,

फिरनेवाला, अपूर्व लाभ, औषध,

उपाय, युक्ति, ( पु० ) ॥ २२ ॥

राग-प्रीति, मत्सरता, क्लेशआदि, लो-

हितआदि रग, गान्धार आदि-नामे छा

राग, राजा, नाग, ( पु० )

रोग-रूट नाम औषध, व्याधि (रोग)

( पुं० ) ॥ २३ ॥

लङ्ग-धूर्त, रग, ( पुं० )

लिङ्ग-चिह्न, अनुमान, पुरुषकी विषय

इन्द्रिय, शिवभेद, साख्यशास्त्रमें वही

हुई प्रकृति ( माया ) ( न० ) ॥ २४ ॥

वङ्ग-देशान्तर, घेंगन, कपास ( पु० )

राग, शास्ता, ( न० ) \* वङ्गदेश,

( पुं० बहुवचनान्त ) ॥ २५ ॥

वर्गोऽध्याये च वृन्दे च वर्गः पञ्चाक्षरीभिदि ।  
 वल्गुर्ना नकुले छागे मनोज्ञे वल्गु वाच्यवत् ॥ २६ ॥  
 वेगो जवे प्रवाहे च महाकालफलेऽपि च ।  
 व्यङ्गस्तु पुंसि मण्डूके हीनाङ्गे व्यङ्गमन्यवत् ॥ २७ ॥  
 श्लिषं शरासने शार्ङ्गं शार्ङ्गं विष्णुशरासने ।  
 शृङ्गं विषाणे शिखरे प्रभुत्वोत्कर्षसानुषु ॥ २८ ॥  
 चिह्ने क्रीडाम्बुयध्रे च शृङ्गः स्यात्कूर्चशीर्षके ।  
 शृङ्गी विषायामृषभे मीनस्वर्गविशेषयोः ॥ २९ ॥  
 सर्गः स्वभावनिर्मोक्षनिश्चयोत्साहसृष्टिषु ।  
 मोहेऽध्याये च शुङ्गी तु न्यग्रोपप्लक्षपीतने ॥ ३० ॥

गर्तृतीयम् ।

अनङ्गो मन्मथेऽनङ्गमाकाशमनसोर्मितम् ।  
 अङ्गहीनेऽप्यनङ्गः स्यादङ्गभूतविपर्यये ॥ ३१ ॥

वर्ग-अध्याय ( प्रसंगसमाप्ति ), स-  
 मूढ, पंचाक्षरीभेद, ( पुं० )  
 वल्गु-नाला, वक्रता, ( पुं० ) सुन्दर,  
 ( त्रि० ) ॥ २६ ॥  
 वेग-जन्दीकरणा, प्रवाह-नदी आ-  
 रिका, महाकालका फल, ( पुं० )  
 व्यङ्ग-मैटक ( पुं० ) हीनअंगवाला  
 ( त्रि० ) ॥ २७ ॥  
 शार्ङ्ग-धनुषमात्र, विष्णुका धनुष  
 ( न० )  
 शृङ्ग-गोम, गिगर, प्रभुता, उन्कषं  
 ( वृद्धमन ), पर्वतको गिगर,  
 चिह्, शीमन्नेट्टिये जटवंत्र,

( न० ) ॥ २८ ॥ जीवक-औषधि,  
 ( पुं० )  
 शृङ्गी-रूपम औषध, ( स्त्री० ) मीन-  
 भेद, स्वर्गभेद, ( पुं० ) ॥ २९ ॥  
 सर्ग-स्वभाव, उपरी काचली, ति-  
 थय, उल्गाह, सृष्टि, मोह, अध्याय,  
 ( पुं० )  
 शुङ्गी-वड वृक्ष, पारार-वृक्ष, अवाडा,  
 ( स्त्री० ) ॥ ३० ॥  
 गर्तृतीय ।  
 अनङ्ग-दानदेव, ( पुं० ) आकाश, मन,  
 ( न० ) अङ्गहीन, अगोत्री विप-  
 र्ययता ( पुं० ) ॥ ३१ ॥

अपाङ्गस्त्वङ्गविकले नेत्रान्ते तिलके पुमान् ।  
 अयोगो विधुरे कूटे विश्लेषे कठिनोद्यमे ॥ ३२ ॥  
 आभोगो वारुणच्छत्रे यत्नपूर्णत्वयोरपि ।  
 आयोगो गन्धमाल्यादिव्यसनेऽपि च दौर्गुणे ॥ ३३ ॥  
 व्यापाररोधयोश्चाऽऽय आशुगो वाणवातयोः ।  
 उत्सर्गो वर्जने त्यागे सामान्ये न्यायदानयोः ॥ ३४ ॥  
 उद्वेग उद्धाहुलके पुमानुद्वेजनेऽपि च ।  
 भवेदुद्गमने चायमुद्वेगं क्रमुकीफले ॥ ३५ ॥  
 कलिङ्गः पूतिकरजे धूम्याटे विषयान्तरे ।  
 नीवृद्धेदे कलिङ्गस्तु त्रिषु दग्धविदग्धयोः ॥ ३६ ॥  
 कलिङ्गं कौटजफले कलिङ्गा योपिति स्त्रियाम् ।  
 कलिङ्गो भूमिकूष्माण्डे मतङ्गजमुजङ्गयोः ॥ ३७ ॥

अपाङ्ग—अगविकल पुरुष, नेत्रोका  
 अतभाग, तिलक, ( पु० )

अयोग—वियोगवाला, नहीं हिलने-  
 वाला, अलगपना, कठिन, उद्यम,  
 ( पुं० ) ॥ ३२ ॥

आभोग—वरुणका छत्र, जतन, परि-  
 पूर्णपना, ( पु० )

आयोग—गंधमाला आदिका व्यसन,  
 किसीको प्रेरणा, व्यापार, रोकना,  
 लाभ, ( पु० ) ॥ ३३ ॥

आशुग—वाण, वायु, ( पुं० )

उत्सर्ग—वर्जना, त्यागकरना, सामा-  
 न्यविधि, न्याय, दान, ( पुं० ) ॥ ३४ ॥

उद्वेग—उद्धाहुलक ( भुजाउठानेवाला,  
 उद्वेजन ( डराना ), उद्गमन  
 ( ऊपरको गमन ) ( पुं० ) सु-  
 पारी, ( न० ) ॥ ३५ ॥

कलिङ्ग—वरजुवा-वृक्ष, पपोहा पक्षी,  
 देशमान, मनुष्योंका बसाया देश,  
 ( पुं० ) दग्ध, चतुर, ( त्रि० )  
 ॥ ३६ ॥

कलिङ्ग—इंद्रजव, ( न० )

कलिङ्गा—कलिङ्गदेशमें होनेवाली स्त्री  
 ( स्त्री० )

कलिङ्ग—भूमिकोहला, हस्तो, सर्प,  
 ( पुं० ) ॥ ३७ ॥

कालिङ्गी राजकर्कट्यां कालिङ्गस्त्रिषु तद्ववे ।  
 चक्राङ्गी कटुरोहिण्यां चक्राङ्गश्चक्रपक्षिणि ॥ ३८ ॥  
 जिह्मगो भुजगे पुंसि मन्दगे त्रिषु जिह्मगः ।  
 तडागः सरसि ख्यातस्तडागो यग्रकूटके ॥ ३९ ॥  
 तातगुः सुद्रताते स्याज्जने पितृहितेऽपि च ।  
 तुरगी त्वश्वगन्धायां तुरगो हयचित्तयोः ॥ ४० ॥  
 त्रिवर्गो धर्मकामार्थसंहतौ च कटुत्रिके ।  
 त्रिकलायां सत्त्वरजस्तमसामपि संहतौ ॥ ४१ ॥  
 वृद्धिम्यानक्षयैकोक्तौ धाराङ्गस्त्वसितीर्थयोः ।  
 नरङ्गं तु वरण्डे च वृत्तिकीलकशेफसोः ॥ ४२ ॥  
 नागरङ्गेऽपि नारङ्गो नारङ्गो यमजेऽपि च ।  
 विटे जन्तौ च नारङ्गो नारङ्गं पिप्पलीरसे ॥ ४३ ॥

कालिङ्गी-बड़ी बकरी, ( स्त्री० ) क- कर्ममें होनेवाले योजआदि, ( त्रि० )	त्रिवर्ग-धर्म अर्थ और काम, सुंठ मिरच और पीपल, हरड बहेडा और आवला, सत्य रजम् और तमर, ॥ ४१ ॥ वृद्धि स्थान और क्षय, ( पुं० )
चक्राङ्गी-गुटकी, ( स्त्री० )	धाराङ्ग-तटपार, तीर्थ, ( पुं० )
चक्राङ्ग-चक्रपा पक्षी, ( पुं० ) ॥ ३८ ॥	नरङ्ग-मुगरोग, चारोंतरफका कंठा, शिग्रहद्विन्दुचिह्न, ( न० ) ॥ ४२ ॥
जिह्मग-गर्भ, ( पुं० ) मंदचलने- वाला, ( त्रि० )	नारङ्ग-नारंगी रस, जोंडया पुकर, कान्ठी पुकर, प्रणी, शीतल रस, ( पु० न० ) ॥ ४३ ॥
तडाग-गरोवर, चंद्रोखा समुद्राय ( पुं० ) ॥ ३९ ॥	
तातगु-चक्रा पिताका शिशुपती जन, ( पुं० )	
तुरगी-आसक्त, ( स्त्री० )	
तुरग-अध, चित्त, ( पुं० ) ॥ ४० ॥	

निपङ्गो वाणधौ सङ्गे निसर्गः शीलसर्गयोः ।  
 नीलङ्गुः कृमिकीटे स्याद् भंभराल्यामुशीरके ॥ ४४ ॥  
 पतङ्गः शलभे सूर्ये खगे शाल्यन्तरेऽपि च ।  
 रसे पतङ्गे पत्राङ्गं रक्तचन्दनभूर्जयोः ॥ ४५ ॥  
 पद्मके चाथ सर्पेऽपि पद्मकाष्ठेऽपि पद्मगः ।  
 परागः पुष्परजसि खानीयादौ रजत्यपि ॥ ४६ ॥  
 विख्यातावुपरागेऽपि चन्दने पर्वतान्तरे ।  
 पुन्नागः पुरुषश्रेष्ठे वृक्षभेदे सित्तोत्पले ॥ ४७ ॥  
 जातीफलेऽपि पुन्नागः पाण्डुनागे च दृश्यते ।  
 प्रयागस्तीर्थभेदे स्याद्यज्ञे वाहे विडौजसि ॥ ४८ ॥  
 प्रयोगः काम्ये पुंसि प्रयुक्तौ च निदर्शने ।  
 प्रियङ्गुः फलिनीकङ्कुराजिकापिप्पलीष्वियम् ॥ ४९ ॥

निपङ्ग—तरकस, सग, ( पु० )

निसर्ग—स्वभाव, सर्ग ( रचना ) ( पु० )

नीलङ्गु—छोट्याकीडा, मक्षिका, खस,  
( पुं० ) ॥ ४४ ॥

पतङ्ग—शलभ-रीढी सूर्य, पक्षी,  
शालिभेद, रस, पतंग काष्ठ,

पत्राङ्ग—रक्तचंदन, भोजपत्र, ( न० )  
॥ ४५ ॥

पद्मग—कूट औषधि, सर्प, पद्मख,  
( पुं० )

पराग—पुष्पकी रज, खानमें लगानेकी  
रज, ॥ ४६ ॥ विख्याति, ग्रहण,  
चन्दन, पर्वतभेद, ( पुं० )

पुन्नाग—पुरुषोमें श्रेष्ठ, वृक्षभेद, सफेद-  
कमल, ॥ ४७ ॥ जायफल, पुन्ना-  
गवृक्ष, सफेद हस्ती तथा सर्प  
( पुं० )

प्रयाग—प्रयाग नाम तीर्थ, यज्ञ, अश्व,  
इन्द्र, ( पुं० ) ॥ ४८ ॥

प्रयोग—औषधियोंके योगसे उच्चाटन  
आदिभ्रम, युक्त करना, दिखाना,  
( पुं० )

प्रियङ्गु—प्रियङ्गु—वृक्ष या माधाटी, माल-  
कांगनी, राई, पीपल, ( पु० )  
॥ ४९ ॥

सुवगो वानरे भेके तीक्ष्णदीधितिसारथौ ।  
 भुजङ्गो भुजगे पिङ्गे मातङ्गः श्वपचे गजे ॥ ५० ॥  
 मृदङ्गः पटहे घोषे रक्ताङ्गा जीविकौषधौ ।  
 रक्ताङ्गो मङ्गले क्लीबं धीरकाम्पिल्यविद्रुमे ॥ ५१ ॥  
 रथाङ्गमद्वयोश्चक्रे रथाङ्गश्चरुपक्षिणि ।  
 वराङ्गं मस्तके योनौ गुडत्वचि गजे स्त्रियाम् ॥ ५२ ॥  
 वातिगस्तु दशापाके वार्ताक्रीधालुवादिनोः ।  
 विडङ्गोऽम्ब्री कृमिभे स्याद् विडङ्गो नागरेऽन्यवत् ॥ ५३ ॥  
 विहगस्तु विहङ्गे स्यादग्रे विहगस्त्रिषु ।  
 विसर्गस्तु भवे दाने त्यागे च मलनिर्गमे ॥ ५४ ॥  
 विसर्जनीये मुक्तौ च भासतश्चायनान्तरे ।  
 रते भोगे च सम्भोगः सम्भोगो जिनशासने ॥ ५५ ॥

शृण्ग-बन्दर, भेङ्क, सूर्यका सारथि  
 ( अट्ट ) , ( पुं० )

भुजङ्ग-सर्प, धूर्त, ( पुं० )

मातङ्ग-चाण्डाल, दस्यु, ( पुं० ) ॥ ५० ॥

मृदङ्ग-पटह ( ढोल ), अदीर्घका  
 ग्राम, ( पुं० )

रत्ताङ्ग-ज्येष्ठी या दोश औषधि  
 ( स्त्री० )

रथाङ्ग-मङ्गल ग्रह, ( केसर या जार-  
 रान, ( न० ) कबीला-औषधि,

कृष्ण, ( न० ) ॥ ५१ ॥

रथाङ्ग-जाडी रथ आरिक्के पक्षिणी,  
 ( न० ) पट्टा-पक्षी ( पुं० )

वराङ्ग-पट्ट, भग ( स्त्रीया योनि )

तेजपात या दालचीनी, हाथीसूत्र  
 शृण, ( न० ) ॥ ५२ ॥

वातिग-दशाफल, बंगन, धानुवादी,  
 ( पुं० )

विडङ्ग-बायविहङ्ग, ( पुं० न० ) चतुर,  
 ( त्रि० ) ॥ ५३ ॥

विहग-पक्षी, ( पुं० ) शीघ्र चलने-  
 वाला ( त्रि० )

विसर्ग-बन्धरोना, दान, त्याग,  
 मलका ( विद्याका ) त्यागना, ॥ ५४ ॥

विगर्जनीय ( वर्णके धामे दोषिद्रु ),  
 मुक्ति, सूर्यका अयनभेद, ( पुं० )

सम्भोग-प्रीत्यङ्ग, वस्तुओंका भो-  
 गना, त्रिनशिश ( पुं० ) ॥ ५५ ॥

सर्वगं सलिले क्लीबं सर्वगः शङ्करे विभौ ।

सारङ्गो मृगमातङ्गचातकेषु स्वगान्तरे ॥ ५६ ॥

मृङ्गे त्रिषु तु किर्मिरे हेमाङ्गस्त्राक्ष्यवेधसोः ।

गचतुर्थम् ।

अनुपङ्गस्तु नाऽऽरब्धे कारुण्येऽपि कचिन्मतः ॥ ५७ ॥

त्यागे मोक्षेऽपवर्गः स्यात्साफल्ये कृतकृत्यतः ।

अभिपङ्गस्तु ससर्गशपथाक्रोशगञ्जने ॥ ५८ ॥

ईहामृगो वृके जन्तौ प्रभेदे चंपकस्य च ।

अथोपरागः स्वर्मानुप्रस्तयोः पुष्पवन्तयोः ॥ ५९ ॥

दुर्नयग्रहकल्लोले परीवापे तु पुंस्ययम् ।

उपसर्गः स्मृतो रोगभेदे चोपप्लवेपि च ॥ ६० ॥

कटभङ्गस्तु शस्त्रानां नखच्छेदे नृपात्यये ।

छत्रभङ्गस्तु वैधव्येऽस्त्रातश्चनृपनाशयोः ॥ ६१ ॥

सर्वग—जल ( न० ) महादेव, स  
मर्थ, ( पुं० )

सारङ्ग—मृग, हस्ती, पपीहा पक्षी,  
पक्षीभेद, ॥ ५६ ॥ भौरा, ( पुं० )

चित्तद्वरा ( त्रि० )

हेमाङ्ग—गरुड, प्रज्ञा ( पुं० )

गचतुर्थम् ।

अनुपङ्ग—भारभ, 'एक जगद्के  
पदको दूमरे स्थानमें अन्वयमे

लेना', दयालुपना, ( पुं० ) ॥ ५७ ॥

अपवर्ग—त्याग, मोक्ष, करेहुए कृ-  
ष्यकी सफलता, ( पुं० )

अभिपङ्ग—संसर्ग, शपथ ( सांगन ),  
गाली, तिरस्कार, ( पु० ) ॥ ५८ ॥

ईहामृग—भेडिया, जन्तु, चंपाका  
भेद, ( पुं० )

उपराग—राहुसे चंद्रसूर्यका प्रसना  
( ग्रहण ) ॥ ५९ ॥ दुर्नय ( खो-

टीनीति), ग्रहोंका युद्ध, वैशम्पैयना,  
( पुं० )

उपसर्ग—रोगभेद, उल्कापात आदि  
उपद्रव, ( पुं० ) ॥ ६० ॥

कटभंग—छोटे और हरित वृण आदि-  
कोंरा नखसे छेदन, राजाका

नाश, ( पुं० )

छत्रभंग—विधवापना, पराधीनता,  
राजाका नाश, ( पुं० ) ॥ ६१ ॥

दीर्घाध्वगस्तु करभे रेसहारे तु वाच्यवत् ।  
 मह्यनागोऽभ्रमातङ्गे वात्स्यायनमुनावपि ॥ ६२ ॥  
 राजशृङ्गस्तु कनकदण्डमुद्गरयो पुमान् ।  
 समायोगस्तु सयोगे समवाये प्रयोजने ॥ ६३ ॥  
 सम्प्रयोगस्तु सुरते कार्मणेप्यन्वयेऽपि च ॥ ६४ ॥

गपञ्चमम् ।

कथाप्रसङ्गो वातूले विपवैद्ये च वाच्यवत् ।  
 नाडीतरङ्गः काकोले हिंडके रतहिण्डके ॥ ६५ ॥  
 इति विश्वलोचने गान्तवर्गं ॥

### अथ घान्तवर्गः ।

पंक्तम् ।

घो षण्टाया च घा घाते क्लिक्किण्या स्त्री ध्वनौ तु घः ।

दीर्घाध्वग-ऊँट, ( पु० ) परवाना  
 पट्टुवानेकाग, ( त्रि० )  
 मह्यनाग-दरका हस्ती, वात्स्यायन  
 मुनि, ( पु० ) ॥ ६२ ॥  
 राजशृङ्ग-मुर्गाका दण्ड ( उरु ),  
 मुद्गर, ( पु० )  
 समायोग-संयोग, समवाय संबन्ध,  
 अभिप्राय, ( पु० ) ॥ ६३ ॥  
 सम्प्रयोग-कर्मसंग, औपधिर्देह यो  
 र्ते ऋत्विज आदि कर्म, अन्यत्र  
 ( अ इ इट पदेषु संबन्ध ) ( पु० )  
 ॥ ६४ ॥

गपञ्चमम् ।

कथाप्रसङ्ग-वातूल या वायुको न  
 सहनेवाला, विपद्या वैद्य, ( त्रि० )  
 नाडीतरङ्ग-ककोल, रमका आ-  
 चार्य, रीतीर ( पु० ) ॥ ६५ ॥  
 इग प्रकार विश्वलोचनकी भाषा-  
 टाकामे गान्तवर्ग समाप्त हुआ ।

अथ घान्तवर्गः ।

पंक्तम् ।

घ-पग, ( पु० )  
 घा-पग, कपनी ( स्त्र० )  
 घ-पञ्च ( पु० )



घद्वितीयम् ।

पापेऽर्चो व्यसने चाऽघं स्यादर्घोऽर्चनमूल्ययोः ॥ १ ॥

अङ्घ्रिः स्याज्जानुचरणे मूले चापि महीरुहाम् ।

उद्धो हस्तपुटे देहपवने पावके पुमान् ॥ २ ॥

ओघ परम्पराया स्याद्द्रुतनृत्योपदेशयो ।

ओघः पाथ प्रवाहे च समूहे च पुमानयम् ॥ ३ ॥

मघा दशमनक्षत्रे मघा स्याद्द्रुतजान्तरे ।

वारिवाहेऽपि मेघः स्यान्मेघः स्यान्मुस्तकेऽपि च ॥ ४ ॥

मोघन्तु निष्फले दीने मोघा पाटलिपादपे ।

लघुर्मनोजनिस्सारागुरुलघुषु वाच्यवत् ॥ ५ ॥

पृकाया स्त्री लघु क्लीब कृष्णागुरुणि सत्वरे ।

श्लाघा तु स्यात्प्रशसाया परिचर्याऽभिलापयोः ॥ ६ ॥

घद्वितीय ।

अघ-पाप, पीडा, व्यसन, ( न० )

अर्घ-मूत्रादिभिः, मूल्य ( मोल )  
( पु० ) ॥ १ ॥

अङ्घ्रि-पौट्ट ( गोटा ), चरण ( पाँव ),  
वृक्षोर्मो जड ( पुं० )

उद्ध-क्षामका पुट्ट, शरीरका पवन,  
अग्नि, ( पु० ) ॥ २ ॥

ओघ-परम्परा, शीघ्र नृत्य, शीघ्र उपदेश,  
जलका प्रवाह, समूह, ( पुं० ) ॥ ३ ॥

मघा-दशमो नक्षत्र ( मघा ), शब्दसे

उत्पन्न हुए मान आदि ( स्त्री० )

मेघ-बहल, नागरमोघा औपधि,  
( पु० ) ॥ ४ ॥

मोघ-निष्फल, दीन, ( पु० )

मोघा-मोक्षानाम-वृक्ष, ( स्त्री० )

लघु-मुदर, निस्तार, अगुरु ( छोटा ),  
हल्का, ॥ ५ ॥ ( नि० ) असव-  
रग-औपधि ( स्त्री० )

लघु-काला अगर, शीघ्रता ( न० )

श्लाघा-प्रशसा ( बडाई ), शुभूषा,  
अभिलाषा ( इच्छा ), ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥

पृथ्वीयम् ।

अमोघः सकलेऽमोघा ख्याता पथ्याविडङ्गयोः ।  
 उद्धाघो नीरुजे दक्षे शुचौ हर्षयुते त्रिषु ॥ ७ ॥  
 काचिघः काञ्चने पुंसि भूपके स्वच्छमण्डपे ।  
 निदाघ उष्णकाले स्यात्तापेऽपि स्वेदवारिणि ॥ ८ ॥  
 परिघो मुद्गरे योगभेदे स्वकुलघातयोः ।  
 पलिघः काचकलशे घटप्राकारगोपुरे ॥ ९ ॥  
 प्रतिघस्तु भवेत्क्रोधे प्रतिघातेऽप्यथ त्रिषु ।  
 महार्घः स्यान्महामूल्याऽनर्घयोर्लावके पुमान् ।  
 सर्वौघो गुरुवेगार्थसर्वसन्नहनार्थयोः ॥ १० ॥

इति विभक्तौचने पान्तवर्गः ॥

घृतीय ।

अमोघ-राफल, ( त्रि० )  
 अमोघा-हरद, काचविडंग, ( स्त्री० )  
 उद्धाघ-रोगघे गुटाहुवा, पपुर, पवित्र,  
 आनंदपाला, ( त्रि० ) ॥ ७ ॥  
 काचिघ-गुरुर्ग, ( पुं० ) मूसा  
 ( पुरा ), मण्डप ( पुं० )  
 निदाघ-प्रोक्तं ऋतु, ताप ( गरमो ),  
 परमानाद्या पानी, ( पुं० ) ॥ ८ ॥  
 पलिघ-श्लेष्म मुद्गर, रिष्टंन आदि  
 रोगोभे एव रोग, अपना या पुलका  
 नरा, ( पुं० )

पलिघ-काचकलश, घट, किला,  
 पुराका दरवाजा, ( पुं० ) ॥ ९ ॥

प्रतिघ-शोध, प्रतिघात ( बदलेसे-  
 मारना ) ( पु० )

महार्घ-बहुतमोठमाली वस्तु, अमूल्य  
 ( जिगरी कामत न होसके ),  
 ( त्रि० ) लवा-नक्षी, ( पुं० )

सर्वौघ-बहुत बेग, सबतरफसे फयज  
 धारण, ( पुं० ॥ १० ॥

इगप्रधार विभक्तौचनकी भापाटीकामें  
 पान्तवर्ग गनात हुवा ॥

## अथ डान्तवर्गः ।

डैकम् ।

भैरवे विषये डः स्यात् ॥

इति विश्वलोचने डान्तवर्गं ॥

## अथ चान्तवर्गः ।

चैकम् ।

चस्तु तस्करचन्द्रयोः ॥

चद्वितीयम् ।

अर्चा पूजाप्रतिमयोरुच्चो महति चोन्नते ।

कचः केशेऽपि ह्रीवरे कचो गीष्पतिनन्दने ॥ १ ॥

कचः शुक्लव्रणे बन्धे करिण्यां तु कचा स्त्रियाम् ।

काचस्तु स्यान्मणौ शिष्ये नेत्ररोगे मृदन्तरे ॥ २ ॥

काञ्ची तु मेखलादाम्नि नीवृदन्तरगुञ्जयोः ।

कूर्चमस्त्री भ्रुवोर्मध्ये शोधश्मश्रुविकथने ॥ ३ ॥

अथ डान्तवर्गः ।

डैक ।

ड-भैरव, विषय, ( भोग ) ( पुं० )

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटी-

कामें डान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

अथ चान्तवर्गः ।

चैक ।

च-चोर, चन्द्रमा, ( पुं० )

चद्वितीय ।

अर्चा-पूजा, प्रतिमा ( मूर्ति ) ( स्त्री० )

उच्च-बहा, ऊँचा, ( पुं० )

कच-केश ( बाल ), नेत्रवाला-औं-

पधि, बृहस्पतिका पुत्र, ॥ १ ॥

सूखा व्रण ( घाव ), बंध, ( पुं० )

कचा-हथनी, ( स्त्री० )

काच-मणि, छोका, नेत्ररोग, मि-

ष्ट्रीका भेद, ( पुं० ) ॥ २ ॥

काञ्ची-करधनीकी लड़ी, काञ्ची-पुरी,

गुजा ( चिरमठी ) ( स्त्री० )

कूर्च-भ्रुकुटियोंके बीचका भाग,

सोजा, दाढ़ी मूठ, धक्काद,

( न० ) ॥ ३ ॥

क्रांश्चस्तु पक्षिभेदे स्यान्नंगद्वीपप्रभेदयोः ।  
 चञ्चो नालादिनिर्माणे चञ्चा तु तृण पूरुपे ॥ ४ ॥  
 चञ्चुः पद्याहुले त्रोट्यां गोनाडीचकलिञ्चयोः ।  
 चर्चा तु स्यामके तर्के चर्चिकाचिन्तयोस्तले ॥ ५ ॥  
 त्वक् स्त्रियां चल्कलेऽपि स्याच्चर्ममात्रे गुडत्वचि ।  
 नीचस्तु पामरे निम्ने वामनेऽप्याभिधेयवत् ॥ ६ ॥  
 न्यग् निम्ने पामरे कात्कर्ये पिचुः स्यात्पुंसि तूलके ।  
 कृष्णे दैत्यान्तरे कर्पे भैरवस्थाननान्तरे ॥ ७ ॥  
 प्राक् प्राच्ये वाच्यवत् काले दिग्देशे त्वव्ययं मतम् ।  
 मोचः सौभाजने पुंसि मोचा शाल्मलिरम्मयोः ॥ ८ ॥  
 रुचिरिच्छा रुचा रुक्ता शोभामिष्वङ्गयोरपि ।  
 रुक् शोभायां च किरणे स्त्रियामपि मनोरथे ॥ ९ ॥

क्राञ्च-कूज-पक्षी, एकपर्वत, एक  
 द्वीप, ( पुं० )

चञ्च-नालआदिषु यनाना ( सांचामे  
 दालना ) ( पुं० )

चञ्चा-नृणां यनाया पुरय ( इषया )  
 ( स्त्री० ) ॥ ४ ॥

चञ्चु-भरत, छोटी इलायची, चास-  
 भैर, सूतनकाट, ( पुं० )

चर्चा-छरीरके चंद्र आदिषु लो-  
 टना, तर्क, देवीरिसेर, चिन्ता,  
 लक्षणा, ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥

त्वक् ( च् ) इषका बहल, चर्म, दाल-  
 चर्चो वा चर्चियां, ( स्त्री० )

नीच-चमर ( नीचपुर), भीमा-  
 लय, चंदा, ( त्रि० ) ॥ ६ ॥

न्यग्-नीचा-स्थल, पामर-पुरय,  
 सम्पूर्णता ( त्रि० )

न्यक्( च् )-नीचा-स्थल, पामर-पुरय,  
 सम्पूर्णता ( त्रि० )

पिचु-निगोया हुआ फोया, काल-  
 वर्णकाला, दैत्यभेद, सोलहमासा-  
 प्रमाण, भैरववा युग, ( पुं० )

॥ ७ ॥

प्राक्( च् ) पहले होनेवाला, ( त्रि० )  
 पूर्व काल, पूर्व देश, ( ज० )

मोच-सहजना-वृष, ( पुं० )

मोचा-शाल्मलि ( साल ) वृष,  
 केलारुप, ( स्त्री० ॥ ८ ॥

रुचि-रुचा-रुच्छा, दीप्ति, शोभा,  
 मिलाप, ( स्त्री० )

रुक्-शोभा, किरण, मनोरथ, ( स्त्री० )  
 ॥ ९ ॥

वचः शुके वचा तूग्रगन्धासारिकयोः स्त्रियाम् ।  
 वाग्भारतीगिरोर्वीचिर्द्वयोः स्वल्पतरङ्गयोः ॥ १० ॥  
 अवकाशे सुखे चाथ शचीन्द्राणी शतावरी ।  
 शुचिः पुंस्युपधाशुद्धमन्त्रिण्यापाढबर्हिपोः ॥ ११ ॥  
 शृङ्गारग्रीष्मयोः श्वेतमेघ्यानुपहते त्रिषु ।  
 सूची कराद्यभिनये वेधनीशिखयोरपि ॥ १२ ॥  
 सूची सीमन्तिनीनां च कथिता करणान्तरे ॥ १३ ॥  
 चतुर्थीयम् ।

अवीचिर्नरके घूर्मिविरहे घूर्मिवर्जिते ।  
 भवेदुदक् त्रिपूदीच्ये दिग्देशकालतोऽव्ययम् ॥ १४ ॥  
 कणीचिः पुष्पितलतागुञ्जयोः शकटेऽपि च ।  
 कवचो वारबाणे स्यात्पटहे गर्दभाण्डके ॥ १५ ॥

वच-सूया (तोता) पक्षी, (पुं०)  
 वचा वच-औषधि, मैना-पक्षी, (स्त्री०)  
 वाक्(चा)-सरस्वती, वाणी (वचन)  
 (स्त्री०)

वीचि-स्वल्प (घोश) तरङ्ग, ॥१०॥  
 अवकाश, सुख, (पुं० स्त्री०)

शचि-श्राणी, शतावरी, (स्त्री०)

शुचि-मन्त्रियोंके शीलकी परीक्षा,  
 शुद्धमन्त्री, आपाढ-मास, कुशा, शृ-  
 ङ्गार, ग्रीष्म ऋतु, श्वेत रंग, पवित्र,  
 अच्छा, (त्रि०) ॥ ११ ॥

सूची-हाथ आदिसे भाव बताना, सूई,  
 शिखा (चोटी) ॥ १२ ॥ त्रि-

योंका करण (हावभेद) (स्त्री०)  
 ॥ १३ ॥

चतुर्थीय ।

अवीचि-नरक, तरंगोंका वियोग, तर-  
 गवर्जित तडाग आदि, (त्रि०)

उदक्-उत्तरमें होनेवाला (त्रि०)  
 उत्तरदिशा, उत्तरदेश, उत्तरका-  
 ल (अ०) ॥ १४ ॥

कणीचि-फूलीहुई बेल, चिरमटी,  
 गाडी, (स्त्री०)

कवच-वक्च, ढोल, बडीहरक,  
 (पुं०) ॥ १५ ॥

क्रकचः करपत्रेऽपि ग्रन्थिलाख्यमहीरुहे ।  
 नमुचिर्मदने दैत्ये नाराचो जलहस्तिनि ॥ १६ ॥  
 लोहबाणेऽपि नाराचो नाराची स्यात्तुलान्तरे ।  
 प्रत्यक् प्रतीच्ये दिग्देशकाले तु मतमव्ययम् ॥ १७ ॥  
 स्यात्प्रपञ्चस्तु विस्तारे सञ्चये च प्रतारणे ।  
 मरीचिर्नाथयोर्दोसौ मुनौ ना कृपणेऽपि च ॥ १८ ॥  
 मारीचो याजकद्विजे ककोले राक्षसान्तरे ।  
 मरीचो देवताभेदे प्रफुल्ले विकचस्त्रिपु ॥ १९ ॥  
 केशशून्ये च द्वीके तु पुंसि केतुग्रहेऽपि च ।  
 विपञ्ची बलक्रीकेल्योः सङ्कोचं कुङ्कुमे मतम् ॥ २० ॥  
 सङ्कोचो मत्स्यभेदेऽपि सङ्कोचो बन्धनेऽपि च ।  
 सत्यवत्सत्ययोः सम्यक् सम्यक् सङ्गतद्वययोः ॥ २१ ॥

क्रकच-करौत, कैर वृक्ष, ( पु० )

नमुचि-कामदेव, एक दैत्य, ( पुं० )

नाराच-जलहस्ती ( हाथीकेस्वरूपका  
जलचर जीव ) ॥ १६ ॥ लोह-  
बाण, ( पुं० ) तोलनेका छोटा  
काटा, ( स्त्री० )

प्रत्यक्-पश्चिममे होनेवाला ( त्रि० )  
प्रतिदिशा पश्चिमदेश, पश्चिम-  
वाल, ( अ० ) ॥ १७ ॥

प्रपञ्च-विस्तार, सञ्चय ( सप्रह ),  
ढगना, ( पुं )

मरीचि-दीप्ति किरण ( पुं० स्त्री० )

मुनि, कृपण, ( पुं० ) ॥ १८ ॥

मारीच-यज्ञकरानेवाला ब्राह्मण, कं-  
कोल, एक राक्षस, ( पुं० )

मरीच-देवताभेद, ( पुं० ) ॥ १९ ॥

विकच-प्रफुल्लित, ( त्रि० ) केशर-  
हित, मुनि, ध्वजा, केतु ग्रह, ( पुं० )

विपञ्ची-वीणा, क्रीडा, ( स्त्री० )

सङ्कोच-केशर ( न० ) ॥ २० ॥  
मत्स्यभेद, बन्धन, ( पुं० )

सम्यक्-सत्य बोलनेवाला, सत्य,  
सगत ( यथार्थ ), सुंदर, ( त्रि० )

॥ २१ ॥

चचतुर्थम् ।

काकचिञ्ची तुलाबीजे वारिक्रिमिर्दिलीरयोः ।

जलसूचिर्जलौकायां शृङ्गाटे शिशुमारके ॥ २२ ॥

कङ्कनोटौ शपे चाथ चोरे वह्नौ मलिम्लुचः ।

अमावास्याद्वयं यत्र सोऽपि मासो मलिम्लुचः ॥ २३ ॥

चपंचमम् ।

रतनारीच-शब्दोऽयं कुङ्कुरे रतिवल्गुमे ।

परीरम्भे समुद्भूतशीत्कारे च वरस्त्रियाः ॥ २४ ॥

इति विश्वलोचने चान्तवर्ग ॥

अथ छान्तवर्गः ।

छेकम् ।

छश्छेदकार्कयोश्छा च छिछदि छं लाच्छनाऽच्छयोः ।

चचतुर्थम् ।

काकचिञ्ची—धुंधुची, जलकी क्रिमि,  
भुईफोड, ( स्त्री० )

जलसूचि—जोक, सिंघाडा, मच्छ-  
भेद ( शिशुमार ) ॥ २२ ॥ स-  
फेदचीलकी चोच, मत्स्य-मात्र,  
( पुं० स्त्री० )

मलिम्लुच—चोर, भ्रमि, जिसमासमें  
दो अमावास्या हों वह मास,  
( पुं० ) ॥ २३ ॥

चपंचमम् ।

रतनारीच—शुक्ता, कामी पुरुष,

शीत्कार शब्दवाला धेछ्छीका स-  
म्भोग ( पुं० ) ॥ २४ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
चान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ छान्तवर्गः ।

छेकम् ।

छ-छेदनकरनेवाला, सूर्य, ( पुं० )

छा-छेदनकरना, ( स्त्री० )

छ-कलंक, खच्छ, ( न० ) ।

छद्वितीयम् ।

अच्छाव्ययमाभिमुख्ये अच्छस्फटिकयोः पुमान् ।

अच्छः खच्छेऽन्यलिङ्ग. स्यात्कच्छः शैलादिसीमनि ॥ १ ॥

नौकाङ्गे तुन्नकेऽनूपे परिधानाच्चलन्तरे ।

कच्छा तु चीरिकायां स्याद् वाराह्यामपि दृश्यते ॥ २ ॥

गुच्छः स्तम्भे हारभेदे गुच्छः स्तम्भकलापयोः ।

स्यात्पिच्छमस्त्रियां पुच्छे पिच्छा शाल्मलिवेष्टके ॥ ३ ॥

पङ्क्तौ पूगच्छटाकोशेमण्डेष्वश्वपदामये ।

विज्जुलेऽप्यथ पुच्छः स्यात्पिच्छपश्चात्प्रदेशयोः ॥ ४ ॥

म्लेच्छोऽपभापणे जातिभेदे पापरतेऽपि च ।

छत्तुर्थम् ।

अथ पुंसि महाकच्छः सरिन्नाथप्रचेतसि ॥ ५ ॥

इति विश्वलोचने छान्तवर्गं ॥

छद्वितीय ।

अच्छा(च्छ)—सम्मुख करना, (अ०)

रीछ (भाङ्), स्फटिक मणि, (पु०)

खच्छपदार्थमें उसके लिंगवाला,

(त्रि०)

कच्छ—पर्वत आदिकी सीमा, ॥ १ ॥

नौकाका भाग, नून वृक्ष, बहुत-

जलवाला देश, धोती आदि बन्नका

एक भाग, (पु०)

कच्छा—चीरिका (ची ची शब्दकरने-

वाला कीट), वाराहीवृद्ध (स्त्री०)

॥ २ ॥

गुच्छ—पुष्पआदिकोंका गुच्छा, हार-

भेद, झाड, मोरकी पूंछ आदि (पु०)

पिच्छ—धूल आदिकी पूछ, (पुं० न०)

पिच्छा—शालका गोद ॥ ३ ॥

पक्ति, गुपारी, छवि, कोरा, माट,

घोडेके पैरका रोग, दालचीनी,

(स्त्री०)

पुच्छ—मोरकी पुच्छ, पिछलाभाग,

(पु०) ॥ ४ ॥

म्लेच्छ—बुरा बोलना, जातिभेद,

पापी मनुष्य (पुं०)

छत्तुर्थम् ।

महाकच्छ—उमुद्र, वरण, (पु०) ॥ ५ ॥

इसप्रकार विश्वलोचनकी भापा-

टीकामें छान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥



## अथ जान्तवर्गः ।

जैकम् ।

जः स्याज्जविनि जोद्भूतौ जयने जिः प्रकीर्तितः ।  
जुराकाशे सरस्वत्यां पिशाच्यां जविने त्रिषु ॥ १ ॥

जद्वितीयम् ।

अजः कृष्णे सरहरे विधौ छागे रघोः सुते ।  
अब्जो धन्वन्तरौ चन्द्रे निचुले क्लीवमम्बुजे ॥ २ ॥  
अस्त्री कम्बुन्यथाऽऽजिः स्यात्सद्द्वामेऽपि समक्षितौ ।  
उत्साहे कार्तिकेऽप्यूर्जस्तूर्जा वीर्ये बले द्वयोः ॥ ३ ॥  
कञ्जः केशे विरिञ्चेऽपि कञ्जं पीयूषपद्मयोः ।  
कुञ्जस्तु नरकेऽङ्गारे दुमे कुञ्जं तु न स्त्रियाम् ॥ ४ ॥

अथ जान्तवर्गः ।

जैक ।

ज-वैगवाला, ( पुं० )

जा-उत्पत्ति, ( स्त्री० )

जि-जीतना ( स्त्री० )

जू-आकाश, सरस्वती, पिशाची, वैग-  
वाला, ( त्रि० ) ॥ १ ॥

जद्वितीय ।

अज-कृष्ण, महादेव, ब्रह्मा, यक्षरा,  
सुराजाका पुत्र, ( पुं० )अब्ज-धन्वन्तरि, चन्द्रमा, वेतस पृथ,  
( पुं० ) कमल, ( न० ) शंख,  
( पुं० न० ) ॥ २ ॥आजि-संप्राम, सम ( वरावर ) पृथ्वी,  
( स्त्री० )ऊर्ज(र्जा)-उत्साह ( हृषं ), कार्तिक-  
मास, ( पुं० ) वीर्यं, बल, ( पुं०  
स्त्री० ) ॥ ३ ॥

कंज-केश, ब्रह्मा, ( पुं० )

कञ्ज-अमृत, कमल, ( न० )

कुञ्ज-भौमासुर, मगल-ग्रह, शुकनास,  
( पुं० ) ॥ ४ ॥कुंज-टोडी, वत्स ( छाती ), कुंज  
( उता आरिका पर ) ( पुं०  
न० )

हनौ वत्से निकुञ्जेऽपि कुब्जो न्युब्जे द्रुमान्तरे ।  
 स्त्रियां तु खर्जूः खर्जूरवृक्षे कण्डूतिकीटयोः ॥ ५ ॥  
 खनौ सुरागृहे गञ्जा भाण्डागारे तु न स्त्रियाम् ।  
 गञ्जने पुंसि खजा तु मन्थे दर्शप्रहस्तयोः ॥ ६ ॥  
 गुञ्जा तु काकचिञ्ज्यां स्यात्पटहे च कलध्वनौ ।  
 द्विजो विप्रेऽण्डजे दन्ते भार्ङ्गिरेणुकयोर्द्विजा ॥ ७ ॥  
 ध्वजोऽस्त्री लिङ्गखट्वाङ्गपताकाचिह्नशौण्डिके ।  
 निजस्त्रिपु स्वके नित्ये न्युब्जो दर्भस्तुचि स्मृतः ॥ ८ ॥  
 न्युब्जं तु कर्भरङ्गे स्यात् कुब्जाधोमुखयोस्त्रिपु ।  
 पिञ्जो वधे वले पिञ्जं पिञ्जा तूलहरिद्रयोः ॥ ९ ॥  
 व्याकुले वाच्यवत्पिञ्जः प्रजा सन्तानलोकयोः ।  
 भुजो भुजा च बाहौ स्यात् पाणिमात्रेऽपि तावुभौ ॥ १० ॥

कुब्ज-कूबडा, वृक्षभेद, (पुं०)  
 खर्जू-खजूर-वृक्ष, खजली, कीटवि-  
 शेष, (स्त्री०) ॥ ५ ॥  
 गंजा-गान-चांदी आदिकी, मदिराका-  
 षर, (स्त्री०) भांडागार (पुं०  
 न०) तिरस्कार, (पुं०)  
 खजा-दधिआदि मथनेका डौंडा,  
 कब्डी, चपेटा (स्त्री०) ॥ ६ ॥  
 गुंजा-घुंघुची, डोल, सूक्ष्मध्वनि(स्त्री०)  
 द्विज-ब्राह्मणआदिवर्ण, पक्षी, दाँत,  
 (पुं०)  
 द्विजा-भारंगी-औषधि,  
 मटर-अन्न (स्त्री०) ॥ ७ ॥  
 ध्वज-लिंग, शिवका ध्वज, पताका

(ध्वजभेद), चिह्न, मदिरा बेचने-  
 वाला, (पुं० न०)  
 निज-अपना, निल, (त्रि०)  
 न्युब्ज-दर्भका (कुशाका) सुक् (य-  
 श्पान, (पुं०) ॥ ८ ॥ कमरख  
 वृक्ष या फल, (पुं० न०) कूबडा,  
 नीचेको मुखवाला, (त्रि०)  
 पिंज-मारना (पुं०) बल, (न०)  
 पिंजा-हई, हलदी, (स्त्री०) ॥ ९ ॥  
 पिंज-व्याकुल, (त्रि०)  
 प्रजा-संतान, स्त्रीपुरुषमात्र जन,  
 (स्त्री०)  
 भुज-भुजा-बाहु, हस्तमात्र, (पुं०  
 स्त्री०) ॥ १० ॥

मर्जुस्तु रजके पुंसि मर्जूः शुद्धावपि स्त्रियाम् ।  
 रज्जुर्वेण्यां गुणेऽपि स्याद् राजिः स्त्री पङ्क्तिरेखयोः ॥ ११ ॥  
 रुजा रोगेऽपि भङ्गेऽपि लङ्गः स्यात्पट्टकच्छयोः ।  
 लाजाः स्युर्भृष्टधान्येषु लाजः स्यादाद्रतण्डुले ॥ १२ ॥  
 उशीरे लाजमुद्दिष्टं वाजः पक्षे स्यदेऽपि च ।  
 मुनिभेदे खने वाजं त्वाज्ये यज्ञान्नपाथसोः ॥ १३ ॥  
 वीजं हेतावुपादानेष्वङ्कुरेऽपि च रेतसि ।  
 वीजमल्पेऽपि तत्त्वेऽपि व्याजः साध्याऽपदेशयोः ॥ १४ ॥  
 सर्जूर्वणिजि पुंसि स्यात्सर्जूः स्याद्विद्युति स्त्रियाम् ।  
 सन्नद्धे संभृते सज्जः सङ्गः शम्भुविरिञ्चयोः ॥ १५ ॥  
 स्वजः खेदे स्वजं रक्तेऽपत्ये च स्वजमन्यवत् ।

जतृतीयम् ।

अङ्गजः केशकन्दर्पे पदे पुत्रे गदे खजे ॥ १६ ॥

मर्जु—धोवी, ( पुं० )  
 मर्जू—शुद्धि, ( स्त्री० )  
 रज्जु—वेणी ( गुथी हुई वालोंकी लट्टी ),  
 रस्सी, ( स्त्री० )  
 राजि—पंक्ति, रेखा, ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥  
 रुजा—रोग, दृटना, ( स्त्री० )  
 लङ्ग—पट्ट, धोती टाँकेका भाग, ( पुं० )  
 लाज—भूना हुआ धान, ( पुं० बहुव-  
 चनान्त ) गीले तड्डल ( पुं० एक-  
 वचनात् ) ॥ १२ ॥  
 लाज—खस, ( न० )  
 वाज—पक्ष, वेग, मुनिभेद, शब्द,  
 ( पुं० ) घृत, यज्ञका अन्न, जल,  
 ( न० ) ॥ १३ ॥

वीज—हेतु, उपादानकारण, आधार,  
 धंङ्कुर, वीर्य, अल्प, तत्त्व, ( न० )  
 व्याज—निशाना, अपदेश, ( बहाना )  
 ( पुं० ) ॥ १४ ॥  
 सर्जू—वणिक, ( पुं० )  
 सर्जू—विजली ( स्त्री० )  
 सज्ज—क्वचधारी पुरुष, भराहुवा,  
 ( पुं० )  
 सङ्ग—महादेव, ब्रह्मा, ( पुं० ) ॥ १५ ॥  
 स्वज—पत्नीना ( पुं० ) रक्त, ( न० )  
 अपत्य ( सतान ) ( त्रि० )  
 जतृतीयम् ।  
 अङ्गज—केश, कामदेव, चिह्न, पुत्र,  
 रोग, पत्नीना, ( पुं० ) ॥ १६ ॥

अङ्गजं रुधिरेऽथ स्यादण्डजः पक्षिमीनयोः ।  
 कृकलासे भुजङ्गे च कस्तूर्यामण्डजाऽपि च ॥ १७ ॥  
 अम्बुजो निचुले पुंसि क्लीवं तु सरसीरुहे ।  
 कम्बोजो देशमातङ्गशंखभेदेषु देशितः ॥ १८ ॥  
 करजस्तु करञ्जे स्यादपि व्याघ्रनखे नखे ।  
 काम्बोजः सोमबल्के स्याच्छङ्खपुत्रागवाजिषु ॥ १९ ॥  
 माषपर्णीहिङ्गुपर्ण्योः काम्बोजी तद्भवे त्रिषु ।  
 कारुजः शिल्पिनां चित्रे स्वयञ्जाततिलेऽपि च ॥ २० ॥  
 बल्मीके गैरिके फेने कलभे नागकेशरे ।  
 कुटजः शाखिनाम्भेदे स्याद्द्रोणे कुम्भसम्भवे ॥ २१ ॥  
 गिरिजा शैलतनयामातुलिङ्गचोरुदाहता ।  
 गिरिजं त्वभ्रके लौहे शिलाजतुसुगन्धयोः ॥ २२ ॥

रुधिर, ( न० )  
 अण्डज-पक्षी, मच्छी, गिरगट, सर्प,  
 ( पुं० )  
 अण्डजा-कस्तूरी, ( स्त्री० ) ॥ १७ ॥  
 अम्बुज-चेतसवृक्ष, ( पुं० ) कमल  
 ( न० )  
 कम्बोज-देशभेद, हस्तभेद, शंखभेद,  
 ( पुं० ) ॥ १८ ॥  
 करज-करजुंवा वृक्ष, बघेराका नख,  
 नख, ( पुं० )  
 काम्बोज-कायफल, शंख, चंपा, अभ्र,  
 ( पुं० ) ॥ १९ ॥  
 काम्बोजी-वनमाप या मशवन, हींग-

पत्री, या वंशपत्री ( स्त्री० ) इनसे  
 उत्पन्न होनेवाला ( त्रि० )  
 कारुज-शिल्पियोंका चित्र, स्वयं  
 उत्पन्नहुवा तिल ॥ २० ॥ वांवी,  
 गेरू, झाग, हाथीका बच्चा, नाग-  
 केशर, ( पुं० )  
 कुटज-कूडा-वृक्ष, वनकाक, अगस्त्य-  
 मुनि, ( पुं० ) ॥ २१ ॥  
 गिरिजा-पार्वती, वनबीजंपूर या वि-  
 जोरनीवृ, ( स्त्री० )  
 गिरिज-भोडल, लोहा, शिलाजीत,  
 गन्धक, ( न० ) ॥ २२ ॥

जलजं पङ्कजे शङ्खे नीरजं पद्मकुष्ठयोः ।  
 परञ्जलसैलयन्त्रासिफेनेषु छुरिकाफले ॥ २३ ॥  
 वणिक् पुंसेव वाणिज्यजीवके करणान्तरे ।  
 वाणिज्ये तु वणिक् स्त्रीत्वे वलजा बलगयोपिति ॥ २४ ॥  
 क्षितौ तु वलजं तु स्यात्क्षेत्रसस्यादिगोपुरे ।  
 स्याद्भूमिजा तु जानक्यां भूमिजो नरके कुजे ॥ २५ ॥  
 वनजा मुद्गरण्यां स्याद् वनजो गजमुखयोः ।  
 वनजं पङ्कजे क्लीवं वाच्यवद्वनसम्भवे ॥ २६ ॥  
 बाहुजः क्षत्रिये स्यातः स्वयञ्जाततिले शुके ।  
 सहजस्तु निसर्गे स्यात्सहजातेऽन्यलिङ्गकः ॥ २७ ॥  
 सामजः सामसम्भूते वाच्यलिङ्गः पुमान् गजे ।  
 हिमजा पार्वतीशच्योर्भैनाके हिमजः पुमान् ॥ २८ ॥

जलज—कमल, शङ्ख, ( न० )  
 नीरज—कमल, कूट-औषधि, ( न० )  
 परंज—तेलनिकालनेका यंत्र, तलवार,  
 शार्ङ्ग, छुरीका अग्रभाग, ( पुं० )  
 ॥ २३ ॥  
 वणिज(क्)—वाणिज्यसे जीनेवाला,  
 करणभेद, ( पुं० )  
 वणिज(क्)—वाणिज्य, ( स्त्री० )  
 वलजा—श्रेष्ठस्त्री, पृथ्वी, ( स्त्री० ) ॥ २४ ॥  
 वलजा—क्षेत्र, सस्य ( खेती ) आदि,  
 पुरंदरवाजा, ( न० )  
 भूमिजा—पिता, ( स्त्री० )  
 भूमिज—भौमासुर-दैत्य, मंगलग्रह  
 ( पुं० ) ॥ २५ ॥

वनजा—वनमुद्ग, ( स्त्री० )  
 वनज—हस्ती नागरमोया, ( पुं० )  
 कमल ( न० ) वनमें होनेवाला द्रव्य  
 ( त्रि० ) ॥ २६ ॥  
 बाहुज—क्षत्रिय, स्वयं उत्पन्न हुवा-  
 तिल, सूवा ( तोता ) पक्षी, ( पुं० )  
 सहज—स्वभाव, ( पुं० ) साथ उत्प-  
 न्नहुवा, ( त्रि० ) ॥ २७ ॥  
 सामज—सामसे उत्पन्नहुवा, ( त्रि० )  
 हस्ती, ( पुं० )  
 हिमजा—पार्वती, इन्द्राणी, ( स्त्री० )  
 हिमज—भैनाक नाम पर्वत, ( पुं० )  
 ॥ २८ ॥

जचतुर्थम् ।

अहिभुग् वनतापुत्रे मेघनादानुलासिनि ।  
 काश्मीरजा चाऽतिविपाकुष्ठकुङ्कुमपुष्करे ॥ २९ ॥  
 ग्रहराजः शशिन्यर्केऽनुजे शूद्रे जघन्यजः ।  
 द्विजराजो निशानाथे वनतात्मजशेषयोः ॥ ३० ॥  
 धर्मराज्यमराजौ द्वौ यमे बुद्धे युधिष्ठिरे ।  
 भरद्वाजो गुरुसुते व्याघ्राटाभिल्यपक्षिणि ॥ ३१ ॥  
 भारद्वाजो मुनौ चोमे स्त्रियां कार्पासिकान्तरे ।  
 मृङ्गराजस्तु मधुपे मार्कवे विहगान्तरे ॥ ३२ ॥  
 यक्षराट् व्यंबकसखे महानां रङ्गचत्वरे ।  
 राजराजस्तु धनदे सार्वभौममृगाङ्कयोः ॥ ३३ ॥  
 क्षीराब्धिजः शशधरे श्रियां क्षीराब्धिजा स्त्रियाम् ।  
 क्षीराब्धिजं तु सामुद्रलवणे मौक्तिकेऽपि च ॥ ३४ ॥

जचतुर्थम् ।

अहिभुज् (३) गरुड, मोर ( पुं० )

काश्मीरजा-अतीस, ( स्त्री० )

काश्मीरज-शूट, केसर, कमल,  
( न० ) ॥ २९ ॥

ग्रहराज-चंद्रमा, सूर्य, ( पुं० )

जघन्यज-छोटाभ्राता, शूद्र, ( पुं० )

द्विजराज-चंद्रमा, गरुड, शेष नामसार्थ  
( पुं० ) ॥ ३० ॥धर्मराज् ( २ )-यमराज-धर्मराज,  
बुद्ध, युधिष्ठिर, ( पुं० )भरद्वाज-बृहस्पतिका पुत्र, व्याघ्रट  
( कुकडवाँवा ) पक्षी ( पुं० ) ॥ ३१ ॥

भारद्वाज-मुनि, उग्र, ( पुं० )

भारद्वाजी-वनकपास ( स्त्री० )

भृंगराज-भौरा, भंगरा-औपधि, प-  
क्षीविशेष, ( पुं० ) ॥ ३२ ॥यक्षराट् ( ३ ) कुवेर, महोका अराडा,  
( पुं० )राजराज-कुवेर, चक्रवर्ती राजा,  
चंद्रमा, ( पुं० ) ॥ ३३ ॥

क्षीराब्धिज-चंद्रमा, ( पुं० )

क्षीराब्धिजा-लक्ष्मी ( स्त्री० )

क्षीराब्धिज-समुद्रनमक, मोती,  
( न० ) ॥ ३४ ॥

## टद्वितीयम्

अट्टं गृहान्तरे क्षौमे शुष्के चात्यल्पमक्तयोः ।  
 इष्टो ना यागसंस्कारयोगयोः क्रतुकर्मणि ॥ २ ॥  
 क्लीव त्रिषु प्रियतमे पूज्येप्याशंसितेपि च ।  
 इष्टिर्यागार्चनेच्छासु समहश्चोकसूर्ययोः ॥ ३ ॥  
 कटुः पुंसि रसे क्लीवं कटु कार्येपि दूषणे ।  
 प्रियङ्गुराजिकाऽशोकरोहिणीकटुकासु च ॥ ४ ॥  
 स्त्रिया कटु त्रिष्वप्रिये ना सुगन्धौ मत्सरेऽपि च ।  
 कटः श्रोणौ श्वेत्यल्पे किलिज्जगजगण्डयोः ॥ ५ ॥  
 श्मशानेऽपि क्रियाकारेऽप्यद्भुतेपि कटाऽन्ययम् ।  
 कटो स्यात्कटिभागधयोः कष्टं गहनकृच्छ्रयोः ॥ ६ ॥  
 कुटो घटे शिलाकुट्टे कुटी वेश्मनि तु द्वयोः ।  
 कुटी तु स्यात्पयोदास्या सुरायां चित्रगुच्छके ॥ ७ ॥

## टद्वितीय ।

अट्ट-अटारी, रेसमी बख, सूखाहुवा  
 द्रव्य, अत्यल्प, भात, ( त्रि० )  
 इष्ट-यज्ञसंस्कार, योग, ( पु० ) यज्ञ-  
 कर्म, ( न० ) ॥ २ ॥ अति प्रिय,  
 पूज्य, वाछित, ( त्रि० )  
 इष्टि-यज्ञ, पूजन, इच्छा, समहश्चोक,  
 सूर्य, ( स्त्री० पुं० ) ॥ ३ ॥  
 कटु-कटु-रस, ( पुं० ) दूषित-कार्य,  
 बगनी धान्य, राई, अशोकवृक्ष,  
 एवप्रकारकी हरड, कुटवी(स्त्री०) ॥४  
 अप्रिय ( त्रि० ) सुगन्धवाला द्रव्य,  
 मत्सरीपुरुष ( पुं० )

कट-कटि भाग, मुर्दे, अति अल्प,  
 वासका बोरारट, इस्तीका गंडस्थल,  
 ॥ ५ ॥ श्मशान ( जहां मुर्दे फूकते  
 हैं ) क्रियाकरानेवाला, ( पुं० )  
 कटा-अद्भुत ( अ० )  
 कटी-कटि-भाग, छोटीपीपल, ( स्त्री० )  
 कष्ट-वन, कष्ट ( दुःख ) ( न० )  
 ॥ ६ ॥  
 कुट-घटा-मिठीका, हर्षांडा, ( पुं० )  
 कुटी-घर ( मकान ) ( पुं० स्त्री० )  
 जललानेवाली दासी, मरिचा,  
 चित्रगुच्छा, ( स्त्री० ) ॥ ७ ॥

कूटोऽस्त्री राशिपूर्वार्दम्भमायाऽनृतेष्वपि ।  
 तुच्छेऽद्रिशृङ्गेसीराङ्गे यत्रायोधननिश्चले ॥ ८ ॥  
 कृष्टिबुधे ना कर्पेऽस्त्री कोटिः सङ्ख्यानतराग्रयोः ।  
 अत्युत्कर्षप्रकर्षाश्रिकार्मुकाग्रेषु च स्त्रियाम् ॥ ९ ॥  
 कुष्टं तु रोदने रावे कृष्टिः स्यात्कृशसेवयोः ।  
 खटोऽन्धकूपे टङ्के च खटः श्लेष्मचपेटयोः ॥ १० ॥  
 खाटिः स्त्रिया शबरथे खाटिरेकग्रहे क्षिणे ।  
 खेटस्तु निन्दिते ग्रामभेदेऽपि वसुनन्दके ॥ ११ ॥  
 गृष्टिरेकप्रसवगोवराहक्रान्तयोः स्त्रियाम् ।  
 विष्णुक्रान्तौषधौ घृष्टिघोण्टा वदरपूगयोः ॥ १२ ॥  
 चटुश्चाटौ पिचिण्डे च व्रतिनामासने चटुः ।  
 चाटश्चाटे च धूर्ते च मूलमासिकयोर्जटा ॥ १३ ॥

कूट-राशि (डि०), पुरदरवाजा, दम्भ (पाखड), माया, असत्य, तुच्छ, पर्वतक्षिप्यर, हलवा एक अंग, यत्र, लोहसुद्गर, निधल, (पु०) ॥ ८ ॥	टन (जोक्सी आदिके डाढके रगडनेसे हाथमें होजाताहै) (स्त्री०)
कृष्टि-पण्डित, (पु०) आकर्ष (खै चना) (पु० न०)	खेट-निन्दित, ग्रामभेद, वसुभेद, विष्णुसह (पु०) ॥ ११ ॥
कोटि-कोटि सङ्ख्या, अग्र भाग, अति उत्कर्ष, प्रकर्ष (उग्रति), कोण, धनुषका अग्रभाग (स्त्री०) ॥ ९ ॥	गृष्टि-एकवार व्याईहुई गौ, वराह क्रान्ता नाम औषधि, (स्त्री०)
कुष्ट-रोना, शब्द, (न०)	घृष्टि-विष्णुक्रान्ता औषधि, (स्त्री०)
कृष्टि-दुबला, सेवा, (स्त्री०)	घोण्टा-बेर-झाडीफल, सुपारी, (स्त्री०) ॥ १२ ॥
खट-अन्धाकूवा, पत्थरफोडनेकी टाकी, कफ, चपेटा (यप्पड) लगाना, (पु०) ॥ १० ॥	चटु-प्रियवाक्य, पेट, (उदर), व्रतियोंका आसन, (पु०)
खाटि-मुर्देकी तखती, एकग्रह, आ-	चाट-चाट (विश्वासदेकर धनठगने-वाला), धूर्त, (पु०)
	जटा-मूळ (जड), जटामासी, (स्त्री०) ॥ १३ ॥



ज्ञाटो निकुञ्जे कान्तारे व्रणसंमार्जने वने ।  
 त्रुटिस्त्वपचये लेशे सूक्ष्मलायां च संशये ॥ १४ ॥  
 कालमानेऽप्यथ त्रोटिः स्त्री चञ्चुमीनरुद्रफले ।  
 त्वष्टा वर्द्धकिगीर्वाणशिल्पिनोस्त्रिगमधामनि ॥ १५ ॥  
 दिष्टिर्मुदि परीमाणे दिष्टः कालोपदिष्टयोः ।  
 दिष्टं भाग्येथ दृष्टिः स्यान्नेत्रदर्शनबुद्धिषु ॥ १६ ॥  
 घटः शुद्धितुलाया स्याद् घटी खण्डे च वाससः ।  
 नटी हृष्टविलासिन्यां नटः शैल्यपशोणयोः ॥ १७ ॥  
 पटः शोभनचले स्यात्पुरस्कारपियालयोः ।  
 पटुर्वाग्मिनि नीरोगे तीक्ष्णे दक्षे स्फुटे त्रिषु ॥ १८ ॥  
 पटुः पुंसि पटोले स्त्री छत्रायां लवणे पटु ।  
 पट्टः पेपणपापाणे फलकेऽपि चतुष्पथे ॥ १९ ॥

ज्ञाट—कुंज (लता आदिकोंकी (कुटी),  
 दुर्गमस्थान, व्रण (घाव)का क्षारना,  
 वन, (पुं०)

त्रुटि—अपचय (घटना), स्वल्प,  
 छोटी इलायची, सदेह, ॥ १४ ॥  
 कालप्रमाण, (स्त्री०)

त्रोटि—पक्षीकी चोंच, मच्छी,कायफल-  
 औषधि, (स्त्री०)

त्वष्टा—बढई, देवताओंका कारीगर,  
 सूर्य (पुं०) ॥ १५ ॥

दिष्टि—आनन्द, परीमाण, (स्त्री०)

दिष्ट—काल, उपदेशनिम्नाहुवा, (पुं०)

दिष्ट—भाग्य, (न०)  
 दृष्टि—नेत्र, दर्शन, बुद्धि (स्त्री०) १६

घट—शुद्धि (सौगन् आदिसे) वि-  
 श्वास, तराजू, (पुं०)

घटी—यत्रका खंड, (स्त्री०)

नटी—नखी-नांधद्रव्य, या हलदी, (स्त्री०)  
 नट—नाटककरनेवाला, अशोक वृक्ष  
 (पुं०) ॥ १७ ॥

पट—सुंदरवस्त्र, पुरस्कार (सँवारना),  
 चिरोजी-वृक्ष, (पुं०)

पटु—बहुतबोलनेवाला, नीरोग, तीक्ष्ण,  
 चतुर, स्पष्ट, (त्रि०) ॥ १८ ॥

पटु—परबल-शाक (पुं०) सोआ-  
 शाक या सौंक, (स्त्री०) नमक (न०)

पट्ट—पीसनेका पाथर, टाल, चौराहा,  
 ॥ १९ ॥

घणादिवन्धराजादिशासनासनभेदयोः ।

पट्टी भालविभूषायां पट्टी लाक्षाप्रसादने ॥ २० ॥

पट्टिः पटविभेदे स्याद् वल्गुलौ कुम्भिकाद्रुमे ।

पुष्टिः स्यात्पोषणे वृद्धौ फटा तु फणदम्भयोः ॥ २१ ॥

तटेऽश्रमकृते फाण्टं वटस्तु स्याद्गुणे त्रिषु ।

वटो वराटन्यग्रोधे वर्तिकायां वटी मता ॥ २२ ॥ .

वीरे पामरभेदे ना भटः स्त्री प्रगमे भटिः ।

भृष्टिस्तु भर्जने शून्यवाटिकायामपि स्त्रियाम् ॥ २३ ॥

मुष्टिर्वद्वक्रे पुंसि स्त्रियामपि तथा पले ।

म्लिष्टं स्याद्वाच्यवन्म्लाने म्लिष्टमव्यक्तभाषणे ॥ २४ ॥

यष्टिः शस्त्रान्तरे हारे हारे हारात्परेऽपि च ।

भाङ्गर्था च मधुपर्ण्या च ध्वजदण्डे तु पुंस्ययम् ॥ २५ ॥

घावके वाधनेका वल्गु, राजा  
आदिका हुकुम ( पट्टा ), आसनभेद  
( तपस या सिंहासन ), ( पु० )

पट्टी-मस्तकका भूषण, लोध-वृक्ष,  
( स्त्री० ) ॥ २० ॥

पट्टि-वस्त्रभेद, वायुल पक्षी, पाट-  
वृक्ष, ( स्त्री० )

पुष्टि-पोषण, वृद्धि, ( स्त्री० )

फटा-सर्पका फण, दम्भ ( फालंड )  
( स्त्री० ) ॥ २१ ॥

फाण्ट-तट, विनापरिधमलियाहुवा,  
( न० )

वट-रस्सी आदि, ( त्रि० ) कौडी,  
वट-वृक्ष, ( पुं० )

वटी-वती दीपरुकी ( स्त्री० ) ॥ २२ ॥

भट-वार-नीचभेद ( पुं० )

भटि-वेगसे गमन करना ( स्त्री० )

भृष्टि-धानआदिका भूना, सूनी  
काडी, ( स्त्री० ) ॥ २३ ॥

मुष्टि-हाथकी मुठी, ( पुं० ) चारतोला  
प्रमाण, ( स्त्री० )

म्लिष्ट-मलिन, ( त्रि० )

म्लिष्ट-अप्रकट वाणी, ( न० ) ॥ २४ ॥

यष्टि-शस्त्रभेद, हार, 'हारायष्टि' हार,  
भारंगी, ( वृद्धनेटि ), मुलहटी,  
( स्त्री० ) ध्वजारा डंडा, ( पुं० )

॥ २५ ॥

रिष्टं क्षमे मृत्युचिहे विनाशे ना तु सायके ।  
 रिष्टस्तु रिष्टिवत्सङ्गे समृद्धौ पुंस्त्रियोः क्रमात् ॥ २६ ॥  
 लटो दोपेपि वाग्दोपे लाटम्बंशुकदेशयोः ।  
 वाटस्तु वर्त्मनि वृतौ वाटी स्याद्गृहनिष्कुटे ॥ २७ ॥  
 विटस्तु खिन्नलवणशङ्खाखुखदिराद्रिषु ।  
 विष्टिः कर्मकरे भद्रे वेतने प्रेषणे स्त्रियाम् ॥ २८ ॥  
 व्युष्टं दिने प्रभाते च फले पर्युषिते त्रिषु ।  
 व्युष्टिः समृद्धौ विहिता नियमादिफलेऽपि च ॥ २९ ॥  
 सटा जटाकेसरयो सृष्टिर्निर्माणसर्गयोः ।  
 सृष्टं तु निर्मिते त्यक्ते त्रिषु प्राज्येऽपि निश्चिते ॥ ३० ॥  
 स्फुटो व्यक्ते प्रफुल्ले च व्याप्तवन्निष्पवपि त्रिषु ।  
 स्फुटिः स्फुटिककर्कट्यां पादस्फोटेऽपि च स्फुटिः ॥ ३१ ॥

रिष्ट-कल्याण, मृत्युचिह्न, विनाश, ( न० ) घाण, ( पु० )	भद्रा, नौकरी, प्रेरणाकरना ( स्त्री० ) ॥ २८ ॥
रिष्ट(िष्टि)-खड्ग, ( पु० ) समृद्धि, ( स्त्री० ) ॥ २६ ॥	व्युष्ट-दिन, प्रभात, फल, वासी भो- जन आदि, ( त्रि० )
लट-दोष, वाणी दोष, ( पुं० )	व्युष्टि-समृद्धि, नियमआदिकोका फल, ( स्त्री० ) ॥ २९ ॥
लाट-बल, देशभेद, ( पु० )	सटा-जटा-तपस्वीकी, केसर, ( स्त्री० )
वाट-मार्ग, वृत्ति ( वाटोंवाली लकडि- योंसे घाडा ( घेर ) करना ) ( पु० )	सृष्टि-रचना साधारण, रचना जग- त्की, ( स्त्री० )
वाटी-घरकेपासका बगीचा, ( स्त्री० ) ॥ २७ ॥	सृष्ट-रचाहुवा, दानकिया हुवा, प्राज्य ( बहुत), निश्चित, ( त्रि० ) ॥ ३० ॥
विट-धूर्त, लवण, शंख, मूसा, स दिर ( घेर ) वृक्ष, पर्वत, ( पुं० )	स्फुट-प्रकट, फूलाहुवा, व्याप्त, ( त्रि० )
विष्टि-नौकरीलेकर कामकरनेवाला,	स्फुटि-खिलीहुदे ककडी, पादफोट ( विवाह ) ( स्त्री० ) ॥ ३१ ॥

हृष्टो रोमाञ्चिते जातहर्षे प्रहसिते स्मृते ।

दृतीयम् ।

अवटः कुहके कूपे खिले गर्त्तेऽप्यथाऽवटुः ॥ ३२ ॥

गर्त्ते कूपे च घाटायामर्गटौतर्गले गले ।

अरिष्टः फेनिले निम्बे लशुने काककङ्कयोः ॥ ३३ ॥

अरिष्टं सूतिकागारे तत्रे चिह्ने शुभेऽशुभे ।

उत्कटस्तीव्रे मत्ते च करटो निन्द्यजीविते ॥ ३४ ॥

एकादशाहश्राद्धे च काकवाद्यान्तरेऽपि च ।

कुन्नाह्वणे कुसुम्भेऽपि दुर्दान्तगजगण्डयोः ॥ ३५ ॥

कर्कटः करणे स्त्रीणां राशिभेदकुलीरयोः ।

खगे तु कर्कटी तु स्याद्बालक्या शाल्मलीफले ॥ ३६ ॥

हृष्ट-रोमाचवाला, आनन्दवाला, हंसा-  
हुवा, स्मरण कियाहुवा ।

दृतीय ।

अवट-कपटो, कूवा, अधूरा, खग,  
( पुं० )

अवटु-खग, कूवा, ग्रीवा और शि-  
रकी सधिका पिछला भाग, ( पु० )

अर्गट-गलका अतर्भाग, गल, ( पु० )  
॥ ३२ ॥

अरिष्ट-रीठा, नीबू-वृक्ष, तहस्सन,  
काग-पक्षी, श्वेत चील पक्षी, ( पु० )

॥ ३३ ॥

अरिष्ट-प्रसूतिका ( जच्चाका ) स्थान,  
छत्र चिह्न-शुभ अशुभ, ( न० )

उत्कट-तीव्र, मदोन्मत्त, ( पु० )

करट-निन्द्य आजीविका करनेवाला  
॥ ३४ ॥ मरनेसे ग्यारहवे दिनका

श्राद्ध, काग पक्षी, बाजावा भेद,  
निन्दितमाह्वण, कुसुमा, कठिनतासे

दमनकियाहुवा, हस्तीका गंडस्थल,  
( पु० ) ॥ ३५ ॥

कर्कट-खियोंका करण ( हावभेद ), रा-  
शिभेद, कुलीर-जन्तु, पक्षी, ( पुं० )

कर्कटी-ककड़ी, सेमलका फल,  
( स्त्री० ) ॥ ३६ ॥

कर्दटः पङ्कपङ्कारकरहाटेषु कीर्तितः ।

कर्यटस्त्रिषु कार्यज्ञे पुमाञ्जतुनि कर्यटः ॥ ३७ ॥

कीकटो मगघेऽपि स्यान्नि.खे चाश्वे मितंपचे ।

कुक्कुटस्ताम्रचूडे स्यात्कुक्कुमे वामिकुक्कुटे ॥ ३८ ॥

निपादशूद्रयोश्चैव तनये त्रिषु कुक्कुटः ।

रसोनभेदोच्चटयोस्तालमध्येपि कुक्कुटी ॥ ३९ ॥

कुक्कुटी ताम्रचूडाख्ययोषिन्मिथ्योपचर्ययोः ।

कुरुण्टी शालभज्या स्यात्कुरुण्टो क्षिण्टिकान्तरे ॥ ४० ॥

कृपीटमुदरे नीरे केशटम्तु कणे हरौ ।

चक्राटः पुंसि दीनारे धूर्ते जाहुलिके त्रिषु ॥ ४१ ॥

चर्पटः स्फारविपुले चपेटे चैव चर्पटः ।

चर्पटः पर्पेटेऽपि स्यात्पिष्टभेदे तु चर्पटी ॥ ४२ ॥

कर्दट—कीच, तिवाल (जलकाई),

धमलकी जड, (पुं०)

कर्यट—कार्यको जाननेवाला, (त्रि०)

राख, (पुं०) ॥ ३७ ॥

कीकट—मगघ देश, दरिद्री, अश्व

(घोडा), कजस, (पु०)

कुक्कुट—मुर्गा, बनमुर्गा, ॥ ३८ ॥

धामिकुक्कुट, निपाद (भील)

जानि, शूद्र जाति, पुत्र, (त्रि०)

कुक्कुटी—रहसुनभेद, भूर्दे धावला,

तालवृक्ष ॥ ३९ ॥

मुर्गा, मिथ्यासरकार, (स्त्री०)

कुरुण्टी—शालभंजी (बटपूतली),

(स्त्री०)

कुरुण्ट—बटसंरया-शाह, (पुं०) ॥ ४० ॥

कृपीट—उदर (पेट), जल, (न०)

केशट—कण (अल्प), हरि (पुं०)

चक्राट—अक्षरपी, धूर्त, (पुं०)

विपवेय (गारडी) (त्रि०) ४१

चर्पट—बहुतजियादह, चपेट (घण्ट),

पापड, (पुं०)

चर्पटी—पिष्टभेद, (स्त्री०) ॥ ४२ ॥

चिपिटश्चिपिटे पुंसि पिचिते विस्तृतेऽन्यवत् ।

चिरण्टी तु सुवासिन्यां स्याद्वितीयवयस्त्रियाम् ॥ ४३ ॥

वार्त्ताकु पुष्पे जकुटं जकुटो मलये शुनि ।

त्रिकूटं सिन्धुलवणे त्रिकूटः स्यात्सुवेलके ॥ ४४ ॥

त्रिपुटस्तु भवेत्तीरे पुमानपि सतीनके ।

त्रिपुटा मल्लिकाभेदे सूक्ष्मैलात्रिवृत्तोरपि ॥ ४५ ॥

त्र्यङ्गुलं शिक्यभेदे स्याद्द्वैताङ्गन्यामपीष्यते ।

द्रोहाटस्तु मतो गाथाप्रभेदे मृगलुब्धके ॥ ४६ ॥

वैडालव्रतिकेऽपि स्याद्द्वाराटश्चातकाश्वयोः ।

निर्दटो निर्दये न्यायवादरक्ते च निष्फले ॥ ४७ ॥

निष्कुटस्तु गृहोद्याने स्यात्केदारकपाटयोः ।

पर्यटस्तु द्वयोः पिष्टविकृतौ भेषजान्तरे ॥ ४८ ॥

चिपिट-भिगोयकर भूना हुवा धान्य,  
( पुं० ) नेत्ररोगी, विस्तारवाच्य,  
( त्रि० )

चिरंटी-सुहागिनस्त्री, दूसरी अव-  
स्थावाली स्त्री ( स्त्री० ) ॥ ४३ ॥

जकुट-वैगनका पुष्प, ( न० )

जकुट-मलय-पर्वत, कुत्ता, ( पु० )

त्रिकूट-समुद्रनमक, ( न० )

त्रिकूट-सुवेल नामका पर्वत, ( पुं० ) ४४

त्रिपुट-तीर, मटर-धान्य, ( पुं० )

त्रिपुटा-मल्लिका ( मोतिया ) भेद,  
छोटीइलायची, निसोय, ( स्त्री० )

॥ ४५ ॥

त्र्यंगुल-शिक्य ( स्त्रीवा ) भेद, औष-  
धीभेद ( न० )

द्रोहाट-गाथाभेद, मृगका शिकारी,  
॥ ४६ ॥ वैडालव्रती ( व्रतीभेद )  
( पुं० )

द्वाराट-पपीहा पक्षी, अश्व, ( पु० )

निर्दट-निर्दय पुरुष, न्यायवादमें अ-  
नुरक्त, निष्फल, ( पु० ) ॥ ४७ ॥

निष्कुट-धरका बगीचा, खेत,  
किवाड ( पुं० )

पर्यट-पापड, औषधिभेद ( पित्तपा-  
पडा ) ( पुं० न० ) ॥ ४८ ॥

परीष्टिः परिचर्याया प्राकाश्येऽपि गवेपणे ।  
 पर्कटी वृक्षपाकलो पात्रटः कर्परे कुरो ॥ ४९ ॥  
 पिच्चटो नेत्ररोगेपि पिच्चटं सीसके त्रपौ ।  
 वरटाया सयोपाया गन्धोल्या वरटो द्वयो ॥ ५० ॥  
 वर्धटी गणिकाया स्याद् व्रीहिभेदेऽपि वर्धटी ।  
 वर्धटो मकरे पोते वारुडेऽपि च वर्धटः ॥ ५१ ॥  
 स्त्रिया पुञ्जेपि भाकूटा भाकूटो मीनशैल्यो ।  
 भार्याटः पटहाजीवे लोभात्स्वस्त्रीसमर्पके ॥ ५२ ॥  
 भावाटः कामुके साधुनिवेशे भावके नटे ।  
 मर्कटः कपिलतास्त्रीकरणेष्वथ मर्कटी ॥ ५३ ॥  
 रानरीशूकशिब्या स्याद् चक्राङ्गचा करजान्तरे ।  
 बीजे तु राजकर्कट्या प्राचीनामलकस्य च ॥ ५४ ॥

परीष्टि-शुभ्रपा ( सेवा ), प्रकाशक  
 रत्ना, हृदना, ( स्त्री० )  
 पर्कटी-पिलखन वृक्ष, ककड़ी, ( स्त्री० )  
 पात्रट-कपाल, दुबला पुरुष, ( पु० )  
 ॥ ४९ ॥  
 पिच्चट-नेत्ररोग, ( पु० ) शीशा,  
 रागा, ( न० )  
 वरट-हस्त, छोटाकचूर, ( पु० न० )  
 वरटा हसी, ( स्त्री० ) ॥ ५० ॥  
 वर्धटी-वेद्या, धान ( चावल ) भेद  
 ( स्त्री० )  
 धर्धट-मगरमच्छ, बालक, नटजाति  
 भेद ( पु० ) ॥ ५१ ॥

भाकूटा-समूह ( स्त्री० )  
 भाकूट-मच्छी, पर्वत, ( पु० )  
 भार्याट-डोल बजाकर आजीविका-  
 करनेवाला, लोभसे अपनी स्त्रीको  
 दूसरेको सौंपनेवाला ( पु० ) ५२  
 भावाट-कामी पुरुष, सुदरसेनास्थान,  
 पदाथको सोचनेवाला, नट, ( पु० )  
 मर्कट-बन्दर, ( पु० )  
 मर्कटी-॥ ५३ ॥ मकटी-जन्तु, स्त्री-  
 करण ( हावभेद ), कौंचकी फली,  
 कुटकी, करंजुवाभेद, ( स्त्री० ) घडोक-  
 कडीके बीज, पुराने आवटके बीज,  
 ॥ ५४ ॥

गवेधुकाफले चैव मर्कटः पुंसि दृश्यते ।  
 मोचाटश्चन्दने कृष्णजीररम्भास्थुपस्करे ॥ ५५ ॥  
 मोरटं त्विभुमूले स्यादङ्कोटकुसुमेऽपि च ।  
 सप्तरात्रात्परक्षीरे मूर्तिकायां तु मोरटा ॥ ५६ ॥  
 रवटो दक्षिणावर्तशङ्खे जाङ्गलिकेऽपि च ।  
 वराहे मोरटे रेणौ वातूलेऽपि च रेवटः ॥ ५७ ॥  
 चण्णाटो गायने कामिचित्रकृद्धारजीविनि ।  
 विकटो विरुराले स्याद्विशाले सुन्दरे वरे ॥ ५८ ॥  
 वेकटः स्याद्वैकटिके मीने च नवयौवने ।  
 वरटो मिश्रिते नीचे वेरटं बदरीफले ॥ ५९ ॥  
 शैलाटो देवले सिंहे सितकाचकिरातयोः ।  
 संसृष्टं त्रिषु वान्त्यादिसंशुद्धे सङ्गतेऽपि च ॥ ६० ॥  
 हर्मटस्तु पुमान्सूर्ये कच्छपेऽपि च हर्मटः ।

गंगानका फल, ( पु० )	वार, खीकी कीहुई जीविवावाला ( पु० )
मोचाट-चंदन, कालाजीरा, केलेका गर्भभाग, उपस्कर, ( पुं० ) ५५	विकट-भयंकर, बडा, मुदर, धेष्ट, ( पुं० ) ॥ ५८ ॥
मोरट-गन्नाकी-जड़, बेरा रक्षका पुष्प, सातरात्रिसे उपरातका दूध, ( पु० )	वेकट-मच्छीभेद, मच्छीमान, नवीन-यौवन, ( पुं० )
मोरटा-मोरवेल तथा मूर, ( स्त्री० ) ॥ ५६ ॥	वरट-मिलाहुवा, नीच, ( पुं० )
रवट-दक्षिणावर्त शंख, विपवेद्य ( गा हर्षी ) ( पुं० )	वेरट-शाडीका फल ( वर ), ( न० ) ५९
रेवट-सूकर, क्षीरमोरट, पित्तपा पद्म, वायुको नहीं सहनेवाला ( पु० ) ॥ ५७ ॥	शैलाट-देवल ( मंदिर ), सिंह, सफेद काच, किरात-जाति, ( पुं० )
चण्णाट-गाना, कामी-पुरुष, विप्र-	संसृष्ट-वमन आदिसे शुद्धहुवा, संगत ( योग्य ) ( त्रि० ) ॥ ६० ॥
	हर्मट-सूर्य, कच्छवा, ( पुं० ) ॥



टचतुर्थम् ।

पुगानुच्चिद्गटे मीनभेदे कोपनपूरुपे ॥ ६१ ॥  
 करहाटोऽञ्जकन्देऽपि शल्यद्रौ कुसुमान्तरे ।  
 कामकूटस्तु गणिकाविभ्रमे गणिकाप्रिये ॥ ६२ ॥  
 त्रिपु कार्यपुटो हीके प्रमत्ताऽनर्थकारिणोः ।  
 कुटन्नटस्तु कैवर्त्तिमुस्तके शोणके पुमान् ॥ ६३ ॥  
 कुण्डकीटस्तु चार्वाकवाण्यभिज्ञेपि पुंश्चले ।  
 जारजे ब्राह्मणीपुत्रदासीकामुकयोरपि ॥ ६४ ॥  
 खङ्गरीटस्तु फलकासिधाराव्रतचारिणोः ।  
 गाढमुष्टिस्तु कृपणे कृपाणलुरिकादिपु ॥ ६५ ॥  
 चक्रवाटः क्रियारोहे पर्यन्ते च शिखातरौ ।  
 चतुःपटिस्तु संख्यायां बहुचेऽपि कलास्वपि ॥ ६६ ॥  
 नारकीटोऽश्मकीटे स्यात्स्यदन्ताशाविहन्तरि ।  
 परपुष्टः परमृते परपुष्टाऽपणस्त्रियाम् ॥ ६७ ॥

टचतुर्थम् ।

उच्चिद्गट—मच्छीभेद, कोधी पुरुष,  
 ( पुं० ) ॥ ६१ ॥

करहाट—कमलकन्द, मैनफलका वृक्ष,  
 पुष्पभेद, ( पुं० )

कामकूट—वेद्याका हविभाव आदि,  
 वेद्यागामी, ( पु० ) ॥ ६२ ॥

कार्यपुट—लज्जावान, प्रमत्त, अनर्थ-  
 कारी, ( पुं० )

कुटन्नट—केवटीमोथा, सोनापाठा वृक्ष,  
 ( पुं० ) ॥ ६३ ॥

कुण्डकीट—चार्वाकवाणीका जानने-  
 वाला, जार पुरुष, जारसे उत्पन्न  
 हुआ ब्राह्मणीका पुत्र, दासीके संग र-

मण करनेवाला ( पुं० ) ॥ ६४ ॥

खङ्गरीट—ढाल और तलवारकी धा-  
 रका व्रत धारण करनेवाला ( पुं० )

गाढमुष्टि—बजूस, तलवार छुरी आदि  
 ( पु० ) ॥ ६५ ॥

चक्रवाट—क्रियाका प्रारंभ, गोरा,  
 शिखावृक्ष, ( पुं० )

चतुःपटि—चौराट-सख्या, (बहुच वेद-  
 कृचा), चौराटकला ( स्त्री० ) ॥ ६६ ॥

नारकीट—पत्थरका कीटा, अपनी  
 दईहुई आशाकी नष्ट करनेवाला,  
 ( पुं० )

परपुष्ट—नोयल पक्षी, ( पुं० )

परपुष्टा—वेद्या ( स्त्री० ) ॥ ६७ ॥

प्रतिकृष्टं मतं गुब्बे द्विरावृत्त्यवकर्षिते ।

प्रतिशिष्टः प्रतिहते दन्ते ख्याते च वाच्यवत् ॥ ६८ ॥

प्रतिसृष्टं भवेत्प्रत्याख्यातप्रोषितयोस्त्रिषु ।

चर्कराटः कटाक्षेऽपि तरुणादित्यदीधितौ ॥ ६९ ॥

नारीपयोधरोत्सङ्गकान्तदन्तनखक्षते ।

शिपिविष्टस्तु खलतौ दुश्चर्मणि महेश्वरे ॥ ७० ॥

प्राञ्चलोहे श्रुतिकटः प्रायश्चित्ते भुजङ्गमे ।

सिंहच्छटा तु पुत्रागकेसरे नागकेसरे ॥ ७१ ॥

टपञ्चमम् ।

अथ स्याद्दशनोच्छिष्टशुंभे निःश्वासितेऽधरे ।

लोहे काले मृदङ्गारशकट्यां रत्नकङ्कणे ॥ ७२ ॥

पावके पटहस्यापि बदरे पात्रचर्घटः ॥ ७३ ॥

इति विश्वलोचने दान्तवर्गः ॥

प्रतिकृष्ट-गुब्ब ( गुदआदि ), दूगरी-  
धार बाहाहुवा क्षेत्र, ( न० )

प्रतिशिष्ट-दियाहुवाका फिर लेना,  
वित्यात, ( त्रि० ) ॥ ६८ ॥ .

प्रतिसृष्ट-नटाहुवा, प्रोषित ( परदेश  
गयाहुवा ) ( त्रि० )

चर्कराट-बटाक्ष ( नेत्रकी कोरसे दे-  
राना ), मध्याङ्गसूर्यकी फिरण, ॥ ६९ ॥

खीके कुच और पेट आदिपर प-  
निहा कियाहुवा नखपाव ( पुं० )

शिपिविष्ट-गंजा ( जिसके पेश उ-  
ठगयेहों ), पुरी चर्मवाल, महादेव,  
( पुं० ) ॥ ७० ॥

श्रुतिकट-धातुभेद, लगेहुए पापका  
दूर करना, संपं, ( पुं० )

सिंहच्छटा-नागकेसरभेद, नागके-  
सर, ( स्त्री० ) ॥ ७१ ॥

टपञ्चमम् ।

दशनोच्छिष्ट-शुंभन करना, याह-  
रको श्वास छोडना, होंठ ( पुं० )

पात्रचर्घट-लोहा, कांसी, मिट्टीकी  
सिगही, रत्नकङ्कण, ॥ ७२ ॥

अग्नि, डोलका घेर, ( पुं० ) ॥ ७३ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भापा-  
टीकामें दान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

## अथ ठान्तवर्गः ।

ठकम् ।

ठश्चन्द्रे मण्डले शून्ये स्यात् करेणुच्चशब्दिते ।

ठद्वितीयम् ।

कठो मुनावृचां भेदे तदध्येतरि तद्विदि ॥ १ ॥

खरेऽपि कण्ठस्तु गले पार्श्वे शल्यद्रुशब्दयोः ।

काष्ठोत्कर्षे दिशि स्थाने कालमाने च सीमनि ॥ २ ॥

काष्ठा दाहहरिद्रायां काष्ठं तु क्लीबमिन्धने ।

कुण्ठो मूर्खेष्वकर्मण्ये कुष्ठं भेषजरोगयोः ॥ ३ ॥

कोष्ठोऽन्तःकुक्षिगृहयोः कुसूलत्मीययोरपि ।

गोष्ठी सभायां संलापे गोष्ठं गोस्थानके मतम् ॥ ४ ॥

ज्येष्ठो मासेऽम्रजे श्रेष्ठे वृद्धे ज्येष्ठा तु तारके ।

मुसल्यामङ्गुलीभेदे दुष्टः स्याद् दुर्बलेऽधमे ॥ ५ ॥

अथ ठान्तवर्गः ।

ठक ।

ठ-चंद्रमा, मंडल, शून्य (पोल),

हृषनिर्योका ऊंचाशब्द, (पु०)

ठद्वितीय ।

कठ-कठनामका-मुनि, ऋचाओंका

भेद, कठशाखाको पढनेवाला, क-

ठशाखाको जाननेवाला, ॥१॥ खट,

(पु०)

कण्ठ-गल, समीपता, भैरवफलका

वृक्ष, (पु०)

काष्ठा-बडप्पन, दिशा, स्थान, काल-

प्रमाण, सीम (हृद) ॥ २ ॥

दाहहलदी, (स्त्री०)

काष्ठ-ईधन (न०)

कुंठ-मूर्ख, अकर्मा, (पुं०)

कुष्ठ-औषधि-कूट, कुष्ठ (कोठ)

रोग (न०) ॥ ३ ॥

कोष्ठ-पेटका भीतरभाग, घर, कुठला,

अपनी वस्तु, (पुं०)

गोष्ठी सभा, वार्तालाप, (स्त्री०)

गोष्ठ-गोवोंका ठान (न०) ॥ ४ ॥

ज्येष्ठ-ज्येष्ठ-भास, बडा भाई, श्रेष्ठ,

वृद्ध, (पुं०)

ज्येष्ठा-ज्येष्ठा-नक्षत्र, छपकली, अं-

गुलीभेद, (स्त्री०)

दुष्ट-दुर्बल, अधम, (पुं०) ॥ ५ ॥

निष्ठा निर्वहनिष्पत्तिनाशान्तोत्कर्षयाचने ।

क्लेशेऽथ पाठाम्बुष्ठायां पाठस्तु पठने पुमान् ॥ ६ ॥

पृष्ठं शरीरावयवान्तरेऽपि चरमेऽपि च ।

प्रष्टोऽप्रगामिनि श्रेष्ठे प्रष्टा चाण्डालिक्रौप्यौ ॥ ७ ॥

चण्ठः स्यादकृतोद्वाहे कुन्तधारकखर्वयोः ।

शठस्तु पुंसि धतूरे धूर्तमध्यस्थयोस्त्रिषु ॥ ८ ॥

शोठोऽलसे च मूर्खे च श्रेष्ठो वरकुबेरयोः ।

पष्ठी तु यष्णां पूरण्यां त्रिषु स्त्री हरयोपिति ॥ ९ ॥

हठस्तु स्याद्दलात्कारे वारिपण्यां तु पुंस्त्रयम् ।

ठृतीयम् ।

अपष्टुः समये वामेऽम्बुष्ठा वैश्यासुते द्विजात् ॥ १० ॥

निष्ठा-नाटकसंधि, सिद्धि, नाश,  
अन्त, यदप्यन, याचना, क्लेश(कष्ट)  
( स्त्री० )

पाठा-पहाडमूल, ( स्त्री० )

पाठ-पठना ( पुं० ) ॥ ६ ॥

पृष्ठ-शरीरका पिछला भाग, पिछला  
( न० )

प्रष्ट-आगे चलनेवाला, श्रेष्ठ, ( पुं० )

प्रष्टा-चांडाली आंधि, ( स्त्री० ) ॥ ७ ॥

षंठ-जिसका विवाह न हुआ. यह,  
भाटा ( हथियार ) धारनेवाला,  
डिगना-पुरर ( पुं० )

शठ-धूरा, धूर्त, मध्यस्थ, ( त्रि० )  
॥ ८ ॥

शोठ-आलसी, मूर्ख, ( पुं० )

श्रेष्ठ-उत्तम, कुबेर, ( पुं० )

पष्ठी-छद्म सस्याओंको पूरी करने-  
वाली ( त्रि० ) देवी-भेद, ( स्त्री० )  
॥ ९ ॥

हठ-जबरदस्ती, जठकुंभी, ( पुं० )

ठृतीय ।

अपष्टु-काल, ( पुं० ) वामभाग, ( त्रि० )  
अम्यष्टु-आम्युष्ठे उत्तमप्रदुवा बनि-  
यानीका पुत्र, ॥ १० ॥

देशेऽव्यष्टा तु चाङ्गेर्या पाठयूथिकयोरपि ।

कनिष्ठोऽल्पेऽनुजे युनि कनिष्ठा त्वन्तिमाङ्गुलौ ॥ ११ ॥

कमठः कच्छपे पुंसि कमठं भाजनान्तरे ।

जरठः कठिने पाण्डौ कर्कशेष्यभिधेयवत् ॥ १२ ॥

नर्मठश्चुबुके पुंसि नर्मठो नागरेऽन्यवत् ।

प्रकोष्ठो विस्तृतकरे कूर्परादधरेऽपि च ॥ १३ ॥

नृपकक्षान्तरे चाथ प्रतिष्ठा गौरवे मता ।

या(यो)गनिष्पादने स्थानचतुरक्षरपद्ययोः ॥ १४ ॥

वरिष्ठः प्रवरे चोरुतरे स्यादभिधेयवत् ।

वरिष्ठं मरिचे ताम्रे वरिष्ठः पुंसि तित्तिरौ ॥ १५ ॥

मकुष्ठो मन्थरेऽपि स्याद् ब्रीहिमित्सवयोरपि ।

लघिष्ठो भेलकेऽत्यल्पे वैकुण्ठो विष्णुशक्रयोः ॥ १६ ॥

अम्यष्टा—अम्ललोनिया-औषधि, पाठ,  
जूही-पुष्पझाड, ( स्त्री० )

कनिष्ठ—अल्प, छोटा भ्राता, जवान,  
( पुं० )

\*कनिष्ठा दुबला, पिछली अगुली,  
( स्त्री० ) ॥ ११ ॥

कमठ—कछुवा, ( पु० ) पात्रविशेष,  
( न० )

जरठ—कठोर, पाण्डु ( पीला ), क-  
कंश ( दु.स्पर्श ) ( त्रि० )

॥ १२ ॥

नर्मठ—कुचका अप्रभाग, धूर्त ( पुं० )

प्रकोष्ठ—फेलायाहुवा हाथ, बौहनीसे

नीचेका भाग, राजाकी खीदी,  
( पुं० ) ॥ १३ ॥

प्रतिष्ठा—बढप्पन, योग या यज्ञकी  
सिद्धि, स्थान, चार अक्षरका छंद,  
( स्त्री० ) ॥ १४ ॥

वरिष्ठ—श्रेष्ठ, बहुत जियादह, ( त्रि० )  
मिरच, तौबा, ( न० ) तीतर-पक्षी,  
( पुं० ) ॥ १५ ॥

मकुष्ठ—मंद चलनेवाला, मोठ धान्य,  
यज्ञभेद, ( पु० )

लघिष्ठ—नदी तरनेकी छोटी नौका,  
बहुत छोटा, ( पुं० )

वैकुण्ठ—विष्णु, इंद्र ( पु० ) ॥ १६ ॥

श्रीकण्ठः पार्वतीनाथे कुरुजाङ्गलकेऽपि च ।

भवेदार्येऽपि साधिष्ठः साधिष्ठोऽपि दृढेऽपि च ॥ १७ ॥

ठचतुर्थम् ।

कलकण्ठः पित्रे पारावते हुंसे कलध्वस्तौ ।

कण्ठे मृगान्तरे कालपृष्ठः क्लीब तु कार्मुके ॥ १८ ॥

कर्णवाणेऽप्यथो दन्तशठो जम्भकपितृथयोः ।

कर्मारङ्गेऽपि नारङ्गे रुक्मियाया स्त्रियामियम् ॥ १९ ॥

नीलकण्ठस्तु दात्यूहे खजने प्रबलाकिनि ।

कलविके हरे पीतसारके कालकण्ठवत् ॥ २० ॥

पूतिकाष्ठं तु सरले देवदारुमहीरुहे ।

सूत्रकण्ठः कपोते स्वात्खञ्जरीटे द्विजन्मनि ॥ २१ ॥

हारिकण्ठः परभृते हारान्वितगले त्रिषु ॥ २२ ॥

इति विश्वलोचने ढान्तवर्गं ॥

श्रीकण्ठ-महादेव, कुरुजाङ्गलदेश, (पु०)

साधिष्ठ-अतिश्रेष्ठ, अतिदृढ, (पु०)

॥ १७ ॥

ठचतुर्थम् ।

कलकण्ठ-कोयल-पक्षी, कवूतर, हस,

मूत्रमशन्द, कट, मृगभेद, (पु०)

कालपृष्ठ-धनुष, कर्णका वाण, (पु०)

॥ १८ ॥

दन्तशठ-वागेरी-औषधि, ज्वारी

नीवू, कैय-वृक्ष, फमारुख, नारणी,

(पु०)

दन्तशठ-रोगकी क्रिया, (स्त्री०) ॥ १९ ॥

नीलकण्ठ-कालकण्ठ-जलकाक, ख-

जन-पक्षी, मयूर-पक्षी, चिडी-

पक्षी, महादेव, देरा-वृक्ष, (पु०)

॥ २० ॥

पूतिकाष्ठ-सरल-वृक्ष, देवदारु-वृक्ष,

(न०)

सूत्रकण्ठ-कवूतर-पक्षी, खजन पक्षी,

वाङ्मण आदि, (पु०) ॥ २१ ॥

हारिकण्ठ-कोयल-पक्षी, (पु०) हा-

रधारीगलवाला, (त्रि०) ॥ २२ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भापाटी-

कामें ढान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

## अथ डान्तवर्गः ।

डैकम् ।

डकारः पार्वतीनाथे चासे शब्देऽपि दृश्यते ।

डद्वितीयम् ।

अण्डं तु स्वामीनादिकोशे स्यान्मुक्कवीर्ययोः ॥ १ ॥

इडा बुधवधूवाचोरिलावद्भूगवोरपि ।

काण्डोऽस्त्री वर्गवाणार्थनालावसरवारिपु ॥ २ ॥

दण्डे प्रकाण्डे रहसि स्तवे कुरित्तकुत्सयोः ।

पतिवह्नीसुते जारात्कुण्डः कुण्डी कमण्डलौ ॥ ३ ॥

कुण्डं देवजलाधारे पिठरे तु मतं न ना ।

क्रीडा केलाववज्ञाया खेलायामपि सम्मता ॥ ४ ॥

क्रोडः शनौ वराहे च क्रोडं क्रोडा च वक्षसि ।

खण्डोद्धेऽस्त्री पुमानिक्षुविकारे मणिदूषणे ॥ ५ ॥

## अथ डान्तवर्गः ।

डैक ।

ड(कार)—महादेव, चास पक्षी, शब्द  
(आवाज) (पुं०)

डद्वितीय ।

अंड—पक्षी और मच्छीआदिकोका  
कोश (अंडा), अडकोरा, वीर्य,  
(न०) ॥ १ ॥इडा—इला—बुधमहवी स्त्री, वाणी,  
पृथ्वी, गौ, (( स्त्री०)कांड—वर्ग (विषयसमाप्ति), घाण, अर्थ,  
नाल—डडी, धवसर, जल, ॥ २ ॥  
दण्ड (डडा), वृक्षका—स्थूलभाग,एकात, गुच्छ, निद्रित, निदा (पुं०  
न०)कुंड—पतिके जीतेहुए जारसे उत्पन्न  
हुवा, (पुं०)

कुण्डी—कूडी या कमंडलु (स्त्री०) ॥३॥

कुंड—वर्षाके जलका रहनेका स्थान,  
पेट (स्त्री० न०)क्रीडा—क्रीडाप्रकार, तिरस्कार, खे-  
लना, (स्त्री०) ॥ ४ ॥क्रोड—शनै—मह, सूकर, (पुं०) क्रोड  
(न०) और क्रोडा (स्त्री०) छाती,खंड—डुकडा (पुं० न०) खौंड  
(चीनी), मणिदोष, (पुं०) ॥५॥

गडो मीनेऽन्तराये च कुब्जे पृष्ठगुडे गडुः ।

गण्डस्तु पिटके योगभेदे खड्गिकपोलयोः ॥ ६ ॥

बरे प्रवीरे चिह्ने च वाजिमूपणबुहुदे ।

गुडः स्याद्गजसन्नाहे गोलकेक्षुविकारयोः ॥ ७ ॥

गुडा खुहीगुडिकयो कंदुके चोडनात्परः ।

गोण्डः पामरभेदे स्याद् वृद्धनाभौ तु वाच्यवत् ॥ ८ ॥

चण्डस्त्रीध्रे दैत्यभेदे यमदासेऽतिकोपने ।

स्त्रिया चण्डा धनहरीशङ्खपुष्पिकयोर्मता ॥ ९ ॥

भवेच्चण्डी तु पार्वत्यां हिंस्रकोपनयोपितो ।

चूडा वलयभेदे स्याच्छिखायां वड(ल)भावपि ॥ १० ॥

चोडो(लो) देशविशेषे स्याच्चोडः प्रावरणान्तरे ।

मूर्त्ते मूके हिममस्ते जडा स्त्री कन्दरौपथौ ॥ ११ ॥

गड-मच्छी, विप्र, ( पुं० )

गडु-कुबडा, पीठमें गूमडावाला ( पु० )

गंड-छोटी फुन्सी, योगभेद, गेंडा,

गाल ( मुखाका एक भाग ) ॥ ६ ॥

घेठ, श्याबीर, चिह्न, अभक्का आमू-

पण, बुडदा, ( पुं० )

गुड-हस्ताका कवच, गोला, गुड,

( पुं० ) ॥ ७ ॥

गुडा-पोहर, गोली, उडनगुडा-

शिष्ट, ( स्त्री० )

गौड-नीच जति, ( पुं० ) बडी तूंगी-

वाला, ( वि० ) ॥ ८ ॥

चंड-तीक्ष्ण, दैत्यभेद, धर्मराजका

किंकर, अति क्रोधी, ( पुं० )

चंडा-चोरनामक गन्धद्रव्य, शंखा-

हुली, ( स्त्री० ) ॥ ९ ॥

चण्डी-पार्वती, हिंसा करनेवाली स्त्री,

अतिक्रोधवाली स्त्री ( स्त्री० )

चूडा-कंकणभेद, चोटी, परका छया

( अग्रभाग ) ( स्त्री० ) ॥ १० ॥

चोड(ल)-देशभेद, भंगरणा, ( पुं० )

जड-मूर्त्त, गूणा, देहका गतादा, ( पुं० )

जडा-दोचकी कली ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥



ताडो मुष्ट्यादिसंभेयतृणादौ ताडने रवे ।

ताडी ताडीतरौ दण्डश्चण्डांशोः पारिपार्श्विके ॥ १२ ॥

दण्डः सैन्यव्यूहभेदे मानभेदे दमे यमे ।

मंथानेऽध्वेऽभिमाने च कोणदण्डप्रकाण्डयोः ॥ १३ ॥

विप्रहे च ग्रहे यज्ञे लगुडेऽपि मतोऽस्त्रियाम् ।

नाडी नाड्यां शिरायां स्याद्द्वार्चायां कुहनस्य च ॥ १४ ॥

नीडं स्थाने कुलायेऽस्त्री समीपे तु सपूर्वकः ।

पण्डः पण्डे धियां पण्डा पाण्डुः कुन्तीपतौ सिते ॥ १५ ॥

पिण्डो देहांसयोरस्त्री निवापे सिहके पुमान् ।

पिण्डो जपाप्रसूनेऽपि पिण्डः स्याद्भोजने त्रिषु ॥ १६ ॥

पिण्डं सांघ्रे बले बोले गृहाङ्गे जीविकायसोः ।

पिण्डी तु पिण्डिकाऽलावृखर्जरीतगरान्तरे ॥ १७ ॥

ताड—मुद्गीभरा तृण, ताडन, शब्द  
( पुं० )

ताडी—ताडका वृक्ष, ( स्त्री० )

दण्ड—सूर्यका अनुचर, ॥ १२ ॥ सेना,

सेनारचनाभेद, मानभेद, दम ( इन्द्रियोंका रोकना ), यम नियम, दधि मथनेकी रई, अश्व, अभिमान, वीणादंड, वृक्षका पेडा, ॥ १३ ॥

विप्रह, ग्रह, यज्ञ, लाठी ( पुं० न० )

नाडी—पटी, नस, पाखण्डसे ध्यान,  
( स्त्री० ) ॥ १४ ॥

नीड—स्थान, पक्षीका घुँमला, सनीड-  
समीप, ( पुं० न० )

पंड—हिजडा, ( पुं० )

पंडा—बुद्धि ( स्त्री० )

पांडु—कुन्तीका पति—राजा, सकेदरंग-

बाला, ( पुं० ) ॥ १५ ॥

पिंड—शरीर, कंधा ( पुं० न० ) पि-

तरोंको देनेका पिंड, हींग, जपा-

पुष्प या जाखंड ( पुं० ) भोजन

( त्रि० ) ॥ १६ ॥

सपन, बल, सनामख्यात गंध द्रव्य

( बोल ), धरका अंग, आजीविका,  
लोहा, ( न० )

पिण्डी—धीया या कटू, पिंडखर्जूर,  
पिण्डि—का, कौण्डिनदेराय तगर, ( स्त्री० )  
॥ १७ ॥

पिण्डी स्याज्ज्ञानजिज्ञासे जिज्ञासेऽपि सतां मता ।  
 पीडाऽपमर्दकृपयोः सरलद्रुशिरोध्वजे ॥ १८ ॥  
 घण्डा तु कुलटाया स्याद् घण्डो हस्तादिवर्जिते ।  
 भाण्डं तु भाजने वणिग्मूलवित्ते विभूषणे ॥ १९ ॥  
 भूषणे च तुरङ्गाणा नदीपात्रे च कुत्रचित् ।  
 भवेन्मण्डस्तु कूप्माण्डे कर्कट्यामपि पुस्वयम् ॥ २० ॥  
 सारे पिच्छेऽपि मण्डेऽस्त्री पुमानेरण्डभूषयो ।  
 मण्डा धान्यामथो मण्डं शाकभेदे च मस्तुनि ॥ २१ ॥  
 मुण्डो राहुशिरोदैत्यभेदेऽपि त्रिषु मुण्डनि ।  
 रण्डा सूर्यरूपर्णोऽस्यभेषजे विषवास्त्रियाम् ॥ २२ ॥  
 व्याडस्तु हिंस्रपश्याथे श्वापदेऽपि सरीसृपे ।  
 शुण्डा सुराया वेद्यायां नलिनीहस्तिहस्तयोः ॥ २३ ॥

पीण्डी-ज्ञानजाननेकी इच्छा, श्रेष्ठपुत्र  
 पौके जाननेकी इच्छा ( स्त्री० )  
 पीडा-मर्दनकरना, कृपा, सरल-शुद्ध,  
 शिरसि धारण किया हुआ मुकुट  
 आदि, ( स्त्री० ) ॥ १८ ॥  
 पीडा-यदचलन स्त्री, ( स्त्री० ) हाथसे  
 वर्जित किया हुआ, ( त्रि० )  
 पीण्ड-पात्र, वनिवाका मूलपत्र, आभू  
 षण, अर्धोक्ता आभूषण, ॥ १९ ॥  
 नदीके दोनोतटोंके बीचका भाग,  
 ( न० )  
 पीण्ड-कोहला या पेठा-शाक, ककड़ी,  
 ( पुं० ) ॥ २० ॥ द्रव्यका सार,  
 मोरकी पक्ष, ( पुं० न० ) .

शरद शुद्ध, आभूषण, ( पु० )  
 मण्डा-आंखला ( स्त्री० )  
 मण्ड-शाकभेद, दधिते उत्पन्न हुवा  
 माड, ( न० ) ॥ २१ ॥  
 मुण्ड-राहु-ग्रह, कटाहुवा शिर, दैत्यभेद,  
 ( पु० ) केशमुण्डाया हुवा, ( त्रि० )  
 रण्डा-मृतापर्णो-औषधि, विषवा स्त्री  
 ( स्त्री० ) ॥ २२ ॥  
 व्याड-हिंसा करनेवाले पशु आदि,  
 श्वावज ( वनके पशु ), सर्प ( पुं० )  
 शुण्डा-भदिरा, वेद्या, कमोदिनी,  
 हस्तीकी सूंड, ॥ २३ ॥ जल ह-  
 स्तिनी ( जल जंतु, ) ( स्त्री० )

शुण्डा जलकरिण्यां च शुण्डस्तु मदनिभरे ।  
 शौण्डी कुशायां चविके शौण्डो मत्तेऽभिषेयवत् ॥ २४ ॥  
 पडः पेयान्तरे पुंसि पडो भिद्यपि विद्यते ।  
 पद्मादिवृन्दे पण्डोऽस्त्री पण्डः स्याद्गोपतौ चये ॥ २५ ॥  
 क्ष्वेडस्तु पुंसि गरले ध्वाने कर्णे महेश्वरे ।  
 क्ष्वेडस्त्रिषु स्यात्कुटिले क्ष्वेडा तु गजयोषिति ॥ २६ ॥  
 वीराणा सिंहनादेऽपि वंशशल्येऽपि च स्त्रियाम् ।  
 क्ष्वेडस्तु रक्तार्कफले घोषपुष्पे दुरासदे ॥ २७ ॥

द्वितीयम् ।

कारण्डो मधुकोषाऽसिकारण्डवदलादके ।  
 कूष्माण्डो गणभेदे स्यात्कर्कारुम्रूणयोरपि ॥ २८ ॥  
 कूष्माण्डी चण्डिकाया स्यादपि स्यादौषधीमिदि ।  
 कोदण्डो देशभेदेऽपि कोदण्डः कार्मुके भ्रुवि ॥ २९ ॥

शुण्ड—मदोन्मत्त, ( पु० )  
 शौण्डी—कुशा, चव्य, ( स्त्री० )  
 शौण्ड—मदोन्मत्त, ( त्रि० ) ॥ २४ ॥  
 पड—पीनेयोग्य पदार्थभेद, ( पु० )  
 पण्ड—कमल आदिकोंका समूह, ( पुं०  
 न० ) इद्र, साड आदि, समूह  
 ( पुं० ) ॥ २५ ॥  
 क्ष्वेड—विष, शब्द, कर्ण, महादेव,  
 ( पु० ) कुटिल ( त्रि० )  
 क्ष्वेडा—इत्तिनी, ॥ २६ ॥ शरवीरोंकी  
 गर्जना, वासका भाला, ( स्त्री० )  
 क्ष्वेड—लाल आकृषा फल, घोष ( तोरी )

लताका पुष्प, तेजस्वी, ( पुं० )  
 ॥ २७ ॥

द्वितीयम् ।

कारण्ड—शहदका कोरा, तलवार बना-  
 नेवाला, करडुवा-पक्षी, स्वयं उप-  
 जा तिल ( पुं० )  
 कूष्माण्ड—महादेवके गणोंका भेद,  
 कोहला, गर्भ, ( पुं० ) ॥ २८ ॥  
 कूष्माण्डी—चंडिका ( दिवी ), औषधीभेद,  
 ( स्त्री० )  
 कोदण्ड—देशभेद, घनुष, भुकुटी,  
 ( पु० ) ॥ २९ ॥

गारुडं स्यान्मरकते विपशास्त्रेऽपि गारुडम् ।

गारुडं गारुडभवे तरण्डो भेलके पुमान् ॥ ३० ॥

वडिशीसूत्रसंबद्धतरद्वस्तुनि नावि च ।

तिरिचिडो दैत्यभेदे स्यात् तिरिचिडो यमचेटके ॥ ३१ ॥

वृक्षभेदेऽपि वृक्षान्लबिंबयोरपि तिन्तिडी ।

द्राविडो वेधमुख्ये स्यान्नीवृद्धन्तरसङ्घचयोः ॥ ३२ ॥

निर्गुण्डीन्द्राणिकानीलशेफाल्योः करहाटके ।

पिचण्डः पुसि जठरे पशोरवयवेपि च ॥ ३३ ॥

पूर्यण्डः श्वाविद्धन्धमृगयोर्गन्धकीटके ।

प्रकाण्डोस्त्री तरुस्कन्धे प्रशस्ते विटपेऽपि च ॥ ३४ ॥

प्रचण्डो दुर्वहे श्वेतकरवीरे प्रतापिनि ।

वरण्डो मुखरोगे स्यादतरावेदिवृन्दयोः ॥ ३५ ॥

गारुड-मरकत ( नीली ) मणि, विपशास्त्र, विपशास्त्र विषे होनेवाला ( न० )

तरुड-नदी आदिमें तरनेका पूजा आदि ॥ ३० ॥ मच्छीपकडनेका काटाके सूत्रके संबंधसे तिरती हुं वस्तु, नौका, ( पु० )

तिरिचिड-दैत्यभेद, धर्मराजका किंकर ( पुं० ) ॥ ३१ ॥

तिन्तिडी-वृक्षभेद, चूना-शाक, इमली-वृक्ष,

द्राविड-वेधमुख्य, देशभेदमें उत्पन्न होनेवाला, सख्याभेद ( पुं० ) ॥ ३२ ॥

निर्गुण्डी-पुष्पभेद, नीलासभास, कमलकद, ( स्त्री० )

पिचंड-उदर ( पेट ), पशुका एक अंग, ( पु० ) ॥ ३३ ॥

पूर्यण्ड-सेही, गन्धमृग, गन्धकीटक ( गंधकीडा ) ( पुं० )

प्रकाण्ड-वृक्षकी जड़से शाखाओं-का भाग, श्रेष्ठ, वृक्ष, ( पुं० न० ) ॥ ३४ ॥

प्रचंड-त्रिसके साथ दुःखसे बर्ताव हो वह, सपेद कनेर, प्रतापी, ( पु० )

वरंड-मुखरोग, अन्तरावेदि ( भीतरका चीतरा ) वृन्द ( समूह ) ( पुं० ) ॥ ३५ ॥

मतो दुष्टिणि वार्तण्डो वार्तण्डः स्याद्विहङ्गमे ।  
 वारुण्डी द्वारपिण्ड्या स्याद् वारुण्डः कर्णद्वन्द्वे ॥ ३६ ॥  
 फणिराजेऽथ वारुण्डः सेकपात्रेऽपि मुद्गरे ।  
 भेरुण्डा यक्षिणीदेवीभेदयोस्त्रिषु भीषणे ॥ ३७ ॥  
 मार्तण्डस्तु मतश्चण्डकिरणक्रोडयोरयम् ।  
 मारण्डस्तु मुजङ्गाण्डे पथि गोमयमण्डले ॥ ३८ ॥  
 वरण्डा सारिकाखङ्गधेनुवर्तिषु वर्तते ।  
 वितण्डा वादभेदे स्यात् करवीर्या शिलाह्वये ॥ ३९ ॥  
 कच्छीशाके च सा ज्ञेया शिखण्डो बर्हिचूडयो ।  
 सपिण्डः पुसि दायदे सपिण्डस्नानयेऽपि च ।  
 सरण्डः सरटे धूर्ते सरण्डो भूपणान्तरे ॥ ४० ॥  
 उच्यते ।

आपोगण्डस्तु शिशुके विकलाङ्गेऽतिभीरुके ॥ ४१ ॥

वार्तण्ड-दुष्टी, पक्षी, ( पु० )  
 वारुण्डी-द्वारपिण्डी ( देहली ) ( स्त्री० )  
 वारुण्ड-कान और नेत्रका मल ॥ ३६ ॥  
 मागरान, सीचनेका पान, मुद्गर,  
 ( पु० )  
 भेरुण्डा-यक्षिणीभेद, देवीभेद, ( स्त्री० )  
 भयकर ( त्रि० ) ॥ ३७ ॥  
 मार्तण्ड-सूर्य, सूकर, ( पु० )  
 मारण्ड-सर्पका अडा, मार्ग, गोबरका  
 मडल, ( पु० ) ॥ ३८ ॥  
 वरण्डा-मैना पक्षी, खड्ग, गी, बत्ती,  
 ( स्त्री० )

वितण्डा-वादभेद, कनेर, शिलाजीत  
 ॥ ३९ ॥ कच्छी-शाक ( शाकभेद )  
 ( स्त्री० )  
 शिखण्ड-भोरपल, भोरचोटी, ( पु० )  
 सपिण्ड-हिस्तेदार, पुत्र, ( पु० )  
 सरण्ड-गिरगट, धूर्त, आभूपणभेद,  
 ( पु० ) ॥ ४० ॥

उच्यते ।

आपोगण्ड-बालक, विकल अंग,  
 बहुत डरपोक, ( पु० ) ॥ ४१ ॥

चक्रवाडोऽद्रिभेदे स्याच्चक्रवाडं तु मण्डले ।  
 जलरुण्डो जलावर्ते जलरेणुमुजङ्गयोः ॥ ४२ ॥  
 देवताडो बृहद्भानौ स्वर्भानौ घोषकेऽपि च ।  
 द्वयोर्वातगुडः स्यातो वात्यायां वातशोणिते ॥ ४३ ॥  
 पिच्छलास्फोटिकायां च धाममात्रेऽपि दृश्यते ।  
 • इति विश्वलोचने दान्तवर्गः ॥

### अथ दान्तवर्गः ।

द्वैकम् ।

स्याद् ढकारस्तु ढकायां निर्गुणे विषमध्वनौ ॥ १ ॥

द्वितीयम् ।

गूढं रहसि गुह्ये च संवृते त्वभिधेयवत् ।

भवेद्दाढा तु दंष्ट्रायामिच्छायामप्यथ त्रिषु ॥ २ ॥

स्याद्दृढः स्थूलबलिनोर्दृढं वाढप्रगाढयो ।

माढिः पत्रादिभङ्गौ स्याद् बलिना दैन्यदीपने ॥ ३ ॥

चक्रवाड—पर्वतभेद, ( पु० ) मण्डल,  
 ( न० )

जलरुण्ड—जलका भवर, जलकी रेत्या,  
 तप, ( पु० ) ॥ ४२ ॥

देवताड—अग्नि, राहु, तोरई, ( पु० )

वातगुड—वात ( वायु ) समूह, वात-  
 शोणित ( वातरुधिर ), ॥ ४३ ॥

जलक्षिरतीहुई गूमडी, स्थानमात्र,  
 ( पु० स्त्री० )

इसप्रकार विश्वलोचनरी भाषाटीकाये  
 यावर्ग समाप्त हुवा ॥

अथ दान्तवर्गः ।

द्वैकम् ।

ढ(कार)—ढोल-बाजा, निर्गुण पुरुष,  
 विषमशब्द, ( पु० ) ॥ १ ॥

द्वितीयम् ।

गूढ—एकान्त, गुप्त, दृक्काहुवा, ( त्रि० )  
 दाढा—दाड, इच्छा ( स्त्री० ) ॥ २ ॥

दृढ—मोटा, बली, ( त्रि० ) विरर,  
 मजपूत ( न० )

माढि—शिवोरे मुग्ग-रिका चित्र,  
 बलाके आगे दानताका रिखाना  
 ( स्त्री० ) ॥ ३ ॥

मूढस्तु तन्द्रिते मूर्खे राढा स्याद्गुह्यशोभयोः ।  
 वाढं मृशे प्रतिज्ञायां घोढा भारिकसूतयोः ॥ ४ ॥  
 व्यूढः पृथुलविन्यस्तसंहतेषु हते त्रिषु ।  
 षण्ढो वृषे वर्षवरे क्लीबे स्याद्बन्ध्यपूरुषे ॥ ५ ॥  
 वाच्यवन्मर्षणे सोढा सोढा शक्तेऽपि वाच्यवत् ।

दृत्तीयम् ।

अध्यूढ ईश्वरेऽध्यूढा कृतसापक्ष्ययोपिति ॥ ६ ॥  
 आपाढो व्रतिनां दण्डे मासेऽपि मलयाचले ।  
 उदूढ ऊढे स्थूले स्यादुपोढो निकटोदयोः ॥ ७ ॥  
 प्रगाढस्तु दृढे कृच्छ्रे प्रमीढो मूत्रिते घने ।  
 प्ररूढो जाठरे बद्धमूले स्यादभिधेययोः ॥ ८ ॥

मूढ—तंद्रावाला, मूर्ख ( पुं० )  
 राढा—गुप्त, शोभा, ( स्त्री० )  
 वाढ—अत्यन्त, प्रतिज्ञा, ( न० )  
 घोढा—भारलेजानेवाला, सारथि,  
 ( पुं० ) ॥ ४ ॥  
 व्यूढ—मोटा, स्थापनकियाहुवा, इकट्टा  
 कियाहुवा, नाशहुवा, ( त्रि० )  
 षण्ढ—सांडबैल, हिजडा, ( पुं० ) सतान-  
 रहित पुरुष ( पुं० ) ॥ ५ ॥  
 सोढा—सहनेवाला-पुरुष, समर्थ, ( त्रि० )  
 दृत्तीय ।  
 अध्यूढ—ईश्वर या समर्थ, ( पुं० )

अध्यूढा—जिसके कई विवाह हुए हों  
 उसकी पहली स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥  
 आपाढ—व्रतियोंका दंड, आपाढ-  
 मास, मलयाचल-पर्वत, ( पुं० )  
 उदूढ—विवाहाहुवा, स्थूल ( मोटा )  
 ( पुं० )  
 उपोढ—समीप होनेवाला, विवाहा  
 हुवा, ( पुं० ) ॥ ७ ॥  
 प्रगाढ—दृढ, दृष्ट, ( पुं० )  
 प्रमीढ—वेशाव करना, भेष ( पुं० )  
 प्ररूढ—पेट, जिसकी जठ दृढ है वह  
 नाम ( पुं० ) ॥ ८ ॥

प्रारूढः सम्यले वह्नौ वस्त्राञ्चलकपाटयोः ।  
 पञ्जरेऽपि विगूढस्तु गुप्तगर्हितयोस्त्रिषु ॥ ९ ॥  
 विगूढस्त्रिषु सञ्जाते वर्द्धिते छुरिते मतः ।  
 संमूढस्तु नवे मुग्धे पुंजितेऽप्यनुपप्लुते ॥ १० ॥  
 संरूढो वाच्यवत्प्रौढे तथैवाङ्कुरितेऽपि च ।

दचतुर्थम् ।

अध्यारूढं समारूढोऽत्यधिकेऽपि त्रिलिङ्गकः ॥ ११ ॥

इति विश्वलोचने ढान्तवर्गः ॥

### अथ णान्तवर्गः ।

णकारो निर्णये जाने ।

णद्वितीयम् ।

सूक्ष्मे व्रीह्यन्तरेऽप्यणुः ॥

अणिराणिवदक्षाग्रकीलसीमाश्रिषु द्वयोः ॥ १ ॥

प्रारूढ-खरची, अग्नि, बल्लखड,  
 किंवाड, पौंजरा ( पुं० )

विगूढ-गुप्त, निंदित, ( त्रि० ) ॥ ९ ॥

विगूढ-उत्पन्नहुवा, बढाहुवा, अधि-  
 क हास, ( पुं० )

संमूढ-नवीन, मुढाहुवा, इकडा  
 किया हुवा, नहीं कष्टमें पढाहुवा,  
 ( पुं० ) ॥ १० ॥

संरूढ-जवान, भंङ्करवाला, ( त्रि० )

दचतुर्थम् ।

अध्यारूढ-अच्छीतरह चढाहुवा,

अत्यंत अधिक ( त्रियादह ),  
 ( त्रि० ) ॥ ११ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भापाटीकामें  
 ढान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

अथ णान्तवर्गः ।

णैक ।

ण(कार)-निर्णय, ज्ञान, ( पु० )

णद्वितीय ।

अणु-सूक्ष्म, मोहिमेद, ( पुं० )

अणि-आणि-धुराका अग्रभाग,  
 कीला, सीम, षोण, ( पु० स्त्री० ) ॥ १ ॥



उष्णः स्यादातपे ग्रीष्मे वाच्यवत्तदक्षयो ।  
 ऊर्णा भ्रूमध्यजावर्ते भवेन्मेप्यादिलोम्नि च ॥ २ ॥  
 पिप्पलीजीरकुम्भीरमक्षिकासु कणा स्मृता ।  
 कणोऽतिसूक्ष्मे धान्याशे कर्णः श्रोत्रे पृथगुते ॥ ३ ॥  
 सुवर्णालो च काणस्तु मौद्गल्याधिकलोचने ।  
 किणस्तु व्रणे चिह्नं स्यादथ सूक्ष्मव्रणे गुणे ॥ ४ ॥  
 कीर्णं छत्रे परिक्षिप्ते हिंसितेऽप्यभिधेयवत् ।  
 कुणिस्तु वृक्रे तुत्रे कृष्णे विष्णौ पिकेऽर्जुने ॥ ५ ॥  
 व्यासे कृष्णं तु मरिचे लोहे च त्रिषु तद्वति ।  
 कृष्णा तु द्रौपदीनीलीहारहरासु पिप्पले ॥ ६ ॥  
 कोणोऽसौ लघुदे वाद्यप्रभेदे चार्कसम्भवे ।  
 वीणादिवादनोपायेऽप्येकदेशेऽपि वाच्यवत् ॥ ७ ॥

उष्ण-धूप ग्रीष्म ऋतु, ( पु० ) तप हुवा, चतुर, ( त्रि० )	कीर्णं टकाहुवा, तिरस्कार क्रियाहु माराहुवा, ( त्रि० )
ऊर्णा-भ्रुवुटाके वाचका चक्र, भेडी आदिके केश, ( स्त्री० ) ॥ २ ॥	कुणि-रोगआदिते दूषित हाथोंवा ( दृग ), ( त्रि० ) वृत्तवृत्त, ( पु० )
कणा-पायल औषधि, जीरा, जल जतु, सोनामन्गरी, ( स्त्री० )	कृष्ण-विष्णु कौयल, अनुत, ॥ ५ व्यास, ( पु० ) स्यादृग्मिरच, स ( न० ) स्यादृग्मवाला ( त्रि० )
कण-अतिसूक्ष्म, धान्याश अश ( कि तनेकदाने ) ( पु० )	कृष्णा-द्रौपदी, नीली, दास, पिप्प ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥
कर्ण-वान, कुत्तीका पुत्र, सुवर्णालि ( सोनाली-वृक्ष ) ( पु० ) ॥ ३ ॥	कोण-बूना, लठी, बाजाभेद, स धर, वीणावनाईका मन्, ( पु० ) किती द्रव्यका एकदेश ( त्रि० ) ॥ ७ ॥
काण-काग आदिक अर्थात् काणाने नेत्रवाला, ( पु० )	
किण-व्रण ( घाव ), चिह्न, सूक्ष्मव्रण, गुण, ( पु० ) ॥ ४ ॥	

गणः समूहे प्रमथे संख्यासैन्यप्रभेदयोः ।  
 गुणो रूपादिसत्त्वादिर्विवादिहरितादिषु ॥ ८ ॥  
 सूदेऽप्रधाने सन्ध्यादौ रज्जौ मौर्व्या वृकोदरे ।  
 गेष्णुर्नटे गायने स्वाद् घृणा कारुण्यनिन्दयोः ॥ ९ ॥  
 घ्राणं घ्राणेऽपि नासायां चूर्णीं तु स्यात्कपर्दके ।  
 चूर्णः क्षोदे क्षारभेदे चूर्णानि गन्धशुक्तिषु ॥ १० ॥  
 जर्णः कलानिधौ वृक्षे जिष्णुः पार्थेन्द्रवहिषु ।  
 जित्वरे त्रिषु जीर्णं तु पके वृद्धे जरान्तरे ॥ ११ ॥  
 झणिः पूगे दुष्टद्वैवश्रुतौ स्त्री कठिनेऽन्यवत् ॥  
 तीक्ष्णं क्षारेऽथ निशिततिग्मात्मत्यागिषु त्रिषु ॥ १२ ॥  
 निरालस्ये सुबुद्धौ च त्रिषु तीक्ष्णं च मुष्कके ।  
 तीक्ष्णं लोहे विषे तिग्मे यवात्रे लवणे रणे ॥ १३ ॥

गण-समूह, महादेवकेगण, संख्या, सेनाभेद ( पुं० )  
 गुण-रूप रम आदि, सत्त्व रज आदि, विंशति, ॥ ८ ॥ हरित पीत आदि ( रग ), रत्नोद्भवा, मन्त्री, सन्ध्याआदि, रस्ती, धनुषकी ज्या, भीमसेन, ( त्रि० )  
 गेष्णु-नट, गानेवाला, ( पुं० )  
 घृणा-दया, निन्दा, ( स्त्री० ) ॥ ९ ॥  
 घ्राण-सूषाहुवा, नासिका, ( न० )  
 चूर्णी-कौडी, ( स्त्री० )  
 चूर्ण-पीसाहुवा ( आटा आदि ), क्षारभेद, ( पुं० ) गणवालीशुक्ति ( सीपी ) ( न० ) ॥ १० ॥

जर्ण-चंद्रमा, वृक्ष, ( पु० )  
 जिष्णु-अर्जुन, इन्द्र, अग्नि, ( पु० )  
 जीतनेके स्वभाववाला, ( त्रि० )  
 जीर्ण-पक्व, वृद्ध, अतिवृद्ध, ( त्रि० ) ॥ ११ ॥  
 झणि-सुपारी वृक्ष, दुष्टभाग्यका मु- नना, ( स्त्री ) कठिन ( करझा ) ( त्रि० )  
 तीक्ष्ण-क्षार, पैना, तीखा, आत्म- स्थायी, ( त्रि० ) ॥ १२ ॥ आ- लस्यरहित, अच्छीशुद्धिवाला, ( त्रि० )  
 मोक्षा-वृक्ष, लोहा, विष, तिग्म ( तीक्ष्ण ), जवाखार, नमक, रण, ( न० ) ॥ १३ ॥

तूणी नील्यां निपङ्गे ना तृष्णा लिप्सापिपासयोः ।  
 द्रोणं तु रक्षिते रक्ष्ये रक्षणत्रायमाणयोः ॥ १४ ॥  
 दीर्णं विदारिते भीते स्फुटितेऽप्यभिधेयवत् ।  
 देष्णुर्दातरि दुर्दान्ते द्रुणो वृद्धिकमृंगयोः ॥ १५ ॥  
 द्रुणी तु कच्छपीद्रोण्योर्द्रुणं चापकृपाणयोः ।  
 द्रोणस्तु द्रोणकाके स्यादपि द्रोणः कृपीपतौ ॥ १६ ॥  
 आढकानां चतुष्केपि द्रोणं स्यादाढकेऽस्त्रियाम् ।  
 द्रोणी काष्ठाभ्रुवाहिन्यां गवां घासभुजिस्यितौ ॥ १७ ॥  
 काष्ठागारे गिरेः सन्धौ नीवृद्धेदेऽपि दृश्यते ।  
 वर्णः स्वर्णेऽपि रूपेऽपि पणो मूल्ये मृतौ ग्लहे ॥ १८ ॥  
 पणोऽशीतिवराटेऽपि पणः कार्पापणे घने ।  
 द्यूते विक्रय्यशाकादेर्वद्धमुष्ठावपि स्मृतः ॥ १९ ॥

तूणी-नीली औषधि ( स्त्री० ) बाणों-  
 का भाषा, ( पु० )

तृष्णा-वाछा, तृषा (प्यास) (स्त्री०)

द्रोण-रक्षाकियाहुवा, रक्षाकरने योग्य,  
 रक्षा, प्रायमान औषधि ( न० )  
 ॥ १४ ॥

दीर्ण-फाडाहुवा, डराहुवा, फूटाहुवा,  
 ( त्रि० )

देष्णु-दाता ( देनेवाला ), दुःखसे  
 रोकाहुवा ( पु० )

द्रुण-बौछ, भाँटा ( पुं० ) ॥ १५ ॥

द्रुणी-कछवी, छोटी नीका, ( स्त्री० )

द्रुण-धनुष, तरवार ( खत्र ) ( न० )

द्रोण-काकभेद, द्रोणाचार्य, ( पु० )  
 ॥ १६ ॥

द्रोण-चार आढक, ( पु० न० )

द्रोणी-डोंडी, गीबोंके घास चरनेकी  
 जगह ॥ १७ ॥ काष्ठका स्थान,  
 पर्वतकी संधि, देशभेद, ( स्त्री० )

वर्ण-मुवर्ण, रूप, ( पुं० )

पण-बस्तुका मोल, नीकरी, जूवामें  
 लगानेका घन, ॥१८॥ ५० कौडी,  
 पैसा, घन, जूवा, बेचनेके शाक  
 आदिकी बाँधीहुई मुगी, ॥ १९ ॥

पणो घृतादिपूतृष्टे व्यवहारेऽप्ययं पणः ।

पर्णं पत्रे पत्रे च पर्णः स्यात्पुंसि किंशुके ॥ २० ॥

पार्ष्णिश्चरणमूले ना कुम्भीपाश्चात्यभागयोः ।

सेनाष्ट्रेऽपि पार्ष्णिः स्यात्पार्ष्णिः स्यादुन्मदस्त्रियाम् ॥ २१ ॥

समग्रे पूरिते पूर्णस्त्रिपु शक्ते तु पुंस्ययम् ।

प्राणा असुप्वथ प्राणे विद्वातेऽप्यनिले बले ॥ २२ ॥

काव्यजीवे च बोले च प्राणं तु त्रिपु पूरिते ।

फाणिर्गुडे करण्डे च वाणी घृतौ च वाचि च ॥ २३ ॥

वाणिस्तु हारके मूल्ये भ्रूणः स्त्रीगर्भडिम्भयोः ।

मणिर्द्वयोर्मेहनाग्रे रत्ने छागीगलस्तने ॥ २४ ॥

अलिङ्गरेऽपि मुक्तादौ मोणस्तु पटमुत्सके ।

मोणो बाणेपि कुम्भीरे मक्षिकाहिकरण्डयोः ॥ २५ ॥

पणो-जूषा आदिमें लगायाहुवा,

व्यवहार ( पुं० )

पर्ण-पत्ता, पक्षीकी पर, ( न० )

पर्ण-केसू ( पलाशपुष्प ) ( पुं० )

॥ २० ॥

पार्ष्णि- एडी-पाँवकी, ( पु० )

कायकल, विललाभाग, सेनाकी पीठ,

मदोन्मत्त स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ २१ ॥

पूर्ण-संपूर्ण, पूराहुवा, ( त्रि० )

समर्थ, ( पुं० )

प्राण-श्वास, ( पुं० व० )

हृदयमें रहनेवाला वायु, विट्वायु,

वायु, बल, ॥ २२ ॥

काव्यजीव (रस), बोल (गंधद्रव्य)

( न० ) पूराहुवा, ( त्रि० )

फाणि-गुड, पिटारा, ( पु० )

वाणी-जूषा, वाणी ( वाक् ) ( स्त्री० )

॥ २३ ॥

वाणी-हार, मोल, ( पुं० )

भ्रूण-स्त्रीका गर्भ, बालक, ( पुं० )

मणि-लिंगका अग्रभाग, रत्न, बकरीके

कंठके स्तन, ॥ २४ ॥ मटका, मो-

ती आदि, ( पुं० स्त्री० )

मोण-बाण, नाक ( जलजंतु ),

मक्खी, सर्पकी पिटारी, ( पुं० )

॥ २५ ॥

रणः कोणे वणे युद्धे रेणुर्धूल्यणुपर्पटे ।

अथ पुंसेव वर्णः स्यात्स्तुतौ रूपयशोगुणे ॥ २६ ॥

रागे द्विजादी मुक्तादौ शोभायां चित्रकम्बले ।

व्रते गीतक्रमे देशेऽप्यस्त्री स्याद्दर्णकेऽक्षरे ॥ २७ ॥

घाणो बलिसुते काण्डे काण्डांशे केवले पुमान् ।

वाणो वाणा च क्षिप्र्यां स्याद् वाणको व्यन्तरे क्वचित् ॥ २८ ॥

विष्णुः कृष्णे वसौ सूर्ये विष्णुर्नारायणार्कयोः ।

वसुदैवतभेदेऽपि वीणा बल्लकिविद्युतोः ॥ २९ ॥

वृष्णिः स्याद्यादवे भेपे वृष्णिः पापण्डिचण्डयोः ।

वेणी नदीना सङ्गे स्यात् केशवन्धान्तरेऽपि च ॥ ३० ॥

देवताडेऽपि वेणी स्त्री वेणुर्वशे नृपान्तरे ।

शाणोर्द्धमाषके कर्षे कपणे करपत्रके ॥ ३१ ॥

रण—कोण, शब्द, युद्ध, ( पुं० )

रेणु—धूलि, बारीक पापड, ( पुं० )

वर्ण—स्तुति, रूप, यश, गुण, ॥ २६ ॥

रागभेद, ब्राह्मण आदि, मोती

आदि, शोभा, विचित्र कंबल, व्रत,

गीतक्रम, देशभेद, रग, अक्षर,

( पुं० न० ) ॥ २७ ॥

घाण—बलिका पुत्र, वाण, वाणका मूल,

केवल, ( पुं० )

घाणा—कटसरैया औपधि, ( स्त्री० )

घाणक—व्यन्तरदेव ( पुं० ) ॥ २८ ॥

विष्णु—कृष्ण, वसु, सूर्य, नारायण,

सूर्य, देवभेद, ( पुं० )

वीणा—वीणा बाजा, बिजली, ( स्त्री० )

॥ २९ ॥

वृष्णि—यादव, भेंडा, पापडी, अति

क्रोधी, ( पुं० )

वेणी—नदियोंका संग, केशबंधभेद,

॥ ३० ॥ देवताड-वृक्ष, ( स्त्री० )

वेणु—बौस-वृक्ष, वेणु-राजा, ( पुं० )

शाण—आधामासा, सोलहमासा, वसो-

टी पत्थर, करोत (आरा) ॥ ३१ ॥

शीतत्राणान्तरे शाणी शीर्णमल्पविशीर्णयोः ।

शोणो नदे कोकनदच्छवौ श्योनाकनर्हिणोः ॥ ३२ ॥

लोहिताश्वेऽप्यथ श्रोणिर्द्वयो- स्यात्कारुसंहतौ ।

केशपात्रान्तरे श्रोणिः श्रेणिः पङ्कावनिः स्त्रियाम् ॥ ३३ ॥

श्राणा यवाग्वां श्राणं तु पके स्यादभिधेयवत् ।

स्थाणुः कीले हरे पुंसि स्थाणुन्त्वस्त्री भ्रुवेपि च ॥ ३४ ॥

स्थूणा तु स्याद् गृहस्तम्भे लोहप्रतिकृतावपि ।

क्षणः स्यादुत्सवे कालभेदावसरपर्वसु ॥ ३५ ॥

षट्तीयम् ।

अभीक्षणं तु भृशे नित्येऽप्यरुणोऽनूरुमूर्ययोः ।

कुष्ठे चाव्यक्तारागे च सन्ध्यारागे च पुंस्त्वम् ॥ ३६ ॥

नीरवाऽऽरक्तकपिलव्याकुलेषु च वाच्यवत् ।

अरुणा तिवृताश्यामामञ्जिष्ठाऽतिविषासु च ॥ ३७ ॥

शाणी-उंडसे रक्षा करनेवाला पहनने का वस्त्र ( स्त्री० )

शीर्ण-अल्प, गिराहुवा, ( न० )

शोण-नद, लालकमलकी छवि, सोना-पाटा, कुशा ॥ ३२ ॥ लालअश्व, (घोडा) ( पु० )

श्रोणि-कागीगरोका समूह, (पु० स्त्री०)

श्राणा-यवागू, ( स्त्री० )

श्राण-पकाहुवा ( त्रि० )

स्थाणु-कीला, महादेव, ( पु० )

स्थाणु-ध्रुव, इव्य, ( पुं० न० ) ॥ ३४ ॥

स्थूणा-धरका स्तम्भ, लोहेकी मूर्ति, ( स्त्री० )

क्षण-उत्सव, कालभेद, भवकाश, पर्व, ( पुं० ) ॥ ३५ ॥

षट्तीय ।

अभीक्षण-अलंत, नित्य, ( अ० )

अरुण-अनूरु ( सूर्यका सारथि ), सूर्य, कुष्ठभेद, थोडा लाल रंग, सन्ध्यासमयमें आकाशनी लाली, ( पुं० ) ॥ ३६ ॥ शब्दरहित, थोडा लाल कपिल, व्याकुल, ( त्रि० )

अरुणा-निसोध, सारिवा, मजीठ, अतीस, ( स्त्री० ) ॥ ३७ ॥

रोहिणीं कटुरोहिण्यां लोदितामोगवल्कयोः ।  
 गोनागकर्णरुग्भेदे लक्षणं तु द्विजान्तरे ॥ ७४ ॥  
 लक्षणो रसरक्षोन्धिभेदेषु लक्षणा मुती ।  
 लक्षणं नास्ति विदे च रामभ्रातरि लक्षणः ॥ ७५ ॥  
 लक्ष्मणः पुंसि सौमित्रौ लक्ष्मणं नामलक्ष्मणोः ।  
 लक्ष्मणा नाग्मीज्योतिष्मत्वोः धीमति वाच्यवत् ॥ ७६ ॥  
 विपणिन्तु सियां पण्यवीथ्यामापणपण्ययोः ।  
 विषाणं तु पशो गृह्णा विषाणं द्विगददन्तयोः ॥ ७७ ॥  
 त्रिषु त्रिषु विषाणी तु मेपगृह्णाम्यभेदजे ।  
 शरणं गृहरक्षित्रो शरणं ग्दणने वषे ॥ ७८ ॥  
 सिद्धाणं काचपात्रेऽपि नामिकान्योदकितृयोः ।  
 श्रावणो गामि पापण्डे दध्यान्यां श्रावणा भिव्याम् ॥ ७९ ॥

रोहिणी-जुटकी, लालसांटी, धरतु  
 वा या रीटा, गौ, लालभग्द, एक  
 प्रकारका रोग, ( स्त्री० )  
 लक्षण-जन्तृर्षाके संयोगसे पैदा  
 होनेवाला, ॥ ७४ ॥  
 लक्षण-राम-भेद, राक्षस भेद, गमुद  
 भेद, ( पुं० )  
 लक्षणा-जाति ( स्त्री० )  
 लक्षण-नाम, चिह्न, ( न० ) राम-  
 भ्राता ( लक्ष्मण ) ( पुं० ) ॥ ७५ ॥  
 लक्ष्मण-सुमित्राका पुत्र ( लक्ष्मण )  
 ( पुं० ) नाम, चिह्न, ( न० )  
 लक्ष्मणा-सारखी-पक्षी ( सारगकी

शो ), मालकांगनी, ( स्त्री० ) स-  
 पत्तिलाला, ( त्रि० ) ॥ ७६ ॥  
 विपणि-वाजार, हाट, दुकान, ( त्रि० )  
 विषाण-पशुके खीन, हायाके दांत,  
 ( त्रि० ) ॥ ७७ ॥  
 विषाणी-मेगसोर्गा-ध्रापधि ( स्त्री० )  
 शरण-पर, रक्षाकरनेवाला, रक्षा,  
 मारना, ( न० ) ॥ ७८ ॥  
 सिद्धाण-वाचघा पात्र, नासिकाका  
 मल, लोहेका मल, ( न० ) ॥  
 श्रावण-श्रावण-माघ, पापंड, ( पुं० )  
 श्रावणा-दधियू-नृध, ( स्त्री० ) ॥ ७९ ॥

श्रीपर्णी कुम्भिगम्भार्या क्लीव पद्माग्निमन्थयो ।  
 सङ्कीर्ण सङ्कटेऽशुद्धे सरणिः श्रेणिवर्त्मनो ॥ ८० ॥  
 सारणो रावणाऽमात्येऽप्यतीसारेऽपि सारणः ।  
 सारणी स्वल्पसरिति प्रसारण्या च सारणी ॥ ८१ ॥  
 सुपर्णः स्वर्णचूडेऽपि गरुडे कृतमालके ।  
 सुपर्णा कमलिन्या च सुपर्णा तार्क्ष्यमातरि ॥ ८२ ॥  
 सुवर्णस्तु सुवर्णालौ कृष्णाऽगुरुमखान्तरे ।  
 सुवर्ण वर्णित स्वर्णे सुवर्ण कर्पवित्तयो ॥ ८३ ॥  
 सुपेणो हरिसुग्रीववैद्ययो करमर्दके ।  
 हरणं यौतकद्रव्येऽप्यङ्गरागे भुजे हतौ ॥ ८४ ॥  
 हरिणस्तु मृगे पुंसि हरिणः पाण्डुरेऽन्यवत् ।  
 हरिणी हरितामृग्योर्दृच्छीभेदयोरपि ॥ ८५ ॥

श्रीपर्णी-गूगल-वृक्ष, कभारी वा कुमेर वृक्ष, ( स्त्री० )	सुवर्ण-हेमपुष्पी या सोनाली स्याद अग्नर वृक्ष, यज्ञभेद, ( पु० )
श्रीपर्ण-कमल, अरणी-वृक्ष, ( न० )	सुवर्ण-सोना, कप ( सोलहमासा ), द्रव्य, ( न० ) ॥ ८३ ॥
सङ्कीर्ण-सकट ( सकटा मीडा ), अशुद्ध, ( न० ),	सुपेण-विष्णु, सुग्रीववैद्य, करदा-वृक्ष, ( पु० )
सरणि पक्षि, मार्ग ( स्त्री० ) ॥ ८० ॥	हरण-वरवधूको देनेका द्रव्य, अग्न राग, भुज, हरना, ( न० ) ॥ ८४ ॥
सारण-रावणका मंत्री, अतीसार रोग, ( पु० )	हरिण-मृग, ( पु० ) पाण्डुर ( श्वेत-रंग ) ( त्रि० )
सारणी-छोटी नदी, पसरन वा छुड मुह, ( स्त्री० ) ॥ ८१ ॥	हरिणी हरितरगवाली, मृगी, छद-भेद, स्त्रीभेद, ॥ ८५ ॥
सुपर्ण-स्वर्णचूड पक्षी, गरुड, अमल तास वृक्ष, ( पु० ) ॥	
सुपर्णा-कमलिनी (कमोदनी), गरुडकी माता, ( स्त्री० ) ॥ ८२ ॥	



सुवर्णप्रतिमायां च हर्षणस्तु प्रमोदके ।  
 अक्षिरोगान्तरे योगान्तरेऽपि श्राद्धदैवते ॥ ८६ ॥  
 स्त्री कुलस्त्रीरेणुकयोः हरेणुर्ना सतीनके ।  
 हिरणं च हरिष्यं च वराटे स्वर्णरेतसोः ॥ ८७ ॥  
 क्षेपणी च भवेन्नौकादण्डे जालान्तरेऽपि च ।

णचतुर्थम् -

अङ्गारिणी हसन्यां स्याद् भाम्करत्यक्तदिश्यपि ॥ ८८ ॥  
 आतर्पणं तु सौहित्ये मङ्गलालेपनेऽपि च ।  
 आथर्वणस्त्वथर्वजद्विजन्मनि पुरोहिते ॥ ८९ ॥  
 आरोहणं तु सोपाने समारोहप्ररोहयोः ।  
 उत्क्षेपणं तु व्यजने धान्यमर्दनवस्तुनि ॥ ९० ॥  
 वान्तोन्मूलननिम्तारोन्नयेषूद्धरणं मतम् ।  
 अथ कामगुणो रागेऽप्याभोगे विषयेऽपि च ॥ ९१ ॥

सुवर्णकी मूर्ति, ( स्त्री० )  
 हर्षण—आनन्द, नेत्ररोगविशेष, हर्ष-  
 ण-भोग, श्राद्धदैवत ( धर्मराज )  
 ( पुं० ) ॥ ८६ ॥  
 हरेणु—कुलकी स्त्री, रेणुका औषधि,  
 ( स्त्री० ) मटर-अन्न ( पुं० )  
 हिरण-हिरण्य-कौडी, सुवर्ण, वीर्य,  
 ( न० ) ॥ ८७ ॥  
 क्षेपणी—भावादंड, जालभेद, ( स्त्री० )  
 णचतुर्थम् ।  
 अङ्गारिणी—निगडी, सूर्यकी ल्हागी-  
 हुद्रे दिशा, ( स्त्री० ) ॥ ८८ ॥

आतर्पण—तृप्ति, मंगलद्रव्यका लीपना  
 ( न० )  
 आथर्वण—अथर्ववेदका जाननेवाला  
 ब्राह्मण, पुरोहित, ( पुं० ) ॥ ८९ ॥  
 आरोहण—सीडी, चडना, बीजआ-  
 दिकी उत्पत्ति, ( न० )  
 उत्क्षेपण—पंखा, धान्यरो मर्दनकर-  
 नेवाली बस्तु, ( न० ) ॥ ९० ॥  
 उद्धरण—छर्द, उखाडना, उद्धार,  
 ऊपरप्राप्तकरना, ( न० )  
 कामगुण—राग ( रति ), आभोग  
 ( परिपूर्णता ), विषय, ( पुं ) ॥ ९१ ॥

कार्पापणः पुराणे स्यादस्त्रियामपि कार्पिके ।  
 चीर्णपर्णस्तु खर्जूरीपादपे पिचुमर्दके ॥ ९२ ॥  
 चूडामणिः शिरोरत्ने काकचिद्भाफलेऽपि च ।  
 जुहुराणोऽनलेऽध्वर्यो तण्डुरीणस्तु कीटके ॥ ९३ ॥  
 स्यात्तन्दुलोदके चैव याम्यदेशीयवर्गरे ।  
 तैलपर्णी मलयजे सिहश्रीवासयोरपि ॥ ९४ ॥  
 दाक्षायणी च दुर्गाया रोहिण्या तारकामु च ।  
 देवमणिः शिवे वाजिक्रण्ठावर्त्ते च कौस्तुभे ॥ ९५ ॥  
 नारायणोऽच्युतेऽभीरुगौर्योर्नारायणी स्त्रियाम् ।  
 गले निगरणः पुसि भोजने तु नपुसकम् ॥ ९६ ॥  
 निरूपणं विचारे स्यादालोकननिदर्शने ।  
 निस्तरणं स्यान्निस्तारेऽप्युपाये निर्गमेऽपि च ॥ ९७ ॥

कार्पापण-पुराणा, रुपया ( पु० न० )	दाक्षायणी-दुर्गा, रोहिणी, तारा, ( स्त्री० )
चीर्णपर्ण-सज्जुरका वृक्ष, नीबका वृक्ष, ( पु० ) ॥ ९२ ॥	देवमणि-महादेव, घोडेके कठकी भौरी, कौस्तुभ-मणि, ( पु० ) ॥ ९५ ॥
चूडामणि-शिरपरधारनेका रत्न, गु चा फल, ( पुषुची ) ( पु० )	नारायण-विष्णु, ( पु० )
जुहुराण-अग्नि, अध्वर्यु ( यज्ञकर्ममें बराहुवा एक ब्राह्मण ) ( पु० )	नारायणी-सतावर औपनि, पावती, ( स्त्री० )
तण्डुरीण-कीटमात्र, ॥ ९३ ॥ चावलाका जल, दक्षिण देशका बोल ( द्रव्य ) ( पु० )	निगरण-गल ( कठ ) ( पु० ) भो जन, ( न० ) ॥ ९६ ॥
तैलपर्णी-चदन, हींग, देवदारकी धूप, ( स्त्री० ) ॥ ९४ ॥	निरूपण-विचार, देखना, दिखाना, ( न० )
	निस्तरण-उद्धार, उपाय, निकल ना, ( न० ) ॥ ९७ ॥

निस्सरणं द्वारमुक्तिनिर्याणोपायमृत्युषु ।

परीरणः स्यात्कमठे दण्डे च पट्टशाटके ॥ ९८ ॥

पर्वरीणस्तु पर्णस्य शिरायां धूतकम्बले ।

पर्णवृन्तरसेऽपि स्यात् सितसौरभपर्वणोः ॥ ९९ ॥

परवाणिस्तु कथितो धर्माऽध्यक्षेऽपि वत्सरे ।

त्रिषु स्यात्तत्परेऽभीष्टेऽप्याश्रये तु परायणम् ॥ १०० ॥

पारायणं पारगतौ सम्यगासङ्गकात्स्वयोः ।

पीलुपर्णी तु मूर्वाया विम्बायामोपधीभिदि ॥ १०१ ॥

पुष्करिणी सरोजिन्यां हस्तिन्यां च जलशये ।

स्यात्प्रतिपणः संस्कारेऽप्युपग्रहनिपङ्गयोः ॥ १०२ ॥

प्रवारणं निपेधे स्यात् काम्यदाने प्रवारणम् ।

वारवाणस्तु कवचे सर्वसन्नहनेऽपि च ॥ १०३ ॥

निस्सरण—श्रवाजा, मुक्ति, निव-  
लना, उपाय, मृत्यु, ( न० )

परीरण—कछुवा, छडी, पाटकी साडी  
या धोती ( पुं० ) ॥ ९८ ॥

पर्वरीण—पत्तेवी नसें, जूवाका कंबल,  
पत्तोंके नाकुवोंका रस, सफेद धोल  
औषधि, पर्व ( पोरी ) ( पु० )  
॥ ९९ ॥

परवाणि—धर्मका अप्यक्ष ( स्वामी ),  
संवत्सर ( पुं० )

परायण—रत्नर, पांडित, आश्रय,  
( त्रि० ) ॥ १०० ॥

पारायण—पारगति ( पारधमन ),  
अच्छीतरह सग, संपूर्णता ( न० )

पीलुपर्णी—मूर या मोरबेल, चुरनहार,  
मरोरफली, औषधीभेद ( स्त्री० )  
॥ १०१ ॥

पुष्करिणी—कमलिनी ( कमोदनी ),  
हस्तिनी, सरोवर, ( स्त्री० )

प्रतिपण—संस्कार, उपग्रह, बाणोंका  
तरकस ( पुं० ) ॥ १०२ ॥

प्रवारण—वर्जना, यथेच्छदान, ( न० )

वारवाण—कवच, अंगरखा, ( पुं० )  
॥ १०३ ॥

मीनाम्नीणो मतः पुंसि दर्दराग्रेऽपि खञ्जने ।  
 रक्तरेणुस्तु सिन्दूरे पलाशकलिकोद्भवे ॥ १०४ ॥  
 रागचूर्णः सरे रक्तवालुके दन्तधावने ।  
 रेरिहाणः पशुपतौ रेरिहाणो विहायसि ॥ १०५ ॥  
 लम्बकर्णो मतश्चागे स्यादङ्गोरमहीरुहे ।  
 अस्त्री विदारणं युद्धे भेदने च त्रिडम्बने ॥ १०६ ॥  
 भवेद्वैतरणी प्रेतनद्यां राक्षसमातरि ।  
 शरवाणिः शरमुखे पापिष्ठे शरजीविनि ॥ १०७ ॥  
 स्त्रिया शिखरिणी वृत्तभेदे तक्रप्रभेदयोः ।  
 स्त्रीरत्ने मल्लिकाया च रोमावल्यामपि स्मृता ॥ १०८ ॥  
 समीरणः स्यात्पवने प्रस्यपुष्पकपान्थयोः ।  
 संसरणं स्यात्संसारे पुरनिर्गमगोपुरे ॥ १०९ ॥

मीनाम्नीण-दर्दराग्रे-वृक्ष, खञ्जन-  
 पक्षी, ( पु० )  
 रक्तरेणु-सिन्दूर, ठाकके फूलकी कली,  
 ( पुं० ) ॥ १०४ ॥  
 रागचूर्ण-रामदेव, लालवालु, दां-  
 तोंका मजन ( पुं० )  
 रेरिहाण-महादेव, आकाश ( पु० )  
 ॥ १०५ ॥  
 लम्बकर्ण-बकरा, पिस्ताका वृक्ष, ( पुं० )  
 विदारण-युद्ध, फाटना, निरादरक-  
 र्ना ( न० ) ॥ १०६ ॥

वैतरणी-प्रेतनदी, राक्षसमाता,  
 ( स्त्री० )  
 शरवाणि-शर वाणका मुख, पापी,  
 वाणवनानेवाला, ( पुं० ) ॥ १०७ ॥  
 शिखरिणी-छद्मभेद, तक्रभेद, स्त्री-  
 रत्न, मल्लिका ( कुडावृक्ष ), रोमा-  
 वली, ( स्त्री० ) ॥ १०८ ॥  
 समीरण-वायु, मरुवा, पाथ ( बटेऊ )  
 ( पुं० )  
 संसरणं-संसारपुरसे निकलना, पुर  
 दरवाजा, ॥ १०९ ॥

घण्टापथे रणारम्भेऽप्यसंवाधचमूगतौ ।

हस्तिकर्णोऽयमेरण्डे पलाशगणभेदयोः ॥ ११० ॥

णपंचमम् ।

अचग्रहणमाख्यातं प्रतिरोधेऽप्यनादरे ।

अथाऽवतारणं भूताद्यावेशेऽप्यम्बरेऽर्चने ॥ १११ ॥

आख्येयभागेऽध्याहारग्रन्थे स्यादवतारणा ।

निन्दोपालम्भनियमाऽलापेषु परिभाषणम् ॥ ११२ ॥

प्रविदारणमित्येतत्सम्मतं दारणे रणे ।

मण्डूकपर्णः स्योनाकेऽप्यलके च कपीतने ॥ ११३ ॥

मण्डूकपर्णी मञ्जिष्ठात्राह्नीगोजिह्विकास्त्रपि ।

स्यान्मत्तवारणः पुंसि मददुर्दान्तवारणे ॥ ११४ ॥

क्रीवं प्रासादवीथीना वरण्डे चाप्यपाश्रये ।

विभीतकृतौ पुंसि रोमाञ्चे रोमहर्षणम् ॥ ११५ ॥

राजभार्ग, रणका आरम्भ, नहीं-  
कनेवाली सेनामी गति, (न०)

हस्तिकर्ण—अरड, ढाक, गणभेद,  
( पुं० ) ॥ ११० ॥

णपंचम ।

अचग्रहण—रोकना, अनादर, (न०)  
अवतारण—भूतआदिका प्रवेश, वल,

पूजन, ( न० ) ॥ १११ ॥

अवतारणा—कहनेयोग्य भाग, अध्या-  
हाररियाहुवा ग्रंथ, ( स्त्री० )

परिभाषण—निर्देशहित उलाहना,  
नियम, संभाषण, ( न० ) ॥ ११२ ॥

प्रविदारण—विदीर्णकरता, रण, (न०)

मण्डूकपर्ण—सोनापाठा, सफेदआक,  
पारिसपीपल, ( पु० ) ॥ ११३ ॥

मण्डूकपर्णी—मँजीठ, ब्राह्मी, गोभी  
( स्त्री० )

मत्तवारण—मदसे उन्नत हस्ती,  
( पुं० ) ॥ ११४ ॥

मत्तवारण—महलकी गलियोंमें पुं-  
आदिफुलवादकी वाइ, आश्रयरहित,  
( न० )

रोमहर्षण—बहेडाका पृश्न, रोमपुल-  
कावली, ( न० ) ॥ ११५ ॥

चातरायण उन्मत्ते मतः कूटे च मार्गणे ।  
शरसंक्रमणे किञ्चित्करोपि करपत्रके ॥ ११६ ॥  
णपष्टम् ।

वय.संधौ च गर्भे च भवेद्दोहदलक्षणम् ।  
पयोधरे च लावण्ये मतं यौवनलक्षणम् ॥ ११७ ॥  
इति विश्वलोचने णान्तवर्गः ॥

### अथ तान्तवर्गः ।

तकम् ।

पालने पालके तः स्वात्तुश्चौरकोटपुच्छयोः ।  
तद्वितीयम् ।

अन्तं विशुद्धे व्याप्ते स्यादन्तो नाशे मनोहरे ॥ १ ॥

स्वरूपेऽन्तं मतं क्लीवं न स्त्री प्रान्तेऽन्तिके त्रिषु ।

अर्त्तिः पीडाधनुष्कोट्योरस्तः प्रत्यङ्महीधरे ॥ २ ॥

चातरायण-उन्मत्त, मायावी आदि,  
वाण, वाणोंका छाना, निष्प्रयोजन-  
मनुष्य, करोत, ( पु० ) ॥ ११६ ॥

णपष्टम् ।

दोहदलक्षण-अवस्थानी सधि, गर्भं,  
( न० )

यौवनलक्षण-कुच ( दूधी ), सुदर-  
ता, ( न० ) ॥ ११७ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनी भाषाटीकामें  
णान्तवर्ग समाप्तहुवा ॥

अथ तान्तवर्गः ।

तक ।

त( कार )-पालनकरता, पालनकरने-  
वाला, ( पुं )

तु-चोर, छाती, पूँछ, ( पुं० )

तद्वितीय ।

अन्त-विशुद्ध, व्याप्त, ( न० )

अन्त-नाश, सुंदर, ( पु० ) ॥ १ ॥

अन्त-स्वरूप, ( न० ) प्रान्त, ( पुं०-  
न० ) समीप, ( त्रि० )

अर्त्ति-पीडा, धनुषरी ज्या, ( स्त्री० )

अस्त-प्रत्येकका पूजनकरनेवाला, परे-  
त, ( पुं० ) ॥ २ ॥

त्रिषु क्षिप्ते गतेऽप्यस्तमाप्तः सत्यगृहीतयोः ।

आप्तिः संवरणे प्राप्तौ विज्ञातगतयोर्गतम् ॥ ३ ॥

ईतिः स्यादतिवृष्ट्यादिपट्टे डिम्बप्रवासयोः ।

उक्तमेकाक्षरच्छन्दस्युक्तस्तु त्रिषु भाषिते ॥ ४ ॥

स्फूर्तिरक्षणयोरूतिर्ऋतमुच्छशिले जले ।

गतं त्रिलिङ्गं सत्ये गतौ दीप्तेऽभिपूजिते ॥ ५ ॥

ऋतिर्गतौ जुगुप्साया स्पर्द्यायामप्यमङ्गले ।

ऋतुः स्यादार्चवे वीरे वसन्तादिषु मासि च ॥ ६ ॥

एतस्तु कर्बुरे वाच्यलिङ्गं स्यादागतेऽपि च ।

शोभाऽभिलाषयोः कान्तिः कान्तो रम्ये प्रिये त्रिषु ॥ ७ ॥

कान्तोऽश्मनि पुमान्कान्ता प्रियङ्गौ नायिकान्तरे ।

कीर्त्तिर्यशसि विस्तारे प्रसादेऽपि च कर्दमे ॥ ८ ॥

अस्त—कैवाहुवा, गयाहुवा, ( त्रि० )

आप्त—सत्य, ग्रहणक्रियाहुवा, ( पुं० )

आप्ति—डक्ना, प्राप्ति, ( स्त्री० )

गत—जानाहुवा, गयाहुवा, ( न० )

॥ ३ ॥

ईति—अतिवृष्टि आदि छट्, लृट्ना

आदिसे पीडा, मुसाफिरी, ( स्त्री० )

उक्त—एकअक्षरका छद, ( न० )

उक्त—कहाहुवा ( त्रि० ) ॥ ४ ॥

ऊति—स्फूर्ति, रक्षा, ( स्त्री० )

ऋत—उच्छशिल ( स्वामीकाछोडाहुवा

अप्रका लेना, ) जल, ( न० ) सत्य,

गयाहुवा, दीप्त, अभिपूजित,

(( त्रि० ) ॥ ५ ॥

ऋति—निदा, वैर, अमंगल, ( स्त्री० )

ऋतु—स्त्रीका रज, वीर, वसन्तआदि-

ऋतु, कान्ति, ( पुं० ) ॥ ६ ॥

एत—चित्रित, आयाहुवा ( त्रि० )

कान्ति—शोभा, अभिलाषा, ( स्त्री० )

कान्त—सुन्दर, प्रिय, ( त्रि० ) ॥ ७ ॥

कान्त—पत्थरभेद, कंगुनी धान्य,

( पुं० ) नायिका, ( स्त्री० )

कीर्त्ति—यश ( जश ), विस्तार, प्रसाद,

कीव ( स्त्री० ) ॥ ८ ॥

कुन्तो ग्वेधुके प्रासे दण्डभावेऽल्पजन्तुषु ।  
 कुन्ती स्यात्पाण्डुकान्तायां शलक्यां गुग्गुलुद्वये ॥ ९ ॥  
 कृतिर्वधेऽपि करणे क्लीबं सत्ययुगे कृतम् ।  
 त्रिषु हिंसितपर्याप्तविहिते निष्फलेऽव्ययम् ॥ १० ॥  
 कृत्तं तु कथितं छिन्ने वेष्टितेऽप्यभिधेयवत् ।  
 कृत्तिस्त्वक्चर्मभूजेषु कृत्तिकायां च कीर्तिता ॥ ११ ॥  
 केतुर्ग्रहान्तरोत्पातद्युतिलक्ष्मध्वजादिषु ।  
 क्रतुर्यज्ञे मुनेर्भेदे गतं स्याज्जातयादसोः ॥ १२ ॥  
 गतिर्दशाया गमने ज्ञाने मर्माऽभ्युपाययोः ।  
 नाडीत्रणे सरण्यां च गतिर्जन्मान्तरेऽपि च ॥ १३ ॥  
 गर्तस्त्रिगर्तदेशे स्याद् भूक्षेत्रेऽपि कुकुन्दरे ।  
 गानुर्गन्धर्वरोलम्बरोपणे कोकिलापतौ ॥ १४ ॥

कुन्त-गेरु, फरसा, दण्ड, भाव, अल्प  
 जन्तु, ( पुं० ) ।  
 कुन्ती-पाण्डुराजाकी स्त्री, शलके रक्ष,  
 गुग्गुलु रक्ष, ( स्त्री० ) ॥ ९ ॥  
 कृति-मारना, करण, ( स्त्री० )  
 कृत-सत्ययुग ( न० )  
 कृत्त-हिंसित, परिपूर्ण, विधानक्रिया-  
 हुवा, ( त्रि० )  
 कृत्तं-निष्फल, ( अव्य० ) ॥ १० ॥  
 कृत्त-छिन, ( कटाहुवा ), लोपटाहु-  
 वा, ( त्रि० )  
 कृत्ति-त्वचा, रक्षका वक्त्र, भोजपत्र,  
 कृत्तिका-नक्षत्र, ( स्त्री ) ॥ ११ ॥

केतु-केन्दुद्रह, उत्पात, कान्ति, विह,  
 ध्वजवर्द्ध, ( पुं० )  
 क्रतु-यज्ञ, एकमुनि, ( पुं० )  
 गत-उत्पन्नहुवा, जलजन्तु, ( न० )  
 ॥ १२ ॥  
 गति-दशा, गमन, ज्ञान, मर्म, उपाय,  
 नाडीछिद्र, मार्ग, जन्मान्तर,  
 ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥  
 गर्त-त्रिगर्तदेश, पृथ्वीका छिद्र  
 ( गड्ढा ), नितम्ब ( पूतङ्ग ) का  
 गग, ( पु० )  
 गानु-गंधर्व, मरु, कोपि, कोकिल,  
 ( पुं० ) ॥ १४ ॥



गीतिश्छन्दोन्तरे ज्ञाने गीतं गाने च शब्दिते ।  
 गुप्तस्तु रक्षिते गूढे वृषले चन्द्रपूर्वकः ॥ १५ ॥  
 गुप्तिः कारागृहे गर्ते गोपाये रक्षणे युगे ।  
 अस्तं ग्रासीकृतेऽपि स्याच्छुप्तवर्णपदोदिते ॥ १६ ॥  
 घातः प्रहारे काण्डे च घृतं दीप्ताज्यवारिषु ।  
 चित्तिः समूहे चित्वायामुपादुपचये चित्तिः ॥ १७ ॥  
 चितः कृटीकृतेऽपि स्याच्चिता सहतिचित्तयोः ।  
 चिता छत्रे चुल्लिकाया जातं जन्मौघजन्तुषु ॥ १८ ॥  
 जातिः सामान्यमालत्योश्छन्दोभिद्रोत्रजन्मसु ।  
 तातोऽनुकम्प्ये जनके तित्तो रससुगन्धयोः ॥ १९ ॥  
 तित्ता तु कटुरोहिण्या तित्तं पर्पटके मतम् ।  
 त्रेता युगऽग्नित्रितये दत्तं विश्राणितेऽविते ॥ २० ॥

गीति—छन्दका भेद, ज्ञान, ( स्त्री० )  
 गीत—गाना, शब्दित ( शब्दयुक्त ) ( न० )  
 गुप्त—रक्षाकियाहुवा, गूढ ( पु० )  
 चन्द्रगुप्त—शुद्ध, ( पु० ) ॥ १५ ॥  
 गुप्ति—बदीखाना, गश्ता, गुप्तकरना,  
 रक्षाकरना, युग, ( स्त्री० )  
 अस्त—ग्रास कियाहुवा, छुप्तहे वर्ण  
 पद जिसमें ऐसा उच्चारण, ( न० )  
 ॥ १६ ॥  
 घात—प्रहार ( मारना ), दण्ड, ( पु० )  
 घृत—दीप्त, घृत ( धी ), जल, ( न० )  
 चित्ति—समूह, चिता,  
 उपचित्ति—वृद्धि, ( स्त्री० ) ॥ १७ ॥  
 चित—देरकियाहुवा, ( पु० )

चिता—समूह, चिता ( मुर्दाजलानेके  
 लिये चिनाहुवा काष्ठदेर ), ( स्त्री० )  
 चिता—आच्छादित, सिगडी, ( त्रि० )  
 जात—जन्म, समूह, जन्तु, ( न० )  
 ॥ १८ ॥  
 जाति—सामान्य, चमेली, छदोभेद,  
 गोत्र, जन्म, ( स्त्री० )  
 तात—जिसपर दयाकरीजातीहै वह,  
 पिता, ( पुं० )  
 तित्त—कसैलारस, सुगन्ध, ( पु० ) १९  
 तित्ता—कुटकी, ( स्त्री० )  
 तित्त—पित्तपापडा, ( न० )  
 त्रेता—त्रेता-युग, तीन अग्नि, ( स्त्री० )  
 दत्त—दानकियाहुवा, रक्षाकियाहुवा  
 ( न० ) ॥ २० ॥

दन्तः कुञ्जे रदे सानौ दन्ती स्यादौषधीभिदि ।  
 दान्तस्त्रिषु तपःक्लेशसहेऽपि दमितेऽपि च ॥ २१ ॥  
 दितिर्दनौ खण्डने च दीप्तं ज्वलितदग्धयोः ।  
 त्रिषु निर्वासितेऽपि स्यादृतिश्चर्मपुटे कपे ॥ २२ ॥  
 दृप्तो निवारिते शक्ते द्युतिर्दीधितिशोभयोः ।  
 द्रुतं शीघ्रे च विद्राणे विलीने शीघ्रगे त्रिषु ॥ २३ ॥  
 धाता तु ब्रह्मणि रघौ त्रिषु स्यात्परिपालके ।  
 धातुः क्रियार्थे शुक्त्रेऽपि विषयेष्विन्द्रियेषु च ॥ २४ ॥  
 छेप्मादिरसरक्तादिभूतादिवसुधादिषु ।  
 मनःशिलादिके लोहे विशेषाद्गैरिकेऽस्थिनि ॥ २५ ॥  
 धृतं विधृते त्यक्ते च धूतः कम्पितभर्त्सिते ।  
 धूर्त्तं तु खण्डलवणे धत्तूरे नाविटे त्रिषु ॥ २६ ॥

दन्त-कुञ्ज ( लताआदिकीकुटी ), दाँत, पर्वतका निकलाहुवा भाग, ( पुं० )  
 दन्ती-जमालगोटाकी जड़, ( स्त्री० )  
 दान्त-तप क्लेशको सहनेवाला, दमन-कियाहुवा, ( पुं० ) ॥ २१ ॥  
 दिति-दैत्योकी माता, संडनकरना, ( स्त्री० )  
 दीप्त-देदीप्यमान, दग्ध, निकास-हुवा, ( त्रि० )  
 दृति-चर्मकी डोली, कसौटी, ( स्त्री० ) ॥ २२ ॥  
 दृप्त-निवारणकियाहुवा, समर्थ, ( पुं० )  
 द्रुत-किरण-सूर्यआदिकी, शोभा, ( स्त्री० )  
 धाता-शोभ ( जल्दी ), पिघलना, ( न० ) विलीन ( मिलजाना ), शीघ्र गमन करनेवाला, ( त्रि० ) ॥ २३ ॥  
 धाता-ब्रह्मा, सूर्य, ( पुं० ) पालना करनेवाला, ( त्रि० )  
 धातु-क्रियार्थ, शुक्, विषय, इंद्रिय २४ कफ आदि, रसरक्तआदि, पंचमहाभूतआदि, पृथ्वीआदि, मनसिलआदि, लोह, गेरू ( विशेषकरके ), अस्थि ( हड्डी ) ( पुं० ) ॥ २५ ॥  
 धृत-कँपायाहुवा, त्यागाहुवा, ( त्रि० )  
 धूत-कँपायाहुवा, झिडकाहुवा, ( त्रि० )  
 धूर्त्त-विरियासंचर-नौन ( न० ), धत्तूरा, ( पुं० ) कामी, ( त्रि० ) ॥ २६ ॥

धृतिधारणसंतुष्टिवैर्ये योगान्तरेऽधरे ।

नतस्तगरवृक्षे स्यात् कुटिलानतयोस्त्रिषु ॥ २७ ॥

नीतिर्नये प्रापणे च नृत्तः स्यात्तर्त्तने क्रिमौ ।

पक्तिः स्त्री गौरवे पाके पङ्क्तिः श्रेणौ दशत्वपि ॥ २८ ॥

स्याद्दशाक्षरवृत्तेषु स्त्रिया मूल्ये गतौ पतिः ।

पत्तिः पदातौ वीरे ना गतौ सेनान्तरे स्त्रियाम् ॥ २९ ॥

पातस्तु पतने त्राते पीतमाचान्तगौरयोः ।

त्रिषु पीता तु पर्णिन्या पीतं पाने नपुंसकम् ॥ ३० ॥

पीतिः पाने सपूर्वा तु सहपाने हये पुमान् ।

पुस्तं तु पुस्तके क्लीब विज्ञाने लेप्यकर्मणि ॥ ३१ ॥

पूतं पवित्रे शब्दे च त्रिषु स्याद्बहुलीकृते ।

पूरितच्छन्नयो. पूर्त्त पूर्त्त खातादिकर्मणि ॥ ३२ ॥

धृति-धारणा, सतोय, धैर्यं योगभेद, यज्ञ. ( स्त्री० )

नत-तगर-वृक्ष, ( पु० ) कुटिल, नम-पुण्य, ( त्रि० ) ॥ २७ ॥

नीति-न्याय, प्राप्तकरना, ( स्त्री० ) नृत्त-नृत्यभेद, तिमि, ( पु० )

पक्ति-गौरव, पाक, ( स्त्री० )

पङ्क्ति-श्रेणि ( पक्ति ), दश-सह्या, ॥२८॥ दशाक्षरवाला छंद, ( स्त्री० )

पत्ति-स्त्रोक्ता मूल्य, गति, ( स्त्री० ) पत्ति-पयादा त्रिपाही, शूरवीर, ( पुं० )

गमन, सेनाभेद, ( स्त्री० ) ॥ २९ ॥ पात-पटना, ( पु० ) रघारिशाहुवा, ( त्रि० )

पीत-आचमन किया हुआ, गौरव ( पीता ) ( त्रि० )

पीता-मलवन-औषधि, ( स्त्री० )

पीत-पीना, ( न० ) ॥ ३० ॥

पीति-पीना,

सपीति-संगमें पीना ( स्त्री० ) अथ ( पुं० )

पुस्त-पुस्तक, दित्य ( कारीगरी ) लेप्यकर्म, ( न० ) ॥ ३१ ॥

पूत-पवित्र, शब्दित, ( न० ) व दायीहुवा, ( त्रि० )

पूर्त्त-पूरित, आच्छादित, ( त्रि० ) खोदनाआदिकर्म, ( न० ) ॥ ३२ ॥

पोतो बाले बहिन्ने च प्रातिः पूर्तिप्रदेशयोः ।  
 प्राप्तिर्महोदये लाभे प्राप्तं लब्धसमञ्जसे ॥ ३३ ॥  
 प्रीतिः सरसुतायोगभेदयोः प्रेममोदयोः ।  
 हर्षिते नर्मणि प्रीतं प्रेतो भूतान्तरे मृते ॥ ३४ ॥  
 प्रोतं तु ग्रथिते वस्त्रे पुतस्तु स्यात्प्रिमातृके ।  
 पुतमश्वस्य गमने पुतं सप्तवने त्रिपु ॥ ३५ ॥  
 भक्तिर्विभागे सेवायां भर्तास्वामिनि धारके ।  
 भित्तिः कुड्ये च काशे च प्रदेशे भेदभागयोः ॥ ३६ ॥  
 भीतं भयेऽपि सभये भीतिः साध्वसकंपयोः ।  
 अथ भृतः पुमान्देवयोनिभेदेऽपि देवले ॥ ३७ ॥  
 त्रिपु प्राप्ते विवृत्तेच भूतं स्यान्न्याय्यसत्ययोः ।  
 उपमाने पृथिव्यादौ पिशाचादौ समे त्रिपु ॥ ३८ ॥

पोत-बालक, नौका या जिहाज, (पुं०)	भक्ति-विभाग, सेवा, ( स्त्री० )
प्राति-पूर्ति, प्रदेश, ( स्त्री० )	भर्ता-स्वामी, धारणकरनेवाला, (पुं०)
प्राप्ति-महान् उदय ( भाग्योदय ), लाभ, ( स्त्री० )	भित्ति-दीवार, काश, प्रदेश, भेद, भाग, ( स्त्री० ) ॥ ३६ ॥
प्राप्त-लब्धहुवा, उचित ( न० ) ॥ ३३ ॥	भीत-भय, ( न० ) डराहुवा, ( त्रि० )
प्रीति-कामदेवकी पुत्री, योगभेद, प्रेम, आनन्द, ( स्त्री० )	भीति-भय, कंष, ( स्त्री० )
प्रीत-आनन्दित, ट्टा, ( न० )	भृत-देवयोनिभेद, देवल ( देवसेवा- से आजीवन करनेवाला ) ( पुं० ) ॥ ३७ ॥
प्रेत-भूतान्तर, मृतक, ( पुं० ) ॥ ३४ ॥	भूत-प्राप्तहुवा, चदीतहुवा, न्याय- युक्त, सत्य, उपमान, पृथिवीआदि, पिशाचआदि, सम ( तुल्य ) ( त्रि० ) ॥ ३८ ॥
प्रोत-गँथाहुवा, वस्त्र, ( न० )	
पुत-तीनमात्रावालावर्णोच्चारण, ( पुं० ) अश्वकी गति, सप्तवन ( त्रि० ) ॥ ३५ ॥	

भूतिर्मातङ्गशृङ्गारे भस्मसम्पत्तिजन्मसु ।  
 भृतिस्तु भरणे ख्याता तथा वेतनमूल्ययोः ॥ ३९ ॥  
 भ्रान्तिः स्याद्भ्रमणेऽपि स्यान्मतौ वाऽप्यनवस्थितौ ।  
 मतोऽर्चितेऽप्यनुमते मतिर्बुद्धौ मृतीचूडयोः ॥ ४० ॥  
 मन्तुः स्यादपराधेऽपि मानवे परमेष्ठिनि ।  
 माता ब्राह्म्यादिगोकादिप्रसूगौरीष्वपि क्षितौ ॥ ४१ ॥  
 त्रिषु स्यान्मापके माता गीताध्यक्षे प्रपूर्वकः ।  
 मितिर्मानेऽप्यवच्छेदे मुक्तिर्भोक्षेऽपि मोचने ॥ ४२ ॥  
 मुक्तो भोक्षगतेऽप्युक्तस्त्रिषु मुक्ता तु मौक्तिके ।  
 मूर्त्तं मूर्त्त्यन्विते मूर्च्छाऽन्विते काठिन्यवत्यपि ॥ ४३ ॥  
 मूर्त्तिः कायेऽपि काठिन्ये मृत्युयाचितयोर्मृतम् ।  
 मृतं मृत्युपरिप्राप्ते विज्ञेयमभिधेयवत् ॥ ४४ ॥

भूति—हत्तीका शृङ्गार, भस्म, सम्पत्ति, जन्म, ( स्त्री० )

भृति—शोषण, नौकरी, मूल्य, ( स्त्री० )  
॥ ३९ ॥

भ्रान्ति—युद्धिर्विषं भ्रम, एकजगद् नही-  
ठहरना ( स्त्री० )

मत—पूजित, समत, ( पुं० )

मति—बुद्धि, स्मृति, इच्छा, ( स्त्री० ) ४०

मन्तु—अपराध, मनुष्य, ब्रह्मा, ( पुं० )

माता—ब्राह्मी माहेश्वरीआदि, गौआ-  
दि, जननी ( माता ), गौरी, पृथ्वी,  
( स्त्री० ) ॥ ४१ ॥

प्रमाता—प्रमाणकरनेवाला, गीतआदि-  
का अध्यक्ष, ( त्रि० )

मिति—मान ( मापना ), अवच्छेद  
( विधाम ), ( स्त्री० )

मुक्ति—भोक्ष, छुटना, ( स्त्री० ) ॥ ४२ ॥

मुक्त—भोक्षको प्राप्तहुवा, छुटाहुवा,  
( त्रि० )

मुक्ता—मोती ( स्त्री० )

मूर्त्तं—मूर्त्तिमान, मूर्छित, काठिन्यवा-  
ला ( त्रि० ) ॥ ४३ ॥

मूर्त्ति—शरीर, काठिन्य, ( स्त्री० )

मृत—मृत्यु, याचित, ( न० ) मृत्युको  
प्राप्त, ( त्रि० ) ॥ ४४ ॥

यतिर्यतिनि पुंसि स्त्री पाठभेदनिकारयोः ।

यन्ता सादिनि सूते च निपूर्वोऽसौ नियामके ॥ ४५ ॥

युक्तं स्यादुचिते युक्तं संयुतेऽप्यभिधेयवत् ।

युक्तिर्नियोजने न्याये पृथक्संयुक्तयोर्मतम् ॥ ४६ ॥

युतं हस्तचतुष्केऽपि संख्याभेदे नपूर्वकम् ।

रक्तोनुरक्ते नील्यादिरञ्जिते लोहितेऽन्यवत् ॥ ४७ ॥

रिक्तं शून्ये वनेऽपि स्यादशरीतिर्गिरां पथि ।

रीतिः सन्दे प्रचारे च लोहकिट्टारकूटयोः ॥ ४८ ॥

लता तु माधवीवल्लीशाखास्पृक्षाप्रियङ्गुषु ।

लता कस्तूरिकाज्योतिष्मतीदूर्वास्तु च स्मृता ॥ ४९ ॥

लिप्तं विलेपिते भुक्ते विपाक्तविशिषादिषु ।

लूता विपीलिकाया स्यादूर्णनाभे गदान्तरे ॥ ५० ॥

यति-सन्धासी अथवा मुनि, ( पुं० )

पाठका विभ्राम, अनादर, ( स्त्री० )

यन्ता-सवार, सारथि,

नियन्ता-प्रेरणेवाला, ( पुं० ) ॥ ४५ ॥

युक्त-उचित, संयुक्त, ( त्रि० )

युक्ति-रगाना, न्याय, अलगकिया

हुवा, ( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥

युत-चारहाथप्रमाणवाला,

अयुत-सख्याभेद ( दशहजार )

( न० )

रक्त-आसक्त, नीलीआदिसे रंगाहुवा,

ललिरंगवाला ( त्रि० ) ॥ ४७ ॥

रिक्त-शून्य, वन, ( न० )

रीति-क्षिरना, प्रचार, लोहेका मल,

पीतल ( स्त्री० ) ॥ ४८ ॥

लता-माधवीलता, बेल, शाखा-वृक्ष-

री, असवार, बंगुनीधान्य, कस्तूरी,

मालवागनी, दूव, ( स्त्री० ) ॥ ४९ ॥

लिप्त-लेपकियाहुवा, भुक्त ( साया-

हुवा, विपसेलितकिया बाणआदि,

( त्रि० )

लूता-चीटी, मकड़ी, रोगविशेष,

( स्त्री० ) ॥ ५० ॥

लोभं तु चोरिते वाप्ये वक्ता वाग्मिनि पण्डिते ।  
 वसा पितरि तन्तूनां वापके बीजवापके ॥ ५१ ॥  
 वृत्तिर्गात्रानुलेपन्यां वृत्तिर्दीपदशासु च ।  
 दीपे भेषजनिर्माणे लोचनाञ्जनलेखयोः ॥ ५२ ॥  
 नीरुग्मृत्तिमतोर्वार्तो वार्त्तमारोग्यफलगुनोः  
 वार्त्ता कृप्यादिवृत्तान्तवार्त्ताकीवृत्तिषु स्थिता ॥ ५३ ॥  
 वित्तं तु विभवे ज्ञातस्यातलब्धविचारिते ।  
 वित्तिर्ज्ञानेपि लाभेऽपि विचारे सम्भवेऽपि च ॥ ५४ ॥  
 वीतं त्वसारहृत्यश्चे त्यक्तेष्वङ्कुशकर्म्मणि ।  
 वीतिस्त्यागे गतौ दीप्तौ प्रजने धावनेऽशने ॥ ५५ ॥  
 वृत्तिः प्रवृत्तौ वृत्तौ च कौशिकयादिप्रवर्त्तने ।  
 वृत्तस्तु वर्तुलेऽतीते मृते स्याते दृढे वृते ॥ ५६ ॥

लोभ—चोराहुवा, वाप्य ( बाँफ ) ( त्रि० )  
 वक्ता—बहुतबोलनेवाला, पंडित, ( पु० )  
 वसा—पिता, कपडानुननेवाला, बीज-  
 चोनेवाला, ( पुं० ) ॥ ५१ ॥  
 वृत्ति—धरीरपर कुछ लगाकर उतारा-  
 हुवा लेप, दीपककी बत्ती, दीपक,  
 औपधिकी बत्ती, नेत्र, अजनकी  
 रेल, ( स्त्री० ) ॥ ५२ ॥  
 वार्त्त—रोगरहित, वृत्तिवाला, ( त्रि० )  
 आरोग्य, तुच्छ, ( न० )  
 वार्त्ता—कृपिआदि, वृत्तान्त, बडीकटे-  
 हली, वृत्ति ( वर्तना ) ( स्त्री० )  
 ॥ ५३ ॥

वित्त—धन, जानाहुवा, विद्यात,  
 प्राप्तहुवा, विचाराहुवा ( त्रि० )  
 वित्ति—ज्ञान, लाभ, विचार, सम्भव,  
 ( स्त्री० ) ॥ ५४ ॥  
 वीत—साररहित हस्ती व अश्व, त्याग-  
 हुवा, अकुशकर्म,  
 वीति—त्याग, गति, दीप्ति, गर्भग्रहण,  
 धोना, भोजन, ( स्त्री० ) ॥ ५५ ॥  
 वृत्ति—प्रवृत्ति, आजीविका, नाटककी  
 एकवृत्ति, ( स्त्री० )  
 वृत्त—गोलआकार, बदीतहुवा, मृत,  
 विद्यात, दृढ, वृत्त ( वरणकिया )  
 ( त्रि० ) ॥ ५६ ॥

त्रियु वृत्तं तु चरिते वृत्तं छन्दसि वर्तते ।

वृत्तिर्विवरणे वाटे वेष्टिते वरणे वृत्तम् ॥ ५७ ॥

वृन्तं प्रसवबन्धेऽपि कुचाग्रे घटधारयोः ।

शस्तं क्षेमे प्रशस्ते च शातः शकुनिशातयोः ॥ ५८ ॥

शातं शर्मणि शान्तस्तु रसे दान्तेऽपि मुक्तके ।

शान्तिः शमेऽपि कल्याणे शास्ता शासकबुद्धयोः ॥ ५९ ॥

शितः कृष्णे सिते मूर्जे शितं शकुनिशान्तयोः ।

वानीरबहुधारे च शीतः शीतं तु चन्दने ॥ ६० ॥

हिमसम्भूतजाड्येऽपि शीतलालसयोस्त्रियु ।

शुक्तिः शङ्खनखे शङ्खे मुक्तास्फोटेऽपि कम्बुनि ॥ ६१ ॥

वृत्त-चरित, छंद, ( न० )

वृत्ति-विवरण ( व्याख्या ), वाट ( वाङ् )  
( स्त्री० )

वृत्त-रूपेटाहुवा, आच्छादित किया-  
हुवा, ( न० ) ॥ ५७ ॥

वृन्त-पुष्पआदिका नाकू, कुचाका  
अग्रभाग, घटकी धारा ( न० )

शस्त-कुशल, ( न० ) श्रेष्ठ, ( त्रि० )

शात-पक्षी, शान्त-मनुष्य, ( पुं० )  
॥ ५८ ॥

शात-कल्याण, ( न० )

शान्त-शान्त-रस, इंद्रियोंका जीतने-  
वाला, मुक्त, ( पुं० )

शान्ति-मनका जीतना, कल्याण,  
( स्त्री० )

शास्ता-शिक्षाकरनेवाला, बुद्ध-देव  
( पुं० ) ॥ ५९ ॥

शित-काला, सफेद, ( त्रि० ) भो-  
जपन ( पुं० )

शित-पक्षी, दुर्बल, ( पुं० )

शीत-बेत, बहुतवार, ( पु० )

शीत-चंदन, ( न० ) ॥ ६० ॥  
बरफ ठंडा ( न० ) आलस्यवाला,  
( त्रि० )

शुक्ति-सँखला, संख, ( पुं० )

कपालकी हड्डी, सीपी, संख,  
( स्त्री० ) ॥ ६१ ॥



दीर्घकोशीहयावर्ते कपालशकले स्त्रियाम् ।

शुक्तोऽम्ले कर्कशे पूते शास्त्रावधृतयोः श्रुतम् ॥ ६२ ॥

श्रुतिः श्रोत्रे च वेदे च वार्ताया श्रौतकर्मणि ।

श्वेतं रूप्यं त्रिपु सिते श्वेतो द्वीपाद्रिभेदयोः ॥ ६३ ॥

श्वेता वराटिकायां स्याच्छङ्खिन्यां काष्ठपाटलौ ।

सत्साधौ विद्यमानेऽपि प्रशस्ते पूजिते त्रिपु ॥ ६४ ॥

सती साध्वीचण्डिकयो सत्तु सत्येऽभिधेयवत् ।

सातिर्दानवसानेऽपि सितं श्वेतसमाप्तयोः ॥ ६५ ॥

त्रिपु ज्ञातेऽपि बद्धेऽपि शर्कराया सिता मता ।

सीता तु जानकीव्योमगङ्गालाङ्गलवर्मसु ॥ ६६ ॥

सुतस्तु पार्थिवे पुत्रे सुप्तिर्विश्वासघातिनि ।

स्वापे स्पर्शाशतायां च सुखस्वापे सुपूर्विका ॥ ६७ ॥

जलजन्तु, घोडेकी भौरी, कपालका  
संड, ( स्त्री० )

शुक्त-बहा, कठोर, पवित्र, ( पु० )

श्रुत-शास्त्र, भवणकियाहुवा, ( न० )

॥ ६२ ॥

श्रुति-दान, वेद, वार्ता, श्रौतकर्म

( वेदविहित कर्म ), ( स्त्री० )

श्वेत-चांदी, ( न० ) सफेद ( त्रि० )

श्वेत-श्वेतद्वीप, पर्यंतभेद, ( पु० )

॥ ६३ ॥

श्वेता-कौडी, चोरपुष्पी ( चोरहूली ),

अगर, पाडर-पुष्पवृक्ष, ( स्त्री० )

सत्-साधु विद्यमान, श्रेष्ठ, पूजित

( त्रि० ) ॥ ६४ ॥

सती-श्रेष्ठ स्त्री, चण्डिका, ( स्त्री० )

सत्-सच्चा पुरुषआदि ( त्रि० )

साति-दान, अन्त, ( स्त्री० ) ॥ ६५ ॥

सित-सफेद, समाप्त, जानाहुवा,

बँधाहुवा, ( त्रि० )

सिता-मिसरी ( स्त्री० )

सीता-जानकी, आकाशगंगा, हल्से

कीहुई पृथ्वीमें लकीर, ( स्त्री० ) ॥ ६६ ॥

सुत-राजा, पुत्र, ( पुं० )

सुप्ति-विश्वासघाती, ( पुं० ) घोना,

स्पर्शका अज्ञान, सुसुप्ति-सुखपूर्वक

सोना ( स्त्री० ) ॥ ६७ ॥

सूतस्तु पारदे तक्षिण सूतः सारथिवन्दिनोः ।  
 प्रसृते प्रेरिते सूतः क्षत्रियाद् ब्राह्मणीसुते ॥ ६८ ॥  
 सृतिः स्त्री गमने मार्गे कुपूर्वा निकृतौ सृतिः ।  
 सेतुर्बालौ च वरणे स्थितमूर्द्ध्वेऽपि संस्थिते ॥ ६९ ॥  
 निश्चिते सप्रतिज्ञेऽपि गत्यभावे तु न द्वयोः ।  
 मर्यादायामवस्थाने स्थाने सीमनि च स्थितिः ॥ ७० ॥  
 स्मृतिस्तु धर्मशास्त्रे स्यात् स्मरणे धीच्छयोरपि ।  
 संततौ सीवने स्यूतिः स्यूतः क्षतप्रसेवयोः ॥ ७१ ॥  
 स्वान्तं नपुंसकं वित्ते स्वान्तं स्यादपि गह्वरे ।  
 द्वयोस्तु हस्तौ नक्षत्रे हस्तः करिकरे करे ॥ ७२ ॥  
 सप्रकोष्ठावतकरे हस्तः केशात्परश्चये ।  
 हितं गते घृते पथ्ये हेतिर्ज्वालार्कतेजसोः ॥ ७३ ॥

सूत-पारा, बढई, सारथि, चन्दीजन,  
 ( पुं० ) उत्पन्न ( जन्मा ) हुवा,  
 प्रेरणहुवा, ( त्रि० ) क्षत्रियसे ब्राह्म-  
 णीका पुत्र, ( पुं० ) ॥ ६८ ॥  
 सृति-गमन, मार्गं कुसृति-कपट,  
 ( स्त्री० )  
 सेतु-पुल, वरण, ( पुं० ) ॥ ६९ ॥  
 स्थित-ऊपर, स्थित, निश्चित, प्रति-  
 ज्ञावाला, ( पुं० ) गतिअभाव  
 अर्थात् स्थिति ( न० )  
 स्थिति-मर्यादा, अवस्थान ( स्थिति ),  
 स्थान, सीमा, ( स्त्री० ) ॥ ७० ॥  
 स्मृति-धर्मशास्त्र, स्मरण, बुद्धि,  
 इच्छा, ( स्त्री० )  
 स्यूति-संतति निरंतरता कपडाका-  
 सीना, ( स्त्री० )  
 स्यूत-घाव, बैली ( पुं० ) ॥ ७१ ॥  
 स्वान्त-चित्त, सपन, ( न० )  
 हस्त-नक्षत्र, हाथीकी सूड, हाथ, ( पुं० )  
 न० ) ॥ ७२ ॥ प्रकोष्ठसमेतवि-  
 स्तारकिया हाथ ( एकहाथप्रमाण ),  
 केशशब्दसेपरे हस्तशब्द केशसमूह,  
 जैसे कुंतलहस्त ( पुं० )  
 हित-गयाहुवा, धारणकियाहुवा, पथ्य  
 ( मुखदाता ) ( न० )  
 हेति-अग्निज्वाला, सूर्यतेज, ॥ ७३ ॥

स्त्रियां शस्त्रेप्यथ क्षत्ता सारथिद्वाःस्वघातृषु ।

भुजिप्यजे नियुक्ते च शूद्राच्च क्षत्रियासुते ॥ ७४ ॥

क्षमायां तु मता क्षान्तिः क्षान्तिः स्यान्नियमेऽपि च ।

क्षितिः पृथिव्यां वासे च स्थानमात्रे क्षये क्षितिः ॥ ७५ ॥

ततृतीयम् ।

अगस्तिर्वङ्गसेनद्रौ स्यादगस्त्येऽप्यथाङ्कतिः ।

अग्निब्रह्माऽग्निहोत्रेषु स्थिरे दामोदरेऽच्युतः ॥ ७६ ॥

अजितोऽनिर्जिते विष्णावदितिर्देवसूमुषोः ।

अनृतं स्याद् मृपाकृप्योरनन्तो विष्णुशेषयोः ॥ ७७ ॥

अनन्तं गगनेऽनन्तं भवेदनवधौ त्रिषु ।

अनन्ता पृथिवीदूर्वापार्वतीलाङ्गलीप्वपि ॥ ७८ ॥

सारिवायां गुड्गच्या च समुद्रान्ताविशल्ययोः ।

अमृतं मोक्षपीयूषसलिले हृद्यवस्तुनि ॥ ७९ ॥

क्षत्र ( द्वि० )

क्षत्ता-सारथि, द्वारपाल, ब्रह्मा, दास-  
पुत्र, दियाहुवा, शूद्रे क्षत्रियाका  
पुन, ( पुं० ) ॥ ७४ ॥

क्षान्ति-क्षमा, नियम, ( स्त्री० )

क्षिति-पृथ्वी, वास ( निवास ), स्था-  
नमात्र, क्षय ( नाश ) ( स्त्री० )  
॥ ७५ ॥

ततृतीय ।

अगस्तिः-बक ( हथिया ) वृक्ष, अग-  
स्त्यसुनि ( पुं० )

अङ्कति-अग्नि, ब्रह्मा, अग्निहोत्र,  
( पुं० )

अच्युत-स्थिर, दामोदर ( भगवान् )  
॥ ७६ ॥

अजित-नहीं जीताहुवा, विष्णु  
( पुं० )

अदिति-देवताओंकी माता, पृथ्वी  
( स्त्री० )

अनृत-असल, कृषि, ( न० )

अनन्त-विष्णु, शेष-भाग, ( पुं० ) ॥ ७७ ॥  
आकाश ( न० ) विस्तीर्ण ( द्वि० )

अनन्ता-पृथिवी, दूर्वा, सिंहलीपीपल  
कलिहारी ॥ ७८ ॥ सारिवन, गिलोय  
जवाँसा, अजमोद, ( स्त्री० )

अमृत-मोक्ष, पीयूष ( अमृत ), जल  
मनोहर वस्तु, ॥ ७९ ॥

अयाचिते यज्ञशेषे घृते दुग्धेऽतिसुन्दरे ।  
 अमृतस्तु मतः पुंसि धन्वंतरिसुपर्वणोः ॥ ८० ॥  
 गुड्ढ्यामलक्रीपथ्यामागधीष्यमृता मता ।  
 अमतिर्भाविकाले स्यादर्हस्तु जिनपूज्ययोः ॥ ८१ ॥  
 अर्दितः पवनव्याधौ याचिताऽहतयोस्त्रिषु ।  
 अर्वती चेटिकावाम्योरश्वेऽर्वन् कुत्सितेऽन्यवत् ॥ ८२ ॥  
 अव्यक्तस्तु हरौः हीरे मूर्खे वाच्यवदस्फुटे ।  
 वाच्यवत्क्षतहीने स्यादाकृतिः कायरूपयोः ॥ ८३ ॥  
 सामान्येऽपि तथाख्यातमाख्यातं कथिते तिष्ठि ।  
 अथ वाच्यवदाख्यातं घ्राणिते हिंसितेऽपि च ॥ ८४ ॥  
 आचितस्तु चिते छत्रे संगृहीते त्रिलिङ्गकः ।  
 आचितः शकटोन्मये पलानामयुतद्वये ॥ ८५ ॥

अयाचित, यज्ञशेष, घृत, दुग्ध,  
 अतिसुन्दर ( न० )

अमृत-धन्वंतरे, देवता, ( पुं० )  
 ॥ ८० ॥

अमृता-गिलोय, आंवला, हरद, पी-  
 पल, ( स्त्री० )

अमति-आनेबाला काल,

अर्हन्-(त) 'जिनदेव, पूजा करनेयो-  
 ग्य ( पुं० ) ॥ ८१ ॥

अर्दित-वातरोग, ( पुं० ) याचनाकि-  
 याहुवा, माराहुवा, ( नि० )

अर्वती-दासी, घोड़ी ( स्त्री० )

अर्वत्-घोड़ा ( पुं० ) कुत्सित ( नि-  
 दित ) ( त्रि० ) ॥ ८२ ॥

अव्यक्त-विष्णु, हीरा ( पुं० ) मूर्ख,  
 अस्फुट, नाशहीन ( त्रि० )

आकृति-धावरहित, ( नि० ) शरीर,  
 रूप, ( स्त्री० ) ॥ ८३ ॥

आख्यात-सामान्य, ( त्रि० ) कहा-  
 हुवा, तिष्ठ ( तिष्ठंतक्रिया ) ( न० )

आख्यात-सूँधा हुवा, माराहुवा,  
 ( त्रि० ) ॥ ८४ ॥

आचित-चिनाहुवा, आच्छादनकि-  
 याहुवा, संप्रहक्रियाहुवा ( त्रि० )

आचित-गाढाभरा भार, ८०००  
 तोला ( पुं० ) ॥ ८५ ॥

आहतः सादरेऽपि न्यान् पूजितेऽप्यभिषेयवन् ।

आध्मातः पवनव्यापी दग्धशब्दितयोगिषु ॥ ८६ ॥

आनर्त्ता नर्त्तनान्ने देशभेदे रणे जले ।

पात्रे तदात्वेऽप्यापात आपत्तिः प्राप्तिदोषयोः ॥ ८७ ॥

आप्तुतः खातके पुंमि खाते स्यादभिषेयवन् ।

आयत्तिः ग्रेहमर्यादावशितावल्यासरे ॥ ८८ ॥

आयत्तिन्नु यमे देय्यं प्रभावोत्तरकालयोः ।

आयस्तन्नेजिते क्षिप्ते युपिते ह्येक्षिते हते ॥ ८९ ॥

आयर्त्ताधिन्तने चाऽऽवर्तने वाप्यम्भसां भ्रमे ।

आस्फोटस्त्वर्त्तर्पणे म्यादास्फोटः फोविदारके ॥ ९० ॥

आस्फोता गिरिकर्ण्या च वनमह्यामपि न्वियान् ।

आसत्तिः सप्तमे लाभे आहतं तु गृपार्थके ॥ ९१ ॥

आहत—आदरद्विधाहुवा, पूजाद्विधा-  
हुवा, ( प्रि० )

आध्मात—मातरोग, दग्ध, शब्दित,  
( प्रि० ) ॥ ८६ ॥

आनर्त्त—मूलकरनेका ध्यान, देशभेद,  
रण, जल, ( पुं० )

आपात—पशना, तस्त्राड, ( पुं० )

आपत्ति—प्राप्ति, दोष, ( स्त्री० )  
॥ ८७ ॥

आप्तुत—वैदमलवाला, ( पुं० ) का-  
नद्विधाहुवा ( प्रि० )

आयत्ति—ग्रेह, मर्यादा, वशित, बल,  
बासर ( दिन ) ( स्त्री० ) ॥ ८८ ॥

आयत्ति—यम, संवाचना, प्रभाव आगे  
आनेवाला काल, ( स्त्री० )

आयस्त—तीरुणद्विधाहुवा, फेंकाहुवा,  
कुपित, ह्येक्षित, हत, ( पुं० )  
॥ ८९ ॥

आयर्त्त—विदमकरना, आवर्तन (आ-  
वृत्ति) करना, जलौका भेंवर ( पुं० )

आस्फोट—आकका पत्ता, कसनार-  
वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ९० ॥

आस्फोता—कोयल-औषधि, वन-  
मदिका, ( स्त्री० )

आसत्ति—सप्तम, लाभ, ( स्त्री० )  
आहत—अचल अर्थवाला ( न० ) ॥ ९१ ॥

स्यात्पुरातनवस्त्रेऽपि नववस्त्रेऽपि वाहतम् ।  
 आहतं चानकेऽपि स्यात्तांडिते प्रसिते त्रिषु ॥ ९२ ॥  
 इङ्कितं चेष्टिते गत्यामुचितं तु समञ्जसे ।  
 अनुमत्यां मित्ताऽभ्यस्तज्ञातेषु त्रिषु च त्रिषु ॥ ९३ ॥  
 उच्छ्रितं तु प्रवृद्धे स्यात् सज्जातेऽप्युन्नतेऽन्यवत् ।  
 उत्तप्तं शुष्केऽपिशिते संतप्ते च परिष्कृते ॥ ९४ ॥  
 वृद्धिमत्युन्मनस्केऽपि प्रोधते मतमुत्थितम् ।  
 उच्छ्रितं तु त्रिपूत्पन्ने प्रोधते वृद्धिमत्यपि ॥ ९५ ॥  
 उदितं सूदिते प्राप्तेऽप्युद्गतप्रोक्तयोस्त्रिषु ।  
 उद्धातो मुद्गरे वायुयोगार्थं कुम्भकादिषु ॥ ९६ ॥  
 उद्रङ्गे स्वल्पनेऽप्यर्थाऽऽघानेऽपि समुपक्रमे ।  
 स्यादुदन्तस्तु वार्तायामुदन्तः सज्जनेऽपि च ॥ ९७ ॥

पुराना वस्त्र, नवीन वस्त्र, ढोल, ता-  
 ढनाकियाहुवा, प्रसाहुवा ( त्रि० )  
 ॥ ९२ ॥

इङ्कित-चेष्टित, गमन, ( न० )  
 उचित-युक्त, अनुमति, ( न० )  
 प्रमित, अभ्यस्त, ज्ञात, ( त्रि० )  
 ॥ ९३ ॥

उच्छ्रित-प्रवृद्ध, संजात, उन्नत ( ऊं-  
 चा ) ( त्रि० )

उत्तप्त-सूक्ष्मास, ( न० ) संतप्त, परिष्कृत  
 ( भिगोयाहुवा ) ( त्रि० ) ॥ ९४ ॥

उत्थित-वृद्धिवाला, उन्मता, अति  
 उद्यमयुक्त, ( त्रि० )

उच्छ्रित-उत्पन्नहुवा, अतिउद्यमयुक्त,  
 वृद्धिवाला, ( त्रि० ) ॥ ९५ ॥

उदित-उदयहुवा, प्राप्तहुवा, उगला-  
 हुवा, कहाहुवा ( त्रि० )

उद्धात-मुद्गर, वायुके अभ्यासकेलिये  
 कुम्भकादि तीन प्राणायाम ॥ ९६ ॥

लोटना, पावसे आखलना, धमडक-  
 टाकरना, आरंभकरना,

उदन्त-वार्ता ( वृत्तान्त ), सज्जन,  
 ( पुं० ) ॥ ९७ ॥

त्रिपुद्धान्तः समुद्रीर्णे पुमात्रिर्मददन्तिपु ।

उदात्तः स्वरभेदे स्यात् काव्यालङ्करणेऽपि च ॥ ९८ ॥

उदात्तो दातृमहतोर्मतो हृद्येऽपि वाच्यवत् ।

उद्धृतं तु सिते भुक्तोज्झितेऽप्यातोलिते मृते ॥ ९९ ॥

उन्नतिस्तूदये वृद्धावुद्धतौ ताक्ष्ययोपिति ।

उन्मत्त उन्मादवति घत्तूरमुचकुन्दयोः ॥ १०० ॥

उपितं व्युपिते दग्धेऽप्यूर्मितं क्षिप्तदग्धयोः ।

एधतुः पुरुषे बह्वावंहतिस्त्यागरोगयोः ॥ १०१ ॥

कपोतः स्यात्कलरवे कवकास्ये विहङ्गमे ।

कलितं विदितेप्याप्ते स्त्रीकृतेऽप्यभिधेयवत् ॥ १०२ ॥

कापोतं तद्रुणे स्रोतोऽञ्जनखञ्जिकयोरपि ।

किरातः पुंसि भूनिम्बे म्लेच्छस्वल्पशरीरयोः ॥ १०३ ॥

उद्धान्त—उगलाहुवा, ( वमनक्रिया )

( त्रि० ) मरुदहित हस्ती, ( पुं० )

उदात्त—स्वरभेद, काव्यका अलंकार,

॥ ९८ ॥ दातार, बडा, मनोहर,

( त्रि० )

उद्धृत—बैधाहुवा, खायाहुवा, त्यागा-

हुवा, तोलाहुवा, मराहुवा, ( त्रि० )

॥ ९९ ॥

उन्नति—उदय, वृद्धि, ऊपरको गमन,

गरुडकी स्त्री ( त्रि० )

उन्मत्त—उन्मादवाला, घत्तूरा, पुष्प-

वृक्ष विशेष, ( पुं० ) ॥ १०० ॥

उपित—रातका रक्ताहुवा, दग्ध,

( त्रि० )

ऊर्मित—फेंकाहुवा, दग्धहुवा, ( न० )

एधतु—पुरुष, अग्नि, ( पुं० )

अंहति—त्याग (दान), रोग ( स्त्री० )

॥ १०१ ॥

कपोत—सूक्ष्मशब्द, कवक ( कवूतर )

नाम पक्षी, ( पु० )

कलित—जानाहुवा, प्राप्तहुवा, अंगी-

कारक्रियाहुवा, ( त्रि० ) ॥ १०२ ॥

कापोत—कपोतो ( कवूतरों ) का समूह,

कालापुरमा, करछी ( न० )

किरात—चिरायता, म्लेच्छ, छोटाश-

रीरवाला, ( पुं० ) ॥ १०३ ॥

बालव्यजनधारिण्यां कुट्टिनीसुरगङ्गयोः ।  
 स्यात्किरातीति कुर्वस्तु मृत्ये कर्मकरे त्रिपु ॥ १०४ ॥  
 कृतान्तो यमसिद्धान्तदैवेऽप्यशुभकर्मणि ।  
 क्रन्दितं रोदितेऽपि स्यादाहाने कृतरोदने ॥ १०५ ॥  
 गभस्तिः किरणे सूर्ये पुंसि स्त्री वह्नियोपिति ।  
 गर्भुत् कार्चखरे क्लीबं गर्भुच्छाखाभिधायिनि ॥ १०६ ॥  
 गर्जितो मत्तमातङ्गे गर्जितं जलदध्वनौ ।  
 गोदन्तो हरिताले स्वादंशिते वर्मिन्ते त्रिपु ॥ १०७ ॥  
 गोपतिः पार्थिवे पण्डे रविपण्डितशूलिपु ।  
 ग्रन्थितं गुम्फिताक्रान्तहिंसितेषु त्रिपु स्मृतम् ॥ १०८ ॥  
 चिन्तातो मोचने गाङ्गचिन्ते च चिरजीविनि ।  
 जगन्वाते पुमान्क्लीबं भुवने जङ्गमे त्रिपु ॥ १०९ ॥

किराती-चैबरदोरनेवाली, कुट्टिनी, आकाशगंगा, ( स्त्री० )	गर्जित-मदोन्मत्त हस्ती, ( पुं० ) मेघकी ध्वनि ( न० )
कुर्वत् ( न० )-दास, नौकर ( त्रि० ) ॥ १०४ ॥	गोदन्त-हरताल, कंसुक आदिधारण- किये, कवच धारणकिये ( त्रि० ) ॥ १०७ ॥
कृतान्त-धर्मराज, सिद्धान्त, भाग्य, अशुभकर्म ( पु० )	गोपति-राजा, हीजडा, सूर्य, पण्डित, महादेव, ( पुं० )
क्रन्दित-रोना, बुलाना, रुदनकरने- वाला, ( त्रि० ) ॥ १०५ ॥	ग्रन्थित-गूँथाहुवा, दवायाहुवा, मारा- हुवा, ॥ १०८ ॥ चिन्तासे छुडाना, गगाको चिन्तनकरनेवाला, चिर- जीवी ( त्रि० )
गभस्ति-किरण, सूर्य, ( पुं० ) अ- मिकी स्त्री ( स्त्री० )	जगत्(न०)-वायु, ( पुं० ) भुवन, जंगम ( चलनेवाला ) ( त्रि० ) ॥ १०९ ॥
गर्भुत्-भुवर्ण, ( न० ) शाखाओंका बखानकरनेवाला ( पुं० ) ॥ १०६ ॥	



जगती जगति क्षमायां छन्दोभेदे जनेऽपि च ।  
 जयन्ती त्वथ गौरीन्द्रपुत्री जरा द्रुमान्तरै ॥ ११० ॥  
 वैजयन्त्यां जयन्तस्तु पाकशासनिहीरयोः ।  
 जामाता दयिते सूर्यावर्त्ते तु दुहितुः पत्नौ ॥ १११ ॥  
 जीमूतो जलदे शक्रे घोषेपि वृद्धिजीविनि ।  
 देवताडेऽपि जीमूतो जीमूतः पर्वतेऽपि च ॥ ११२ ॥  
 जीवातुरस्त्रियां भक्ते जीविते जीवनौपधौ ।  
 जीवन्ती जीवनीवृक्षे शमीवन्दाऽमृतासु च ॥ ११३ ॥  
 जृम्भितं करणे स्त्रीणां वेष्टिते स्फुटिते त्रिषु ।  
 ज्वलितो भास्करे दग्धे वानितं तनितांशुके ॥ ११४ ॥  
 वाद्यभाण्डे गुणे विस्तारे तेषु त्रिषु तानितम् ।  
 तृणता तु तृणत्वे स्यात् तृणता कार्मुकेऽपि च ॥ ११५ ॥

जगती—जगत्, पृथ्वी, छन्दोभेद, जन  
 ( मनुष्यभारि ) ( स्त्री० )

जयन्ती—गौरी ( पार्वती ), इन्द्रपुत्री,  
 वृद्धाऽवस्था, वृक्षभेद ( स्त्री० )  
 ॥ ११० ॥ फलाका, ( स्त्री० )

जयन्त—शक्रे पुत्र, हीरा-रत्न, ( पुं० )

जामा(स्त्र)ता—श्रिय, सूर्यावर्त्तमणि,  
 पुत्रीका पति, ( पुं० ) ॥ १११ ॥

जीमूत—मेघ, इंस, शब्द, वृद्धिजीवी  
 ( ब्याज लेनेवाला ), देवताड-वृक्ष,  
 पर्वत, ( पुं० ) ॥ ११२ ॥

जीवातु—भक्त, ( भात ), जीवित, जी-  
 नेकी औपधि, ( पुं० न० )

जीवन्ती—काकोली-वृक्ष, जाट वृक्ष,  
 वृक्षम उपजा वृक्ष, गिल्लेय ( स्त्री० )  
 ॥ ११३ ॥

जृम्भित—श्रियोका करण ( च्येय ), ल-  
 पेटाहुवा, फूटाहुवा, ( त्रि० )

ज्वलित—सूर्य, दग्ध, ( पुं० )

वानित—तनाहुवा वस्त्र, ( न० )  
 ॥ ११४ ॥

तानित—बाजाका पात्र, तार, विस्तार,  
 ( त्रि० )

तृणता—तृणभाव, धनुष, ( स्त्री० )  
 ॥ ११५ ॥

त्रिगर्तः स्याज्जनपदे त्रिगर्तो गणितान्तरे ।

विपयेऽपि त्रिगर्ता तु घुर्घुरीकामुक्त्वयोः ॥ ११६ ॥

त्वरितं प्रजवे शीघ्रे दुर्गतिर्निरये स्त्रियाम् ।

दारिद्येऽप्यथ दुर्जातं कुजाते व्यसने तथा ॥ ११७ ॥

दृष्टान्तस्तु पुमाञ्छास्त्रे स्यादुदाहरणेपि च ।

दंशितं बर्मिते दष्टे द्रवन्ती सरिदन्तरे ॥ ११८ ॥

मधौ चैव द्विजातिस्तु द्विजन्मनि विहङ्गमे ।

धीमान्वाचस्पतौ पुंसि धीरे बुद्धिमति त्रिषु ॥ ११९ ॥

निकृतं विप्रलम्भेऽपि नीचे विप्रकृतेऽपि च ।

निकृतिर्मर्त्सने क्षेपे निकृतिः शठशाठ्ययोः ॥ १२० ॥

निमित्तं लक्षणे हेतौ निमित्तं पर्वणि स्मृतम् ।

आगन्तुर्देवादेशे च नियतिर्नियमे विधौ ॥ १२१ ॥

त्रिगर्त-त्रिगर्तदेश, मनुष्य, गणित-  
भेद, देश, ( पुं० )

त्रिगर्ता-घुर्घुरिया-कीडा, संभोग इ-  
च्छावाली स्त्री ( स्त्री० ) ॥ ११६ ॥

त्वरित-वेग, शीघ्रता, ( न० )

दुर्गति-नरक, दारिद्र्य, ( स्त्री० )

दुर्जात-कुलितजन्मवाला, व्यसन,  
( न० ) ॥ ११७ ॥

दृष्टान्त-शास्त्र, उदाहरण, ( पुं० )

दंशित-कवचधारणक्रियाहुवा, का-  
टाहुवा ( त्रि० )

द्रवन्ती-नदी, ( स्त्री० ) ॥ ११८ ॥  
मुलहटी-बेल, ( स्त्री० )

द्विजाति-ब्राह्मणआदि, पक्षी, ( पुं० )  
धीमान्(त)-बृहस्पति, ( पुं० ) धीर,  
बुद्धिमान्, ( त्रि० ) ॥ ११९ ॥

निकृत-उगना, नीच, विगाढाहुवा,  
( न० )

निकृति-क्षिप्तकला, फेंकना, शठ,  
शठता, ( स्त्री० ) ॥ १२० ॥

निमित्त-लक्षण, हेतु, पर्व, ( न० )  
आगन्तु-देवआशा, ( पुं० )

नियति-नियम, भाग्य, ( स्त्री० )  
॥ १२१ ॥

निरस्तः प्रेषितशरे संत्यक्ते त्वरितोदिते ।

निष्ठचूतेऽपि प्रतिहते निर्भ्रमतस्त्वनुपद्रुते ॥ १२२ ॥

दिक्पालकालपर्णो तु पुंस्त्रियोः स्यादनुक्रमात् ।

निर्वृत्तिः सुस्थितासौख्यनिर्वाणाऽस्तङ्गमाध्वसु ॥ १२३ ॥

निर्मुक्तस्त्यक्तसङ्गे स्यात् त्यक्तकञ्चुकपत्रगे ।

निर्वातो वातविगते व्याश्रये दृढवर्म्मणि ॥ १२४ ॥

निशान्तस्त्रिषु शान्ते स्यान्निशान्तो भवनोपसोः ।

पञ्चता मृत्युमात्रेऽपि पञ्चभावेऽपि पञ्चता ॥ १२५ ॥

पण्डितः सिद्धके धीरे पतत्पातुकपक्षिणोः ।

पद्धतिः पथि पङ्क्तौ च परेतो वाच्यवन्मृते ॥ १२६ ॥

भूतभेदेऽप्यथ गिरौ सुरर्षोवपि पर्वतः ।

पर्याप्तं वारणतुष्टियथेष्टेष्वाप्तशक्तयोः ॥ १२७ ॥

निरस्त—फेंकाहुवा वाग, त्यागाहुवा,  
शीघ्रकहाहुवा, थूकाहुवा, मारा-  
हुवा, (पुं०)

निर्मित—उपश्रवणहित, (पुं०) ॥१२२॥  
दिक्पाल, (पुं०) तगर-वृक्ष, (स्त्री०)

निर्वृत्ति—सुस्थिता, सौख्य, मृत्यु होना,  
अस्त होना, मार्ग, (स्त्री०) ॥१२३॥

निर्मुक्त—त्यागा हे सग जितने बह,  
केंबुलीसे मुक्तहुवा सर्प (पुं०)

निर्वात—वायुरहित होना, आश्रय,  
दृढ बबच (पुं०) ॥ १२४ ॥

निशान्त—शान्त, (त्रि०) निशान्त-  
पर, प्रभात-काल (पुं०)

पञ्चता—मृत्यु, पाँचोंका भाव (पंच-  
पना) (स्त्री०) ॥ १२५ ॥

पण्डित—दीग, विद्वान्; (पुं०)

पतत्—पडनेवाला, पक्षी, (त्रि०)

पद्धति—मार्ग, पंक्ति, (स्त्री०)

परेत—मृतक ॥ १२६ ॥ भूतभेद,  
(पुं०)

पर्वत—पहाड, एक सुरर्षि, (पुं०)

पर्याप्त—मनह करणा, तुष्टि, यथेष्ट  
(न०) भाग्य, समर्थ, (पुं०) ॥१२७॥

विनाशदोषकृच्छ्रेषु दण्डे तु मतमव्ययम् ।

पर्याप्तिस्तु प्रकामे स्यात्प्राप्तौ च परिरक्षणे ॥ १२८ ॥

पर्यस्तः पतितक्षिप्तनिहतेषु त्रिषु त्रिषु ।

पलितं केशपांडुत्वे पक्के तापेऽपि शैलजे ॥ १२९ ॥

पक्षतिः पक्षमूले स्यात्प्रतिपदापि पक्षतिः ।

पार्वती द्रौपदी दुर्गा जीवन्ती शलकीद्रुमे ॥ १३० ॥

पिण्डितो गणिते सान्द्रे पित्सन् पातेऽपि पक्षिणि ।

पिशिता मासिकायां स्यात्पिशितं पलले मतम् ॥ १३१ ॥

पीडितं करणे स्त्रीणां यन्निते वाधितेऽपि च ।

पुटितं स्यात्करपुटे प्रसृतिस्स्यूतपोटिते ॥ १३२ ॥

पृपतोऽपि पृषद्विन्दौ मृगे तु पृपतः पृपन् ।

स्याद्दुःखरेऽहितेऽप्येवं श्वेतविन्दुयुतेऽन्यवत् ॥ १३३ ॥

पर्याप्तं-विनाश, दोष, कृच्छ्र, ( कष्ट )  
दंड, ( अव्यय )

पर्याप्ति-प्रकाम (अति इच्छा), प्राप्ति,  
अच्छी रक्षा, ( स्त्री० ) ॥ १२८ ॥

पर्यस्त-पडाहुवा, फेंकाहुवा, मारा-  
हुवा, ( त्रि० )

पलित-केशोंकी सफेदी, कीच, ताप,  
शिलाजीत ( न० ) ॥ १२९ ॥

पक्षति-पक्षीकी मूल, प्रतिपदा-तिथि,  
( स्त्री० )

पार्वती-द्रौपदी, दुर्गा, हरद-वृक्ष,  
शालई-वृक्ष, ( स्त्री० ) ॥ १३० ॥

पिण्डित-गणित कियाहुवा, इकठ्ठा कि-  
याहुवा, ( पुं० )

पित्स(त्)न्-पडना, पक्षी, ( न०  
पुं० )

पिशिता-जटामांसी-औपधि, ( स्त्री० )

पिशित-माम, ( न० ) ॥ १३१ ॥

पीडित-स्त्रियोंका आभूषण, वशमें  
कियाहुवा, पीडा कियाहुवा ( त्रि० )

पुटित-हाथका पुट, ( न० )

प्रसृति-आधी अजलि, थैली, पुट-  
कियाहुवा, ( स्त्री० ) ॥ १३२ ॥

पृपत-( पु० ) पृपत्-( न० ) जल  
आदिकी बुँद, पृपत्-पृपत्, हि-  
रण, ( पुं० ) बुरे शब्दवाला, शत्रु,  
सफेद बुँदकीवाला ( त्रि० ) ॥ १३३ ॥

प्रकृतिस्तु सत्त्वरजस्तमसां साम्यमात्रके ।

स्वभावाऽमात्यपौरैषु लिङ्गे योनौ तथाऽऽत्मनि ॥ १३४ ॥

प्रकृतं प्रभुतेऽपि स्यात्प्रकृतः प्रकृतिस्थिते ।

प्रवितः शकटोन्मये पलानामयुतद्वये ॥ १३५ ॥

प्रणीतः संस्कृतामौ स्याद्वाच्यलिङ्गः प्रवेशिते ।

संस्कृते चोपपन्ने निक्षिप्ते विहितेऽपि च ॥ १३६ ॥

प्रतीतः सादरे रयाते हृष्टे दृष्टे विरक्षणे ।

प्रतीत एते जाते च प्रततिर्नततौ ततौ ॥ १३७ ॥

प्रपातो निक्षरे कृच्छ्रे पतनावटयोरपि ।

प्रभूतमुद्रते प्राज्ये प्रमीतः प्रोक्षिते मृते ॥ १३८ ॥

प्रवृत्तिर्वृत्तिवार्तान्तप्रवाहेषु प्रवर्त्तने ।

प्रसूतिः प्रसवोत्पत्तिपुत्रेषु दुहितर्यपि ॥ १३९ ॥

प्रकृति-सत्त्व, रजस्, तमम्, इनकी  
सम अवस्था, स्वभाव, मन्त्री, प्रजा,  
लिङ्ग, योनि, आत्मा, ( स्त्री० )  
॥ १३४ ॥

प्रकृत-प्रस्तुत ( प्रसंग ) ( न० )  
स्वभावने स्थित, ( त्रि० )

प्रवित-गाढाभर, ८०००० तोला  
प्रमाण, ( पु० ) ॥ १३५ ॥

प्रणीत-संस्कार कियाहुवा अग्नि,  
( पुं० ) प्रवेश कियाहुवा, ( त्रि० )  
संस्कार कियाहुवा, पास रक्खा  
हुवा, स्थापन कियाहुवा, रचाहुवा,  
( त्रि० ) ॥ १३६ ॥

प्रतीत-आदरयुक्त, विख्यात, प्रसन्न-  
हुवा, देसाहुवा, रक्षाकियाहुवा,  
गयाहुवा, जानाहुवा ( त्रि० )

प्रतति-बैल, पक्ति, ( स्त्री० ) ॥ १३७ ॥  
प्रपात-सिरना, कष्ट, पटना, गद्दा,  
( पु० )

प्रभूत-उद्भूत, बहुत, ( न० )  
प्रमीत-प्रोक्षित ( सेवन कियाहुवा ),  
मराहुवा, ( पुं० ) ॥ १३८ ॥

प्रवृत्ति-वृत्ति ( जीविद्य ), इत्तान्त,  
प्रवाह, प्रवर्तन ( स्त्री० )

प्रसूति-जन्म, उत्पत्ति, पुत्र, पुत्री,  
( स्त्री० ) ॥ १३९ ॥

प्रसूतं कुसुमे क्लीब वाच्यवल्लव्यजन्मनि ।  
 प्रसूता तु प्रजातायां जंघाया प्रसूता मता ॥ १४० ॥  
 प्रसूतोऽर्धाङ्गलौ सम्प्रसारे वेगिविनीतयो ।  
 प्रवृतं वितते क्षुण्णे प्रोक्षितं सिक्त आहते ॥ १४१ ॥  
 प्रार्थितं याचिते शत्रुरुद्धेऽप्यभिहते त्रिषु ।  
 वर्द्धितं पूरिते छिन्ने वर्द्धितं वृद्धिशालिनि ॥ १४२ ॥  
 बृहती महतीकण्टकारिकाकलशीषु च ।  
 वाचि च क्षुद्रवार्त्ताक्या छन्दोभेदोत्तरीययो ॥ १४३ ॥  
 भरतस्तु नटे नाट्यशास्त्रे रामाऽनुजे पुमान् ।  
 दौष्यन्तौ शवरे तन्तुवायेऽपि भरतः स्मृतः ॥ १४४ ॥  
 भवती वाणभेदे स्यात्त्रिषु युष्मत्सदर्थयोः ।  
 व्यासर्षिभाषिते अन्ये जम्बूद्वीपेऽपि भारतः ॥ १४५ ॥

प्रसूत-पुष्प, ( न० ) उत्पन्नहुवा ( त्रि० )	वर्द्धित-पूराहुवा, छेदन कियाहुवा, वृद्धिवाला, ( त्रि० ) ॥ १४२ ॥
प्रसूता-उत्पन्न हुई-कन्या ( स्त्री० )	बृहती-बडी-स्त्रीआदि, स्टेहली,
प्रसूता-जंघा ( स्त्री० ) ॥ १४० ॥	कलशी, वाणी, छोटा वैगन, छन्दो-
प्रसूत-आधी अजलि, अच्छी तरह फैलाहुवा, वेगवाला, नम्रतावाला, ( त्रि० )	भेद, डुपटा, ( स्त्री० ) ॥ १४३ ॥
प्रवृत-विस्तारवाला, कटाहुवा, ( त्रि० )	भरत-नट, नाट्यशास्त्र, रामका छोटा प्राता, दुष्यन्तराजाका पुत्र, शव-
प्रोक्षित-सींचाहुवा, अच्छी तरह माराहुवा ( त्रि० ) ॥ १४१ ॥	रजाति, जुलाहा, ( पुं० ) ॥ १४४ ॥
प्रार्थित-याचना कियाहुवा, शत्रुका रोकाहुवा, माराहुवा ( त्रि० )	भवती-वाणभेद, युष्मद्-अर्थ, सव- अर्थ, ( त्रि० )
	भारत-भारत-इतिहास, जंबूद्वीप, ( पुं० ) ॥ १४५ ॥

वाग्वाणीपक्षिणीभेदवृत्तिभेदेषु भारती ।

भावितं वासिते लब्धे ध्यातेऽप्युत्पादिते त्रिषु ॥ १४६ ॥

भासन्तो भासविहगे सुन्दरेऽप्यभिधेयवत् ।

भास्वानामासुरे सूर्ये भूभृद्भूपालशैल्योः ॥ १४७ ॥

मथितं निर्जलोदधित्वनववृष्टलोडिते ।

मरुत्पुंसि सुरे वाने महद्राज्ये नपुंसकम् ॥ १४८ ॥

नारदस्य तु वीणायां महती स्यात्पृथी त्रिषु ।

मालती जातियुवतिज्योत्स्नानिक्षु सरिद्धिदि ॥ १४९ ॥

काकमाच्यमिशिरयोर्मुपितं सण्डिते हृते ।

मूर्च्छितं मोहसमाप्ते मोच्छ्रयेऽपि दृष्टेऽपि च ॥ १५० ॥

रजतं रूप्यहारेभदन्तेषु विशद्रे त्रिषु ।

रमतिर्नायके स्वर्गे रसितं सनिते रुते ॥ १५१ ॥

भारती—वचन, सरस्वती, पक्षि(णी)  
भेद, वृत्तिभेद, ( स्त्री० )

भावित—भिगोयाहुवा, लब्धहुवा,  
प्यानत्रियाहुवा, उत्पादन कियाहुवा  
( त्रि० ) ॥ १४६ ॥

भासन्त—भास-वशी, ( पुं० ) सुन्दर,  
( त्रि० )

भास्वान्—वेजस्वी, सूर्ये, ( पुं० )

भूभृत्—राजा, पर्यंत, ( पुं० ) ॥ १४७ ॥

मथित—निर्जलछाछ, घोलाहुवा, मया-  
हुवा ( न० )

मरुत्—देवता, वायु, ( पुं० )

महत्—राज्य, ( न० ) ॥ १४८ ॥

महती—नारदमुनिश्रीर्वाणा, ( स्त्री० )  
पृथु ( स्थूल ) ( त्रि० )

मालती—वमेश्री, जवान श्री, सफेदशु-  
लकी तोरई, रात्रि, एकनदी, मद्योय,  
॥ १४९ ॥ चौलाई शाक, ( स्त्री० )

मुपित—संक्षित, हृत ( दबाहुवा )  
( त्रि० )

मूर्च्छित—मोहको प्राप्त, बढाहुवा, दड,  
( त्रि० ) ॥ १५० ॥

रजत—चाँदी, हार, हसिदन्त, शुक्र  
( सफेद ) ( त्रि० )

रमति—स्वामी, स्वर्ग, ( पुं० )

रसित—शन्दयुक्त, शब्द, ॥ १५१ ॥

स्वर्णादिखचिते तु स्यान्निष्वेव रसितं मतम् ।  
 रेवती हलिकान्तायां ताराभेदेऽपि मातृषु ॥ १५२ ॥  
 रैवतः शैलभेदे स्यात्सुवर्णालौ हरेश्वरे ।  
 सरलेन्द्रायुधे वीरे रुधिरैऽपि च रोहितम् ॥ १५३ ॥  
 रोहितो लोहिते मीने मृगभेदेऽपि रोहिणि ।  
 रोहिदकं पुमानेव मता रोहिल्लतान्तरे ॥ १५४ ॥  
 ललितं हारभेदे स्यान्निष्वेव ललितेष्टयोः ।  
 लोहितं कुङ्कुमे रक्ते गोशीर्षे रक्तचन्दने ॥ १५५ ॥  
 पुंसेव मङ्गले रक्ते नदे नागे व लोहितः ।  
 वनिता जनिताऽत्यर्थरागयोपिति योपिति ॥ १५६ ॥  
 वनितं याचिते क्लीवं शोधिते वनितं त्रिषु ।  
 वसतिः स्यान्निशावेदमावस्थानेष्वर्हदाश्रमे ॥ १५७ ॥

स्वर्णादिसे जडाहुवा, ( त्रि० )  
 रेवती-बलदेवजीकी स्त्री, रेवती-  
 नक्षत्र, मातृभेद ( स्त्री० ) ॥ १५२ ॥  
 रैवत-एम्पवत, सोनाली वृक्ष, शिव,  
 ईश्वर, ( पु० )  
 रोहित-सीधा, इद्रका धनुष, वीर,  
 रुधिर, ( न० ) ॥ १५३ ॥  
 रोहित-लोहित ( लालवर्ण ), मन्डी,  
 मृगभेद, रोहेडा-वृक्ष ( पुं० )  
 रोहित-सूर्य या आरु ( पुं० ) ल-  
 ताभेद, ( स्त्री० ) ॥ १५४ ॥

ललित-हारभेद, सुंदर, प्रिय, ( त्रि० )  
 लोहित-केसर, कसूभाआदि, हस्ति-  
 चंदन-वृक्ष, रक्तचंदन, ( न० )  
 ॥ १५५ ॥  
 लोहित-मंगल ग्रह, रक्त वर्ण, एक-  
 नद, हस्ती ( पुं० )  
 वनिता-जिसमें अतिप्रीति है वह स्त्री,  
 स्त्रीमात्र, ( स्त्री० ॥ १५६ ॥  
 वनित-याचना कियाहुवा ( न० )  
 सोधाहुवा, ( त्रि० )  
 वसति-रात्रि, मकान, स्थिति, अर्ह-  
 तदेवका आप्रम् ( स्त्री० ) ॥ १५७ ॥



बहसुवृषभे पान्थे बहतिः सचिवे गवि ।

वापितं वाच्यवह्नीजाकृतमुण्डितयोर्मतम् ॥ १५८ ॥

वासन्तः कोकिले मुद्गे करभेऽवहिते विटे ।

वासन्ती माघवीयूष्योर्वासन्ती पाटलावपि ॥ १५९ ॥

वासिता करिणीनार्योर्वासितं विहगारवे ।

ज्ञाने त्रिष्वेव वसनवेष्टिते मुरभीकृते ॥ १६० ॥

विकृतस्त्रिषु बीमत्से रोगिते स्यादसंस्कृते ।

डिम्बे रोगे च विकृतिविंगतो निष्प्रभे गते ॥ १६१ ॥

विच्छित्तिरङ्गरागे स्यादपि विच्छेदहावयोः ।

विजाता तु प्रसूतायां विकृते जनिते त्रिषु ॥ १६२ ॥

विततं तु मतं व्याप्ते विमृतेऽप्यभिधेयवत् ।

विद्युत्तडिति सन्ध्यायां स्त्रियां त्रिष्वेव निष्प्रभे ॥ १६३ ॥

बहसु-वृषभ, बटाऊ, ( पु० )

बहति-मंत्री, गौ, ( पुं० स्त्री० )

वापित-बांजबोयाहुवा खेत, मुँडा  
हुवा ( त्रि० ॥ १५८ ॥

वासन्त-कोयल, मूँग, उष्ट्र, साव-  
थान, कामी, ( पुं० )

वासन्ती-माघवीलता, जूही, लाल-  
लोध ( स्त्री० ) ॥ १५९ ॥

वासिता-हथिनी, स्त्री, ( स्त्री० )

वासित-गधीका शब्द, ज्ञान, ( न० )  
यक्षसे लपेटाहुवा, मुगंधितक्रिया-  
हुवा, ( त्रि० ) ॥ १६० ॥

विकृत-कूर, रोगी, नहीं सत्कारतियां  
हुवा, ( पुं० )

विकृति-दूटनाआदिपीडा, रोग,  
( स्त्री० )

विगत-कातिहीन, गयाहुवा, ( पु० )  
॥ १६१ ॥

विच्छित्ति-अगराग, वियोग, हाव,  
( त्रियोंकी चेष्टा ) ( स्त्री० )

विजाता-प्रसूतिचा स्त्री, ( स्त्री० )  
बिगडाहुवा, उत्पन्नहुवा, ( त्रि० )

॥ १६२ ॥

वितत-व्याप्त, विस्तारवाला, ( त्रि० )

विद्युत्-बिजली, सन्ध्या, ( स्त्री० )  
प्रभारहित, ( त्रि० ) ॥ १६३ ॥

विदितं स्वीकृते ज्ञाते विधाता वेधसि स्मरे ।  
 विनतः प्रणते भुमे शिक्षितेऽप्यभिधेयवत् ॥ १६४ ॥  
 विनता वैनतेयस्य जनन्यां पिडिकान्तरे ।  
 विनीतः सुबहाध्रे स्याद्विनयाब्धे जितेन्द्रिये ॥ १६५ ॥  
 उपनीतेऽपनीतेऽपि निमृते वणिजि त्रिपु ।  
 विनेताऽऽदेशके राज्ञि विपत्तिर्याचनापदोः ॥ १६६ ॥  
 विवृता क्षुद्ररोगे स्याद्विवृतं तु त्रिपु त्रिपु ।  
 विवर्त्तं समुदाये स्यादप्रवर्त्तननृत्ययोः ॥ १६७ ॥  
 विविक्तं विजने पूतेऽप्यसंपृक्तविवेकिनि ।  
 विश्रुतं ज्ञातसंहृष्टप्रतीतेषु त्रिपु त्रिपु ॥ १६८ ॥  
 विश्वस्तस्त्रिपु विश्रब्धे विश्वस्ता विधवा स्त्रियाम् ।  
 विहस्तो हस्तरहिते विह्वले षण्ढकेऽपि च ॥ १६९ ॥

विदित-स्वीकारकियाहुवा, जानाहुवा, ( त्रि० )	विपत्ति-याचना, आपत् ( विपत् ) ( स्त्री० ) ॥ १६६ ॥
विधातृ(ता)-ब्रह्मा, कामदेव, ( पुं० )	विवृता-क्षुद्र-रोग, ( स्त्री० ) नहींढका- हुवा, ( त्रि० )
विनत-नम्र, मुग्धाहुवा, शिक्षाकिया- हुवा ( त्रि० ) ॥ १६४ ॥	विवर्त्त-समूह, नहींढकना, नृत्य, ( न० ) ॥ १६७ ॥
विनता-गरुडकी माता, कुन्सीभेद, ( स्त्री० )	विविक्त-विजन ( एकांत ), पवित्र, नहीं मिलाहुवा, विवेकी, ( त्रि० )
विनीत-अच्छा चलनेवाला अश्व, वि- नयसे युक्त, जितेन्द्रिय, ॥ १६५ ॥ यज्ञोपवीतदियाहुवा, दूरकियाहुवा, नम्र, वणिक्, ( त्रि० )	विश्रुत-जानाहुवा, प्रसन्नहुवा, वि- ख्यातहुवा, ( त्रि० ) ॥ १६८ ॥
विनेतृ(ता) आज्ञाकरनेवाला, राजा, ( पुं० )	विश्वस्त-जिसका विश्वास हुवा वह, ( त्रि० )
	विश्वस्ता-विधवा, ( स्त्री० )
	विहस्त-हस्तरहित, विह्वल, नपुंसक, ( पुं० ) ॥ १६९ ॥

वृत्तान्तो भावकाल्पर्ये स्यादपि वाचाप्रकारयोः ।

प्रक्रियायां प्रकरणेऽप्येकान्तेऽपि कनिन्मतः ॥ १७० ॥

वेष्टितं कम्पिते वक्रे हुते स्याद्वेष्टितं गतौ ।

वेष्टितं करणे स्त्रीणां लसके चावृते त्रिषु ॥ १७१ ॥

व्याघातस्त्वन्तराये स्याद्योगभेदप्रहारयोः ।

व्यायतं तु दृढे दीर्घे व्यापृतेऽतिशयेऽन्यवत् ॥ १७२ ॥

शकुन्तो विहगे पक्षिभेदे भासाख्यपक्षिणि ।

शुद्धान्तोन्त-पुरे कक्षान्तरे रहसि च मृतः ॥ १७३ ॥

राजयोपिति शुद्धान्ता श्रीपतिः नृपहृष्णयोः ।

श्रीमांस्तिलरुवृक्षे स्यादीश्वरेऽपि मनोहरे ॥ १७४ ॥

सङ्घातः संघते पुंसि प्रहारे नरकान्तरे ।

सङ्गतिः संगते ज्ञाने सन्नतिर्नुतिशब्दयोः ॥ १७५ ॥

वृत्तान्त-भावसंपूर्णता, कर्ता, प्रकार,  
प्रक्रिया, प्रकरण, एकान्त, ( पुं० )

॥ १७० ॥

वेष्टित-कंपाहुवा, टेडा, उल्लाहुवा,  
( ति० ) गमन ( न० )

वेष्टित-त्रियोक्ता करण ( हावादि ),  
शोभित, घिराहुवा, ( त्रि० ) ॥ १७१ ॥

व्याघात-विप्र, पिक्कंभआदिहोमं ए-  
क योग, प्रहार ( चोट ) ( पुं० )

व्यायत-दृढ, लंबा, व्यापारयुक्त, अ-  
तिशय, ( त्रि० ) ॥ १७२ ॥

शकुन्त-पक्षिमान, पक्षिभेद, भास-  
पक्षी ( पु० )

शुद्धान्त-रनवास, ज्यौषी, एकान्त  
( पु० ) ॥ १७३ ॥

शुद्धान्ता-राज्ञी, ( रानी ) ( स्त्री० )  
श्रीपति-राजा, श्रीहृष्ण ( पुं० )

श्रीमान्-तिलरुपुत्र-वृक्ष, ईश्वर, सुंदर,  
( पुं० ) ॥ १७४ ॥

संघात-समूह, प्रहार, नरकभेद, ( पुं० )  
संगति-संग, ज्ञान, ( स्त्री० )

सन्नति-नमस्कार, शब्द, ( स्त्री० )  
॥ १७५ ॥

सन्ततिस्तनयापुत्रगोत्रविस्तारपङ्क्तिषु ।  
 परम्पराभावेऽपि स्यात्समाप्तिस्तु समर्थने ॥ १७६ ॥  
 विनाशे संमतिस्तु स्यादनुमत्यभिलाषयोः ।  
 समितिः सङ्गरे साम्ये सभायां सङ्गमेऽपि च ॥ १७७ ॥  
 संविदाज्ञौ प्रतिज्ञायामाचारज्ञानयोः स्त्रियाम् ।  
 संवित्तिः प्रतिपत्तौ स्यादविवादे जनस्य च ॥ १७८ ॥  
 संवर्त्तः पुंसि कल्पान्ते हायने च कलिद्रुमे ।  
 सिकता सिकतायुक्तदेशे स्यादामयान्तरे ॥ १७९ ॥  
 सिकता बालुकाया स्युः शर्करायामपीष्यते ।  
 सुकृतं तु शुभे पुण्ये क्लीबं सुविहिते त्रिषु ॥ १८० ॥  
 सुनीति शोभननये सुनीतिर्ध्रुवमातरि ।  
 सुव्रता सुखसन्दोहगवर्हत्सद्ब्रतेषु च ॥ १८१ ॥

सन्तति-पुत्री, पुत्र, गोत्र, विस्तार,  
 पङ्क्ति, पारम्पर्य ( परंपरापना )  
 ( स्त्री० )

समाप्ति-समर्थन ॥ १७६ ॥

विनाश या अत, ( स्त्री० )

संमति-अनुमति, अभिलाषा, ( स्त्री० )

समिति-युद्ध, समता, सभा, संगम,  
 ( स्त्री० ) ॥ १७७ ॥

संवित्-युद्धभूमि, प्रतिज्ञा, आचार,  
 ज्ञान, ( स्त्री० )

संवित्ति-सिद्धि, जनका अविवाद,  
 ( स्त्री० ) ॥ १७८ ॥

संवर्त्त-कल्पका अत ( प्रलय ), वर्ष,  
 बहेडा-वृक्ष, ( पु० )

सिकता-सिकता ( बालू ) युक्त देश,  
 रोगभेद, ॥ १७९ ॥ बालू ( रिती ),  
 ( स्त्री० न० ) टली, ( स्त्री० )

सुकृत-शुभ, पुण्य, ( न० ) अच्छो-  
 तरह विधानकियाहुवा, ( त्रि० )  
 ॥ १८० ॥

सुनीति-अच्छोनीति, ध्रुवरी मात  
 ( स्त्री० )

सुव्रता-जो मुखसे दोहीजाय वह माँ,  
 ( स्त्री० )

सुव्रत-अर्हन्तदेव, श्रेष्ठव्रत, ( पुं० )  
 ॥ १८१ ॥

हृत्विं तृणप्रभेदेऽथ हर्मितं क्षिप्तदग्धयोः ।  
हसन्त्याङ्गारधान्यां स्यान्मल्लिकाशाकिनीभिदोः ॥ १८८ ॥  
हारीतः कैतवेऽपि स्यान्मुनिपक्षिप्रभेदयोः ।  
हृषितं विस्मृते प्रीते नते रोमाञ्चिते हृते ॥ १८९ ॥  
क्षारितं स्राविते क्षारेऽभिशस्तेऽपि च वाच्यवत् ।

तचतुर्थम् ।

अङ्गारितं तु दग्धे स्यात्पलाशकलिकोद्रमे ॥ १९० ॥  
अतिमुक्तस्तु वासन्त्यां तिनिशे निष्कले त्रिषु ।  
अत्याहितं तु जीवनापेक्षकृत्ये महाभये ॥ १९१ ॥  
अधिक्षिप्तः पराभूते त्रिषु प्रणिहितेऽपि च ।  
स्यात्पुरातनवस्त्रेऽपि नववस्त्रेऽप्यनाहतम् ॥ १९२ ॥  
अनुमतिस्त्वपूर्णं तु पूर्णिमानुज्ञयोः स्त्रियाम् ।  
मतमन्तर्गतं मध्ये त्रिषु प्राप्ते च विस्मृते ॥ १९३ ॥

हर्मित-क्षिप्त (फेंकाहुवा), दग्ध, (त्रि०)	अतिमुक्त-जूहीलता, या वासन्ती,
हसन्ती-अंगीठी, मल्लिका (मोतिया)	तिरिच्छ वृक्ष, सगरहित, (त्रि०)
भेद), शाकिनी-भेद, (स्त्री०)	अत्याहित-जीनेरी इच्छासे कर्म,
॥ १८८ ॥	महाभय, (न०) ॥ १९१ ॥
हारीत-कपट, मुनिभेद, पक्षिभेद,	अधिक्षिप्त-तिरस्कार कियाहुवा,
(पुं०)	स्थापन कियाहुवा, (स्त्री०)
हृषित-भूलाहुवा, प्रसन्नहुवा, नम्र-	अनाहत-पुराना वस्त्र, नवीन वस्त्र,
हुवा, रोमाञ्चितहुवा, हडाहुवा,	(न०) ॥ १९२ ॥
(त्रि०) ॥ १८९ ॥	अनुमति-अपूर्ण, (त्रि०) कलाहीन
क्षारित-क्षिराहुवा, क्षार, धेष्ट, (त्रि०)	चंद्रमावाली पूर्णिमा, संमति, (मला-
तचतुर्थम् ।	हमें सलाह मिलाना) (स्त्री०) ॥
अङ्गारित-दग्ध, टेसूकी कडीका उ-	अन्तर्गत-मध्य प्राप्तहुवा, विस्मृत
त्पन्न होना, (न०) ॥ १९० ॥	(भूला) हुवा, (त्रि०) ॥ १९३ ॥

भवेदपचितो न्यूने पूजितेष्यभिधेयवत् ।

स्त्रियामपचितिः पूजानिष्कृतिक्षयहानिषु ॥ १९४ ॥

अपावृतस्तु पिहिते स्वतन्त्रे स्यादपावृतः ।

अभिजातस्त्रिषु न्याय्ये कुलीनप्राप्तस्वरूपयोः ॥ १९५ ॥

अभियुक्तस्त्रिषु द्वेषिसंरुद्धेऽप्यतितत्परि ।

अभिनीतो भवेन्न्याय्यसंस्कृतामर्षिषु त्रिषु ॥ १९६ ॥

अभिशास्त्रिस्तु लोकापवादेयाच्चाभिशापयोः ।

उदितेऽभ्युदितो यस्मिन्सुप्तेऽर्कः समुदेति च ॥ १९७ ॥

पुमानर्थपतिर्भूपे ईश्वरे किन्नरे त्रिषु ।

ज्ञाते मूढोऽप्ययसितं क्लीबं गत्यवसानयोः ॥ १९८ ॥

क्लीबमाच्छुरितं हास्ये शब्दान्वितनस्वार्पणे ।

आयुष्मान् योगभेदे ना चिरजीविनि वाच्यवत् ॥ १९९ ॥

अपचित-घटा हुआ वस्तु, पूजित,  
( पु० )

अपचिति-पूजा, बदला, नारा, हानि,  
( स्त्री० ) ॥ १९४ ॥

अपावृत-ढकाहुवा, स्वतन्त्र ( ई अ-  
स्तयार ) ( त्रि० )

अभिजात-न्याय्य ( योग्य ), कुलीन,  
रूपवान, ( त्रि० ) ॥ १९५ ॥

अभियुक्त-शत्रुसे ढकाहुवा, अतित  
त्पर, ( पुं० )

अभिनीत-न्याय्य ( योग्य ), सहकार  
विद्याहुवा, क्रोधयुक्त, ( त्रि० )

॥ १९६ ॥

अभिशास्त्रि-लोकापवाद, याचना,  
दंडा बलक, ( स्त्री० )

अभ्युदित-उदयहुवा, जिसके सोते-  
हुए सूर्य उदय होजाय वह मनुष्य,  
( पुं० ) ॥ १९७ ॥

अर्थपति-राजा, ईश्वर, किन्नर, ( पुं० )

अवसित-जानाहुवा, मोहितहुवा,  
( त्रि० ) गमन, अत, ( न० ) ॥ १९८ ॥

आच्छुरित-हँसना, शब्दसेयुक्त  
नख डालना (राज करना) ( न० )

आयुष्मान्-विप्रम्भ आदिकोमेंसे  
एक योग, ( पुं० ) बहुतकाल जी-  
नेवाला ( त्रि० ) ॥ १९९ ॥

उज्जृम्भितं तु चेष्टायामुत्फुल्ले त्वभिधेयवत् ।

उदास्थितश्चरैर्ध्यक्षे प्रणिधौ द्वारपालके ॥ २०० ॥

उद्ग्राहितमुपन्यस्ते बद्धग्राहितयोरपि ।

उपाकृतो यजहते पशानुपहते त्रिषु ॥ २०१ ॥

भवेदुपचितं दिग्धे समृद्धे च समाहिते ।

उपाहितोऽनलोत्पाते पुमानारोपिते त्रिषु ॥ २०२ ॥

राहौ सोपप्लवे चोपरक्तः स्याद्व्यसनान्तरे ।

उपसत्तिस्तु सेवाया सङ्गेऽपि प्रतिपादने ॥ २०३ ॥

मतमुल्लिखितं तु स्यात्त्रिपूत्कीर्णं तनूकृते ।

ऋष्यप्रोक्ता शतावर्षा शूकरशिव्या बलाभिदि ॥ २०४ ॥

ऐरावतोऽभ्रमातङ्गे नारङ्गे लकुचद्रुमे ।

ऐरावतं मतं दीर्घसरलेन्द्रशरासने ॥ २०५ ॥

उज्जृम्भित-चेष्टा, ( न० ) फूलाहुवा,  
( त्रि० )

उदास्थित-चर (चचल), अध्यक्ष, गु-  
सवात कहनेवाला, द्वारपाल (पुं० )  
॥ २०० ॥

उद्ग्राहित-उपन्यास कियाहुवा, बँधा-  
हुवा, ग्रहण करायाहुवा (त्रि०)

उपाकृत-यज्ञमें बध कियाहुवा पशु,  
माराहुवा ( त्रि० ) ॥ २०१ ॥

उपचित-लिपाहुवा, समृद्ध ( बद्ध  
हुवा), समाधान कियाहुवा, ( त्री० )

उपाहित-अग्निसे उत्पात, ( पु० )  
आरोपण कियाहुवा, ( त्रि० ) २०२

उपरक्त-राहुसे, उपद्रव (ग्रहण) युक्त  
चंद्रसूर्य, दु सभेद, ( पु० )

उपसत्ति-सेवा, सङ्ग, प्रतिपादन,  
( स्त्री० ) ॥ २०३ ॥

उल्लिखित-खोदाहुवा, सूक्ष्म किया  
हुवा, ( त्रि० )

ऋष्यप्रोक्ता-शतावरी, बाँच, बला  
( सरहद्री ) भेद, ( स्त्री० ) २०४

ऐरावत-इंद्र हस्ती, नारंगी, बडहर-  
वृक्ष, ( पु० )

ऐरावत-दीर्घ लता और सीधा इं-  
द्रका धनुष ( न० ) ॥ २०५ ॥

खियामैरावती सौदामनीसौदामनीभिदोः ।  
 अंशुमान्भास्करे शालपर्ण्यामंशुमती खियाम् ॥ २०६ ॥  
 कलधौतं कलारावे क्लीबं कनकरूप्ययोः ।  
 कुमुद्वती कुमुदिन्यां कुशपत्न्यां कुमुद्वती ॥ २०७ ॥  
 कुमुद्वान्कुमुदप्रायदेशे स्यादभिधेयवत् ।  
 क्लीबं कुहरितं ध्वाने पिकालापे रतस्वने ॥ २०८ ॥  
 कृष्णवृन्ता पाटलायां मापपर्णामपि स्मृता ॥ २०९ ॥  
 मता गन्धवती मधे मेदिन्यां च पुरीभिदि ।  
 अपि योजनगन्धाय गुरुत्मांस्तार्क्ष्यपक्षिणोः ॥ २१० ॥  
 गृहस्थक्षत्रिणोरर्थाऽऽधाने गृहपतिः पुमान् ।  
 चक्राहुतिर्दीर्घिवाहुभ्रमे पूर्णाहुतावपि ॥ २११ ॥  
 चन्द्रकान्तो मणेर्भेदे चन्द्रकान्तं तु कैरवे ।  
 चर्मण्वती नदीभेदे कदलीचारवृक्षयोः ॥ २१२ ॥

पैरावती—विजली, ( स्त्री० )	विजलीभेद,	गन्धवती—मदिता, पृथ्वी, वरुणकी नगरी, व्यासही माता, ( स्त्री० )
अंशुमान्—सूर्यं, ( पु० ) अंशुमती- शालपर्णी ( स्त्री० ) ॥ २०६ ॥		गुरुत्मान्—गण्ड, पश्चिमात्र, ( पुं० ) ॥ २१० ॥
कलधौत—सूक्ष्मशब्द, मुवर्णं, चाँदी, ( न० )		गृहपति—गृहस्थ, यज्ञ, द्रव्यका रक्षणा, ( पुं० )
कुमुद्वती—कमोदनी, आपधिभेद, या कुशराजाकी स्त्री, ( स्त्री० ) २०७		चक्राहुति—लंसी भुजाकरके भ्रमणा, पूर्णाहुति ( स्त्री० ) ॥ २११ ॥
कुमुद्वान्—बहुतकमोदनीवाला स्थल, ( त्रि० )		चन्द्रकान्त—मणिभेद, ( पुं० )
कुहरित—शब्द, कोयलका धोलना, मधुनसमयका शब्द, ( न० ) २०८		चन्द्रकान्त—रत्न, ( कमल ) ( न० )
कृष्णवृन्ता—पाटल, मापपर्णी-आ- पधि, ( स्त्री० ) ॥ २०९ ॥		चर्मण्वती—नदीभेद, केलावृक्ष, चा- रुक्ष, ( चरौजी ) ( स्त्री० ) ॥ २१२ ॥



आषाढपर्वतस्यान्तः कारुती नाम निम्नगा ।

तस्यां मासोपवासिन्यामपि चारुव्रता स्मृता ॥ २१३ ॥

चित्रगुप्तो भूतो दण्डधारे तस्य च लेखके ।

दिवाकीर्तिस्तु चाण्डाले नापिते काकवैरिणि ॥ २१४ ॥

दिवाभीत उल्लूके स्यात्कुत्सिते कुमुदाकरे ।

द्वीपवानब्धिनदयोर्द्वीपवत्यापगाभुवोः ॥ २१५ ॥

धूमकेतुर्वृहद्भानावुत्पातग्रहभेदयोः ।

नदीकान्तो जलनिधौ सिन्धुवारेऽपि हिज्जले ॥ २१६ ॥

नदीकान्ता लताजम्बूकाकजङ्घासु विश्रुता ।

नन्द्यावर्तः पुमान्वेश्मप्रभेदे तगरद्रुमे ॥ २१७ ॥

नागदन्तो गजरदे गृहान्निर्गतदारुणि ।

नागदन्ती तु कुम्भायां श्रीहस्तिन्यां च दृश्यते ॥ २१८ ॥

चारुव्रता-आषाढ पर्वतके भीतर कारुती नाम जो नदी है वहा एक-मासका व्रत करनेवाली स्त्री, (स्त्री०) ॥ २१३ ॥

चित्रगुप्त-धर्मराज, धर्मराजका लेखक, (पुं०)

दिवाकीर्ति-चाण्डाल, नाई, काकवैरी (स्त्री०) ॥ २१४ ॥

दिवाभीत-उल्लू पक्षी, कुत्सित (नि-दित), तालाब, (पुं०)

द्वीपवान्(वत्)-समुद्र, नद, (पुं०)

द्वीपवती-नदी, पृथ्वी, (स्त्री०) ॥ २१५ ॥

धूमकेतु-अग्नि, उत्पात, ग्रहभेद, (पुं०)

नदीकान्त-समुद्र, सिन्हाल वृक्ष, जलवेत (पुं०) ॥ २१६ ॥

नदीकान्ता-माधवीलता या श्यामालता, जामुन, काकजंघा या धुंधुची, (स्त्री०)

नन्द्यावर्त-भवानभेद, तगर-वृक्ष, (पुं०) ॥ २१७ ॥

नागदन्त-हाथीदाँत, घरसे बाहिर निकला हुवा काष्ठ, (पुं०)

नागदन्ती-जलकुंभी, हाथीसूँडा, (स्त्री०) ॥ २१८ ॥

अष्टाध्याये प्रतिक्षेपे निराकारे निराकृतिः ।

त्रिषु निस्तुपितं त्यक्ते त्वचाशून्ये लघूकृते ॥ २१९ ॥

निष्काशितो निर्गमिते धिक्तेप्युज्जिते त्रिषु ।

पञ्चगुप्तस्तु चार्वाकदर्शने कमठेऽपि च ॥ २२० ॥

गताप्तचेष्टिते ज्ञाते लाभे परिगतं मतम् ।

परिघातः समाधाताऽऽयुधयोरथ हायने ॥ २२१ ॥

परिवर्त्तो विनिमये कूर्मराजे पलायने ।

दन्ते सप्रसवे लाक्षारके पल्लवितं त्रिषु ॥ २२२ ॥

पारावतः कलरवे शैले मर्कटतिन्दुके ।

पारावती तु गोपालगीतेऽपि लवलीफले ॥ २२३ ॥

पारिजातः पारिभद्रे मन्दारेऽपि च पादपे ।

पाशुपतः पशुपतिदेवते वरुणुष्पके ॥ २२४ ॥

निराकृति—पाठका नहीं पडना, ब- जना, निकालना ( स्त्री० )	परिवर्त्त—बदला, कूर्मराज, भागना, ( पुं० )
निस्तुपित—झागाहुवा, त्वचाशून्य, छोटा मियाहुवा, ( त्रि० ) ॥२१९॥	पल्लवित—दियाहुवा, उत्पत्तिवाला, लाखसे रगाहुवा, ( त्रि० ) ॥२२२॥
निष्काशित—निकालाहुवा, धिक्कार कियाहुवा, लागाहुवा, ( त्रि० )	पारावत—बबूतर, पर्वत, मरुते- हुवा, ( पुं० )
पञ्चगुप्त—चार्वाकका शास्त्र, कमठ ( बडुवा ) ( पु० ) ॥ २२० ॥	पारावती—गोपालका गीत, हरपारेव- डीका फल, ( स्त्री० ) ॥ २२३ ॥
परिगत—गयाहुवा के प्राप्त होनेसे चेष्टित, जानाहुवा, लाभ, ( त्रि० )	पारिजात—नीप-वृक्ष, आम वृक्ष, कल्प-वृक्ष, ( पुं० )
परिघात—बहुन आघात ( चोट ), ह- थियार, वर्ष, ( पु० ) ॥ २२१ ॥	पाशुपत—नहादेव देवता है जिसका बह, अगस्तका पुष्प, ( पुं० ) २२४

पुरस्कृतं भवेदमकृताभ्यर्चितयोस्त्रिषु ।

शस्त्रे शिक्रे रिपुप्रस्त्रे स्त्रीकृतेऽपि त्रिषु स्मृतम् ॥ २२५ ॥

पुष्पदन्तस्तु दिग्भागनागविद्याधरान्तरे ।

प्रजापतिः क्षितिपतौ विरिञ्च्ये च प्रजापतिः ॥ २२६ ॥

त्रिषु प्रणिहितं स्यात् न्यस्त्रे लब्धे समाहिते ।

भवेत्प्रतिहतो द्विष्टे प्रतिस्वलितरुद्धयोः ॥ २२७ ॥

प्रतिपञ्चेतनायां स्यात्प्रतिपत्तावपि स्मृता ।

प्रतिपत्तिः पदप्राप्तिः प्रतिप्राप्तिश्च गौरवे ॥ २२८ ॥

प्रतिपत्तिः प्रबोधेऽपि संबित्प्रागल्भयोरपि ।

प्रतिकृतिः प्रतीकारे प्रतिविम्बे च पूजने ॥ २२९ ॥

प्रतिक्षिप्तं प्रतिहते प्रेषिते च निराकृते ।

प्रधूपितस्त्रिषु क्लिष्टे सूर्यगम्यदिशि त्रियाम् ॥ २३० ॥

पुरस्कृत-आगेकियाहुआ, पूजाकिया  
हुवा, ( त्रि० ) श्रेष्ठ, सींचाहुवा,

शत्रुवा प्रसाहुवा, अगीकारकियाहुवा,  
( त्रि० ) ॥ २२५ ॥

पुष्पदन्त-दिग्हस्ती, एक नाग, एक  
विद्याधर, ( पुं० )

प्रजापति-राजा, ब्रह्मा, ( पुं० )  
॥ २२६ ॥

प्रणिहित-स्थापनकियाहुवा, प्राप्त  
हुवा, सावधानहुवा, ( त्रि० )

प्रतिहत-द्वेषकियाहुवा, आसलहुवा,  
रुनाहुवा, ( त्रि० ) ॥ २२७ ॥

प्रतिपत्-बुद्धि, प्रतिपत्ति ( प्रगल्भ-  
ताआदि ) ( स्त्री० )

प्रतिपत्ति-पदप्राप्ति, प्रतिप्राप्ति, गौ-  
रव ( बडप्पन ) ( स्त्री० ) ॥ २२८ ॥

प्रतिपत्ति-ज्ञान, बुद्धि, प्रगल्भता ( निः-  
शकपना ) ( स्त्री० )

प्रतिकृति-द्वरकरना वा इलाज, मूर्ति,  
पूजन, ( स्त्री० ) ॥ २२९ ॥

प्रतिक्षिप्त-रोकाहुवाआदि, प्रेषाहुवा  
( भेजाहुवा ), निकालाहुवा, ( त्रि० )

प्रधूपित-श्रेष्ठकियाहुवा, ( त्रि० ) सू-  
यकेजानेवाली दिशा, ( स्त्री० )

॥ २३० ॥

प्रव्रजिता तु मुण्डीरीमांस्योस्त्रिषु तपस्विनि ।  
 भगवान्मुगते पूज्ये त्रिषु गौर्या तु योषिति ॥ २३१ ॥  
 भोगधान्नाश्रयानयोर्भोगवानहिभोगिनोः ।  
 मत्ता भोगवती नागपुरि नागसरित्यपि ॥ २३२ ॥  
 रङ्गमाता तु लाक्षायां कुट्टिन्यामपि दृश्यते ।  
 लक्ष्मीपतिर्नृपे विष्णौ पूगीफललवङ्गयोः ॥ २३३ ॥  
 वनस्पतिर्विना पुष्पं फलिवृक्षेऽपि पादपे ।  
 विजृम्भितं विकसितेऽप्युद्गते वेष्टिते त्रिषु ॥ २३४ ॥  
 विनिपातस्तु दैवादिब्यसने पतनेऽपि च ।  
 विवस्वांस्तु पुमान्वासरेश्वरे त्रिदिवेश्वरे ॥ २३५ ॥  
 विवक्षितं वक्तमिष्टे शोभनेऽपि विवक्षितम् ।  
 वैजयन्तो ध्वजे शक्रप्रासादे शरजन्मनि ॥ २३६ ॥

प्रव्रजिता—गोरखमुंजी, जटामांसी,  
 ( स्त्री० ) तपस्वी ( पुं० )

भगवा ( नृ ) त्—बुद्धदेव, ( पुं० )  
 पूज्य ( त्रि० )

भोगवती—गौरी, ( स्त्री० ) ॥ २३१ ॥  
 भोगवान्—नाश्रय, गाना, सर्प,  
 भोगी पुण्य ( पुं० )

भोगवती—नागपुरी, नागनदी, ( स्त्री० )  
 ॥ २३२ ॥

रंगमाता—लाल, कुट्टिनी, ( स्त्री० )

लक्ष्मीपति—राजा, विष्णु, सुपारी,  
 लौग, ( पुं० ) ॥ २३३ ॥

वनस्पति—पुष्पोंके विना फलनेवाला  
 वृक्ष, वृक्षमात्र, ( पुं० )

विजृम्भित—खिलाहुवा, उछलाहुवा,  
 लपेटाहुवा, ( त्रि० ) ॥ २३४ ॥

विनिपात—दैवआदिसे दुःख, पइना,  
 ( पुं० )

विवस्वान्—सूर्य, इंद्र, ( पुं० ) ॥ २३५ ॥

विवक्षित—कहनेको इच्छित, सुदर,  
 ( त्रि० )

वैजयन्त—ध्वजा, इंद्रका महल, स्वा-  
 मिकान्तिक, ( पुं० ) ॥ २३६ ॥

वैजयन्ती पताकायां जयन्ती वह्निमन्थयोः ।  
 व्यतीपातो योगभेदे महोत्पातेऽपमानने ॥ २३७ ॥  
 मतः शतधृतिः पाकशासने कमलासने ।  
 शुभ्रदन्ती मरुदन्ती दन्तिनीसुन्दरस्त्रियोः ॥ २३८ ॥  
 संख्यावान्पण्डिते पुंसि त्रिषु सङ्ख्यायुते मृते ।  
 सदागतिर्गन्धवाहे निर्वाणेऽपि सदीश्वरे ॥ २३९ ॥  
 समुद्रान्ता त्वनन्तायां कार्पासीपृक्कयोरपि ।  
 समुद्धतः समुत्कीर्णेऽप्यविनीते समुद्धतः ॥ २४० ॥  
 समाघातो वधे युद्धे समाधिस्थे समाहितः ।  
 त्रिषु न्यस्तप्रतिज्ञातसंसिद्धे यम आत्मनि ॥ २४१ ॥  
 समाहितं समाधाने व्यसनेऽपि समाहितम् ।  
 सरस्वान्नसिके सिन्धौ नदेऽप्यथ सरस्वती ॥ २४२ ॥

वैजयन्ती-इंद्रके महलकी पताका,  
 जैतपुष्पवृक्ष, अरडों-वृक्ष (स्त्री०)

व्यतीपात-विष्कंभआदियोगोंमेंसे ए-  
 कयोग, महाउत्पात, अपमान(पुं०)  
 ॥ २३७ ॥

शतधृति-इंद्र, मन्ना, (पुं०)

शुभ्रदन्ती-वायव्यकोणके हस्तीकी  
 हस्तिनी, सुंदर दाँतोवाली स्त्री,  
 (स्त्री०) ॥ २३८ ॥

संख्यावान्(घत्)-पंडित, (पुं०)  
 संख्यावाला, मृतक, (त्रि०)

सदागति-वायु, मुनि या अभि, धेष्ट,  
 ईश्वर, (पुं०) ॥ २३९ ॥

समुद्रान्ता-जवाँसा, कपास-वृक्ष,  
 शाकविशेष (असवरग) (स्त्री०)

समुद्धत-पिछोझाहुवा, उद्धत (अ-  
 नाडी) पुष्प, (पुं०) ॥ २४० ॥

समाघात-मारना, युद्ध, (पुं०)

समाहित-समाधिमें स्थित, स्थापन-  
 कियाहुवा, प्रतिज्ञाकियाहुवा, अ-  
 च्छेप्रकारसे सिद्ध, धर्मराज, आत्मा,  
 (त्रि०) २४१

समाहित-समाधान, स्थापनकरना,  
 (न०)

सरस्वान्(घत्)-रसिक, समुद्र, नद,  
 (पुं०)

सरस्वती-॥ २४२ ॥

नदीभेदे नदीदिव्यस्त्रीगोवाम्देवतागिरि ।

सुधासूतिः पुमान्यज्ञे कुरङ्गतिलकेऽपि च ॥ २४३ ॥

सूर्यभक्तो मतो बन्धुजीवे भास्करदैवते ।

सेनापतिरनीकाधिकृते हैमवतीसुते ॥ २४४ ॥

हिमारातिः खले सूर्येऽनले हैमवती तु या ।

गौर्या ह्रीतकीस्वर्णक्षीरीश्वेतवचासु सा ॥ २४५ ॥

तपचमम् ।

स्वादध्ययसितं जाते गते क्रुद्धेऽपि वेष्टिते ।

पुंसि श्रीरुण्ठवैकुण्ठयज्ञभेदेऽपराजितः ॥ २४६ ॥

जयन्ती पार्वतीविष्णुकान्तासु त्वपराजिता ।

वाच्यलिङ्ग पिपतिपन्पतनेच्छौ खगे पुमान् ॥ २४७ ॥

दृष्टेऽप्रलोकितं स्यात् लोक्रनाथेऽप्रलोकितः ।

उपधूपित आसन्नमरणे परिधूपिते ॥ २४८ ॥

सरस्वता नाम नदा, दिव्यस्त्री, गौ,

वाणकी अधिष्ठात्री देवता, वाणी

( स्त्री० )

सुधासूति-यज्ञ, मृगका तिलक, ( पु० )

॥ २४३ ॥

सूर्यभक्त-दुपहारियाका नाइ, सूर्यका

उपासक, ( पु० )

सेनापति-सेनाका स्वामी, स्वामिका

तिलक, ( पु० ) ॥ २४४ ॥

हिमाराति-खल ( खोला ), सूर्य,

अग्नि, ( पु० )

हैमवती-गवती, हरक, एकप्रकारकी

कटहली, सफेद वच ( स्त्री० )

॥ २४५ ॥

तपचम ।

अध्ययसित-जानाहुवा, गयाहुवा,

क्रुद्धहुवा, लपेगाहुवा ( त्रि० )

अपराजित-महादेव, विष्णु, यज्ञ

भेद, ( पु० ) ॥ २४६ ॥

अपराजिता-देवीभेद, पार्वती,

बोयल या विष्णुकान्ता, ( स्त्री० )

पिपतिप(तु)न्-पडनेकी ह-छावा

ला, ( त्रि० ) पक्षी, ( पु० ) ॥ २४७ ॥

अवलोकित-देसाहुवा, ( त्रि० )

लोकनाथ ( स्वामी ) ( पु० )

उपधूपित-ननदीकंमृत्युवाला, धूप

दियाहुवा ( पु० ) ॥ २४८ ॥

गणाधिपतिरित्येष पिनाकिनि विनायके ।

श्वेतायामप्यसौ वाच्यलिङ्गस्तु स्यादनिर्जिते ॥ २४९ ॥

सर्वमुक्तेऽभिनिर्मुक्तः सुप्ते यत्रास्तगो रविः ।

पृथिवीपतिरित्युक्तो भूपाले ऋषभौषधे ॥ २५० ॥

मूर्धाभिपिक्तः क्षमापाले मग्निणि क्षत्रियेऽपि च ।

यादसांपतिरम्भोधौ वरुणे यादसांपतिः ॥ २५१ ॥

वसन्तदूतश्चूतेऽसौ पिकपञ्चमरागयोः ।

वसन्तदूतीशब्दस्तु पादलावतिमुक्तेके ॥ २५२ ॥

तपष्टम् ।

अर्द्धपारावतश्चित्रकण्ठे च तित्तिरावपि ।

समुद्रनवनीतं स्यादमृते च सुधानिधौ ॥ २५३ ॥

इति विश्वलोचने तान्त्रवर्णः ॥

गणाधिपति—महादेव, गणेश, इडे-  
हली ( पुं० ) नहीं जाताहुवा,  
( नि० ) ॥ २४९ ॥

अभिनिर्मुक्त—सर्वेष्टे छुद्रा, जिसके  
सूतेहुए सूर्य अस्त होजाय वह,  
( पुं० )

पृथिवीपति—राजा, ऋषभनाम औ-  
पधि, ( पु० ) ॥ २५० ॥

मूर्धाभिपिक्त—राजा, मंत्री, शत्रिय,  
( पुं० )

यादसांपति—समुद्र, वरुण, ( पुं० )  
॥ २५१ ॥

वसन्तदूत—आम्र, कोयल, पंचम-  
राग, ( पुं० )

वसन्तदूती—पादलपुष्प, माधवी-पु-  
ष्पलता, ( स्त्री० ) ॥ २५२ ॥

तपष्टम् ।

अर्द्धपारावत—वित्रकंठ ( आधा व-  
भूतके समान-पक्षी ) चीतर-पक्षी-

समुद्रनवनीत—अमृत, चंदमा,  
( न० ) ॥ २५३ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भापाटीकामें  
तान्त्रवर्ण समाप्त हुवा ॥

## अथ धान्तवर्गः ।

धेकम् ।

धः स्याच्छिलोच्चये भीतत्राणे धं मङ्गलेऽपि धम् ।

यद्वितीयम् ।

अर्थः प्रयोजने चित्ते हेत्वभिप्रायवस्तुषु ॥ १ ॥

शब्दाभिधेये विषये स्यान्निरृत्तिप्रकारयो ॥ २ ॥

आस्था त्वालम्बनापेक्षायत्नास्थानेषु दृश्यते ।

कन्धा तु मृत्तिकाभिधौ कन्धा प्रावरणान्तरे ॥ ३ ॥

कुथः स्त्रीपुंसयोर्वर्णकम्बले पुंसि बहिषु ।

कोथस्तु नेत्ररुग्भेदे मथने शटितेऽपि च ॥ ४ ॥

क्वाथः स्याद्यसने पुंसि द्रवनिष्पाकटु स्वयो ।

गाथा वृत्तेऽपि वाग्भेदे ग्रन्थस्तु धनशास्त्रयो ॥ ५ ॥

ग्रन्थः स्याद्ग्रन्थनाया च द्वान्त्रिंशद्दर्शननिर्मितौ ।

ग्रन्थिर्ना पर्वणि ग्रन्थिपर्णरुग्भिदि च स्त्रियाम् ॥ ६ ॥

अथ धान्तवर्गः ।

धेकम् ।

ध-पर्वत (पु०) भयसे रक्षा, मङ्गल,  
( न० )

यद्वितीयम् ।

अर्थ-प्रयोजन (मतलब) चित्त, कारण,  
अभिप्राय, वस्तु, ॥ १ ॥ शब्दोंका  
अर्थ, विषय, निरृत्ति, प्रकार (पु०)  
॥ २ ॥आस्था-आलम्बन (आश्रय), अ  
पेक्षा, यत्न, स्थान, ( स्त्री० )कन्धा-मृत्तिकाकी भीत, ओढनेका  
बन्ध ( स्त्री० ) ॥ ३ ॥कुथ-वर्ण (रंग), कम्बल (स्त्री०पु०)  
मयूर (पु०)कोथ-नेत्ररोगका भेद, मथना, दुःख  
(पु०) ॥ ४ ॥क्वाथ-व्यसन, पतली निष्पाव, दुःख,  
(पु०)

गाथा-छन्द-भेद, वाणीभेद, ( स्त्री० )

ग्रन्थ-धन, शास्त्र, ॥ ५ ॥ ग्रथना  
(गूँथना), दत्तीस ३२ वर्णोंकी  
रचना, (पु०)ग्रन्थि-पोरी, (पु०) गठिवन-वृक्ष,  
रोगभेद, ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥



कौटिल्ये बन्धभेदे च तीर्थे शास्त्रावतारयोः ।  
 पुण्यक्षेत्रमहापात्रोपायोपाध्यायदर्शने ॥ ७ ॥  
 ऋषिजुष्टे जले यज्ञे जातौ च वनितार्त्तवे ।  
 नीलीसूक्ष्मैलयोस्तुत्या तुत्योमौ तुत्यमञ्जने ॥ ८ ॥  
 दुःस्थन्तु दुर्गते मूर्खे पार्थः स्यात्ककुभेऽर्जुने ।  
 पाथो दिवाकरे पुंसि पाथः पयसि न द्वयोः ॥ ९ ॥  
 पृथुर्नृपे कृष्णजीरे वाप्यां स्त्री महति त्रिषु ।  
 सानौ मानेऽस्त्रियां प्रस्थः स्यादप्युन्मितवन्तुनि ॥ १० ॥  
 प्रोधः पन्थेऽधघोणायामस्त्री ना कटिगर्भयोः ।  
 वीथी गृहत्तटीपक्कौ नात्परूपरुवर्त्मनोः ॥ ११ ॥  
 मन्थो मन्थानदण्डे स्याद्वादशात्मनि साक्तवे ।  
 मन्थो नयनरोगेऽपि यूथं तिर्यक्कये चये ॥ १२ ॥

तीर्थ-कुटिलता, बन्धभेद, शास्त्र, अ-  
 वतार, पुण्यक्षेत्र, बडा पात्र, उपाय,  
 पढानेवाला, दर्शन, ॥ ७ ॥  
 ऋषियोंका सेविन जल, यज्ञ, जाति,  
 स्त्रीका रज, ( न० )

तुत्या-नीली-औषधि, छोटी इला-  
 यची, ( स्त्री० ) तुत्य-अग्नि ( पुं० )

तुत्य-अजन ( न० ) ॥ ८ ॥

दुःस्थ-दु ससे गयाहुवा, मूर्ख, ( पु० )

पार्थ-बोह-रक्ष, अर्जुन-पादुपुन,  
 ( पुं० )

पाथ-सूर्य, ( पुं० ) पाथस्त्र-जल,  
 ( न० ) ॥ ९ ॥

पृथु-पृथु-राजा, कालाजीरा, ( पु० )  
 वावरी ( स्त्री० ), महान् ( वज्र )  
 ( त्रि० )

प्रस्थ-पर्यतकी समभूमि, ६४ तोला  
 प्रमाण, ( पुं० न० ) उन्मान क-  
 रीहुई वस्तु ( त्रि० ) ॥ १० ॥

प्रोध-बटाऊ ( पु० ) अधरी ना-  
 सिमा, ( पुं० न० ) कटि, गर्भ,  
 ( पु० )

वीथी-घरका अग, पक्कि, नाट्यरा  
 रूप, मार्ग, ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥

मन्थ-दधिआदि मथनरा दंड ( रई ),  
 सूर्य, सकु विकार या समूह, नेत्र-  
 रोग, ( पु० )

यूथ-गजातीय तिर्यङ् जातियोंना  
 समूह, समूहमात्र ( पुं० न० )  
 ॥ १२ ॥

अस्त्री यूथी तु मागध्यां पुष्पभेदे कुरण्टके ।

रथस्तु स्यन्दने काये वेतसे चरणेऽपि च ॥ १३ ॥

सार्धः स्याद्वणिजां वृन्दे वृन्दमात्रेऽपि दृश्यते ।

सिक्थं नील्यां मधूच्छिष्टे सिक्थो नौदनसम्भवे ॥ १४ ॥

संस्था नाशे व्यवस्थायां व्यक्तिसादृश्ययोः स्थितौ ।

संस्था क्रतौ समाप्तौ च चरे च निजराष्ट्रगे ॥ १५ ॥

थतृतीयम् ।

अतिथिः स्यात्प्रावुणके कोपेपि कुशपुत्रके ।

त्रिष्वव्यथो व्यथाहीने पथ्यायां पन्नगेऽव्यथः ॥ १६ ॥

अश्वत्थः पूर्णिमायां च गर्दभाण्डे च पिप्पले ।

उद्रथस्ताम्रचूडेऽपि महेन्द्रे महकामुके ॥ १७ ॥

उन्माथः कूटयन्त्रे स्यादपि मारणघातयोः ।

उपस्थस्तु भगे लिङ्गेऽप्युत्तङ्गेऽपि गुदे पुमान् ॥ १८ ॥

' कायस्थस्तु नृणां जातिप्रभेदे परमात्मनि ।  
 कायस्था स्याद्द्वयस्थायां पथ्यायां कायगे त्रिषु ॥ १९ ॥  
 गोम्रन्थिस्तु करीषे स्याद्गोष्ठे गोजिह्विकौषधौ ।  
 दमथस्तु दमे दण्डे निर्ग्रन्थः क्षपणेऽधने ॥ २० ॥  
 बालिशेऽपि निशीथस्तु निशामात्रार्द्धरात्रयोः ।  
 प्रमथः शङ्करगणे पथ्यायां प्रमथा तथा ॥ २१ ॥  
 वयःस्था शाल्मलीपथ्याकाकोल्यामलकीषु च ।  
 ब्राह्मीत्रुटिगुडूचीषु वयस्थस्तरुणे त्रिषु ॥ २२ ॥  
 मन्मथः कामचिन्तायां कामदेवकपित्थयोः ।  
 वमथुः पुंसि वमने मातङ्गकरशीकरे ॥ २३ ॥  
 वरूथो रथगुप्तौ ना वरूथं चर्भवेऽमनि ।  
 विदथो योगिक्वतितनोः शमथः शान्त्यमात्ययोः ॥ २४ ॥

कायस्थ-मनुष्योंकी जातिका भेद  
 ( कायथ ), परमात्मा, ( पुं )

कायस्था-जवान उग्रमें स्थित स्त्री,  
 हरड, ( स्त्री० ) शरीरमें स्थित  
 ( त्रि० ) ॥ १९ ॥

गोम्रन्थि-आरना, गोबोंका ठान,  
 गोभी या गावजवी-औषधि, ( पुं०  
 स्त्री० )

दमथ-इंदियोंका रोगना, दण्ड, ( पुं० )  
 निर्ग्रन्थ-मुनि, निर्धन, ॥ २० ॥  
 मूख, ( पुं० )

निशीथ-रात्रिमात्र, अर्द्धरात्र, ( पुं० )  
 प्रमथ-महादेवके गण, ( पुं० ) प्र-  
 मथा, ( हरड ) स्त्री० ॥ २१ ॥

वयःस्था-सेमलका-वृक्ष, हरड, क-  
 कोली, आँबला, बाझो, छोटी इला-  
 यची, गिलोय, ( स्त्री० ) वयःस्थ-  
 जवान, ( त्रि० ) ॥ २२ ॥

मन्मथ-कामचिन्ता, कामदेव, कै-  
 थका-वृक्ष, ( पुं० )

वमथु-वमन, हस्तीकी सूंडके जल-  
 कण, ( पुं० ), ॥ २३ ॥

वरूथ-रथकी रक्षाके लिये लोहादि-  
 मयपरदा, ( पुं० ) चर्मका डेरा  
 ( तंत्र ) ( न० )

विदथ-योगी, पंडित, ( पुं० )  
 शमथ-शान्ति, संप्री, ( पुं० ) ॥ २४ ॥

पङ्गुग्रन्था तु वचाशब्दोः पङ्गुग्रन्थः करञ्जान्तरे ।  
 समर्थस्तुद्भटे शक्ते सम्बद्धार्थे हिते त्रिपु ॥ २५ ॥  
 सर्वार्थसिद्धे सिद्धार्थः सिद्धार्था सितसर्पपे ।  
 क्षवधुः पुंसि कासे स्याच्छिक्कायामपि सम्मत ॥ २६ ॥

धचतुर्थम् ।

अनीकस्थो रणखले चिह्नेषु भटमर्दने ।  
 राजरक्षिषु मातङ्गशिक्षणातिविचक्षणे ॥ २७ ॥  
 भवेदितिकथा आम्यकथाप्रनष्टधर्मयोः ।  
 वाच्यवद्दशमीस्यः स्यात्स्थविरक्षीणरागयोः ॥ २८ ॥  
 वानप्रस्थो मधुष्ठीले तृतीयाश्रमिर्किञ्चुके ।

धपंचमम् ।

भटे पुंस्यप्रतिरथं यात्रायां सान्नि मङ्गले ॥ २९ ॥

इति विश्वलोचने थान्तवर्गः ॥

पङ्गुग्रन्था-वच, कचूर, ( स्त्री० ) पङ्गु-

ग्रन्थ, करञ्जुवाभेद, ( पुं० )

समर्थ-उद्भट, शक्तिमान्, सम्यक्  
 अर्थ, हितकारी, ( त्रि० ) ॥ २५ ॥

सिद्धार्थ-बुद्धदेव, ( पु० ) सिद्धार्था-  
 सफेद-विरसो, ( स्त्री० )

क्षवधु-खोँसी, छीरु, ( पुं० ) ॥ २६ ॥

धचतुर्थम् ।

अनीकस्थ-रणभूमि, चिह्न, योद्धाका  
 मर्दन, राजाकी रक्षा करनेवाला,  
 हस्तीकी शिक्षामे निपुण, ( पुं० )

॥ २७ ॥

इतिकथा-व्यर्थभाषण, नष्टधर्म,  
 ( स्त्री० )

दशमीस्य-बुद्धा, राग ( छेद ) रहित,  
 ( पु० ) ॥ २८ ॥

वानप्रस्थ-मधुवा, तीसरा आश्रम, के  
 ( टे ) सू, ( पुं० )

धपंचमम् ।

अप्रतिरथ-योद्धा, ( पुं० ) यात्रा,  
 सामवेद, मंगल, ( न० ) ॥ २९ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटी-  
 कामे थान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ दान्तवर्गः ।

दंक् ।

दः शुद्धौ देवने दास्तु दातरि च्छेददानयोः ॥ १ ॥

द्वितीयम् ।

- अन्दुः स्त्रियामलङ्कारे वेदबंधनवस्तुनोः ।  
 अव्दः संवत्सरे भेषे मुस्तके पर्वतान्तरे ॥ २ ॥  
 कन्दोऽस्त्री शूरणे वृक्षमूले पुंसि पयोधरे ।  
 कुन्दो माष्ये पुमांश्चक्रे अमौ निधिसुरद्विषोः ॥ ३ ॥  
 विष्णुभ्रातरि रोगे च मतः शस्त्रान्तरे गदा ।  
 छद्ः पत्रे पत्रे च अन्धिपर्णतमालयोः ॥ ४ ॥  
 छन्दोऽभिप्रायवशयोर्धीदा कन्यामनीपयोः ।  
 नदी सरित्यपि नदः सिन्धौ शोणाविनादयोः ॥ ५ ॥

अथ दान्तवर्गः ।

दंक् ।

द-शुद्धि, क्रीडा, ( पु० )

दा-दाता, छेदन, दान, ( पुं० ) ॥ १ ॥

द्वितीय ।

अन्दु-आभूषण, वेद, बन्धी ( स्त्री० )

अव्द-संवत्सर, भेष, नागरजोषा, प-  
योधभेद, ( पु० ) ॥ २ ॥कन्द-जनीषंद, वृक्षो जड, ( पुं० )  
न० ) नागरजोषा वा भेष ( पुं० )कुन्द-कुन्द पुष्पवृक्ष, चक्र, भ्रमगा,  
निधिभेद, एक रासस, ( पुं० )  
॥ ३ ॥

गद-विष्णुका भ्राता, रोग, ( पुं० )

गदा-शास्त्रभेद, ( स्त्री० )

छद्-पत्रा, पक्षीको पर, गटिवन आं-  
पधि, तमालवृक्ष ( पुं० ) ॥ ४ ॥

छन्द-अभिप्राय, वश, ( पुं० )

धीदा-कन्या, पुद्धि, ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥

नदी-नदी, ( स्त्री० ) नद-विष्णु,  
शोण-नद, भेदीका वन्द ( पुं० )

नन्दिः शिवप्रतीहारे द्यूतभाण्डमिदोर्मुदि ।  
 नन्दा मणिकसम्पत्त्योर्निन्दा कुत्साऽपवादयोः ॥ ६ ॥  
 पदं वाक्ये प्रतिष्ठायां व्यवसायाऽपदेशयोः ।  
 पादात्तच्चिह्नयोः शब्दे स्थानत्राणाद्भिवस्तुपु ॥ ७ ॥  
 पादोऽस्त्री चरणे मूले तुरीयांशेऽपि दीधितौ ।  
 शैलप्रत्यन्तशैले ना विदा ज्ञाने मतावपि ॥ ८ ॥  
 विन्दुः स्यादन्तदशने शुके वेदितृविप्रुषोः ।  
 वेदिरङ्गुलिमुद्रायां बुधे संस्कृतभूतले ॥ ९ ॥  
 भन्दं(द्रं) शर्मणि कल्याणे भेदो द्वैधविशेषयोः ।  
 विदारणे चोपजापे संपूर्वः सिन्धुसङ्गमे ॥ १० ॥  
 मदो मृगमदे मधे दानमुद्गर्वरेतसि ।  
 महापूर्वो मतङ्गे स्यान्मदी कृपकवस्तुनि ॥ ११ ॥

नन्दि-शिवका पीलिया, जूवा, भांड  
 ( पात्र ) भेद, ध्यानंद, ( पुं०न० )  
 नन्दा-बडा पडा, सम्पत्ति, ( स्त्री० )  
 निन्दा-कुत्सा ( निंदा ), अपवाद  
 ( घुरा कहना ) ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥  
 पद-वाक्य, प्रतिष्ठा, व्यवसाय ( उ-  
 द्यम ), मित्र, पाँव, पैड, शब्द,  
 स्थान, रक्षा, बख, ( न० ) ॥७॥  
 पाद-चरण ( पाँव ), वृक्षकी जड़,  
 चौथा हिस्सा, किरण, पर्वत, पर्वत-  
 के समीप छोटा पर्वत, ( पुं० )  
 विदा-ज्ञान, बुद्धि, ( स्त्री० ) ॥ ८ ॥  
 विन्दु-दाँतसे फियाहुवा घाव, धीर्य,

जाननेवाला, ( त्रि० ) जल आ-  
 दिकी बूँद ( पुं० )  
 वेदि-भंगूठी, पंडित, संस्कार कीहुई  
 पृथ्वी, ( पुं० स्त्री० ) ॥ ९ ॥  
 भन्द (द्रं)-मुख, कल्याण, ( न० )  
 भेद-द्विधाभाव, विशेष, फाड़ना, पु-  
 रणोंके मेलको फोड़ना, ( पु० )  
 संभेद-समुद्र या नदियोंका मिलना,  
 ( पुं० ) ॥ १० ॥  
 मद-वस्तुही, मदिरा, हस्तीके मदसे  
 शिरनेका जल, हर्ष, गर्व, वीर्य, ( पुं० )  
 महामद-हस्ती, ( पुं० ) मदी-खेती  
 करनेवालेकी वस्तु ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥

मन्दः सैरे खले मन्दरते मूर्खाल्परोगिषु ।  
 अभाग्येऽपि त्रिषु पुमान् गजजात्यन्तरे शनौ ॥ १२ ॥  
 मृद्धतीक्ष्णे त्रिषु क्षुण्णे रदो दन्ते विलेखने ।  
 शादस्तु कर्दमे शप्पे सूदः स्याद्यज्ञने गुणे ॥ १३ ॥  
 स्वादुर्मिष्टे मनोज्ञे च स्वेदः खेदनघर्म्मयोः ।  
 हृच्चित्तबुक्कयोः क्लीवं क्षोदश्चूर्णेऽपि पेपणे ॥ १४ ॥

दत्ततीयम् ।

अङ्गदो वालिपुत्रे स्यात्केयूरे त्वङ्गदं मतम् ।  
 भवेद्दक्षिणदिग्दन्तीदन्तिन्यां तु मताऽङ्गदा ॥ १५ ॥  
 अस्त्री सद्स्व्यान्तरे मांसकीले शैलेऽपि नाऽर्बुदः ।  
 अर्द्धेन्दुरर्द्धचन्द्रे स्याद्गलहस्तनखाङ्कयोः ॥ १६ ॥

मन्द-यथेच्छ, खोटा, मंद छांसंग, मूर्ख, अल्प, रोगी, भाग्यहीन (त्रि०) हस्ती-भेद, शनैधर ( पुं० ) ॥ १२ ॥	क्षोद-चूर्ण, पीसना, ( पुं० ) ॥१४॥ दत्ततीय ।
मृदु-कोमल, मुंदर, ( त्रि० ) रद-दाँत, काटना, ( पु० )	अंगद-वालिका पुत्र, ( पुं० ) वाजू- बंद, ( न० ) दक्षिणदिशाका हस्ती, ( पुं० )
शाद-शीच, छोटी घास आदि, ( पुं० ) सूद-अंजन ( तरकारी ), रसोश्मा, ( पुं० ) ॥ १३ ॥	अंगदा-दक्षिणदिक् हस्तीकी हस्तिनी ( स्त्री० ) ॥ १५ ॥
स्वादु-दधिकारी भोजन, मुदर, ( त्रि० ) स्वेद-पसीना, धूप, ( पु० )	अर्बुद-सरत्या ( अरब ), मांसकील, ( पुं० न० ) एक पर्वत, ( पुं० )
हृत्-चित्त, हृदयमें कमलाकार मांस, ( न० )	अर्द्धेन्दु-आधाचंद्रमा, गलहस्त ( प्रो- वापर हाथ देकर निकालना ), नखों करके शरीरपर चिह्न ( पुं० ) ॥१६॥

नन्दिः शिवप्रतीहारे धूतभाण्डभिदोर्मुदि ।

नन्दा मणिकसम्पत्त्योर्निन्दा कुत्साऽपवादयोः ॥ ६ ॥

पदं वाक्ये प्रतिष्ठायां व्यवसायाऽपदेशयोः ।

पादात्तच्चिह्नयोः शब्दे स्थानत्राणाद्धिवम्बुपु ॥ ७ ॥

पादोऽस्त्री चरणे मूले तुरीयांशेऽपि दीधितौ ।

शैलप्रत्यन्तशैले ना विदा ज्ञाने मतावपि ॥ ८ ॥

विन्दुः स्याद्दन्तदशने शुक्रे वेदितृविप्रुयोः ।

वेदिरङ्गुलिमुद्रायां बुधे संस्कृतभूतले ॥ ९ ॥

भन्दं(द्रं) शर्मणि कल्याणे भेदो द्वैधविशेषयोः ।

विदारणे चोपजापे संपूर्वः सिन्धुसङ्गमे ॥ १० ॥

मदो मृगमदे मघे दानमुद्गर्वरेतसि ।

महापूर्वो मतङ्गे स्यान्मदी कृपकवस्तुनि ॥ ११ ॥

नन्दि—शिवका पौलिया, ज्वा, भाङ्

( पात्र ) भेद, आनन्द, ( पुं०न० )

नन्दा—बग घसा, सम्पत्ति, ( स्त्री० )

निन्दा—कुत्सा ( निंदा ), अपवाद

( घुरा बहना ) ( स्त्री० ) ॥ ६ ॥

पद—वाक्य, प्रतिष्ठा, व्यवसाय ( उ-

द्यम ), मिस, पाँव, पैड, दान्द,

स्थान, रक्षा, बल, ( न० ) ॥ ७ ॥

पाद—चरण ( पाँव ), यज्ञकी जड़,

चौथा हिस्सा, किरण, पर्वत, पर्वत-

के समीप छोटा पर्वत, ( पुं० )

विदा—ज्ञान, बुद्धि, ( स्त्री० ) ॥ ८ ॥

विन्दु—दाँठे कियाहुवा घाव, दीर्य,

जाननेवाला, ( त्रि० ) जल आ-

दिकी बुँद ( पुं० )

वेदि—अँगूठी, पंडित, संस्कार कीहुई

पृथ्वी, ( पुं० स्त्री० ) ॥ ९ ॥

भन्द (द्रं)—मुख, कल्याण, ( न० )

भेद—द्विधाभाव, विशेष, फाड़ना, पु-

र्योंके मेलको फोड़ना, ( पु० )

संभेद—समुद्र या नदियोंका मिलना,

( पुं० ) ॥ १० ॥

मद—बस्तूरी, मदिरा, हलीके मदसे

शिरनेका जल, हर्ष, गर्व, वीर्य, ( पुं० )

महामद—हस्ती, ( पुं० ) मदी—खेती

करनेवालेकी वस्तु ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥



मन्दः खैरे खले मन्दरते मूर्खाल्परोगिषु ।  
 अभागेऽपि त्रिषु पुमान् गजजात्यन्तरे शनौ ॥ १२ ॥  
 मृद्वतीक्षणे त्रिषु श्लक्ष्णे रदो दन्ते विलेखने ।  
 शादस्तु कर्दमे शप्ते सूदः स्याद्यज्ञने गुणे ॥ १३ ॥  
 स्वादुर्मिष्टे मनोज्ञे च स्वेदः स्वेदनघर्मयोः ।  
 हृच्चित्तबुक्कयोः क्लीबं क्षोदश्चूर्णेऽपि पेपणे ॥ १४ ॥

दत्ततीयम् ।

अङ्गदो वालिपुत्रे स्यात्फेयूरे त्वङ्गदं मतम् ।  
 भवेद्दक्षिणदिग्दन्तीदन्तिन्या तु मताऽङ्गदा ॥ १५ ॥  
 अस्त्री सद्ख्यान्तरे मांसकीले शैलेऽपि नाऽर्बुदः ।  
 अर्द्धेन्दुरर्द्धचन्द्रे स्याद्गलहस्तनखाङ्कयोः ॥ १६ ॥

<p>मंद-यथेच्छ, खोटा, मंद स्त्रीसग,          मूर्ख, अल्प, रोगी, भाग्यहीन          (त्रि०) हस्ती-भेद, शनैश्वर ( पुं० )          ॥ १२ ॥          मृदु-कोमल, सुंदर, ( त्रि० )          रद-दाँत, काटना, ( पु० )          शाद-नीच, छोटी घास आदि, ( पुं० )          सूद-बंजन ( तरकारी ), रसोदया,          ( पुं० ) ॥ १३ ॥          स्वादु-रुचिशीर्ष भोजन, सुदर, ( त्रि० )          स्वेद-पसीना, धूप, ( पु० )          हृत्-चित्त, हृदयमें कमलाकार मांस,          ( न० )</p>	<p>क्षोद-चूर्ण, पीसना, ( पुं० ) ॥ १४ ॥          दत्ततीय ।          अंगद-वालिका पुत्र, ( पुं० ) वाङ्-          वंद, ( न० ) दक्षिणदिशाका हस्ती,          ( पुं० )          अंगदा-दक्षिणदिक् हस्तीकी हस्तिनी          ( स्त्री० ) ॥ १५ ॥          अर्बुद-सर्प्या ( अरब ), मांसकील,          ( पु० न० ) एक पर्वत, ( पुं० )          अर्द्धेन्दु-आधाचंद्रमा, गलहस्त ( प्री-          वापर हाथ देकर निकालना ), नखों          करके शरीरपर चिह्न ( पु० ) ॥ १६ ॥</p>
--	---

अर्द्धेन्दुः स्यादतिप्रौढस्त्रीगुह्याङ्गुलियोजने ।

आक्रन्दो दारुणरणे मित्रे तातारिरोदने ॥ १७ ॥

पार्ष्णिग्राहात्परो राजा यस्तस्मिन्नारदेऽपि च ।

सुगन्धिमुदि वामोद आस्पदं पदकृत्ययोः ॥ १८ ॥

स्त्री ककुत् ककुदोऽप्यस्त्री वृषाङ्गे राजलक्ष्मणि ।

शृङ्गे श्रेष्ठे कपर्दस्तु वटे शम्भुजटाटयोः ॥ १९ ॥

कर्कन्दुः साक्षरे शाक्रे वारिजाले गुदामये ।

उत्क्षिप्तिकायां कर्णान्दुः कर्णपाल्यामपि स्त्रियाम् ॥ २० ॥

कामदा धेनुकायां स्याद्वाच्यवत्कामदोग्धरि ।

कुमुदो नागदिमागदैत्यान्तरवनौकसि ॥ २१ ॥

कुमुदं कैवे क्लीवं कृपणे कुमुदन्यवत् ।

कुसीदिके कुसीदः स्यात्कुसीदं वृद्धिजीवने ॥ २२ ॥

अति जवान स्त्रीकी योनिमें अगुलि  
जालना, ( पुं० )  
आक्रन्द-भयकर रण, मित्र, भ्राता,  
शत्रुका रोना ॥ १७ ॥ अपने पा-  
सके राजदबानेवाले राजासे अन्य  
राजा, नारद, ( पुं० )  
आमोद-सुगन्धि, हर्ष, ( पुं० )  
आस्पद-पद, कृत्य, ( न० ) ॥ १८ ॥  
ककुत् ककुद-( स्त्री० ) कृपकी घृह,  
राजचिह्न ( ध्वजाआदि ), शृंग,  
श्रेष्ठ, ( पुं० न० )  
कपर्द-वट-वृक्ष, महादेवकी जटा,  
( पुं० ) ॥ १९ ॥

कर्कन्दु-साक्षर, साकभेद, कमल,  
गुदरोग, ( पु० )  
कर्णान्दु-उत्क्षिप्तिका ( कर्णभूषण-  
मात्र ), कर्णपाली ( कानकी वाली )  
( स्त्री० ) ॥ २० ॥  
कामदा-गौ, ( स्त्री० ) यथेच्छ दे-  
नेवाला, ( त्रि० )  
कुमुद-नाग, दिग्गहस्त्री, दैत्यभेद,  
वनमें रहनेवाला, ( पुं० ) ॥ २१ ॥  
कुमुद-कमोदनी, ( न० )  
कुमुत्-कृपण, ( त्रि० )  
कुसीद-व्याज लेनेवाला ( पुं० )  
वृद्धिजीवन ( व्याज ) ( न० ) ॥ २२ ॥

कौमुदः कार्तिके ज्योत्स्नापर्वणोरपि कौमुदी ।  
 ऋव्यात्क्रव्यादवत्पुंसि मांसभक्षकरक्षसोः ॥ २३ ॥  
 गोविन्द इन्द्रावरजे गवाध्यक्षे च गीष्पतौ ।  
 गोष्पदं गोपदश्चभ्रे गवां च गतिगोचरे ॥ २४ ॥  
 बलाहकोऽपि जलदो जलदो मुस्तकेऽपि च ।  
 जीवदो द्विपि वैद्ये च तरत्कारण्डवे ह्वे ॥ २५ ॥  
 तोयदो मुस्तके भेधे तोयदं तु घृतं मतम् ।  
 दरद्भये प्रपातेऽद्रौ दायादो ज्ञातिपुत्रयोः ॥ २६ ॥  
 दारदः पारदे सिन्धौ हिङ्गुले गरलान्तरे ।  
 दृपत्पेपणपापाणपट्टपापाणयोः स्त्रियाम् ॥ २७ ॥  
 धनदो दातरि श्रीदे क्रीडामात्ये तु नर्मदः ।  
 नर्मदा नर्मदायिन्यां रेवायामपि नर्मदा ॥ २८ ॥

कौमुद-कार्तिक-भास, (पुं०)  
 कौमुदी-चौदका चौदना, पर्व, (स्त्री०)  
 ऋव्यात्-ऋव्याद-मांसभक्षी, रा-  
 क्षस, (पुं०) ॥ २३ ॥  
 गोविन्द-श्रीकृष्ण, गौवोंका स्वामी,  
 बृहस्पति (पुं०)  
 गोष्पद-गौकी पैड़, गौवोंकी गति  
 आदि (न०) ॥ २४ ॥  
 जलद-मेघ, नागरमोघा, (पुं०)  
 जीवद-शत्रु, वैद्य, (पुं०)  
 तरद-करडुवा पक्षी, पुंढेरी-पक्षी  
 (पुं०) ॥ २५ ॥

तोयद-नागरमोघा, मेघ, (पुं०)  
 घृत, (न०)  
 दरद्-भय, पर्वतमें गिरनेका स्थान,  
 पर्वत, (पुं०)  
 दायाद-अपनी सातवी पीढी भीत-  
 रका-मनुष्य, पुत्र (पुं०) ॥ २६ ॥  
 दारद-पारा, समुद्र, हींगल, विपभेद,  
 (पुं०)  
 दृपद-पीसनेके लिये पत्थरका पट्टा,  
 पत्थर, (स्त्री०) ॥ २७ ॥  
 धनद-दातार, कुवेर, (पुं०)  
 नर्मद-क्रीडाका मंत्री, (पुं०)  
 नर्मदा-क्रीडा करानेवाली स्त्री, रेवा-  
 नदी (स्त्री०) ॥ २८ ॥

नलदं मकरन्दे स्यान्मांसिकोशीरयोरपि ।  
 निर्वादस्तु परीवादपरनिन्दितवादयोः ॥ २९ ॥  
 निषादः खरभेदेऽपि निषादः पञ्चपचेऽपि च ।  
 प्रणादोऽस्युच्चशब्दे स्यात्प्रणादः कर्णरुग्भिदि ॥ ३० ॥  
 प्रमदा मत्तकाशिन्या प्रमदो गर्वितामुदि ।  
 प्रसादस्तु प्रसन्नत्वे काव्यालङ्करणान्तरे ॥ ३१ ॥  
 स्वास्थ्ये चानुग्रहे चाथ प्रहादः प्रणदेऽसुरे ।  
 प्रासादः पुंसि देवस्य नरदेवस्य वाऽऽलये ॥ ३२ ॥  
 कन्याया धरदा शान्ते प्रसन्ने वरदस्त्रिपु ।  
 भसत्पुस्येव काले स्याद्भसन्मांसे प्रभासुरे ॥ ३३ ॥  
 मर्यादा तु स्थितौ सीम्नि कूले कूले च वारिधेः ।  
 माकन्दस्तु रसाले स्यान्माकन्द्यामलनीफले ॥ ३४ ॥

नलद-पुष्परस, जटामासी औषधि,  
 शस, ( न० )

निर्वाद-अपवाद, दूसरोसे निन्दित  
 वाद, ( पु० ) ॥ २९ ॥

निषाद-मानेका खरभेद, चाडाल  
 भील आदि नीच, ( पुं० )

प्रणाद-अति ऊँचा शब्द, कानरो-  
 यका भेद ( पु० ) ॥ ३० ॥

प्रमदा-गुणवती स्त्री, ( स्त्री० )

प्रमद-गर्वितास्त्रीका, आनन्द, ( पुं० )

प्रसाद-प्रसन्नत्व, काव्य-अलंकार,

॥ ३१ ॥ स्वस्थता, अनुग्रह ( कृपा )  
 ( पु० )

प्रहाद-ऊँचा शब्द, असुर, ( पुं० )

प्रासाद-देवताका मंदिर, राजाका  
 महल, ( पु० ) ॥ ३२ ॥

वरदा-कन्या, ( स्त्री० ) वरद-शा-  
 तचित्त, प्रसन्न, ( त्रि० )

भसद्-वाल, ( पुं० ) मांस, ( न० )  
 प्रकाशवान ( त्रि० ) ॥ ३३ ॥

मर्यादा-स्थिति, सीमा, तीर, समुद्र-  
 का तीर, ( स्त्री० )

माकन्द-आम्र, ( पुं० ) माकंदी-  
 आँवलेका फल ( स्त्री० ) ॥ ३४ ॥

मेनादश्छागमार्जारमेघनादानुलासिपु ।  
 वातदिर्वल्कले काष्ठलोहीवेदेऋयोः स्त्रियाम् ॥ ३५ ॥  
 विशदः पाण्डरे व्यक्ते शरत्स्त्री शरदद्दयो ।  
 शारदा जलपिप्पल्यां सप्तपर्णेऽथ शारदः ॥ ३६ ॥  
 नवाऽप्रतिमशालीनपीतमुद्गेन्दुवर्षयो ।  
 स्त्रिया सम्पद्गुणोत्कर्षे भूतिहारप्रभेदयो ॥ ३७ ॥  
 संवित्प्रतिज्ञासङ्केतजानाचारेषु नामनि ।  
 स्त्रिया तोषे क्रियाकारे रणे सम्भाषणेऽपि च ॥ ३८ ॥  
 सम्भेदस्तु विक्राशे स्यात्सम्भेदः सिन्धुसङ्गमे ।  
 सुनन्दा रोचनानार्योः क्षणदो गणके पुमान् ॥ ३९ ॥  
 त्रिपूत्सवप्रदे वारि क्षणदं क्षणदा निशि ।

दचतुर्थम् ।

अपवादस्तु निद्रायामाज्ञाविश्वासयोरपि ॥ ४० ॥

मेनाद-बकरा, विलाव, मोर, ( पु० )

वातदि-वृक्षका वकला, काष्ठआदि,  
 ( स्त्री० ) ॥ ३५ ॥

विशद-सफेद, प्रकट, ( पु० )

शरद्-शरदऋतु, वर्ष, ( स्त्री० )

शारदा-जलपीपल, सप्तपर्णी या सा-  
 तवण, ( स्त्री० ) शारद ॥ ३६ ॥

नवीन जिसके समान दूसरा न हो  
 वह, लज्जावान, पीलामूग, चन्द्रमा,  
 वर्ष ( पुं० )

सम्पद्-गुणोत्कर्षके उत्कर्ष (वडप्पन),  
 सपत्ति, हारभेद, ( स्त्री० ) ॥ ३७ ॥

संवित्-प्रतिज्ञा, संकेत, ज्ञान, आ-  
 चार, नाम, सतोष, किसी कार्यका

करनेवाला, रण, सभाषण, ( स्त्री० )  
 ॥ ३८ ॥

सम्भेद-प्रकाश, समुद्र या नदियोंका  
 मिलाप, ( पु० )

सुनन्दा-रोचना (गोलोचन), स्त्री,  
 ( स्त्री० )

क्षणद-ज्योतिषी, ( पुं० ) ॥ ३९ ॥

क्षणद-उत्सवदेनेवाला, ( त्रि० )  
 जल, ( न० )

क्षणदा-रात्रि, ( स्त्री० )

दचतुर्थम् ।

अपवाद-निन्दा, आज्ञा, विश्वास,  
 ( पु० ) ॥ ४० ॥

अभिप्यन्दो विवृद्धौ स्यादास्तावे लोचनामये ।  
 अभिमर्द्दस्तु पुंसेव रणमन्थानदण्डयोः ॥ ४१ ॥  
 अष्टापदं शारिकले क्लीवमस्त्री तु काञ्चने ।  
 शरभे मर्कटे पुंसि चन्द्रमह्यां स्त्रियामपि ॥ ४२ ॥  
 एकपदं स्यात्तकाले क्लीवमेकपदी पथि ।  
 कटुकन्दः पुमान् शृङ्गवेरे शिमुसोनयोः ॥ ४३ ॥  
 कुरुविन्दस्तु मुस्तायां कुल्मापत्रीहिभेदयोः ।  
 कुरुविन्दं तु मुकुरे पञ्चरागे च हिङ्गुले ॥ ४४ ॥  
 क्लीवं कोकनदं रक्तकैरवे रक्तपङ्कजे ।  
 चक्रवुन्दस्तु भाकूटे पृष्ठशृङ्गे मृपान्तरे ॥ ४५ ॥  
 चतुष्पदो गवाश्वादिपशौ स्त्रीकरणान्तरे ।  
 पुमाञ्जनपदो देशे तथा जनपदो जने ॥ ४६ ॥

अभिप्यन्द-अतिवृद्धि, चारोतरफसे-  
 क्षिरना, नेत्ररोग ( पुं० )

अभिमर्द्द-रण, मथनेवा डोंडा ( पुं० )  
 ॥ ४१ ॥

अष्टापद-षोडश, ( न० ) सुवर्ण  
 ( पुं० न० ) शरभ ( मृगभेद ),  
 घन्दर, ( पुं० )

अष्टापदी-चंद्रमस्त्री ( मल्लिकाभेद )  
 ( स्त्री० ) ॥ ४२ ॥

एकपद-तत्काल, ( न० )

एकपदी-भाग ( स्त्री० )

कटुकन्द-अदरक, सहैजना, हस्तान,  
 ( पुं० ) ॥ ४३ ॥

कुरुविन्द-नागरमोथा, आधासीजा-  
 थान्य, व्रीहिभेद ( पुं० )

कुरुविन्द-शीशा, पुकसरराज, हींगल,  
 ( न० ) ॥ ४४ ॥

कोकनद-लाल कमोदनी, लालर-  
 मल ( न० )

चक्रवुन्द-तेजसमूह, पृष्ठशृङ्ग, अस-  
 लभेद ( पु० ) ॥ ४५ ॥

चतुष्पद-गौ अश्व आदि पशु, स्त्रि-  
 योंका करणभेद, ( पु० )

जनपद-देश, जन, ( पुं० ) ॥ ४६ ॥

तमोनुदस्तमोनुच्च चन्द्रसूर्यकृशानुषु ।  
 परीवादोऽपवादे स्याद्वीणावादनवस्तुनि ॥ ४७ ॥  
 पृष्ठमर्दोऽतिघृष्टे स्यान्नाट्योक्त्या नायकप्रिये ।  
 पुटभेदो नदीवक्त्रे नगरातोद्ययोरपि ॥ ४८ ॥  
 प्रतिपत्तु स्त्रियामाद्यतिथौ संविदि सा स्मृता ।  
 प्रियंवदः खेचरे स्यात्प्रियवाचि तु वाच्यवत् ॥ ४९ ॥  
 महानादो महाशब्दे वर्षकाब्दे शयानके ।  
 गजे च मुचुकुन्दस्तु मुनिदैत्यद्रुमान्तरे ॥ ५० ॥  
 मेघनादो दशमीवमुते पश्चिमदिक्पतौ ।  
 विशारदः पण्डिते स्यात्त्रिषु घृष्टे विशारदः ॥ ५१ ॥  
 पृत्वाकूटे प्रपञ्चे च मृगे शूके पदे मतम् ।  
 समर्यादं समीपे स्यान्मर्यादिन्यपि वाच्यत् ॥ ५२ ॥

तमोनुद-स्तमोनुद्-चंद्रमा, सूर्य, अग्नि, (पु०)	महानाद-महाशब्द, वर्षनेवालाभेष, सोनेवाला, हस्ती, (पुं०)
परीवाद-अपवाद (निंदा आदि), वीणावजानेकी वस्तु (पुं०) ॥ ४७ ॥	मुचुकुन्द-एकमुनि, एक दैत्य, मुचु-पुंड-पुष्पवृक्ष, (पुं०) ॥ ५० ॥
पृष्ठमर्द-अतिघृष्ट (हंटा), नाट्यकी उक्तिमें नायकका प्रिय, (पुं०)	मेघनाद-रावणका पुत्र, वरुण, (पुं०)
पुटभेद-नदीका बरु, नगर, यात्राभेद (पुं०) ॥ ४८ ॥	विशारद-पण्डित, घृष्ट, (त्रि०) ॥ ५१ ॥
प्रतिपत्-पश्चात्तिथि, बुद्धि, (स्त्री०)	प्रयंव (जगत्), मृग, स्यात्, चरण (पुं०)
प्रियंवद-खेचर (आकाशमें विचरनेवाला), प्रियवचन करनेवाला (त्रि०) ॥ ४९ ॥	समर्याद-समीप (नजदीक), (न०) मर्यादावाला (त्रि०) ॥ ५२ ॥

दपंचमम् ।

धर्मे रहस्युपनिपद्वेदान्ते पार्श्ववेश्मनि ।

सहस्रपादो मार्चण्डे कारण्डेपि च यज्वनि ॥ ५३ ॥

इति विश्वलोचने दान्तवर्गः ॥

अथ धान्तवर्गः ।

धैकम् ।

धो धने च धनेशे च धास्तु धातरि धी मतौ ।

धद्वितीयम् ।

अन्धं स्यात्तिमिरे दृष्टिहीने त्वन्धोऽभिषेयवत् ॥ १ ॥

अब्धिर्वारानिधौ पुंसि पुंसेवाऽब्धिः सरोवरे ।

अर्द्धं समाशके क्लीवमर्द्धः खण्डे पुमानपि ॥ २ ॥

पुंस्याधिश्चित्तपीडायां प्रत्याशायां च वन्धके ।

व्यसने चाप्यधिष्ठाने स्यादिन्द्रस्त्वातपे पुमान् ॥ ३ ॥

दपंचमम् ।

उपनिपद्-धर्म, एघान्त, वेदान्त,  
पसवाशका मकान ( स्त्री० )

सहस्रपाद-सूर्य, कारण्ड ( हसभेद ),  
यज्ञ, ( पुं० ) ॥ ५३ ॥

इत प्रकार विश्वलोचन कोशकी टीकामें  
दान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

अथ धान्तवर्गः ॥

धैकम् ।

ध-धन, ( न० ) उवरे, ( पुं० )

धा-ब्रह्मा, ( पुं० )

धी-बुद्धि ( स्त्री० )

धद्वितीयम् ।

अन्ध-अंधकार, ( न० ) अंधा-मनु-  
ष्य, ( त्रि० ) ॥ १ ॥

अब्धि-समुद्र, सरोवर, ( पुं० )

अर्ध-धरावर अर्धभाग, ( न० ) अर्ध  
( डुकृत् ), ( पुं० ) ॥ २ ॥

आधि-चित्तपीडा, प्रत्याशा, गिरवी-  
रखना, दुःख या शोक, अधिष्ठान

( पुं ) धूप, ( पुं० ) ॥ ३ ॥



प्रदीप्ते त्रिषु ऋद्धं तु सम्पन्नान्नसमृद्धयोः ।  
 ऋद्धिः स्यादोषधीभेदे योगशक्तौ च बन्धने ॥ ४ ॥  
 गन्धो गन्धकसम्बन्धलेशेष्वामोदगर्वयोः ।  
 गाधः स्यानेऽपि लिप्सायां गोधा तलनिहाकयोः ॥ ५ ॥  
 दग्धा सितार्ककाष्ठायां दग्धं भुष्टेऽन्यलिङ्गकः ।  
 दधि स्याच्छीघने क्लीबं दधि श्रीवासवासयोः ॥ ६ ॥  
 विपाक्तविशिखे दिग्धो दिग्धं लिप्तार्थकेऽन्यवत् ।  
 त्रिषु प्रपूरिते दुग्धं दुग्धं क्षीरेऽपि न द्वयोः ॥ ७ ॥  
 वत्से गोपे कवौ दोग्धा दोग्धाऽप्यर्थोपजीविनि ।  
 सज्जे संपूर्वकं नद्वं नद्वं तद्वृत्तद्वयोः ॥ ८ ॥  
 आधिवन्धनयोर्वेधो बन्धः संपूर्वकोऽन्यथे ।  
 बन्धुकपादपे बन्धुर्वधुभ्रातरि बान्धवे ॥ ९ ॥

सद्ध-सिद्धहुवा अन्न, ( न० ) समृद्ध  
 ( संपत्तिवाला, ) ( त्रि० )  
 ऋद्धि-श्लोषधीभेद, योगशक्ति, बंधन,  
 ( स्त्री० ) ॥ ४ ॥  
 गन्ध-गन्धक, संबंध, लेश ( सूक्ष्म-  
 अन्न), सुगंध, अभिमान, ( पुं० )  
 गाध-स्नान ( स्थितहोना ), लेनेकी  
 इच्छा, ( पुं० )  
 गोधा-घनुपकी ज्याको नियारण कर-  
 नेका, जलगोह ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥  
 दग्धा-स्थितदे सूर्य जिसमें यह दिशा,  
 ( स्त्री० ) जलाहुवा, ( त्रि० )  
 दधि-दही, शरदृशका गोद, तेजपा-  
 त, ( न० ) ॥ ६ ॥

दिग्ध-विपलगायाहुवा-वाण, ( पुं० )  
 किसीवस्तुमें लिप्तहुवा पदार्थ ( त्रि० )  
 दुग्ध-प्रपूरितकिया हुवा, ( त्रि० )  
 दध, ( न० ) ॥ ७ ॥  
 दोग्धा-घट्टा, गोपालक, कवि,  
 पदार्थोप्ते जीविसावाला, ( पुं० )  
 संनद्ध-स्ववधारी, ( त्रि० )  
 नद्ध-निद्धलाहुवा, बंधाहुवा, ( त्रि० )  
 ॥ ८ ॥  
 वेध-चित्तपोडा, बंधन, ( पुं० )  
 संबन्ध-बन्धन, बर्हानहांका इच्छा-  
 होना, ( पुं० )  
 बंधु-दुपहरिया-पुत्रदृष्ट, बधुका भ्राता  
 बांधव, ( पुं० ) ॥ ९ ॥

वाधा दुःखे निषेधे च विपूर्वा तु विहेठने ।  
 बुधस्तु सुगते धीरे सौम्ये च बुधिते त्रिषु ॥ १० ॥  
 बुधः स्यात्पण्डिते सौम्ये बुधः क्वापि तथागते ।  
 ऋद्धिस्तु वर्द्धने ऋद्धयौषधे मुद्दि कलान्तरे ॥ ११ ॥  
 वृद्धिः कुरुण्डरोगे च वृद्धिर्योगेऽपि दृश्यते ।  
 वृद्धो रूढे कवौ जीणिं त्रिषु वृद्धं तु शैलजे ॥ १२ ॥  
 बोधिः समाधिभेदे स्याद्बोधिवोधिर्महीरुहे ।  
 मधु पुष्परसे क्षौद्रे मद्यक्षीराऽप्सु न द्वयोः ॥ १३ ॥  
 मधुर्मधूके सुरभौ चैत्रे दैत्यान्तरे पुमान् ।  
 जीवाशाके स्त्रियामेवं मधु-शब्दः प्रयुज्यते ॥ १४ ॥  
 सिद्धं चित्ताभिसंक्षेपे सिद्धमालस्यनिद्रयोः ।  
 सुन्दरे वाच्यवन्मुग्धो मुग्धो मूढेऽपि वाच्यवत् ॥ १५ ॥  
 मेधः क्रतौ मतौ मेधा मेधिस्तु खलदारुणि ।  
 राधा तु बलवीभेदे चित्रभेदे च धन्विनाम् ॥ १६ ॥

वाधा—डु ख, निषेध, ( स्त्री० )  
 चिवाधा—विशेषकरके पीडा, ( स्त्री० )  
 बुध—बुद्धदेव, धार, सौम्य, ( पुं० )  
 जानाहुवा, ( त्रि० ) ॥ १० ॥  
 बुध—पंडित, बुध ग्रह, बुद्धदेव ( पुं० )  
 ऋद्धि—बढना, ऋद्धि औषधी, हर्ष,  
 बलाभेद, ( स्त्री० ) ॥ ११ ॥  
 वृद्धि—कुरुण्डरोग, वृद्धि-योग ( पुं० )  
 वृद्ध—बढाहुवा, कवि, पुराना, षड्  
 पर्वतमें होनेवाला ( त्रि० ) ॥ १२ ॥  
 बोधि—समाधिभेद, पीपल वृक्ष, ( पुं० )

मधु—पुष्परस, शहद, मदिरा, दुग्ध,  
 जल, ( न० ) ॥ १३ ॥  
 मधु—महुवा-वृक्ष, बसेत ऋतु, चित्र-  
 मास, एक दैत्य, ( पुं० ) जीवशाक,  
 ( स्त्री० ) ॥ १४ ॥  
 सिद्ध—वित्तव्याकुलता, आलस्य, नि-  
 द्रा, ( न० )  
 मुग्ध—सुंदर, मूढ, ( त्रि० ) ॥ १५ ॥  
 मेध—बल, ( पुं० )  
 मेधा—बुद्धि, ( स्त्री० )  
 मेधि—खोटा षाष्ठ, ( पुं० )  
 राधा—गोपी-श्रीकृष्णपत्नी, धनुषधा-  
 रियोंका चित्रभेद, ॥ १६ ॥

स्याद्विशाखातडिद्विष्णुकान्तातिप्यफलासु च ।  
 राधस्तु पुंसि वैशाखे लुब्धो मृगयुकाक्षिणोः ॥ १७ ॥  
 वधूः स्तुपायां भार्यायां वधूयोंपिन्नबोढयोः ।  
 शब्दां च सारिवायां च स्पृक्षायां च मता वधूः ॥ १८ ॥  
 भवेद्विधं तु सादृश्ये वेधितक्षिप्तयोस्त्रिषु ।  
 विधिर्वेधसि काले ना विधाने नियतौ स्त्रियाम् ॥ १९ ॥  
 विधा प्रकारे ऋद्धौ च गजान्ने वेतने विधौ ।  
 विधुः शशाङ्के विष्णौ च कर्पूरे राक्षसान्तरे ॥ २० ॥  
 व्याधिः स्यादामये व्याप्ये व्याधो मृगयुदुष्टयोः ।  
 शुद्धं तु केवले पूते श्रद्धा श्राद्धोर्ध्वकाह्वयोः ॥ २१ ॥  
 श्राद्धं निवापे श्राद्धस्तु त्रिषु श्रद्धासमन्विते ।  
 सन्धा स्थितौ प्रतिज्ञायामवधानेऽपि सा स्मृता ॥ २२ ॥

विशाखा-नक्षत्र, विजली, कौयल-  
 या विष्णुकान्ता, आँवला ( स्त्री० )  
 राध-वैशाख-मास, ( पुं० )  
 लुब्ध-शिकारी, धनादिलोभवाला,  
 ( पु० ) ॥ १७ ॥  
 वधू-पुत्रवधू, अपनी स्त्री, नवीनवि-  
 वाहिता स्त्री, कचूर, सरिवन, अस-  
 परग-आँपधि ( स्त्री० ) ॥ १८ ॥  
 विध-सादृशता ( तुल्यता ), धीपा-  
 हुवा, फेंकाहुवा ( त्रि० )  
 विधि-ब्रह्मा, काल, विधान, भाग्य,  
 ( पुं० ) ॥ १९ ॥

विधा-प्रकार, ऋद्धि, हस्तीस अत्र,  
 नौरुी, विधान, ( स्त्री० )  
 विधु-चंद्रमा, विष्णु, कपूर, राक्षस-  
 भेद, ( पुं० ) ॥ २० ॥  
 व्याधि-रोग, कुष्ठरोग, ( पु० )  
 व्याध-शिकारी, दुष्ट, ( पुं० )  
 शुद्ध-केवल ( एकला ), पवित्र, ( न० )  
 श्रद्धा-आस्तिकता, ऊँची इच्छा,  
 ( स्त्री० ) ॥ २१ ॥  
 श्राद्ध-पितरोंको पिंडआदिदान, ( न० )  
 ध्राद्ध-श्रद्धायुक्त, ( त्रि० )  
 सन्धा-स्थिति, प्रतिज्ञा, स्थिरचिन्-  
 ता, ( स्त्री० ) ॥ २२ ॥

सन्धिः पुंसि सुरङ्गायां रन्ध्रसंघट्टने भगे ।

सन्धिर्मागिऽवकाशेऽपि वाटसंज्ञेऽपि पुंस्ययम् ॥ २३ ॥

साधुर्वाद्धिपिके पुंसि चारुसज्जनयोस्त्रिषु ।

सिद्धस्तु नित्ये निष्पन्ने प्रसिद्धे देवयोनिषु ॥ २४ ॥

योगेऽप्याडिप्रभेदे च सिद्धिर्निष्पत्तियोगयोः ।

सह्यास्याभेपजे सिद्धिः सिद्धिवृद्ध्यास्त्यभेपजे ॥ २५ ॥

सिन्धुरव्यौ नदे देशीभेदे ना सरिति स्त्रियाम् ।

सुधाऽमृते सुधा मूर्वा लुहीगाङ्गेष्टिकासु च ॥ २६ ॥

सृधूर्बुद्धौ गुदेऽपि स्यात्स्कन्धः कायप्रकाण्डयोः ।

बाहूमूले समूहे च समीहायां समीहतौ ॥ २७ ॥

स्कन्धो नराश्वमातङ्गवृन्दे भद्रादिकृत्यके ।

स्निग्धो वात्सल्यसंपन्ने चिकणेऽप्यभिधेयवत् ॥ २८ ॥

सन्धि-सुरंग, छिद्रकात्रोदना, योनि,  
( पुं० )

सन्धि-भाग, अवकाश, मार्गभेद  
( पुं० ) ॥ २३ ॥

साधु-शुद्ध, ( पुं० ) सुंदर, सबन,  
( त्रि० )

सिद्ध-नित्य, निष्पन्न ( पूर्णहुवा ),  
प्रसिद्ध, देवयोनि ॥ २४ ॥ योग,  
आडि-पक्षीभेद, ( पुं० )

सिद्धि-निष्पत्ति, योग, अच्छीब्या-  
ह्या, औषधि-मान, शुद्धि-औषध,  
( स्त्री० ) ॥ २५ ॥

सिन्धु-समुद्र, नद, देशभेद, ( पुं० )

सिन्धु-नदी ( स्त्री० )

सुधा-अमृत, मूर्वा सुरनहार या मरो-  
रफली, घोहर, कटशर्करालता ( एक-  
प्रकारकी वनस्पति ) ॥ २६ ॥

सृधू-शुद्धि, शुद्ध, ( स्त्री० )

स्कन्ध-शरीर, शूशुकी मोटी शाखा,  
मुजाका मूल ( कंधा ), समूह, चंद्र,  
चेष्टित, ॥ २७ ॥

मनुष्य अभ और हस्तियों का  
समूह, मंगल आदि कृत्य, ( पुं० )

स्निग्ध-वत्सलतासे पूर्ण, चिकना  
( त्रि० ) ॥ २८ ॥

स्पर्धां संहर्षणे साम्ये स्पर्धां क्रमसमुन्नतौ ।

धृतीयम् ।

अगाधमतलस्पर्शं त्रिषु श्वश्रे नपुंसकम् ॥ २९ ॥

अवधिर्नाऽवधौ न स्यात्सीम्नि काले विलेऽवटे ।

आनद्धं त्रिषु बद्धे स्यादानद्धं मुरजादिके ॥ ३० ॥

आवन्धः प्रेम्ण्यलङ्कारे दृढवन्धेऽपि कीर्तितः ।

आविद्धः प्रहते वक्त्रेऽप्युत्सेधः काय उच्छ्रूये ॥ ३१ ॥

व्याजेऽपि चक्रेऽप्युपधिरुपाधिर्ना विशेषणे ।

कैतवे धर्मचिन्तायां कुटुम्बव्यापृतेऽपि च ॥ ३२ ॥

कवन्धस्तु हरे राहौ रक्षोभेदे मतः पुमान् ।

कवन्धं वारि न स्त्री तु गतमूर्द्धकलेवरे ॥ ३३ ॥

दुर्विधो दुःखिखलयोर्निरोधो रोघनाशयोः ।

निपधः पर्वते देशे तद्राजे कठिनेपि च ॥ ३४ ॥

स्पर्धा—अति हर्ष, समता, क्रमसे क-  
चापन, ( स्त्री० )

धृतीयम् ।

अगाध—जिसकी याद न लगे ऐसा  
झूषा, ( त्रि० ) खडा, ( न० ) ॥ २९ ॥

अवधि—मीआद, सीम, काल,  
विल, खडा, ( पु० )

आनद्ध—बँधाहुवा, ( त्रि० )

आनद्ध—मृदंगआदिक, ( न० )  
॥ ३० ॥

आवन्ध—प्रेम, आभूषण, दृढवन्धन,  
( पुं० )

आविद्ध—प्रेराहुवा, उटिल ( टेटा ),  
( पुं० )

उत्सेध—शरीर, ऊँचाई ( पु० ) ॥ ३१ ॥

उपधि—यहाना या मिस, रथका पहिया  
( चक ) ( पुं० )

उपाधि—विशेषण, छल, धर्मचिन्ता,  
कुटुम्बमें आसक्त ( पु० ) ॥ ३२ ॥

कवन्ध—महादेव, राहु, रामसमेद,  
( पुं० )

कवन्ध—जल, ( न० ) मन्त्रद्वन्द्वित  
शरीर ( पुं० न० ) ॥ ३३ ॥

दुर्विध—दुःखित-जन, खल-जन, ( पुं० )

निरोध—रोकना, नाश, ( पु० )

निपध—पर्वत, निपद-त्रेण, निपद-घ्न  
रामा, कठिन, ( पुं० ) ॥ ३४ ॥

न्यग्रोधस्तु वटे शम्यां न्यग्रोधो व्याममात्रके ।

न्यग्रोधी विपपर्ण्या च मोहनाख्यौपधावपि ॥ ३५ ॥

परिधिर्यज्ञियतरोः शाखायामुपसूर्यके ।

प्रणिधिर्याच्याचरयोः प्रसिद्धः स्यात्तभूपिते ॥ ३६ ॥

मागधो मगधोद्भूते क्षत्रियावैश्यजे त्रिषु ।

बन्दिजीरकयोः पुंसि कणायूय्योस्तु मागधी ॥ ३७ ॥

पर्याहाराध्वभारेषु पण्ये विवधवीवधौ ।

विबुधः पण्डिते देवे विश्रब्धं तु भृशार्थकम् ॥ ३८ ॥

विश्रब्धः स्यात्तु विश्वस्ताऽनुद्भटेषु त्रिषु त्रिषु ।

लतायां विटपे वीरुत्सन्नद्धो व्यूढवर्मिते ॥ ३९ ॥

सन्निधिः सन्निधाने स्त्री पुमानिन्द्रियगोचरे ।

समाधिर्ध्याननीवाकनियमेषु समर्थने ॥ ४० ॥

न्यग्रोध—बड़-वृक्ष, शमी ( जाँट )

वृक्ष, तिरछी फैलाई हुई दोनों भु-

जाओंका प्रमाण (पुरस) ( पुं० )

न्यग्रोधी—विपपर्णी-औपधि, मोहन-

नाम औपधि, ( स्त्री० ) ॥ ३५ ॥

परिधि—यज्ञयोग्यवृक्षकी शाखा, सू-

र्यके चारों ओर गोलचक्र ( पुं० )

प्रणिधि—भाचना, चर, ( पुं० )

प्रसिद्ध—विख्यात, भूपित ( त्रि० )

॥ ३६ ॥

मागध—मगधदेशमें होनेवाला, क्षत्रि-

या और वैश्यसे उत्पन्नहुवा, ( त्रि० )

मागध—बन्दीजन, जीरा, ( पुं० )

मागधी—पीपल, जूही-पुष्पपेड,

( स्त्री० ) ॥ ३७ ॥

विवध—वीवध—पूर्तआहार, मार्ग,

भार, दूकान, ( पुं० )

विबुध—पण्डित, देवता, ( पुं० )

विश्रब्ध—अतिशय, ( अलं० ) ( न० )

॥ ३८ ॥

विश्रब्ध—विश्वासपात्र, अनुद्भट ( नम्र )

( त्रि० )

वीरुत् ( ध्र )—बेल, वृक्षशाखा ( स्त्री० )

सन्नद्ध—रक्खाहुवा या इकना किया-

हुवा, कवचधारी, ( पुं० ) ॥ ३९ ॥

सन्निधि—समीप, ( स्त्री० ) इंद्रियोंका

विषय ( पुं० )

समाधि—ध्यान, धनधान्यसे मनुष्यका

अतिशय आदर, नियम, समर्थन,

( पुं० ) ॥ ४० ॥

सम्बाधः सङ्कटे योनौ सङ्करेपि सुगन्धि तु ।  
शैलेयेऽभीष्टगन्धे च संरोधः क्षेपरोषयोः ॥ ४१ ॥  
संसिद्धिस्तु मता श्रीमत्तिनीप्रकृतिसिद्धिषु ।

घचतुर्थम् ।

अनिरुद्धः सरसुते पुंसि चानर्गले त्रिषु ॥ ४२ ॥  
अनुबन्धः प्रकृत्यादेर्नश्वरेऽप्यनुयायिनि ।  
दोषोत्पादे शिशौ च स्यात्प्रवृत्तस्यानुवर्तने ॥ ४३ ॥  
अनुबन्धी तु हिकायां तृष्णायामपि दृश्यते ।  
अवरोधस्तु शुद्धान्तेऽप्यन्तर्द्धौ राजसद्धानि ॥ ४४ ॥  
स्यादवष्टब्ध आक्रान्तेऽप्यदूरेऽप्यविलम्बिते ।  
आशाबन्धः समाश्वासे मर्कटस्य च वासके ॥ ४५ ॥  
इक्षुगन्धा कोकिलाक्षे काशे क्रोष्ट्यां च गोकुुरे ।  
उग्रगन्धा वचायां स्याद्यवान्यां छिकिकौषधौ ॥ ४६ ॥

सम्बाध-संकट, योनि ( भग ),  
युद्ध, ( पुं० )

सुगन्धि-शिलाजीत, श्रेष्ठगन्ध, ( न० )

संरोध-केंरुना, रोकना, ( पुं० )

॥ ४१ ॥

संसिद्धि-लक्ष्मीमदवाली स्त्री, स्व-  
भाव, सिद्धि, ( स्त्री० )

घचतुर्थम् ।

अनिरुद्ध-कामदेवका पुत्र, ( पुं० )

अनर्गल(नहींरुकनेवाला), ( त्रि० )

॥ ४२ ॥

अनुबन्ध-प्रकृति आदिका नश्वरभाग,  
अनुयायी, दोषोका उत्पादन, वा-

लक, प्रवृत्तके पश्चात् वर्तना, ( पुं० )  
॥ ४३ ॥

अनुबन्धी-हिचकी, तृष्णा, ( स्त्री० )

अवरोध-रनवास, अंतर्धान ( छुपना )

राजाका महल, ( पुं० ) ॥ ४४ ॥

अवष्टब्ध-दबायाहुवा, समीप, नहीं  
जतनी किया ( पुं० )

आशाबन्ध-समाश्वास ( दिलासादे-  
नां ), वानरपकड़नेका जाल, ( पुं० )

॥ ४५ ॥

इक्षुगन्धा-तालमखाना, काश, गी-  
दही, गोखरू ( स्त्री० )

उग्रगन्धा-यच, अजवायन, नकलीं-  
कनी-औषधि ( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥

उपलब्धिः स्त्रियां प्राप्तिमतिज्ञानेषु लक्षणे ।  
 कालस्कन्धस्तमालेऽपि तिन्दुके जीवकद्रुमे ॥ ४७ ॥  
 तीक्ष्णगन्धो मतः शिग्रौ वचाराजिकयोः स्त्रियाम् ।  
 तृणगोधा भवेच्चित्रकोलके कृकलासके ॥ ४८ ॥  
 परिव्याधः पुमानीरवानीरेऽपि द्रुमोत्पले ।  
 ब्रह्मवन्धुरधिक्षिप्ते निर्देशेऽब्राह्मणस्य च ॥ ४९ ॥  
 महौषधं विषाशुण्ठी शृङ्गवेरे रसोनके ।  
 समुन्नद्धः समुद्भूते पण्डितम्मन्यगर्विते ॥ ५० ॥

धपचमम् ।

योजनगन्धा तु कस्तूर्या व्याससूसीतयोरपि ॥ ५१ ॥

इति विश्वलोचने धान्तवर्गः ॥

उपलब्धि—प्राप्ति, बुद्धि, ज्ञान, लक्ष-  
 ण, ( स्त्री० )

कालस्कन्ध—तमालवृक्ष, तैंदूरा पेड़  
 जीवक वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ४७ ॥

तीक्ष्णगन्ध—सहैजना, ( पुं० ) तीक्ष्ण-  
 गंधा, बच्च, राई, ( स्त्री० )

तृणगोधा—चित्रकंबोल, गिरगट,  
 ( स्त्री० ) ॥ ४८ ॥

परिव्याध—जलवेत, कर्णिकार या  
 पांगारा-वृक्ष, ( पुं० )

ब्रह्मवन्धु—सिद्धकाहुवा, ब्राह्मण का-  
 भेद ( अधम ), ( पुं० ) ॥ ४९ ॥

महौषध—अतीत, सोंठ, अदरक,  
 इस्सन, ( न० )

समुन्नद्ध—अच्छी तरह उत्पन्नहुवा,  
 नहीं पडित होनेपर निजको पंडित  
 माननेवाला गर्वित ( पुं० ) ॥ ५० ॥

धपंचम ।

योजनगंधा—कस्तूरी, व्यासकी माता,  
 सीता, ( स्त्री० ) ॥ ५१ ॥

इत प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
 धान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥



## अथ नान्तवर्गः ।

नैकम् ।

नास्तु नेतरि नावि स्त्री नकारो जिनपूज्ययोः ।

नुः स्तोतरि नुतौ स्त्री च—स्यादन्नं भक्तमुक्तयोः ॥ १ ॥

नद्वितीयम् ।

इनः पत्यौ नृपे सूर्येऽप्युन्नं क्लिप्ते रतान्तरे ।

रणोद्योगे भवेदूनमूने न्यूनाऽभिधेयवत् ॥ २ ॥

निशेषे त्रिषु कृत्स्नं स्याकृत्स्नं स्यादुदरे जले ।

गानं गीतेऽपि शब्देऽपि गर्हणे तु विपूर्वकम् ॥ ३ ॥

घनं स्यात्कांस्यतालादिवाद्ये मध्यमताण्डवे ।

घनस्तु मेघे मुस्तायां विस्तारे लोहमुद्गरे ॥ ४ ॥

काठिन्ये चाथ कठिने सान्द्रेऽपि च घनस्त्रिषु ।

चिह्नमङ्के पताकायां ध्वजमात्रेऽपि न द्वयोः ॥ ५ ॥

अथ नान्तवर्गः ।

नैक ।

ना—प्राप्तकरनेवाला, ( पुं० )

ना—नौका, ( स्त्री० )

न( कार )—जिनदेव, पूज्य ( पुं० )

नु—स्तुतिकरनेवाला ( पुं० ) स्तुति,

( स्त्री० )

नद्वितीय ।

वन्न—अन्न, खायाहुवा अन्न आदि, ( न० )

॥ १ ॥

इन—पति, राजा, सूर्य, ( पुं० )

उन्न—गीला, मैथुन भेद, रणका उद्योग,

( न० )

ऊन—कमती, न्यूनकेसमान ( त्रि० )

॥ २ ॥

कृत्स्न—संपूर्ण ( त्रि० )

कृत्स्न—उदर ( पेट ), जल, ( न० )

गान—गाना, शब्द, ( न० )

विगान—निंदा, ( न० ) ॥ ३ ॥

घन—मजीरा घंटा आदिवाजा, मध्य-

मन्त्र, ( न० )

घन—मेघ, नागरमोघा, विस्तार, लो-

हेका मुद्गर, ( पुं० ) ॥ ४ ॥ क-

कापन, कठिन, गहरा, ( त्रि० )

चिह्न—लक्षण, पताका, ध्वजमात्र,

( न० ) ॥ ५ ॥

चीनो देशांशुक्रवीहितन्तुभेदे मृगान्तरे ।  
 रहसि च्छादिते छन्नमुत्पूर्वं छन्नमुज्ज्वले ॥ ६ ॥  
 छिन्नाऽमृतायां पुंश्चल्यां छिन्नं भिन्नेऽभिधेयवत् ।  
 जनो लोके महल्लोकात्परे लोके च पामरे ॥ ७ ॥  
 जनी सीमन्तिनीवध्वोः स्त्रियां तु जनिरुद्भवे ।  
 जिनस्त्वर्हति बुद्धेऽतिवृद्धजित्वरयोस्त्रिषु ॥ ८ ॥  
 ज्योन्स्त्रा तु चन्द्रिकायां स्यात्स्याल्लतायां विभावरी ।  
 ज्योत्स्नी पटोलिकायां च चन्द्रकान्वितनिश्यपि ॥ ९ ॥  
 ज्यानिर्हानौ तटिन्यां च तनुर्देहत्वचोः स्त्रियाम् ।  
 तनुः केशेऽपि विरले खल्पमात्रेऽपि वाच्यवत् ॥ १० ॥  
 दानं त्यागे गजमदे छेदे शुद्धौ च रक्षपौ ।  
 विक्रान्ते वाच्यवद्दानुर्दानदातरि वाच्यवत् ॥ ११ ॥

चीन—चीन-देश, वस्त्र, चीना घान्य,  
 तन्तुभेद, मृगभेद, ( पुं० )  
 छन्न—एकात, टकाहुवा, ( त्रि० )  
 उच्छन्न—उज्ज्वल, ( त्रि० ) ॥ ६ ॥  
 छिन्ना—गिलीय, व्यभिचारिणी स्त्री,  
 ( स्त्री० )  
 छिन्न—कटाहुवा, ( त्रि० )  
 जन—महल्लोकात् ऊपर लोक, जन ( म-  
 नुष्यमात्र ), नीच, ( पुं० ) ॥ ७ ॥  
 जनी—स्त्री मात्र, पुत्रवधू, ( स्त्री० )  
 जनि—उत्पत्ति ( स्त्री० )  
 जिन—जिनदेव, बुद्धदेव, ( पु० ) अ-

तिबुद्ध, जीतनेके स्वभाववाला,  
 ( त्रि० ) ॥ ८ ॥  
 ज्योत्स्ना—चन्द्रप्रभा, सोमलता, रात्रि  
 ( चाँदनी रात्रि ) ( स्त्री० )  
 ज्योत्स्नी—परवल शाक, चाँदनीरात्रि,  
 ( स्त्री० ) ॥ ९ ॥  
 ज्यानि—हानि, नदी ( स्त्री० )  
 तनु—शरीर, त्वचा, ( स्त्री० )  
 तनु—केश, विरला ( कोई ), खल्प-  
 मात्र, ( त्रि० ) ॥ १० ॥  
 दान—त्याग ( दानदेना ), हस्तीका-  
 मद, काटना, शुद्धि, रक्षा, ( न० )  
 दानु—वीर, दानका देनेवाला, ( त्रि० )  
 ॥ ११ ॥

कातरे दुर्गते दीनो दीना मूपिकयोपिति ।  
 द्युम्नं पराक्रमे विचे प्रपूर्वं पुंसि मन्मथे ॥ १२ ॥  
 धनुः पुंसि प्रियालद्रौ राशिभेदेऽपि कामुकं ।  
 धनं तु गोधने विचे धाना भृष्टयवे स्त्रियाम् ॥ १३ ॥  
 धान्याकेऽप्यङ्कुरेऽब्धौ तु धेनो धेनी सरित्यपि ।  
 नमस्त्रिपु विवस्त्रे स्यात्पुंसि क्षपणवन्दिनोः ॥ १४ ॥  
 न्यूनमूनेऽपि गर्हेऽपि पानं पीतौ च रक्षणे ।  
 वनं तु कानने नीरेऽप्युत्से वासप्रवासयोः ॥ १५ ॥  
 वस्त्रं तु वसने मूल्ये वेतनद्रव्ययोरपि ।  
 बुध्नः शिफायामीशाने भानुः सूर्येऽपि दीधितौ ॥ १६ ॥  
 भिन्नं वाच्यवदन्यार्थे दारिते सङ्गते स्फुटम् ।  
 मानं प्रमाणे प्रस्थादौ मानश्चित्तोन्नतौ ग्रहे ॥ १७ ॥

दीन-कायर, दरिद्र, ( पुं० )  
 दीना-मूसेकी स्त्री अर्थात् मूषी, ( स्त्री० )  
 द्युम्न-पराक्रम, द्रव्य, ( न० )  
 प्रद्युम्न-कामदेव, ( पुं० ) ॥ १२ ॥  
 धनु-चिरोजी-वृक्ष, धन-राशि, कामी-  
 पुरुष, ( पुं० )  
 धन-गोधन, द्रव्य, ( न० )  
 धाना-भूताहुवा जौ ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥  
 धनिया, वृक्षका अकुर, ( पु० )  
 धेन-समुद्र, ( पुं० )  
 धेनी-नदी, ( स्त्री० )  
 नम-वक्त्ररहित, ( त्रि० ) मुनि, वंदी  
 जन, ( पुं० ) ॥ १४ ॥

न्यून-कमती, निम्न, ( त्रि० )  
 पान-जल आदिका पीना, रक्षा, ( न० )  
 वन-वन ( कानन ), जल, क्षिरना,  
 घर, प्रवास, ( न० ) ॥ १५ ॥  
 वस्त्र-वस्त्र, मूल्य, नीकरी, द्रव्य, ( न० )  
 बुध्न-वृक्षकी जड़, महादेव, ( पुं० )  
 भानु-सूर्य, ( पुं० ) क्षिरण, ( स्त्री० )  
 ॥ १६ ॥  
 भिन्न-अन्य, पाडाहुवा, समुद्र ( दुग्ध )  
 ( त्रि० )  
 मान-प्रमथ ( ६४ टोंट ) अर्थप्रमाण,  
 ( न० )  
 मान-चित्तर्था दर्शनी, प्रष्ट ( प्रहाहा-  
 ना ) ॥ १७ ॥ प्रसा, ( पुं० )

मानः स्यादपि पूजायां मीनो राश्यन्तरे क्षये ।  
 मुनिर्वाचयमे बुद्धे प्रियान्नाऽगस्तिकिंशुके ॥ १८ ॥  
 इन्द्रुधामपि मृत्स्ना तु तुषरीमृत्ययोर्मता ।  
 यानं वाधगतौ योनिर्द्वयोः स्यादाकरे मगे ॥ १९ ॥  
 रत्नं मणावपि श्रेष्ठे रत्नश्चक्षुकचण्डयोः ।  
 रास्त्रा तु स्याद्भुजङ्गाक्षयामेलापण्यामपि स्मृता ॥ २० ॥  
 राशीनामुदये लग्नं लग्नं सकेऽपि लज्जिते ।  
 वानं शुष्कफले शुष्कम्यूतयोस्त्रिन्वथ द्वयोः ॥ २१ ॥  
 वन्यासुरज्ञावातोर्मिसौरभेषु फटे गतौ ।  
 विश्नं ज्ञाते स्थिते लब्धे शीनोऽजगरमूर्खयोः ॥ २२ ॥  
 पुंसेव पत्रिणि श्येनः श्येनः श्वेतेऽभिधेयवत् ।  
 सानुः शृङ्गे बुधेऽरण्ये वात्याया पङ्कवे पथि ॥ २३ ॥

मीन—मीन-राशि, मछली, ( पुं० )  
 मुनि—मुनि(साधु), बुद्धदेव, चित्तोजी-  
 का पक्ष, हथिया-वृक्ष, गौदी-वृक्ष  
 ( पुं० ) ॥ १८ ॥

मृत्स्ना—अरहर या तूर, धेष्ट मृत्तिका,  
 ( स्त्री० )

यान—वाहकको गमन, ( न० )

योनि—जान, भग, ( पुं०-न० ) ॥ १९ ॥

रत्न—मणि, श्रेष्ठ, ( न० )

रत्न—( पु० )

रास्त्रा—सरहटी या मंडनी, रायसन,  
 ( स्त्री० ) ॥ २० ॥

लग्न—राशिषोका उदय, ( न० )

लग्न—आसक्त, लज्जित ( त्रि० )

वान—सूखाफल, सूखा, शीना, ( त्रि० )  
 वनसमूह, मुरंग, शृंगभेद, अच्छा-  
 गंध, चडाई, गति, ( पुं० स्त्री० )

विश्न—जानाहुवा, स्थित, उन्पहुवा,  
 ( न० )

शीन—अजगर-सर्प, मूर्ख, ( पु० )  
 ॥ २१ ॥ २२ ॥

श्येन—सिंह-पक्षी, ( पुं० ) लकेद  
 रंगवाल, ( त्रि० )

सानु—पर्वतका शृंग, शुभ, वन, वायु-  
 का समूह, पत्ता, मार्ग, ( पुं० )

॥ २३ ॥

सूनुः पुत्रेऽनुजे सूर्ये सूनुर्दुहितरि स्त्रियाम् ।

सूनं प्रसूने प्रसवे सूनमुच्छ्वसिते त्रिषु ॥ २४ ॥

सूना पुत्र्यां वधस्थाने गलगुण्ड्यामपीप्यते ।

स्त्यानं लोम्नि प्रतिश्रुत्यां मता स्निग्धे तु वाच्यवत् ॥ २५ ॥

स्थानं स्थितौ च सादृश्ये संनिवेशाऽवकाशयोः ।

स्थाने स्यादव्ययं ख्यातं युक्तार्थकरणार्थयोः ॥ २६ ॥

सूनोऽर्के किरणे स्वप्नः सुसर्षीस्वापदर्शने ।

हनुः कपोलावयवे मृत्यौ प्रहरणेऽस्त्रियाम् ॥ २७ ॥

गदे हृद्विलासिन्यां हीनं गर्होनियोस्त्रिषु ।

नवृतीयम् ।

अङ्गनं प्राङ्गणे यानेष्यङ्गना नायिकान्तरे ॥ २८ ॥

अङ्गना वामनेभस्य हस्तिन्यामपि दृश्यते ।

अङ्गनो दिक्करीन्द्रे स्यादङ्गनं तु रसाङ्गने ॥ २९ ॥

सूनु-पुत्र, छोटाभाई, सूर्य, ( पुं० )

सून-पुष्प, जन्म ( उत्पत्ति ) ( न० )

सून-ऊर्ध्वश्वास, ( त्रि० ) ॥ २४ ॥

सूना-पुत्री, जीवमारनेका स्थान, ता-  
लुके ऊपर एक छोटी जीभ ( स्त्री० )

स्त्यान-लौम, ( न० ) प्रतिध्वनि,  
( स्त्री० ) स्निग्ध ( झेहवाला, )

( त्रि० ) ॥ २५ ॥

स्थान-स्थिति, सादृश्य, प्रवेश, अव-  
काश, ( न० )

स्थाने-युक्त अर्थ, करण अर्थ, ( अव्य-  
य ) ॥ २६ ॥

सून-सूर्य, किरण, ( पु० )

स्वप्न-सोना, स्वप्नका देखना, ( पुं० )

हनु-ठोड़ी, मृत्यु, हथियार, ॥ २७ ॥

रोगविशेष, नख-गंधद्रव्य, ( पुं० न० )

हीन-निदित, न्यून ( कमती ) ( त्रि० )

नवृतीय ।

अङ्गन-आँगन, सवारी- ( न० )

अंगना-स्त्री, ॥ २८ ॥ वामननामदि-

गृहस्त्रीकी हस्तिनी, ( स्त्री० )

अङ्गन-एक दिग्गृहस्त्री, ( पुं० )

रसांत ( न० ) ॥ २९ ॥

अक्षिरुज्जलसौवीरे गिरिभेदेऽप्यथाङ्गने ।

ज्येष्ठीभेदे मरुत्पल्यामङ्गनी लेप्ययोपिति ॥ ३० ॥

अध्या वर्त्मनि संकेशे स्कन्दे संस्थानकालयोः ।

अपानो गुदवाते स्यादपानं तु गुदे मतम् ॥ ३१ ॥

आब्जिनी विसिनीत्यादिपदान्यङ्गसरोवरे ।

महासहायामाङ्गानः पुंस्येव त्रिषु निर्मले ॥ ३२ ॥

अयनं पथि भानोश्च दक्षिणोत्तरतोगतौ ।

नाऽरलि. कफगौ हस्ते प्रकोष्ठवितताङ्गलौ ॥ ३३ ॥

अर्जुनः पार्थककुमकार्चवीर्यशिशुखण्डिषु ।

मातुरेकमुतेऽपि स्यादर्जुनो धवलेऽन्यवत् ॥ ३४ ॥

अर्जुनी गव्युपायांच कुट्टिनीकरतोययोः ।

अर्जुनं तु तृणे नेत्ररोगेऽपि क्लीवमर्जुनम् ॥ ३५ ॥

नेत्रोका, कञ्जल, कालामुरमा, प-  
वतभेद, ज्येष्ठीमधु, वायुकी स्त्री,  
( त्रि० ) अजनी, छीका चित्र,  
( स्त्री० ) ॥ ३० ॥  
अ( ध्वन् ) ष्वा-मार्ग, सङ्केत, सिरना,  
मृत्पु, काल, ( पु० )  
अपान-गुदाका वायु, ( पु० )  
अपान-गुद, ( न० ) ॥ ३१ ॥  
अब्जिनी-विसिनी-कमल, सरो-  
वर, ( स्त्री० )  
अम्लान-मखवन ( पु० ) निर्मल,  
( त्रि० ) ॥ ३२ ॥

अयन-मार्ग, दक्षिण और उत्तरसे  
' सूर्यगति, ( न० )  
अरलि-कोहनी, अँगुलियोंसमेत फि-  
लाहुवाहाय ( पुं० ) ॥ ३३ ॥  
अर्जुन-अर्जुन-पांडुराजका पुत्र, एम्प-  
क्ष, सहस्रबाहु, शिखंडी, माताका-  
एकपुत्र, ( पु० ) श्वेतवर्ण, ( त्रि० )  
॥ ३४ ॥  
अर्जुनी-गी, उदा-वाणामुरखी पुत्री,  
कुट्टिनी, करतोया नदी, ( स्त्री० )  
अर्जुन-तृण, नेत्ररोग, ( न० ) ॥ ३५ ॥

अर्थी स्याद्याचके यक्षे सेवके च विवादिनि ।  
 अर्वा ह्ये पुमानर्वा कुत्सितेऽप्यभिधेयवत् ॥ ३६ ॥  
 अशोघ्नी तालपण्यां स्यादशोघ्नः शूरणे पुमान् ।  
 अली तु वृश्चिके भृङ्गेऽप्यवनं रक्षणे मुदि ॥ ३७ ॥  
 अशनिस्तु द्वयोर्वज्रे तडित्यपि मताऽशनिः ।  
 असनं क्षेपणे क्लीवमसनः पीतसारके ॥ ३८ ॥  
 असिक्री सरिति प्रेष्याशुद्धान्ताऽवृद्धयोपिति ।  
 आत्मा ब्रह्ममनोदेहस्वभावधृतिबुद्धिपु ॥ ३९ ॥  
 आत्मायत्तेऽप्यथाऽऽदानं ग्रहणे वाजिभूषणे ।  
 आपन्नस्तु विपत्प्राप्ते प्राप्ते चाप्यभिधेयवत् ॥ ४० ॥  
 आसनं द्विरदस्कन्धपीठे पीठस्थितावपि ।  
 आसनी पण्यवीथ्यां स्यादासनो जीवकद्रुमे । ॥ ४१ ॥

अर्थिन्-याचक, यक्ष, सेवक, विवा-

दी, ( पुं० )

अर्धन्-अध, ( पुं० ) कुत्सित, ( त्रि० )

॥ ३६ ॥

अशोघ्नी-कपूरकचरी, ( स्त्री० )

अशोघ्न-जमीकद, ( पुं० )

अलिन्-बीछ, भौरा, ( पुं० )

अवन-रक्षा, आनंद, ( न० ) ॥ ३७ ॥

अशनि-वज्र, ( पुं० स्त्री० ) विजली,

( स्त्री० )

असन-फेंकना, ( न० )

असन-विजयसार, ( पुं० ) ॥ ३८ ॥

असिक्री-नदीभेद, रनवातमें जाने-  
 वाली जवानदासी, ( स्त्री० )

आत्म(न)-ब्रह्म, मन, शरीर, स्वभा-  
 व, धृति, बुद्धि, अपने अधीन  
 ( पुं० ) ॥ ३९ ॥

आपन्न-विपत्को प्राप्तहुआ, प्राप्तहुया,  
 ( त्रि० ) ॥ ४० ॥

आसन-हस्तियोंका कंधा, हस्तियोंकी-  
 पीठ, पद्मआदि, स्थिति, ( न० )

आसनी-दुकानोंकी पंक्ति, ( स्त्री० )

आसन-जीयापोता \* वृक्ष, ( पुं० )

॥ ४१ ॥

उत्तानमुन्मुखे सुप्तेऽप्यगम्भीरेऽपि षाच्यवत् ।

उत्थानमुद्गमे तद्रेऽप्युद्यमे हर्षणे रणे ॥ ४२ ॥

प्राङ्गणे पौरुषे चैव मलवेगे च पुस्तके ।

उदानस्तूदरावर्त्ते कण्ठवाताहिमेदयोः ॥ ४३ ॥

उद्धानं जुलिकायां स्यान्मतमुद्गमनेऽपि च ।

उद्यानं ह्रीवमाक्रीडे नि सुतौ च प्रयोजने ॥ ४४ ॥

कठिना तु मता स्याल्या शर्करायां गुडस्य च ।

खटिकायां तु कठिनी कठिनं निघुरे त्रिपु ॥ ४५ ॥

कदनं युधाद्ये कामे कम्पनं कम्परुम्पयोः ।

कमनः कामुके चाभिरूपे चाशोककामयोः ॥ ४६ ॥

कर्म व्याप्ये क्रियायां च परे स्यादङ्गसंस्कृतौ ।

कर्त्तनं छेदने तुलतन्तुकर्मणि योषिताम् ॥ ४७ ॥

उत्तान-ऊपरको मुखकरके सोयाहुवा,  
नहींगभीर अर्थात् ऊँचा, ( त्रि० )

उत्थान-उद्गम, तन्त्र, उद्यम, आनन्द,  
रण, ॥ ४२ ॥ आँगन, पौरुष,  
मलवेग, पुस्तक, ( न० )

उदान-उदरका चक्र, कठमे रहनेवाला  
वायु, सर्पभेद, ( पुं० ) ॥ ४३ ॥

उद्धान-चूल्हा, ( न० ) उद्गत ( प्र-  
कटहुवा ) ( त्रि० )

उद्यान-बगीचा घरका, निकसना,  
प्रयोजन, ( न० ) ॥ ४४ ॥

कठिना-स्थाली ( चावलआदिपकाने-  
का पात्र ) गुडकी बत्ती, ( स्त्री० )

कठिनी-खडिया-(मिष्टी) ( स्त्री० )

कठिन-निघुर ( कठोर ) ( त्रि० )  
॥ ४५ ॥

कदन-युद्धवादि, कामदेव, ( न० )

कम्पन-कम्पनेके स्वभाववाला, कौपना  
( न० )

कमन-कामीपुरुष, सुदर पुरुष, शो-  
करहित, काम, ( पु० ) ॥ ४६ ॥

कर्मन्-व्याप्य, क्रिया, पर, अंगका  
संस्कार, ( न० )

कर्त्तन-कतरना, सूतकातना, ( न० )  
॥ ४७ ॥



कलम्लायान्तु कलनं कलिनं बन्धनेऽपि च ।  
 कल्पनं छेदने क्लृप्तौ कल्पना गजसज्जने ॥ ४८ ॥  
 पणस्य मानदण्डस्य चतुर्थीशेऽपि काकिनी ।  
 काञ्चनो धूर्त्तपुत्रागनागकेसरचम्पके ॥ ४९ ॥  
 उदुम्बरे काञ्चनारे हरिद्रायां च काञ्चनी ।  
 क्लीवं तु काञ्चने हेमि केशरेऽपि च काञ्चनम् ॥ ५० ॥  
 काननं विपिनेऽपि स्याच्चतुर्मुखमुखे गृहे ।  
 व्यासे कर्णेऽपि कानीनः कानीनः कन्यकासुते ॥ ५१ ॥  
 कामिनी नायिकाभेदे वन्दायामपि कामिनी ।  
 कामी तु कामुके कोके कामी पारावतेऽपि च ॥ ५२ ॥  
 कुन्नानं तु ह्यलङ्कारे भाजने गोलकान्तरे ।  
 कुहना दम्भचर्यायामीर्प्यालौ दाम्भिके त्रिषु ॥ ५३ ॥

कलन-बंधन ( न० )

कल्पन-छेदन, रचना, ( न० )

कल्पना-हस्तीसिंघारना, ( स्त्री० )  
 ॥ ४८ ॥

काकिनी-पैसाका चौथाहिस्सा, मान  
 दंडका चौथाहिस्सा ( स्त्री० )

कांचन-धतूरा, पुत्राग-शूरा, नागकेसर,  
 चंपा, ॥ ४९ ॥ गूलर-शूरा,  
 कचनार-शूरा, ( पुं० )

कांचनी-हलदी, ( स्त्री० )

कांचन-गुरणं, कमल केसर, ( न० )  
 ॥ ५० ॥

कानन-वन, ब्रह्माका मुख, धर,  
 ( न० )

कानीन-व्यास, कर्ण, कन्याका पुत्र,  
 ( पुं० ) ॥ ५१ ॥

कामिनी-स्त्रीभेद, वृक्षही लता  
 ( स्त्री० )

कामिन्-कानी-पुण्य, चक्रवा, कनूतर  
 ( पुं० ) ॥ ५२ ॥

कुन्नान-आभूषण, पात्र, गोलभेद,  
 ( न० )

कुहना-दम्भचर्या, ईशांकरनेवाला,  
 दम्भकरनेवाला, ( त्रि० ) ॥ ५३ ॥

कृती तु पण्डिते योग्ये केतनं लञ्छने गृहे ।  
 केतनं स्वात्पताकायां कार्ये चोपनिमत्रणे ॥ ५४ ॥  
 चीनैकदेशे कौपीनं स्याद्रुष्टाकार्ययोरपि ।  
 कौलीनं तु परीवादे कुलीनत्वे कुकर्मणि ॥ ५५ ॥  
 गुह्येऽपि सङ्गरेपि श्वभुजङ्गपशुपक्षिणात् ।  
 भवेत्क्रन्दनमाह्वाने मतमश्रुविमोचने ॥ ५६ ॥  
 खड्गी तु गण्डके पुंसि खड्गी खड्गायुधेऽपि च ।  
 गन्धनं सूचने हिंसासमुत्साहप्रकाशने ॥ ५७ ॥  
 गर्जनं तु मतं क्रोधे निस्वने मेघनिस्वने ।  
 गहनं कानने दुःखे गह्वरे कलिलेऽपि च ॥ ५८ ॥  
 गायनं स्वप्ने क्लीबं च गीतजीविनि गायने ।  
 विषदिग्धपशोर्मासे गृञ्जनं लशुने पुमान् ॥ ५९ ॥

कृतिन्-पंडित, योग्य, ( पुं० )  
 केतन-लंछन, घर, ( न० )  
 केतन-पताका, कार्य, निमत्रण, (न०)  
 ॥ ५४ ॥  
 कौपीन-बद्धका खंड, गुण्य-देश, अ-  
 कार्य, ( न० )  
 कौलीन-निदा, कुलीनत्व, कुकर्म,  
 ॥ ५५ ॥  
 गुह्यदेश, कृता सर्प-पशु-पक्षियोंका  
 युद्ध, ( न० )  
 क्रन्दन-झुलाना, आसूहालना, (न०)  
 ॥ ५६ ॥

खड्गिन् गंडा, ( पुं० ) खड्गहथिया-  
 रवाला, ( त्रि० )  
 गंधन-सूचनकरना, हिंसा, उत्साह-  
 का प्रकाश, ( न० ) ॥ ५७ ॥  
 गर्जन-क्रोध, शब्द, मेघशब्द (न०)  
 गहन-वन, दुःख, शकटा, सधन,  
 ( न० ) ॥ ५८ ॥  
 गायन-स्वप्न ( न० ) गानेकी जीवि-  
 कावाला, ( त्रि० ) गाना, ( न० )  
 गृञ्जन-विषमिला पशुका मांस, (न०)  
 लशुन, ( पुं० ) ॥ ५९ ॥

गोमी गवीश्वरे हरौ स्यान्महेष्वासकेऽपि च ।  
 गोस्तनी हारहूरायां हारभेदे तु गोस्तनः ॥ ६० ॥  
 ग्रावा तु पुंसि पापाणे गिरिवारिदयोरपि ।  
 घट्टना चलनायां स्यादावृत्त्यामपि घट्टिनी ॥ ६१ ॥  
 चक्री हरिकुलालाऽहिकोकेषु ग्रामजालिने ।  
 चन्दना कालिभेदे स्याच्चन्दनं मलयोद्भवे ॥ ६२ ॥  
 चन्दनी तु नदीभेदे चर्मं स्यात्फलकत्वयोः ।  
 चर्म्मां फलरूपाणौ स्याद्भृङ्गरीटे मृदुत्वचि ॥ ६३ ॥  
 चलनं भ्रमणे कम्पे वाच्यवत्कम्पशालिनि ।  
 चलनी वल्लघर्षर्या वारीभेदेऽपि दृश्यते ॥ ६४ ॥  
 चेतनश्चेतनायुक्ते त्रिषु संविदि चेतना ।  
 पत्रे पत्रे छदनं छद्मं शापकिलासयोः ॥ ६५ ॥

गोमिन्-गोवोंका स्वामी, विष्णु, व- शयनरूप, ( पुं० )	चर्मन्-डाल, त्वचा, ( न० )
गोस्तनी-दारु, ( स्त्री० )	चर्मिन्-डालधारी, भृङ्गरीट ( शिव- गण ) मोजपत्र, ( पुं० ) ॥ ६३ ॥
गोस्तन-हारभेद, ( पुं० ) ॥ ६० ॥	चलन-भ्रमण, कम्प, ( न० ) कौपनेके स्वभाववाला ( त्रि० )
ग्रावन्-पथर, पर्वत, मेघ, ( पुं० )	चलनी-चक्रघटी घपरी, हस्तांके पैरबाँ- धनेकी रस्ती, ( स्त्री० ) ॥ ६४ ॥
घट्टना-चलना, घट्टिनी-आवृत्ति, ( स्त्री० ) ॥ ६१ ॥	चेतन-चेतना ( बुद्धि ) सेयुक्त, ( त्रि० )
चक्रिन्-विष्णु, इन्द्रार, सर्प, चक्रवा, ग्राममें होनेवाली तोरई, ( पुं० )	चेतना-बुद्धि, ( स्त्री० )
चन्दना-डालीभेद, ( स्त्री० )	छदन-पत्ता, पक्षीकी पर, ( न० )
चन्दन-मत्तवाचलमें होनेवाला काष्ठ, ( न० ) ॥ ६२ ॥	छद्मन्-शाप, सीपरीग, ( न० ) ॥ ६५ ॥
चन्दनी-नदीभेद, ( स्त्री० )	

लक्ष्येऽपि छर्दनस्तु स्याद्विम्बालम्बुपवान्तिषु ।  
 छेदनं भेदने छेदे जगंस्तुर्जन्तुशुष्मणोः ॥ ६६ ॥  
 जघनं वनिताश्रोणीपुरोभागे कटावपि ।  
 जयनं तु जये वाजिगजप्रभृतिरुच्चुके ॥ ६७ ॥  
 यवनो यवमात्रेऽपि यवाधिरुतुरङ्गमे ।  
 देशभेदे तुरुक्केऽपि जघनः प्रजवे त्रिषु ॥ ६८ ॥  
 तपनो रविसन्तापे भल्लके नरकान्तरे ।  
 तमोग्नश्चन्द्रसूर्याऽग्निबुद्धश्रीकण्ठविष्णुषु ॥ ६९ ॥  
 तलिनं विरले स्तोके स्वच्छगम्भीरयोरपि ।  
 तलुनः पवने यूनि वाच्यवत्तलुनी स्त्रियाम् ॥ ७० ॥  
 तेमनं व्यञ्जने क्लेदे चुलिकाभिदि तेमनी ।  
 तोदनं व्यथने तोत्रे त्यागी सुरेऽपि दातरि ॥ ७१ ॥

छर्दन—निशाना, नीव, लजालभेद, छर्दि ( त्रि० )	तपन—सूर्यसे गरम ( धूप ), भिलावा, नरकभेद, ( पु० )
छेदन—भेदनकरना, छेदनकरना, ( न० )	तमोग्न—चंद्रमा, सूर्य, अग्नि, बुद्धदेव, महादेव, विष्णु, ( पु० ) ॥ ६९ ॥
जगन्—जन्तु, अग्नि, ( पु० ) ॥ ६६ ॥	तलिन—विरल (कोई), थोडा, स्वच्छ, गम्भीर, ( त्रि० )
जघन—स्त्रीकी श्रोणियोंका अप्रभाग ( जौष ), और कटि, ( न० )	तलुन—वायु, ( पु० ) जवान, ( त्रि० )
जयन—जय, अश्व (घोडे) हाथी आदि का कवच ( न० ) ॥ ६७ ॥	तलुनी—जवान स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ७० ॥
यवन—जवमात्र, जवभरजादा अश्व, देशभेद, यवन ( मुसलमान ) जा- ति, ( पुं० )	तेमन—स्यजन ( शाक ), गीला, ( न० )
जघन—पहुतवेगवाला ( त्रि० ) ॥ ६८ ॥	तेमनी—चूल्हाभेद ( स्त्री० )
	तोदन—पीड़ा, ईलआदि हॉकनेकी पैनी, ( न० )
	त्यागिन्—शर, दाता, ( पुं० ) ॥ ७१ ॥

पुष्पे वीरेऽपि दमनो दर्शनं दृशि दर्पणे ।  
 स्वमे वर्त्मनि बुद्धौ च शास्त्रधर्मोपलब्धिषु ॥ ७२ ॥  
 दंशनः शिशिरे पुंसि दंशनं कवचे रदे ।  
 दहने दुष्टचरिते मल्लाते चित्रकेऽनले ॥ ७३ ॥  
 दृशानस्तु गृहपतौ दृशानं ज्योतिषि स्मृतम् ।  
 देवनः पाशके पुंसि धन्व चापे स्थलेऽपि च ॥ ७४ ॥  
 धन्वी धनुर्द्वरे स्त्रिङ्गेऽप्यर्जुने चार्जुनद्रुमे ।  
 धमनस्त्वनले भस्त्राध्मापककूरयोस्त्रिषु ॥ ७५ ॥  
 धमनी कंधरायां च हरिद्राशिरयोरपि ।  
 धाम रश्मौ गृहे देहे प्रभावस्थानजन्मसु ॥ ७६ ॥  
 धावनं धाविते शुद्धौ पृष्टिपर्ण्या तु धावनी ।  
 स्वाद्धावनी रजन्यां च धौतांजन्यां च तर्जरे ॥ ७७ ॥

दमन-दौना पुष्प, वीर, ( पुं० )  
 दर्शन-दृष्टि ( नेत्र ), दर्पण ( शीशा ),  
 म्यत्र, मार्ग, युधि, शास्त्र, धर्म,  
 उपलब्धि ( प्राप्ति ) ( न० ) ॥ ७२ ॥  
 दंशन-शिशिर-कटु, ( पुं० )  
 दंशन-कवच, दंत, ( न० )  
 दहन-दुष्टचरितबाला, भिलावा, ची-  
 ता, अग्नि, ( पुं० ) ॥ ७३ ॥  
 दृशान-परका स्वामी, ( पुं० )  
 दृशान-ज्योति, ( न० )  
 श्रेयन-धौपइछेलनेका पाता, ( पुं० )  
 धन्वन्-धनुष, म्यत्र, ( न० ) ॥ ७४ ॥

धन्विन्-धनुषधारी, चतुरमनुष्य,  
 अर्जुन, अर्जुनवृक्ष, ( पु० )  
 धमन-अग्नि, धमनीसे अग्निधमनेवा-  
 ल्हा, कूर, ( पुं० ) ॥ ७५ ॥  
 धमनी-श्रीवा, हलदी, नाडी, ( स्त्री० )  
 धाम-किरण, पर, शरीर, प्रभाव,  
 स्थान, जन्म, ( न० ) ॥ ७६ ॥  
 धावन-धोवना, शुद्धि, ( न० )  
 धावनी-पिटवन ( स्त्री० )  
 धावनी-राशि, धोयोहै अंजनभित्तने  
 ऐसो स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ७७ ॥

ध्वजी द्विजे रथे शैले तुरङ्गे च मुजङ्गमे ।  
 नन्दनो हर्षके पुत्रे नन्दनं मिश्रकावने ॥ ७८ ॥  
 नन्दनी तु मता देवधुनीधेनुनानन्दपु ।  
 नन्दी नन्दीश्वरे गर्द्भाण्डन्यप्रोघवृक्षयोः ॥ ७९ ॥  
 नलिनी तु सरोजिन्यां सरोजे च सरोवरे ।  
 व्योमगङ्गामलिकयोः नलिनं तु जलाब्जयोः ॥ ८० ॥  
 निदानं रोगनियमेऽप्यादिहेत्ववमानयोः ।  
 वत्सदाग्नि निदानं स्यान्निधनं कुलनाशयोः ॥ ८१ ॥  
 पत्री काण्डस्त्रगश्येननगद्गुरथिके रथे ।  
 पद्मिनी पद्मनलिनीसरस्तु वनितान्तरे ॥ ८२ ॥  
 पर्व स्यादुत्सवे ग्रन्थौ दर्शप्रतिपदोरपि ।  
 तत्सन्धौ विपुवादौ च प्रस्तावे लक्षणान्तरे ॥ ८३ ॥

ध्वजिन्—ब्राह्मण, रथ, पर्वत, सर्प,  
 ( पुं० )

नन्दन—हर्षकरनेवाला, पुत्र,  
 नन्दन—इंद्रका बगीचा, ( न० ) ॥ ७८ ॥

नन्दनी—गंगा, धेनु—भेद, नन्द, ( स्त्री० )  
 नन्दिन्—नदीश्वर—स्वर्गण, पारसपीपल,

बक—वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ७९ ॥

नलिनी—कमलिनी, कमल, सरोवर,  
 आकाशगंगा, आँवला, ( स्त्री० )

नलिन—जल, कमल, ( न० )  
 ॥ ८० ॥

निदान—रोगोंका दूरकरना, आदिका—

रण, अपमान, बछड़ाकी रस्तो,  
 ( न० )

निधन—कुल, नाश, ( न० ) ॥ ८१ ॥

पत्रिन्—वाण—पक्षी, शिकरा, पर्वत,  
 वृक्ष, रथरवान, रथ, ( पुं० )

पद्मिनी—कमल, कमलिनी, सरो  
 वर, स्त्रीभेद, ( स्त्री० ) ॥ ८२ ॥

पर्वन्—उत्सव, प्रथि, अभावस्था,  
 प्रतिपदा, अभावस्था प्रतिपदाकी स-

धि, समानदिनरात्रिकाला काल  
 आदि, प्रस्ताव, लक्षणभेद, ( न० )  
 ॥ ८३ ॥

पवनोऽग्नी कुलालस्य पाकस्थानेऽनिले पुमान् ।  
 निर्विकल्पेऽपि पवनः पक्ष्म लोचनलोमनि ॥ ८४ ॥  
 पक्ष्म सूत्रादिसूक्ष्मांशे पक्ष्म स्यात्केशरेऽपि च ।  
 पावनं तु जले कृच्छ्रे पावकाध्यासयोः पुमान् ॥ ८५ ॥  
 पाठीनस्तु वदाले स्यादपि चित्रवदालके ।  
 पाठके गुग्गुलुद्रौ च प्रायश्चित्ते तु पाचनम् ॥ ८६ ॥  
 पाचनी तु हरीतक्यां पाचनो बहिसिंहयोः ।  
 पावनं पावयितरि त्रिषु पूतेऽपि पावनम् ॥ ८७ ॥  
 वरुणे पुंसि स्यात्पाशी पाशी पाशधरेऽन्यवत् ।  
 पिशुनो नारदे पुंसि खलसूचकयोस्त्रिषु ॥ ८८ ॥  
 पिशुनं कुङ्कुमे क्लीवं पृष्ठायां पिशुना मता ।  
 पीतनः कपिचूते स्यात्पीतनं पीतदारुणि ॥ ८९ ॥

पवन-कुम्हारका पाकस्थान, वायु, निर्विकल्प, ( पुं० )	पाचनी-हरद, ( स्त्री० )
पक्ष्म-नेत्रके लोम, ॥ ८४ ॥ सूत्र आदिका सूक्ष्म अंश, केशर, ( न० )	पाचन-अग्नि, हींग, ( पुं० )
पावन-जल, कृच्छ्र-रत आदि, अग्नि, अध्यास, ( जिते रज्जुमे सर्प ) ( पुं० ) ॥ ८५ ॥	पावन-पवित्र करनेवाला, पवित्र, ( त्रि० ) ॥ ८७ ॥
पाठीन-मत्स्यभेद, चित्रकबरामत्स्य-भेद, पडानेवाला, गुग्गुलु-वृक्ष, ( पुं० )	पाशिन-वरुण, ( पुं० ) फाँसीधारणकरनेवाला, ( त्रि० )
पाचन-प्रायश्चित्त ( दोषदूरकरनेके लिये पुष्पकर्म ) ( न० ) ॥ ८६ ॥	पिशुन-नारदमुनि, ( पुं० ) खल, चुगलखोर, ( त्रि० ) ॥ ८८ ॥
	पिशुन-कुङ्कुम ( केसर ) ( न० )
	पिशुना-अध्वरग-शाक,
	पीतन-अंवासा, पीतवृक्ष ॥ ८९ ॥

कुङ्कुमे हरिताले च पृतना राक्षसीभिदि ।  
 पथ्यायां चाथ पृतनाऽनीकिनीसैन्यभेदयोः ॥ ९० ॥  
 स्याच्चमूसेनयोश्चाथ प्रज्ञानं लाञ्छने धिवि ।  
 प्रधानं दारुणे सङ्घे प्रधानं परमात्मनि ॥ ९१ ॥  
 क्षेत्रज्ञधीमहामात्रेऽप्येकत्वे तूत्तमे सदा ।  
 प्रसूनो वाच्यवजाते प्रसूनं फलपुष्पयोः ॥ ९२ ॥  
 प्रसन्ना मदिरायां स्यात्प्रसादसहिते त्रिषु ।  
 प्रेत्या तु सारसे वाते प्रेम तु खेहनर्मणोः ॥ ९३ ॥  
 फाल्गुनस्तु तपस्ये स्यादर्जुने चार्जुनद्रुमे ।  
 फाल्गुनः स्यान्नदीजेऽपि फाल्गुनी पूर्णिमान्तरे ॥ ९४ ॥  
 बन्धनं तु शतबन्धे बन्धमात्रेऽपि बन्धनम् ।  
 वर्द्धनं छेदने वृद्धौ वारिधान्यां तु वर्द्धिनी ॥ ९५ ॥

केसर, हरिताल, ( पु० )  
 पृतना—राक्षसीभेद, हरक, ( स्त्री० )  
 पृतना—सेना—मात्र, सेनाभेद, चमू  
 ( सेनाभेद ), ( स्त्री० ) ॥ ९० ॥  
 प्रज्ञानं—लाञ्छन ( निह ), बुद्धि, ( न० )  
 प्रधान—कठोर बुद्ध, ( न० )  
 प्रधान—परमात्मा, ( न० ) ॥ ९१ ॥  
 क्षेत्रज्ञ, बुद्धि, मंत्री, एकत्व, सदा  
 उत्तम, ( न० )  
 प्रसून—उत्पन्नद्रुवा, ( त्रि० )  
 प्रसून—फल, पुष्प, ( न० ) ॥ ९२ ॥  
 प्रसन्ना—मदिरा, ( स्त्री० ) प्रसादयु-  
 क्त, ( त्रि० )

प्रेत्यन्—सारस-वक्षी, वायु, ( पुं० )  
 प्रेमन्—नेह ( प्रीति ), द्रष्टा, ( न० )  
 ॥ ९३ ॥  
 फाल्गुन—फाल्गुनमास, अर्जुन,  
 फोह वृक्ष, भीष्म, ( पुं० )  
 फाल्गुनी—फाल्गुनमासकी पूर्णिमा,  
 ( स्त्री० ) ॥ ९४ ॥  
 बन्धन—शतबंध, बन्धमात्र, ( न० )  
 वर्द्धन—छेदन, वृद्धि, ( न० )  
 वर्द्धिनी—जलनी, मटकी ( स्त्री० )  
 ॥ ९५ ॥



संपूर्वाद्धर्जनं पोषे वसनं छादनांशुके ।  
 वाणिनी तु मत्तानर्त्तक्योर्विदग्धायां स्त्रियामथ ॥ ९६ ॥  
 वासना वसने वारासनज्ञाने च धूपने ॥  
 वाहिनी स्यादनीकिन्यां सैन्यभेदे सरित्यपि ॥ ९७ ॥  
 गुरौ पुंसि बुधानः स्याद्बुधानः पण्डितेऽपि च ।  
 बोधनी बोधिपिप्पल्योर्बोधनं गन्धदीपने ॥ ९८ ॥  
 सुरवर्त्मनि च व्योम व्योमचारिणि च स्मृतम् ।  
 ब्रह्मा विरिञ्चे विप्रेऽपि ऋत्विक्चन्द्रार्कयोगयोः ॥ ९९ ॥  
 ब्रह्म क्लीवं श्रुतिज्ञानेऽप्यध्यात्मतपसोरपि ।  
 ब्रह्माण्यां भट्टिनी नाट्ये राजयोपिति भट्टिनी ॥ १०० ॥  
 भण्डनं तु खलीकारे युद्धसन्नाहयोरपि ।  
 भर्म स्वर्णे भृतौ सारे भवनं भावसद्गनोः ॥ १०१ ॥

संघर्जन-पोषण, ( न० )

वसन-आच्छादन, वस्त्र, ( न० )

वाणिनी-मदोन्मत्ता स्त्री, नाचनेवाली,  
 चतुरा स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ९६ ॥

वासना-वस्त्र, शतबंधादि, धूपदे-  
 ना, ( स्त्री० )

वाहिनी-सेना, सेनाभेद, नदी,  
 ( स्त्री० ) ॥ ९७ ॥

बुधान-बृहस्पति, पंडित, ( पुं० )

बोधनी-पीपल-वृक्ष, पिप्पली ( औ-  
 पधि ( स्त्री० )

बोधन-गन्धदीपन ( गूगल ) ( न० )  
 ॥ ९८ ॥

व्योमन्-आकाश, अकाराचारी, ( न० )  
 ब्रह्मन्-ब्रह्मा, ब्राह्मण, ब्रह्मरानेवाला,  
 चंद्रसूर्यका योग, ( पुं० ) ॥ ९९ ॥

ब्रह्मन्-श्रुतिज्ञान, ब्रह्मविद्या, तप, ( न० )  
 भट्टिनी-ब्राह्मणी, नाट्ये राजाकी  
 रानी ( स्त्री० ) ॥ १०० ॥

भण्डन-नदीतुल्यको बुधकहना, बुद्ध,  
 कवच, ( न० )

भर्मन्-सुवर्ण, नाटरी, सार, ( न० )  
 भवन-भाव, स्थान, ( न० ) ॥ १०१ ॥

भाजनं पात्रे योग्येऽपि भावना ध्यानलेपयोः ।  
 भुवनं तु जगल्लोकसलिलेषु विहायसि ॥ १०२ ॥  
 भोगी भोगान्विते सर्पे ग्रामण्यां राज्ञि नापिते ।  
 संगृहीतस्त्रियां राजमार्याभेदेऽपि भोगिनी ॥ १०३ ॥  
 मंजनं भोजने क्लीवमलंकर्त्तरि वाच्यवत् ।  
 मदनः सरधचूर्वसन्तद्रुमसिक्थके ॥ १०४ ॥  
 मलनः पठवासेऽपि स्थान्मलनं कर्द्दमे मतम् ।  
 पुष्पवत्यां तु मलिनी मलिनं दूषितेऽसिते ॥ १०५ ॥  
 मार्जनं तु मतं मार्द्ये मार्जनो लोप्रपादपे ।  
 मालिनी वृत्तभेदे स्याद्ब्रह्मामालिकयोपितोः ॥ १०६ ॥  
 गौर्या चम्पानगर्या च राशौ तु मिथुनः पुमान् ।  
 मिथुनं दम्पतीयुग्मे सम्बन्धग्राम्यधर्मयोः ॥ १०७ ॥

भाजन-पात्र, योग्य, ( न० )  
 भावना-ध्यान, लेप, ( स्त्री० )  
 भुवन-जगत्, लोक-स्वर्ग आदि,  
 जल, आकाश, ( न० ) ॥ १०२ ॥  
 भोगिन्-भोगोप्ते युक्त, सर्प, ग्राममें  
 प्रधान, राजा, नाई, ( पुं० )  
 भोगिनी-विवाहके विना संग्रहकरी  
 हुई स्त्री, पाट्टरानीके विना राजाकी  
 अन्य रानी, ( स्त्री० ) ॥ १०३ ॥  
 मंजन-भोजन, ( न० ) मूषितकरने-  
 वाला ( त्रि० ) ।  
 मदन-कामदेव, धतरा, वसन्तवृक्ष  
 ( आमका पेड ), मोम, ( पुं० )  
 ॥ १०४ ॥

मलन-पढनेका स्थान, ( पुं० ) कीच,  
 ( न० )  
 मलिनी-रजस्वला स्त्री, ( स्त्री० )  
 मलिन-दूषित, काला ( न० ) ॥ १०५ ॥  
 मार्जन-माजना, ( न० ) मार्जन-  
 लोषका वृक्ष, ( पुं० )  
 मालिनी-छन्दभेद, गंगा, मालीकी  
 स्त्री ( मालिन ) ॥ १०६ ॥  
 गौरी, चंपानगरी, ( स्त्री० )  
 मिथुन-मिथुन-राशि, ( पुं० ) स्त्रीपु-  
 रयका जोडा, संबंध, स्त्रीसुग, ( न० )  
 ॥ १०७ ॥

मुण्डनं वपने त्राणे मेहनं शिश्रमूत्रयोः ।  
 मैथुनं स्यान्निधुवने मैथुनं सङ्गतावपि ॥ १०८ ॥  
 यमनं स्यादुपरमे वन्धने च यमे तथा ।  
 चापनं वर्तने कालक्षेपे निरसनेऽपि च ॥ १०९ ॥  
 प्रजानो ब्राह्मणेऽपि स्यात्प्रजानः सारथावपि ।  
 युवा तु तरुणे श्रेष्ठे निसर्गबलशालिनि ॥ ११० ॥  
 योजनं तु चतुःक्रोश्यां योगे च परमात्मनि ।  
 रजनी तु हरिद्रायां लाक्षायां नीलिकारसे ॥ १११ ॥  
 रञ्जनो रागजनके रञ्जनं रक्तचन्दने ।  
 रञ्जनी नीलिकाशुण्डामञ्जिष्ठारोचनीष्वपि ॥ ११२ ॥  
 जिह्वाकांचीरसज्ञेषु रसना रसने स्वने ।  
 स्वेदने मूर्छने भ्रूवावाते नासामरुत्पथे ॥ ११३ ॥

मुण्डन-संपूर्ण केशोंका क्षौर, रक्षा, ( न० )	योजन-चारकोश, योग, परमात्मा, ( न० )
मेहनं-लिंग, मूत्र, ( न० )	रजनी-इलदी, लाख, नीलिका रस, ( स्त्री० ) ॥ १११ ॥
मैथुन-स्त्रीसंग, संगति, ( न० ) ॥ १०८ ॥	रंजन-प्रसप्रकरनेवाला, ( पुं० )
यमन-उपराम, बन्धन, यम ( अष्टां- गयोगद्या एक अंग ), ( न० )	रंजन-रक्त चंदन ( न० )
चापन-वर्तना, कालक्षेपकरना, निका- सना, ( न० ) ॥ १०९ ॥	रंजनी-नीली, मदिरा, मँजीठ, गोरो- चन, ( स्त्री० ) ॥ ११२ ॥
प्रजान-ब्राह्मण, सारथि, ( पुं० )	रसना-जिह्वा, करधनी, रसका जान- नेवाला, खाना, शब्द, पसीनादि- वाना, मूर्छा, धमनीका वायु, नासि- कावायुका मार्ग ( स्त्री० ) ॥ ११३ ॥
युधन्-ज्वान, भेष्ट, स्वाभाविक बल- वान्, ( पुं० ) ॥ ११० ॥	

रागी तु कोपने रक्ते रागयुक्तेऽपि कामिनि ।  
 राजा चन्द्रे नृपे शके क्षत्रिये प्रमुयक्षयोः ॥ ११४ ॥  
 राधनं साधने प्राप्तौ तोषणेऽपि च राधनम् ।  
 रेचनी त्रिवृता शुण्डा रोचनी दन्तिकार्थिका ॥ ११५ ॥  
 रोचनी रक्तकहारे कूटशाल्मलिशाखिनि ।  
 अपि गोपित्तमङ्गलरचितस्त्रीषु रोचना ॥ ११६ ॥  
 रोदनं क्रन्दनेऽपि स्यादश्रुमात्रेऽपि रोदनम् ।  
 रोही रोहितके बोधिद्रुमे न्यग्रोधपादपे ॥ ११७ ॥  
 लङ्घनं क्रमणे पीडाकृतोपवसने पुतौ ।  
 ललना तु नितम्बिन्यां जिह्वायां नाडिकान्तरे ॥ ११८ ॥  
 लक्ष्म चिहे प्रधानेऽपि लाञ्छनं नामलक्ष्मणोः ।  
 लेखनं तु लिपिन्यासे छर्दे भूर्जेऽपि लेखनम् ॥ ११९ ॥

रागिन्—क्रोधी, अनुरक्त, राग (प्रीति) वाला, कामी, ( पुं० )

राजन्—चन्द्रमा, राजा, इद्र, क्षत्रिय, प्रभु ( समर्थ ) यक्ष, ( पुं० ) ॥ ११४ ॥

राधन—साधन, प्राप्ति, तुष्टि, ( न० )

रेचनी—निसोध, मदिरा, ( स्त्री० )

रोचनी—जमालगोटाकी जड़, वेदया, ( स्त्री० ) ॥ ११५ ॥

रोचन—खालकमल, कालासेमर-वृक्ष, ( पुं० )

रोचना—गोरोचन, मंगलरचित ( चौ-क ) स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ११६ ॥

रोदन—आवाजसे रोना, आँसूडालना, ( न० )

रोहिन्—हरीशयूक्ष, पीपल-वृक्ष, बह-वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ११७ ॥

लङ्घन—चलना, पीडामेंकिया उपवास, कूटना, ( न० )

ललना—स्त्री, जिह्वा, नाडीभेद, ( स्त्री० ) ॥ ११८ ॥

लक्ष्मन्—चिह्न, प्रधान, ( न० )

लाञ्छन—नाम, चिह्न, ( न० ) .

लेखन—लिपिन्यास ( लिखना ), छर्द ( कञ ), भोजपत्र, ( न० ) ॥ ११९ ॥

वचकुर्वाक्पटौ विप्रे वशी सुगतशक्रयोः ।  
 वपनं मुण्डने वापे वमनं छर्द्दनेऽर्द्दने ॥ १२० ॥  
 आहतावप्यथ क्लीबं वर्जनं त्यागहिंसयोः ।  
 वर्त्तनं जीवने जीव्ये तूलनाले च वर्त्तनम् ॥ १२१ ॥  
 वर्त्तनी तर्कुपिण्डेऽपि मलिने पथि वर्त्तनी ।  
 वर्णां चित्रकरे ब्रह्मचारिलेखकयोरपि ॥ १२२ ॥  
 आकारे शोभने वर्ष्म वर्ष्म देहप्रमाणयोः ।  
 वर्त्म नेत्रच्छदे मार्गे वाग्मी वाचस्पतौ पटौ ॥ १२३ ॥  
 वाजी वाहे खगे वाणे खर्वेषु त्रिषु वामनः ।  
 वामनो विष्णुभेदे स्यादश्वे याम्यादिदिग्गजे ॥ १२४ ॥  
 विक्लिन्नस्तिमिते जीर्णे जराजीर्णेपि वाच्यवत् ।  
 विच्छिन्नस्तु समालब्धे विभक्ते कुटिलेऽन्यवत् ॥ १२५ ॥

वचकु-बहुतबोलनेवाला, ( त्रि० )  
 माक्षण, ( पुं० )  
 वशिन्-बुद्धदेव, इन्द्र, ( पुं० )  
 वपन-मुण्डन, शोना-शोजआदिका  
 ( न० )  
 वमन-छर्दन, अर्दन (पीडन) ॥१२०॥  
 जानसे मारना, ( न० )  
 वर्जन-दान, हिंसा, ( न० )  
 वर्त्तन-जीना, आजीविता, रुद्धी-  
 नाली, ( न० ) ॥ १२१ ॥  
 वर्त्तनी-शुक्ली, मलिन, मार्ग, ( स्त्री० )  
 वर्णिन्-विग्रहार, मद्रवादी, संराक्ष  
 ( पुं० ) ॥ १२२ ॥

वर्ष्म-आकार, सुंदर, शरीर, प्रमाण,  
 ( न० )  
 वर्त्मन्-पलक, मार्ग, ( न० )  
 वाग्मिन्-बृहस्पति, चतुर, ( पुं० )  
 ॥ १२३ ॥  
 वाजिन्-अश्व, पक्षी, वाण, ( पुं० )  
 वामन-बांजा, ( त्रि० ) विष्णु अव-  
 तार ( वामन ), अश्वभेद, दक्षिण  
 दिशाका हस्ती, ( पुं० ) ॥ १२४ ॥  
 विक्लिन्न-गलाहुवा, जीर्ण, ( पुं० )  
 वृद्धअवस्थासे जीर्ण ( वृद्ध ) ( त्रि० )  
 विच्छिन्न-अच्छेदप्रकारसे छप, वि-  
 भागकियाहुवा, कुटिल, ( त्रि० )  
 ॥ १२५ ॥

विज्ञानं कर्मणे ज्ञाने वितानं रिक्तमन्दयोः ।

त्रिपु न स्त्री वितानं स्याद्विस्वारोल्लोचयोर्मले ॥ १२६ ॥

बलवैश्मन्यवसरे वृत्ते च क्रतुकर्मणि ।

विपन्नो भुजगे पुंसि त्रिपु नष्टे विपद्गते ॥ १२७ ॥

विमानो व्योमयानेऽस्त्री सप्तमूमौ गृहेऽपि च ।

विलग्नस्त्वंगमध्ये स्याद्विष्वेव चाङ्गलमयोः ॥ १२८ ॥

विपद्गन्तु शिरीषे स्याद्बुद्धचीत्रिवृतोः स्त्रियाम् ।

वृजिनं कल्पे क्लीबं केशे ना कुटिले त्रिपु ॥ १२९ ॥

वृषा सुरेश्वरे कर्णे वेदना ज्ञानपीडयोः ।

वेष्टनं कर्णशष्कुल्यामुष्णीपे मुकुटे वृतौ ॥ १३० ॥

व्यञ्जनं तेमने श्मश्रुचिहावयवकादिषु ।

स्वातंत्र्यकृत्ये व्युत्थानं विरोधाचरणेऽपि वा ॥ १३१ ॥

विज्ञान—औषधियोंके योगसे उच्चारण  
आदि कर्म, ज्ञान, ( न० )

वितान—रीता, मद, ( त्रि० ) वि-  
स्वार, चंदोवा, यज्ञ, ॥ १२६ ॥ तं-  
बूदेरा, अवसर, वृत्तांत, यज्ञकर्म  
( पु० न० )

विपद्ग्न—सर्प, ( पुं० ) नष्ट, विपत्को  
प्राप्त, ( त्रि० ) ॥ १२७ ॥

विमान—आकाशमें चलनेवाला रथ,  
सातखनी घर, ( पुं० न० )

विलग्न—अंगका मध्यभाग ( कटि ),  
जन्मलभ, लग्नमात्र ( मेपादि )  
( धि० ) ॥ १२८ ॥

विपद्ग्न—सिरस वृक्ष, ( पुं० ) गिलोय,  
निसोध ( धी० )

वृजिन—पाप, ( न० ) केश, ( पुं० )  
कुटिल, ( त्री० ) ॥ १२९ ॥

वृषन्—इंद्र, कर्ण, ( पु० )  
वेदना—ज्ञान पीडा, ( धी० )

वेष्टन—बानकी शष्कुली, पगडी,  
मुकुट, चारोतरफका घेरा ( न० )  
॥ १३० ॥

व्यंजन—शाक व कडी आदि, मूँलडाडी'  
चिह्न, अवयव आदि, ( न० )

व्युत्थान—स्वतंत्रतासे कृत्य, विरो-  
धका आचरण, ( न० ) ॥ १३१ ॥

व्यसनं त्वशुभे सक्तौ पानस्त्रीमृगयादिषु ।

दैवानिष्टफले पाके विपत्तौ विफलोद्यमे ॥ १३२ ॥

सक्तिमात्रे सुचरिताङ्गशे कोपजदूपणे ।

शकुनं मङ्गलाशंसिनिमित्ते शकुनः खगे ॥ १३३ ॥

शकुनिः पुंसि विहगे सौवश्वे करणान्तरे ।

शङ्खिनी शङ्खयूधे स्याद्भुजङ्गस्त्रीप्रभेदयोः ॥ १३४ ॥

शङ्खिनी वेतपुत्रागे चोरपुष्प्यां च शङ्खिनी ।

शतघ्नी शस्त्रभेदेऽपि वृश्चिकालीकरञ्जयोः ॥ १३५ ॥

शमनस्तु यमे शान्तिवधयोः शमनं मतम् ।

शयनं तल्पमात्रेऽपि निद्रासुरतयोरपि ॥ १३६ ॥

शाखी महीरुहे वेदे तुरुष्काख्यजनेऽपि च ।

शास्त्राज्ञाराजदत्तोर्वीराजलेखेषु शासनम् ॥ १३७ ॥

व्यसन-अशुभ, आसक्ति, पान, स्त्री,  
शिकार, भाग्यवशसे अनिष्टफल,  
कर्मफल, विपत्ति, विफल-  
द्यम, ॥ १३२ ॥ आसक्तिमात्र,  
अच्छे चरितसे गिरना, कोपसे उत्प-  
न्नहुवा दोष, ( न० )

शकुन-मंगलको कहनेवाला निमित्त,  
( न० ) पक्षी, ( पुं० ) ॥ १३३ ॥

शकुनि-पक्षी, धौरयोका नामा, क-  
र्णभेद, ( पु० )

शङ्खिनी-शंखयूध, सर्पभेद, स्त्री-  
भेद, ॥ १३४ ॥ सफेद-सुप्ताग

वृक्ष, चोरहुली, ( स्त्री० ) ।

शतघ्नी-शस्त्रभेद, वृश्चिकाली, कर-  
ञ्जवा, ( स्त्री० ) ॥ १३५ ॥

शमन-धर्मराज, ( पुं० ) शांति,  
हिंसा, ( न० ) ।

शयन-शय्यामात्र, निद्रा, स्त्रीसंग,  
( न० ) ॥ १३६ ॥

शास्त्रिन्-वृक्ष, वेद, तुरुष्कजाति-  
जन, ( पु० )

शासन-शास्त्र, आज्ञा, राजाकी  
दीर्घई पृथ्वी, राजाका लेख, ( न० )

॥ १३७ ॥

अधिष्ठानं प्रभावेऽपि पुरेऽन्यासनचक्रयोः ।  
 अनूचानो विनीतेऽपि साङ्गवेदविचक्षणे ॥ १५६ ॥  
 नयनाग्रेऽप्यनूचानः पुमानेव कचिन्मतः ।  
 अन्वासनं तु सेवायां स्नेहवस्तानुपासने ॥ १५७ ॥  
 अपाचीनं त्रिषु विपर्यस्ते दक्षिणसम्भवे ।  
 जन्मभूम्यामभिजनः कुले ख्यातौ कुलध्वजे ॥ १५८ ॥  
 अभिपन्नोऽपराद्धेऽभिद्रुते ग्रस्ते विपद्रुते ।  
 दक्षिणे स्त्रीकृतेऽपि स्यादभिपन्नोऽभिधेयवत् ॥ १५९ ॥  
 अभिमानः पुमान्गर्वेऽज्ञानेऽप्रणयहिंसयोः ।  
 अर्यमा मिहिरे सूर्यमुक्तायां पितृदैवते ॥ १६० ॥  
 अवदानं मतमिति वृत्तकर्मणि खण्डने ।  
 तनुमध्येऽवलम्बः स्यात्संलम्बे त्वभिधेयवत् ॥ १६१ ॥

अधिष्ठान-प्रभाव, पुर, स्थितहोना,  
 चक्र, ( न० )

अनूचान-विनीत, अगसहित वेदप-  
 दनेवाला, ( पुं० ) ॥ १५६ ॥

अनूचान-अच्छा, नीतिजाननेवाला,  
 ( पुं० )

अन्वासन-सेवा, स्नेहवस्ति ( वस्ति-  
 कर्म ), उपासना ( न० ) ॥ १५७ ॥

अपाचीन-विपर्यस्त ( उलटा ), द-  
 क्षिणदिशामें होनेवाला, ( त्रि० )

अभिजन-जन्मभूमि, कुल, विख्याति,  
 कुलध्वज, ( पुं० ) ॥ १५८ ॥

अभिपन्न-अपराधयुक्त, भगाहुवा,

प्रसूहुवा, विपत्को प्राप्तहुवा, ( पुं० )  
 चतुर, अगीकारकियाहुवा ( त्रि० )

॥ १५९ ॥

अभिमान-गर्व, अज्ञान, अप्रणय  
 ( अप्रता ), हिंसा, ( पुं० )

अर्यमन्-सूर्य ( पुं० ) सूर्यकी त्यागी-  
 हुई दिशा ( स्त्री० ) पितरोंका देव-  
 ता, ( पुं० ) ॥ १६० ॥

अवदान-बंदीतहुवा, कर्म, खण्डन,  
 दुकड़ाकरना, ( न० )

अवलम्ब-शरीरका बाँध, अच्छीतरह,  
 लगाहुवा, ( त्रि० ) ॥ १६१ ॥



उद्धाहनं द्विसीत्ये स्याद्रज्ज्वावुद्धाहिनी मता ।

अंशुके रूपधानं स्याद्विशेषप्रणयेपि च ॥ १६८ ॥

उपासनं शराभ्यासे शुश्रूपाहिंसयोरपि ।

कञ्चुकी सौविदल्लेपि सर्पे खिञ्जेऽपि जोङ्गके ॥ १६९ ॥

शिरीषाभ्रातकाश्चत्थगर्दभाण्डे कपीतनः ।

कलध्वनिः कलरवे कपीतपिकवार्हिषु ॥ १७० ॥

कलापी प्लक्षवृक्षे स्यान्मेषनादानुलासिनि ।

कात्यायनो वररुचौ गौर्या कात्यायनी स्त्रियाम् ॥ १७१ ॥

कापायवस्त्रार्द्धवृद्धविधवायामपि स्मृता ।

रक्तचन्दनपत्राङ्गद्रुमभेदे कुचन्दनम् ॥ १७२ ॥

कुण्डली वरुणे केकिमृगाहिषु सकुण्डले ।

कुम्भयोनिरगस्त्ये स्यादर्जुनस्य गुरावपि ॥ १७३ ॥

उद्धाहन-दोवार पाहाहुवा क्षेत्र, (न०)

उद्धाहिनी-रज्जु (रस्ती) (स्त्री०)

॥ १६८ ॥

उपासन-माणछोडनेका अभ्यास,

शुश्रूषा, हिंसा, (न०)

कञ्चुकिन्-झोंडीपर रहनेवाला, सर्प,

चतुरनर, अगर-वृक्ष, (पुं०)

॥ १६९ ॥

कपीतन-सिरस, अंबाडा, पीपल,

बडीहरद, (पुं०)

कलध्वनि-मधुरसब्द, कनूतर, प-

पीर, मोर (पुं०) ॥ १७० ॥

कलापिन्-पिलखन-वृक्ष, मोर, (पुं०)

कात्यायन-वररुचि, (पुं०)

कात्यायनी-गौरी, ॥ १७१ ॥ गेरूके-

रंगे वस्त्रधारनेवाली अधवृद्धी विध-

वा. (स्त्री०)

कुचन्दन-रक्तचन्दन, पतंग-वृक्ष या

भोजपत्र-वृक्ष, (न०) ॥ १७२ ॥

कुण्डलिन्-वरुण, मोर, मृग, सर्प, कुं-

डलवाला, (पुं०)

कुम्भयोनि-अगस्त्यमुनि, अर्जुनका

गुरु, (पुं०) ॥ १७३ ॥

केशरी सिंहपुत्रागनागकेशरवाजिपु ।

क्रौञ्चादनस्तु पिप्पल्यां चिञ्चोटकमृणालयोः ॥ १७४ ॥

स्वकामिनी तु निर्दिष्टा चर्चिकाचिल्लयोपितोः ।

खड्गधेनुः स्त्रियां खड्गपुत्रिकागण्डकस्त्रियोः ॥ १७५ ॥

गदयित्नुस्तु जल्पाके कामकामुकयोरपि ।

गवादनीन्द्रवारुण्यां गवां घासादपाश्रये ॥ १७६ ॥

घनाघनो वर्षुकाब्दे शक्रे मत्तद्विषे घने ।

अन्योन्याद् घट्टके चैव घातुके तु घनाघनः ॥ १७७ ॥

घोषयित्नुः पिके विप्रे चित्रभानुरिनेऽनले ।

चोलकी नागरङ्गे स्यात्करीरे किष्कुपर्वणि ॥ १७८ ॥

वर्तते कङ्कफ....बुधाराटेषु जलाटनः ।

जनाटनं जलभ्रान्तौ जलौकायां जलाटनी ॥ १७९ ॥

केशरिन्—सिंह, वंषा, नागकेशर,  
अश्व, ( पुं० )

क्रौञ्चादन—पिप्पली, चिञ्चोटक-मृण,  
कमल, ( पुं० ) ॥ १७४ ॥

स्वकामिनी—रोगभेद, चीन्हेपशीकी  
स्त्री ( स्त्री० )

खड्गधेनु—सुरी, गैडाकी स्त्री, ( स्त्री० )  
॥ १७५ ॥

गदयित्नु—बहुत बोलनेवाला, धम-  
देव, कामी—पुरुष ( पुं० )

गवादनी—गहूँभा, गौबोंके पास चर-  
नेका स्थल, ( स्त्री० ) ॥ १७६ ॥

घनाघन—बर्षनेवाला मेघ, इंद्र, मत्त-  
हस्ती, मेघमात्र, आपसमें घटने-  
वाला, मारनेवाला, ( पुं० ) ॥ १७७ ॥

घोषयित्नु—कोयल, ब्राह्मण, ( पुं० )  
चित्रभानु—सूर्य, अग्नि ( पुं० )

चोलकिन्—नारंगी, कैर, ईस या  
बांस, ( पुं० ) ॥ १७८ ॥

जलाटन—...जलमें चलना ( न० )  
जलाटनी—जोक, ( स्त्री० ) ॥ १७९ ॥

जलमीनश्चिलिचिमे इञ्चाकशिशुमारयोः ।  
 तपोधना तु मुण्डीर्या तपस्विनि तपोधनः ॥ १८० ॥  
 तपस्वी तापसे चानुकम्प्ये चाथ तपस्विनी ।  
 मासिकाकटुरोहिण्योस्तरस्वी वेगिशूरयोः ॥ १८१ ॥  
 दुर्नामा पङ्कशुकतौ दुर्नाम क्लीवमर्शसि ।  
 देवसेना तु गीर्वाणसेना देवेन्द्रकन्ययोः ॥ १८२ ॥  
 द्विजन्मा ब्राह्मणेऽपि स्याद् द्विजन्मा दशने खगे ।  
 करिमुद्गरिकानागयष्टचोर्नागाञ्जना स्त्रियाम् ॥ १८३ ॥  
 मतं भवेन्निधुवनं सुरते कम्पनेऽपि च ।  
 स्यान्निरासे निरसनं वधे निष्ठीवने तथा ॥ १८४ ॥  
 निर्वासनं तु निर्वासहिंसयोर्गतवासरे ।  
 निर्भर्त्सनं तु निर्दिष्टं खलीकारेऽप्यलक्तके ॥ १८५ ॥

जलमीन-जलमा तृण (सिवाल) चर-  
 नेवाली मच्छी, ... शिशुमार मच्छ  
 ( पुं० )

तपोधना-गोरखमुंडी, ( स्त्री० )

तपोधन-तपस्वी, ॥ १८० ॥

तपस्विन्-तपस्वी, दयाकरने योग्य,  
 ( पुं० )

तपस्विनी-जटामांसी, पुटकी, ( स्त्री० )

तरस्विन्-वेगवाला, शरवीर, ( पुं० )

॥ १८१ ॥

दुर्नामन्-जोकके समान कीचका  
 जन्तु, ( स्त्री० ) दुर्नामन्-बवा-

सौर ( न० )

देवसेना-देवताओंकी सेना, इंद्रकी  
 कन्या, ( स्त्री० ) ॥ १८२ ॥

द्विजन्मन्-ब्राह्मण, दाँत, पक्षी, ( पुं० )

नागाञ्जना-हस्तियोंका मुद्गर, नाग-  
 खेल, ( स्त्री० ) ॥ १८३ ॥

निधुवन-मैधुन, कंपन, ( न० )

निरसन-निकालना, मारना, धूकना,  
 ( न० ) ॥ १८४ ॥

निर्वासन-उजाड़ना, हिंसा, गया-  
 हुआ दिन, ( न० )

निर्भर्त्सन-क्षिडकना, जावक, ( न० )  
 ॥ १८५ ॥

दाने न्यासार्पणे वैरशुद्धौ निर्यातनं मतम् ।

श्रुतौ दृष्टौ निशमनं दृष्ट्यालोचे निशामनम् ॥ १८६ ॥

तपस्विनी पुनर्मांसी कटुरोहिणिकाऽपि च ।

परिज्या तु पुमानिदौ याज्ञिके परिचारके ॥ १८७ ॥

पलाशी राक्षसे वृक्षेऽप्यथ पुण्यजनः पुमान् ।

रक्षःसज्जनयज्ञेषु मूर्खे नीचे पृथग्जनः ॥ १८८ ॥

भवेत्प्रजननं योनौ जन्मप्रजनयोरपि ।

प्रणिधानं प्रयत्ने स्यात्समाधौ च प्रवेशने ॥ १८९ ॥

प्रतिमानं प्रतिकृतौ गजदन्तान्तरालके ।

प्रतिपन्नः प्रतिज्ञाते विज्ञातेऽप्यभिधेयवत् ॥ १९० ॥

प्रतिपन्नस्तु संस्कारे लिप्तायामप्युपग्रहे ।

प्रत्यर्थी वाच्यलिङ्गः स्याद्विद्वेषिप्रतिवादिनोः ॥ १९१ ॥

निर्यातनं—दान, धरोहड रक्षना,  
वैरका त्यागना, ( न० )

निशमन—मुनना, देखना, ( न० )  
निशामन—दृष्टिसे देखना, ( न० )

॥ १८६ ॥

तपस्विनी—जटामांसी, कुटकी,  
( त्रि० )

परिज्यान्—बंदमा, यहकरानेवाला,  
शुभ्रया करनेवाला, ( पुं० ) ॥ १८७ ॥

पलाशिन्—राक्षस, वृक्ष, ( पुं० )

पुण्यजन—राक्षस, समन, यह, ( पुं० )

पृथग्जन—मूर्ख, नीच, ( पुं० ) ॥ १८८ ॥

प्रजनन—शोनि, जन्म, गर्भग्रहण  
करना, ( न० )

प्रणिधान—प्रयत्न, समाधि, प्रवेशन,  
( न० ) ॥ १८९ ॥

प्रतिमान—मूर्ति, हस्तिदंत, यौच,  
( व० )

प्रतिपन्न—प्रतिज्ञाकिया हुवा, जाना-  
हुवा, ( त्रि० ) ॥ १९० ॥

प्रतिपन्न—संस्कार, लाभ करनेकी  
इच्छा, उपग्रह, ( पुं० )

प्रत्यर्थिन्—विद्वेषी, प्रतिवादी, ( त्रि० )  
॥ १९१ ॥

प्रयोजनं मतं कार्ये हेतौ च स्यात्प्रयोजनम् ।  
 भवेत्प्रवचनं वेदे प्रकृष्टवचनेऽपि च ॥ १९२ ॥  
 प्रस्फोटनं तु सूर्पे स्यात्ताडनेऽपि प्रकाशने ।  
 प्रसाधनी कंकतिकासिद्ध्योर्वेशे प्रसाधनम् ॥ १९३ ॥  
 क्लीबं प्रहसनं भङ्गे प्रहासाक्षेपयोरपि ।  
 फलकी राजसफरे तथा फलकपाणिके ॥ १९४ ॥  
 वर्द्धमानः शरावैरण्डयोः प्रश्नान्तरेऽच्युते ।  
 दृश्यते वर्द्धमानस्तु वृद्धिमत्यपि वाच्यवत् ॥ १९५ ॥  
 वारकी द्विपि पाथोधौ पर्णाजीवे हयान्तरे ।  
 वारासनं वाःसदने शूलापद्धारपालयोः ॥ १९६ ॥  
 परमेष्ठिनि भूतात्मा भूतात्मा पिङ्गलेऽपि च ।  
 मदयिद्भुर्मतो मेधे मदयिद्भुस्तु शीधुनि ॥ १९७ ॥

प्रयोजन-कार्य, कारण, ( न० )

प्रवचन-वेद, श्रेष्ठ वचन, ( न० )

॥ १९२ ॥

प्रस्फोटन-सूर्प, ( छात्र ), ताडना,  
 प्रकाशन, ( न० )

प्रसाधनी-कंपी, सिद्धि, ( स्त्री० )

प्रसाधन-वेश ( शृंगार ) ( न० )

॥ १९३ ॥

प्रहसन-एकप्रकारका काव्य, हँसना,  
 आक्षेप, ( न० )

फलकिन्-मरुती-भेद, वाक्पारी,

( पुं० ) ॥ १९४ ॥

वर्द्धमान-मिथैका शराव, अरंड,  
 प्रभ्रभेद, विष्णु ( पुं० ) वृद्धिवाला,

( त्रि० ) ॥ १९५ ॥

वारकिन्-शत्रु, समुद्र, पत्तोंसे आजी-  
 विका करनेवाला, अभ्रभेद, ( पुं० )

वारासन-जलस्थान ( न० ) त्रिशूल,  
 अपद्धारपाल ( मकानकी पिछाडीकी  
 रक्षावाला ) ( पुं० ) ॥ १९६ ॥

भूतात्मन्-ब्रह्मा, विगतवर्ण, ( पुं० )

मदयिद्भु-मेघ, मदिरा ( पुं० )

॥ १९७ ॥

महाधनं महामूल्ये चारुवस्त्रेऽपि सिद्धके ।

महामुनिरगस्त्ये स्याद्दान्याकागस्त्ययोरापि ॥ १९८ ॥

महासेनो विशास्त्रेऽपि महासेनापतावपि ।

मातुलानी तु भङ्गायां कलाये मातुलक्षियाम् ॥ १९९ ॥

मालुधानश्चित्रसर्पे महापद्मे लतान्तरे ।

मालुधान्यथ मेधावी वाच्यवन्मेधयान्विते ॥ २०० ॥

ब्राह्म्यां मेधाविनी स्याता गरुडेऽपि रसायनः ।

रसायनं जराव्याधिहरे विपक्विडङ्गयोः ॥ २०१ ॥

राजादनं प्रियालद्रौ क्षीरिकायां च किंशुके ।

ललामवल्ललामं च चिहे रम्ये विभूषणे ॥ २०२ ॥

शृङ्गे प्रधाने लाङ्गले प्रभावध्वजवाजिषु ।

पुण्ड्रेऽपि लाङ्गली तु स्यान्नालिकेरे हलायुधे ॥ २०३ ॥

महाधन-वशामूल्यवाला, मुहरवस्त्र,  
हींग, ( न० )

महामुनि-अगस्त्य-मुनि, धनियो,  
दधिया-वृक्ष, ( पुं० ) ॥ १९८ ॥

महासेन-सामिकार्तिक, महासेनाका  
पति, ( पुं० )

मातुलानी-भंग, मटरअन्न, मामाकी  
स्री ( मामी ) ( स्त्री० ) ॥ १९९ ॥

मालुधान-चित्रसर्प, षड्दकमल ( पुं० )

मालुधानी-लताभेद, ( स्त्री० )  
मेधाविन्-अरुटी बुद्धिवाला, ( त्रि० )  
॥ २०० ॥

मेधाविनी-ब्राह्मी, ( स्त्री० )

रसायन-गरुड, ( पुं० ) वृद्धता और  
रोगको हरनेवाला औषध, बच्छ-  
नाग, वायविडंग, ( न० ) ॥ २०१ ॥

राजादन-चिरोजी-वृक्ष, खिरनी,  
केम्, ( न० )

ललामन्-ललाम-चिह्न, मुंदर,  
विभूषण, ॥ २०२ ॥ सौंग, प्रधान,  
पूँछ, प्रभाव, ध्वजा, अध, पाँदा,  
( न० )

लांगलिन्-नारियल, बलदेव, ( पुं० )  
॥ २०३ ॥

वनश्वा जम्बुके व्याघ्रे गन्धमार्जारकेऽपि च ।  
 विरोचनोऽर्के दहने चन्द्रे प्रहादनन्दने ॥ २०४ ॥  
 तरलायां लसद्वेश्याङ्गनायां च विलेपनी ।  
 विलासी भोगिनि व्याले विश्वप्सा वह्निचन्द्रयोः ॥ २०५ ॥  
 विषयि त्विन्द्रिये क्लीबं वाच्यवद्विषयान्विते ।  
 विषयी स्यान्मनसिजे लब्धे वैषयिके नृपे ॥ २०६ ॥  
 अनधीते भुजिष्ये च विषाणी शृङ्गिनागयोः ।  
 विष्वक्सेनोऽच्युते विष्वक्सेना तु फलिनीद्रुमे ॥ २०७ ॥  
 विसर्जनं परित्यागे दाने सम्प्रेषणे वधे ।  
 विस्मापनो हरिश्चन्द्रपुरे ना कुहके स्मरे ॥ २०८ ॥  
 मतं विहननं घाते पिञ्जने तूलधूनने ।  
 नानाविडम्बे हिंसायां मर्दनेऽपि विहेठनम् ॥ २०९ ॥

वनश्वन्-गीदह, बघेरा, गंधविलाव, ( पुं० )	विष्वक्सेन-विष्णु, ( पुं० )
विरोचन-सूर्य, अग्नि, चंद्रमा, प्रहा- दका पुत्र, ( पुं० ) ॥ २०४ ॥	विष्वक्सेना-कलिहारी-वृक्ष, ( स्त्री० ) ॥ २०७ ॥
विलेपनी-यवागू, सुंदरवेश्या, ( स्त्री० )	विसर्जन-परित्याग, दान, सम्प्रेषण ( प्रेरण ), वध, ( न० )
विलासिन्-भोगी-पुरुष, सर्प, ( पुं० )	विस्मापन-हरिश्चन्द्रराजासुर पुर, कपटी, कामदेव, ( पुं० ) ॥ २०८ ॥
विश्वप्सन्-अग्नि, चंद्रमा, ( पुं० ) ॥ २०५ ॥	विहनन-घात ( मारना ), पीनना, झंका धुतना, ( न० )
विषयि-इन्द्रिय, ( न० ) विषययुक्त, ( त्रि० ) कामदेव, लब्धहुवा, विषयमें होनेवाला, राजा ॥ २०६ ॥	विहेठन-अनेक प्रकारका विडंबन ( नकल ), हिंसा, मलना, ( न० ) ॥ २०९ ॥
विनापटा, नौकर, ( पुं० )	
विषाणिन्-सीमवाला, नाग, ( पुं० )	

वृक्षादनी वृक्षरहाविदारीरुन्दयोर्मता ।

वृक्षादनं मधुच्छत्रे कुठाराश्वत्ययोः पुमान् ॥ २१० ॥

वैरोचनस्तु बल्यर्कपुत्रयोः सुगतान्तरे ।

व्यवायी द्रव्यभेदे स्यात्कामुकेऽप्यभिधेवत् ॥ २११ ॥

शिखरी स्यादपामागं गिरौ कोट्टेऽपि शास्त्रिणि ।

शिखण्डी शरभिद्वीप्सद्विपोः केकिकलापयोः ॥ २१२ ॥

शिखण्डिनी तु गुञ्जाया यूथिकायां शिखण्डिनी ।

शृङ्गारी चारुवेशेऽपि कामुके क्रमुके गजे ॥ २१३ ॥

मता श्लेष्मघना मह्यां केतकीभक्तसज्जयोः ।

सदादानोऽभ्रमातङ्गे हेरम्ये गन्धहस्तिनि ॥ २१४ ॥

सन्नातनो हरे विष्णौ पितृणामतिथौ स्थिरे ।

नित्येऽप्यथ समापन्नं प्राप्ते क्लिष्टसमाप्तयोः ॥ २१५ ॥

वृक्षादनी—अमरवेल, विदारीरुन्द,  
( स्त्री० )

वृक्षादन—मधुच्छत्र ( न० ) कुहाफा,  
पीपल—वृक्ष, ( पु० ) ॥ २१० ॥

वैरोचन—बलिका पुत्र, सूर्यका पुत्र,  
बुद्ध—भगवान्, ( पुं० )

व्यवायिन्—द्रव्यभेद, कामी पुष्ट्य  
आदि ( त्रि० ) ॥ २११ ॥

शिखरिन्—चिरविद्या, पर्वत, कोट,  
वृक्ष, ( पुं० )

शिखण्डिन्—शरभेद, भीष्मका शत्रु,  
मोर, मोरपक्ष, ( पुं० ) ॥ २१२ ॥

शिखण्डिनी—चोंटली ( चिरमठी ),  
जही-पुष्पपेड, ( स्त्री० )

शृङ्गारिन्—सुंदरवेशवाला, कामीपु-  
ष्ट्य, सुपारी-वृक्ष, हस्ती, ( पुं० )

॥ २१३ ॥

श्लेष्मघना—मालती या मोतिया,  
केतकी ( स्त्री० ) भात, कवच  
( न० )

सदादान—इंद्रहस्ती, गणेश, गंधह-  
स्ती, ( पु० ) ॥ २१४ ॥

सन्नातन—महादेव, विष्णु, पितरोका  
अतिथि, स्थिर, नित्य होनेवाला,  
( पु० )

समापन्न—प्रातहुवा, क्लिष्ट(क्लेशयुक्त),  
समाप्त, ॥ २१५ ॥ ( त्रि० ) वध,  
( न० )



समापन्नं वधे क्लीबं समाप्तौ तु समापनम् ।  
 समापनं परिच्छेदे समाधाने च मारणे ॥ २१६ ॥  
 समादानं समीचीनग्रहणे नित्यकर्मणि ।  
 समुत्थानं मतं रोगनिर्णयेऽपि समुद्यमे ॥ २१७ ॥  
 संमूर्च्छनमभिव्याप्तौ संमूर्च्छायां च मोहने ।  
 संवाहनं तु भारादेर्वाहनेऽप्यङ्गमर्दने ॥ २१८ ॥  
 स्यात्संवदनमालोचे संवादे च वशीकृतौ ।  
 सरोजिनी तु पद्मिन्यां सरोजे च सरोवरे ॥ २१९ ॥  
 सामयोनिस्तु सामोत्थे मातङ्गे परमेष्ठिनि ।  
 सामिधेनी ऋचि प्रोक्ता सामिधेनी समिध्यपि ॥ २२० ॥  
 मतं सारसनं काढ्यामुरस्त्रे च तनुत्रिणाम् ।  
 सुकर्मा योगभेदेऽपि सुकर्मा देवशिल्पिनि ॥ २२१ ॥

समापन-समाप्ति, परिच्छेद ( प्रप- विभाग ), समापान, मारना, ( न० ) ॥ २१६ ॥	संवदन-देखना, संवादकरना, मशमें करना, ( न० )
समादान-अर्च्छांतरद ग्रहणकरना, नित्यकर्म ( न० )	सरोजिनी-कमलिनी, कमल, सरो- वर, ( स्त्री० ) ॥ २१९ ॥
समुत्थान-रोगका निर्णय, अरुतेन- कारसे उद्यम, ( न० ) ॥ २१७ ॥	सामयोनि-ग्रामसे उत्पन्नहुना, हस्ती, प्रज्ञा, ( पुं० )
संमूर्च्छन-अभिव्याप्ति, संमूर्च्छा, मो- हन, ( न० )	सामिधेनी-वेदकृत्वा, समिध् ( प- लाती ) ( स्त्री० ) ॥ २२० ॥
संवाहन-भारआदिवा वहना, अंग- का मर्दन करना, ( न० ) ॥ २१८ ॥	सारसन-तगड़ी, शरीरकी रक्षाकरने- वालोंका उरस्त्र, ( न० )
	सुकर्मान्-एकयोग, देवन'ओंका शिल्- पिनी ( कारीगर ) ( पुं० ) ॥ २२१ ॥

सुदर्शनं सुरपुरे हरेश्चक्रे सुदर्शनः ।

सुदर्शना मेरुजम्बामाजायामोषधीभिदि ॥ २२२ ॥

त्रिषु नेत्रानन्दकरे सुदामा त्वम्बुदे गिरौ ।

सुधन्वा धीरधानुक्ते सुधन्वा विश्वकर्मणि ॥ २२३ ॥

सुपर्वा त्रिदशे वशे शरे धूमे प्रपर्वाणि ।

सुयामुनो वत्सराजे सौधेऽप्यभ्रान्तरे हरौ ॥ २२४ ॥

सौदामिनी तडिद्वेदविद्युतोरप्सरोन्तरे ।

यमपुर्या संयमनी व्रते संयमनं मतम् ॥ २२५ ॥

स्तनयित्पुर्षने मेघस्तने मृत्यौ गदेऽपि च ।

हर्षयित्पुः सुते पुंसि कनके तु नपुंसकम् ॥ २२६ ॥

नपञ्चमम् ।

अग्रजन्मा विधौ विभे ज्येष्ठभ्रातरि च स्मृतः ।

अतिसर्जनमिच्छन्ति वधे दानेऽपि न द्वयोः ॥ २२७ ॥

सुदर्शन-स्वर्ग, ( न० ) विष्णुका  
चक्र, ( पुं० )

सुदर्शना-सुमेरुके जामनका वृक्ष,  
आज्ञा, औषधिभेद, ( स्त्री० )

॥ २२२ ॥ नेत्रोक्तो आनन्दकरने-  
वाला, ( त्रि० )

सुदामन्-मेघ, पर्वत, ( पुं० )

सुधन्वन्-धीरवान, धनुषधारी, विश्व-  
कर्मा ( देवशिल्पी ( पु० ) ॥ २२३ ॥

सुपर्वन्-देवता, वंश, शर, धूर्वा,  
श्रेष्ठपर्व, ( पु० )

सुयामुन-चंद्रवशका एक राजा,  
महल, मेघभेद, विष्णु, ( पुं० )

॥ २२४ ॥

सौदामिनी-विजली-भेद, विजला,  
अप्सरा भेद, ( स्त्री० )

संयमनी-धर्मराजकी पुरी, ( स्त्री० )

संयमन-व्रत ( न० ) ॥ २२५ ॥

स्तनयित्पु-मेघ, मेघशब्द, मृत्यु,  
रोग, ( पुं० )

हर्षयित्पु-पुन, ( पुं० ) सुवर्ण, ( न० )

॥ २२६ ॥

नपञ्चम ।

अग्रजन्मन्-ब्रह्मा, ब्राह्मण, बडा-  
भ्राता, ( पुं० )

अतिसर्जन-भारता, दान, ( न० )

॥ २२७ ॥

अनुवासनमाख्यातं स्नेहकर्मणि धूपने ।  
 अन्तेवासी तु चण्डाले शिष्यप्रान्तगयोरपि ॥ २२८ ॥  
 अपवर्जनमित्येतद् दानेऽपि परिवर्जनम् ।  
 अथ स्यादभिनिष्ठानः पुंसि चन्द्रविसर्गयोः ॥ २२९ ॥  
 स्यादुपस्पर्शनं स्पर्शे स्नाने चाचमनेऽपि च ।  
 त्रिलिंग्यामुपसंपन्नं निहितेऽपि सुसंस्कृते ॥ २३० ॥  
 कपिशायनमित्येतन्मये देशान्तरे पुमान् ।  
 कामचारी तु चटके कामिस्वच्छन्दयोल्लिपु ॥ २३१ ॥  
 धातुवादरते कांस्यकारे कारन्धमी मतः ।  
 किष्कुपर्वा तु वंशे स्यात्कोपकारे नडे(ले)ऽपि च ॥ २३२ ॥  
 कृष्णवर्त्मा हुतवहे दुराचारे विधुन्तुदे ।  
 कोपने खरसोले च वर्त्तते खरभाजनम् ॥ २३३ ॥

अनुवासन-स्नेहकर्म ( स्नेहवस्त्रि आदि), धूपन(धूपसे मुगंधि करना) ( न० )	कपिशायन-मय, देशान्तर ( पुं० )
अन्तेवासिन्-चण्डाल, शिष्य, पासमें रहनेवाला, ( पु० ) ॥ २२८ ॥	कामचारिन्-गिजा-पक्षी, कामी, स्वच्छद, ( त्रि० ) ॥ २३१ ॥
अपवर्जन-दान, परित्याग, ( न० )	कारन्धमिन्-धातुवादमें, ( धातुकें कहनेमें ) तत्पर, कागीका घड़ने-वाला, ( पुं० )
अभिनिष्ठान-चंद्रमा, विसर्ग, ( पुं० ) ॥ २२९ ॥	किष्कुपर्वा-वंश, कोपकार ( शत्रु-भेद वा कांठ ( पुं० ) ॥ २३२ ॥
उपस्पर्शन-स्पर्श, स्नान, आचमन, ( न० )	कृष्णवर्त्मन्-आमि, दुराचारी, राहु-प्रद, ( पुं० )
उपसंपन्न-स्थापित कियाहुवा, अच्छी तरह संस्कार कियाहुवा ( त्रि० ) ॥ २३० ॥	खरभाजन-कोर्था, दोहपात्र, ( न० ) ॥ २३३ ॥

स्याद्गन्धमादनः शैलभेदे मृङ्गेऽपि गन्धके ।  
 लतामृगप्रभेदे च सुरायां गन्धमादनी ॥ २३४ ॥  
 चक्रचारी मतः पोताघानके आमजालिनि ।  
 चिरजीवी चिरायुष्के स्यादजेऽपि सकृत्प्रजे ॥ २३५ ॥  
 तिक्तपर्वा हिलमोचीगुडूचीमधुयष्टिपु ।  
 धूमकेतनशब्दोयं ग्रहभेदे हुताशने ॥ २३६ ॥  
 लोकेश्वरे विधौ सूर्ये धनदे पद्मलाञ्छनः ।  
 तारायां च सरस्वत्या पद्मायां पद्मलाञ्छना ॥ २३७ ॥  
 पीतचन्दनमित्येतत्कालीयकहृद्दियोः ।  
 पृष्ठशृङ्गी तु पण्डे स्यादंशभीरौ वृकोदरे ॥ २३८ ॥  
 प्रवलाकी मुजङ्गेऽपि मेघनादानुलासिनि ।  
 बोधने प्रतिपत्तौ च दानेऽपि प्रतिपादनम् ॥ २३९ ॥

गन्धमादन—पर्वतभेद, भौरा, गन्धक,  
 लताभेद, मृगभेद, ( पुं० )

गन्धमादनी—मदिरा ( स्त्री० ) ॥ २३४ ॥  
 चक्रकारिन्—छोटी २ मछली, आम,  
 जाली ( पु० )

चिरजीविन्—दीर्घ आयुवाला, ब्रह्मा,  
 काम, ( पुं० ) ॥ २३५ ॥

तिक्तपर्चन्—हुलहुल-शाक, गिलोय,  
 मुल्हटी, ( स्त्री० )

धूमकेतन—ग्रहभेद ( किनुतारा ), अ-  
 मि, ( पु० ) ॥ २३६ ॥

पद्मलाञ्छन—लोकेश्वर ( स्वामी ),  
 ब्रह्मा, सूर्य, कुबेर, ( पुं० )

पद्मलाञ्छना—तारा-देवी, सरस्वती,  
 लक्ष्मी, ( स्त्री० ) ॥ २३७ ॥

पीतचन्दन—दाण्डहल्ली, हलदी ( स्त्री० )

पृष्ठशृङ्गिन्—नपुंसक, मच्छरांसे डर-  
 नेवाला, भीमसेन, ( पुं० )  
 ॥ २३८ ॥

प्रवलाकिन्—सर्प मोर, ( पुं० )

प्रतिपादन—बोधन ( जनाना ), प्र-  
 सिद्धि, दान, ( न० ) ॥ २३९ ॥

वनमाली हृषीकेशे वाराखां वनमालिनि ।  
 स्त्रीरत्ने च फलिन्यां च लाक्षायां वरवर्णिनी ॥ २४० ॥  
 रोचनायां हरिद्रायामपि स्याद्वरवर्णिनी ।  
 देवदारुणि कालीये दृश्यते वरचन्दनम् ॥ २४१ ॥  
 व्योमचारी विहङ्गेऽपि सुरे विद्याधरेऽपि च ।  
 वनमालिनि रोलम्बे विज्ञेयो मधुसूदनः ॥ २४२ ॥  
 शातकुम्भे कुसुम्भेऽपि महारजनमद्वयोः ।  
 कृत्तिवाससि काकोले श्रीफले मृत्युवञ्चनः ॥ २४३ ॥  
 विघ्नकारी मतो भीमदर्शनेऽपि विघातिनि ।  
 विश्वकर्मा तु मार्तण्डे मुनिभिर्देवशिल्पिनोः ॥ २४४ ॥  
 वृषपर्वा हरे दैत्ये शृङ्गारिणि कसेरुणि ।  
 मांसिकाजलपिप्पल्योर्दृश्यते शकुलादनी ॥ २४५ ॥

वनमालिन्-गोविन्द-भगवान्, वारा  
 होकंद, वनमाली ( वनमाला धा-  
 रणकरनेवाला, ) ( पु० )

वरवर्णिनी-रत्नरूप स्त्री, फूलप्रियंगू,  
 लास, ॥ २४० ॥ गोरोचन, हल-  
 दी, ( स्त्री० )

वरचंदन-देवदार, कालाचंदन ( न० )  
 ॥ २४१ ॥

व्योमचारिन्-पक्षी, देवता, विद्या-  
 धर, ( पुं० )

मधुसूदन-विष्णु-भगवान्, भौरा,  
 ( पुं० ) ॥ २४२ ॥

महारजन-सुवर्ण, कर्सूभा ( न० )

मृत्युवंचन-महादेव, वाग्भेद, बेल-  
 का पेड या खिरनीका पेड ( पु० )  
 ॥ २४३ ॥

विघ्नकारिन्-भयंकरदर्शनवाला, मा-  
 रनेवाला, ( पुं० )

विश्वकर्मन्-सूर्य, मुनिभेद, देवता-  
 ओंका शिल्पी, ( पुं० ) ॥ २४४ ॥

वृषपर्वा-महादेव, एक दैत्य, सुया-  
 रीवृक्ष, कसेरुद, ( पुं० )

शकुलादनी-जटाभांसी, जलर्पापली,  
 ॥ २४५ ॥ रुई पीननेदी तौत,  
 कुटकी ( स्त्री० )

पिञ्जल्यां कटुकायां च सम्मता शकुलादनी ।  
 शालङ्कायनशब्दः स्यादपिभेदेऽपि नन्दिनि ॥ २४६ ॥  
 शिवकीर्तनशब्दोऽयं भृङ्गरीटेऽपि माधवे ।  
 स्यादर्जुनेऽपि पीयूषधामनि श्वेतवाहनः ॥ २४७ ॥  
 श्वेतधामा सुधाधामि घनसाराब्धिफेनयोः ।  
 सिन्धुरे धान्यभेदे च वर्तते पट्टिहायनः ॥ २४८ ॥  
 संप्रयोगी कलाकैलौ कामुके सुप्रयोगिनि ।  
 गोशीर्षे दैवततरौ हरिचन्दनमस्त्रियाम् ॥ २४९ ॥  
 ज्योत्स्नाया कुङ्कुमे पद्मपारगे हरिचन्दनम् ।  
 पुमानहस्करे मेघवाहने करिवाहनः ॥ २५० ॥

नपष्टम् ।

अन्तावसायी श्वपचे नापिते च मुनेर्भिदि ।  
 कलानुनादी रोलम्बे कलधिक्के कपिञ्जले ॥ २५१ ॥

शालङ्कायन-ऋषिभेद, नन्दी-गण,  
 ( पु० ) ॥ २४६ ॥

शिवकीर्तन-शिवका एक गण, वि-  
 ष्णुभगवान्, ( पु० )

श्वेतवाहन-अर्जुन, चद्रमा, ( पुं० )  
 ॥ २४७ ॥

श्वेतधामन्-चद्रमा, कपूर, समुद्र-  
 क्षाग, ( पु० )

पट्टिहायन-हस्ती, धान्यभेद, ( सां-  
 ठीचावल ) ( पुं० ) ॥ २४८ ॥

संप्रयोगिन्-कलाकैली (कलाक्रोडा),

कामी, अच्छाप्रयोगकरनेवाला,  
 ( पु० )

हरिचन्दन-गोरोचन, देववृक्ष, ( पु०  
 न० ) ॥ २४९ ॥ चाँदकी किरण,

केसर, कमलकेसर, ( न० )  
 करिवाहन-सूर्य, इन्द्र, ( पुं० )

॥ २५० ॥  
 नपष्टम् ।

अन्तावसायिन्-चंडाल, नाई, मु-  
 निभेद, ( पुं० )

कलानुनादिन्-भौरा, चिहा, कपि-  
 जलपक्षी, ( पुं० ) ॥ २५१ ॥

जायानुजीवी भरते दुर्गताखिलयोर्वके ।

मतः सहस्रवेधी तु राम्णे चाम्लवेतसे ॥ २५२ ॥

इति विश्वलोचने नान्तवर्गः ॥

### अथ पान्तवर्गः ।

पैकम् ।

पो वाते पा तु पाने स्यात्पास्तु पातरि वाच्यवत् ॥ १ ॥

पद्वितीयम् ।

कल्पो ब्राह्मदिने न्याये प्रलये विधिशान्तयोः ।

कूपोऽधुगर्तमृन्मानकूपके गुणवृक्षके ॥ २ ॥

कृपा दयायां व्यासे तु कृपो भारतपूरुपे ।

खप्पः क्रोधे बलात्कारे गोपो गोपालमूपयोः ॥ ३ ॥

जायानुजीविन्-नट, दुर्गत (दरिद्र),

बगला-पक्षी, ( पुं० )

सहस्रवेधिन्-हींग, अम्लवेत, ( पुं० )

॥ २५२ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें

नान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ पान्तवर्गः ।

पैक ।

प-वायु ( पुं० )

पा-पीना ( स्त्री० )

पा-रक्षाकरनेवाला ( त्रि० ) ॥ १ ॥

पद्वितीय ।

कल्प-ब्रह्माका दिन, न्याय, प्रलय,

विधि, शान्त, ( पुं० )

कूप-कुर्वा, खड़ा, मिट्टीका प्रमाण, ति-

तंबीका खड़ा, नौकाका स्तंभ, ( पुं० )

॥ २ ॥

कृपा-दया, ( स्त्री० )

कृप-व्यास, कृपाचार्य, ( पुं० )

खप्प-क्रोध, बलात्कार, ( पुं० )

गोप-गोपाल, राजा, ॥ ३ ॥ ग्रामोंके

समूहका अधिकारी, गोष्ठ ( गोष्ठा-

न )का अधिकारी, बुद्धकरनेवाला,

( पुं० )

गोपो ग्रामौघगोष्ठाधिकारिणोश्च कचित्करौ ।

क्षुपः क्षुपे स्पर्शनेऽपि सन्ताने माहते जुपः ॥ ४ ॥

तल्पं कलत्रे शय्यायां तल्पमष्टेऽपि न द्वयोः

सन्तापे दवधौ तापस्तापी तु सस्दिन्तरे ॥ ५ ॥

त्रपा लज्जाकुलटयोस्त्रपु सीसकरत्रयोः ।

दर्पो भवेदहङ्कारे दर्पो मृगमदेऽपि च ॥ ६ ॥

नीपो बलिकदंबे स्यात्नीलबक्षुलबन्धने ।

पुष्पं रजसि नारीणां विकासे कुसुमेऽपि च ॥ ७ ॥

रूपमाकारसौन्दर्यस्वभावश्लोकनाणके ।

नाटकादौ मृगे ग्रन्थावृत्तौ च पशुशब्दयोः ॥ ८ ॥

रेपः स्यात्निन्दिते शूरे रोपो याणेऽपि रोपणे ।

लेपस्तु लेपने ख्यातः सुधाजेमनयोरपि ॥ ९ ॥

क्षुप-पौषा, स्पर्शकरना, ( पुं० )

जुप-बल्पवृक्ष, वायु, ( पुं० ) ॥ ४ ॥

तल्प-स्त्री, शय्या, अटारी, ( न० )

ताप-सन्ताप, कष्ट, ( पुं० )

तापी-नदी, ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥

त्रपा-लज्जा, कुलटा स्त्री, ( स्त्री० )

त्रपु-शीशा, रौंग, ( न० )

दर्प-अहंकार, कस्तूरी, ( पुं० ) ॥ ६ ॥

नीप-कुंद वृक्ष, कदंब-वृक्ष, नीला

. अशोक-वृक्षका नाक, ( पुं० )

पुष्प-सिरियोंका रज, खिलना, पुष्प  
( फूल ) ( न० ) ॥ ७ ॥

रूप-आकार, सुंदरता, स्वभाव,  
श्लोक, पैसा रूपया आदि, नाटक  
आदि, मृग, ग्रंथकी आवृत्ति,  
पशु, शब्द, ( न० ) ॥ ८ ॥

रेप-निन्दित, शूर, ( पुं० )

रोप-याण, रोपणकरना, ( पुं० )

लेप-लेपनकरना, सुधा (कली आदि),  
भोजनकरना ( पुं० ) ॥ ९ ॥



वपा तु विवरे भेदे वाप्यो नेत्रजलोष्मणोः ।  
 शष्पं बालवृणं क्लीबं शष्पस्तु प्रतिभाक्षये ॥ १० ॥  
 शपथाक्रोशयोः शापः शिष्पं कृत्योचिते श्रुवे ।  
 सूपो व्यञ्जनभेदेऽपि सूषकारेऽपि च स्मृतः ॥ ११ ॥  
 स्वापस्तु शयनाऽज्ञाननिद्रास्पर्शाज्ञितार्थकः ।  
 क्षेपो विलम्बे हेलायां गर्हाप्रेरणलेपने ॥ १२ ॥

पृथ्वीयम् ।

पुंस्यनूपस्तु महिषे वाच्यवञ्जलसङ्कुले ।  
 आकल्पो वेशमात्रे स्यादाकल्पः कल्पनेऽपि च ॥ १३ ॥  
 आवापो भाण्डे वपने परिक्षेपालवालयोः ।  
 आक्षेपो मर्त्सनत्यागाकर्षणे काव्यभूषणे ॥ १४ ॥  
 उडुपः पुंसि चन्द्रे स्यादुडुपे भेलकेऽस्त्रियाम् ।  
 उलपस्तृणभेदे स्याद्गुल्मिन्यामुलपं मतम् ॥ १५ ॥

वपा-छिद्र, भेद, ( स्त्री० )  
 वाप्य-नेत्रजल, धाफ, ( पुं० )  
 शष्प-छोटारुण, ( न० ) शष्प-  
 तीक्ष्णबुद्धिकी हानि, ( पुं० ) ॥ १० ॥  
 शाप-सौगन्ध, दुराशिष, ( पुं० )  
 शिष्प-कृत्यमें उचित, ध्रुव, ( न० )  
 सूष-व्यञ्जनभेद, रसोई करनेवाला,  
 ( पुं० ) ॥ ११ ॥  
 स्वाप-सोना, अज्ञान, निद्रा, स्पर्श,  
 अज्ञता ( मूर्खता ) ( पुं० )  
 क्षेप-विलम्ब ( देर ), छियोंका 'क-  
 रण,' निद्रा, प्रेरणकरना, लेपन,  
 ( पुं० ) ॥ १२ ॥

पृथ्वीय ।

अनूप-भैंसा, ( पुं० ) जलप्रायदेश  
 आदि ( त्रि० )  
 आकल्प-वेशमान, कल्पन ( विचार )  
 ( पुं० ) ॥ १३ ॥  
 आवाप-भाण्ड ( बरतन या अश्व-  
 भूषण ), क्षौर, परिक्षेप, वृक्षकी  
 क्यारी, ( पुं० )  
 आक्षेप-क्षिप्तकना, त्यागना, खेंचना,  
 काव्यभूषण ( अलंकार ) ( पुं० )  
 ॥ १४ ॥  
 उडुप-चद्रमा, ( पुं० ) उडुप-  
 नौका, ( पुं० न० )  
 उलप-तृणभेद ( पुं० ) पैली हुई  
 बेल, ( न० ) ॥ १५ ॥

कच्छपः कमठे काष्ठे मल्लभेदेऽपि कच्छपः ।  
 कच्छपी तु डुलौ क्षुद्ररुग्भेदे वहकीमिदि ॥ १६ ॥  
 कलापः संहते बहै काव्यादौ तूणवृन्दयोः ।  
 भक्ते वखे च कशिपुरेकोक्त्या तूभयोरपि ॥ १७ ॥  
 काश्यपी तु क्षितौ मीनमुनिभेदे तु कश्यपः ।  
 कुटपोऽखी मानभेदे कुटपो निष्कुटे मुनौ ॥ १८ ॥  
 विदारिकायां कुणपी पूतिगन्धौ श्वे पुमान् ।  
 कुतपो भाग्निनेये स्यादष्टमाशे दिनस्य च ॥ १९ ॥  
 कुतपस्तपने छागकम्बले कुशवाद्ययोः ।  
 जिह्वापः शुनि मार्जारै व्याघ्रपादपयोरपि ॥ २० ॥  
 पादपः पादपीठेऽद्वौ पादगण्डे च पादपः ।  
 पादपा पादुकाया स्यात्प्रतापः खेदतेजसोः ॥ २१ ॥

कच्छप-कहुवा, काष्ठ, मल्लभेद,  
 ( पुं० )

कच्छपी-कछवी, क्षुद्ररुग्भेद, वीणा-  
 भेद, ( स्त्री० ) ॥ १६ ॥

कलाप-इकडाहुवा, मोरपंख, कांची  
 ( करयनी ) आदि, बाणोका माथा,  
 वृन्द, ( पुं० )

कशिपु-अन्न, वल्ल, अमवल्ल, ( पुं० )  
 ॥ १७ ॥

काश्यपी-पृथ्वी, ( स्त्री० )

कश्यप-मीनभेद, मुनिभेद, ( पुं० )

कुटप-मानभेद, घरके समीप ल-  
 गाया हुवा बाग, मुनि, ( पुं० )  
 ॥ १८ ॥

कुणपी-विदारीकद, ( स्त्री० )

कुणय-दुर्गधवाला मुदी, ( पुं० )

कुतप-भानजा, दिनका आठवां  
 भाग, ॥ १९ ॥

सूर्य, बकरेके ऊनका कंबल, कुशा,  
 बाजा ( पुं० )

जिह्वाप-ऊता, बिलाव, बघेरा, पृक्ष,  
 ( पुं० ) ॥ २० ॥

पादप-पादपीठ ( पैरोंकीचौकी ),  
 पर्वत, गंडशील ( पर्वतसे गिरा  
 बडा पत्थर ) ( पुं० )

पादपा-सडाऊं, ( स्त्री० )

प्रताप-यसीना, तेज, ( पुं० ) ॥ २१ ॥

रक्तपा स्याज्जलौकायां रक्तपस्तु क्षपाचरे ।  
विकल्पो विचिकित्सायां विकल्पो भ्रान्तिपक्षयोः ॥ २२ ॥  
विटपोली लतास्तम्बखिन्नविस्तारपल्लवे ।

पचतुर्थम् ।

अपलापोऽपलपने प्रेमापहवयोरपि ॥ २३ ॥  
अभिरूपो बुधे रम्ये प्राप्तरूपसुरूपवत् ।  
अवलेपस्तु दोषे स्याद्द्रव्ये लेपे च सङ्गमे ॥ २४ ॥  
उपतापो मतः पुंसि गदोत्तापत्वरार्थकः ।  
उपयापो विश्लेषे स्यात्तथा भेदेऽवदारणे ॥ २५ ॥  
जलकूपी पुष्करिण्यां कूपगर्भेऽपि सा स्मृता ।  
नागपुष्पस्तु पुत्रागो चम्पके नागकेसरे ॥ २६ ॥  
परिकम्पे मतो भीतौ परिकम्पः प्रकम्पने ।  
परीवापो जलस्थाने पर्युप्तौ च परिच्छदे ॥ २७ ॥

रक्तपा-जोक, ( स्त्री० )

रक्तप-राक्षस, ( पुं० )

विकल्प-सन्देह, भ्रान्ति, पक्ष, ( क-  
त्पना ) ( पुं० ) ॥ २२ ॥

विटप-बेल, गुच्छा, कामिशिरोमणि,  
विस्तार, पल्लव ( पत्ते ) ( पुं० )

पचतुर्थम् ।

अपलाप-खोटाबोलना, प्रेम, छुपाना,  
( पुं० ) ॥ २३ ॥

अभिरूप-प्राप्तरूप-सुरूप-संज्ञित,  
सुंदर, ( पुं० )

अवलेप-दोष, अभिमान, लेपन,  
सगम ( मिलाप ) ( पुं० ) ॥ २४ ॥

उपताप-रोग, उत्ताप ( बहुतखेद ),  
शीघ्रता ( पुं० )

उपयाप-विशेष ( भेद ), विदीर्ण  
करना, फोटना, ( पु० ) ॥ २५ ॥

जलकूपी-नदी, कूवाका गर्भ ( बीज )  
( स्त्री० )

नागपुष्प-पुत्राग-वृक्ष, चया, नाग-  
केसर, ( पुं० ) ॥ २६ ॥

परिकम्प-भय, काँपना ( पुं० )

परीवाप-जलस्थान, अच्छी तरह  
बीजबोना, परिवार, ( पुं० ) ॥ २७ ॥

पिण्डपुष्पमशोके स्याज्जवापुष्पेऽपि पंकजे ।  
 बहुरूपः सरहरे खमूसरटधूनके ॥ २८ ॥  
 मेघपुष्पं तु पिण्डाभे जलनादेययोरपि ।  
 विप्रलापो विरोधोक्तावपार्थवचनेऽपि च ॥ २९ ॥  
 वीजपुष्पं मरुवके मतं दमनकद्रुमे ।  
 वृकधूपस्तु सरलद्रवकृत्रिमधूपयोः ॥ ३० ॥  
 वृषाकपिर्महादेवे कृष्णपावकयोरपि ।  
 हेमपुष्पमशोके स्याज्जवापुष्पेऽपि चम्पके ॥ ३१ ॥

पपञ्चमम् ।

भवेच्चामरपुष्पं तु काशे चूते च केतके ॥ ३२ ॥

इति विश्वलोचने पान्तवर्गः ॥

पिण्डपुष्प—अशोक—वृक्ष, जवापुष्प,  
 कमल, ( न० )

बहुरूप—कामदेव, महादेव, विष्णु,  
 गिरगट, राल—वृक्ष, ( पुं० ) ॥ २८ ॥

मेघपुष्प—मेघ, जल, नदीमें होने-  
 वाला ( न० )

विप्रलाप—विरोधसे वचन, निरर्थक-  
 वचन, ( पुं० ) ॥ २९ ॥

वीजपुष्प—मरुवा, दाँना, ( न० )  
 वृकधूप—सरलवृक्षका गोंद, यनाई  
 इरई धूप, ( पुं० ) ॥ ३० ॥

वृषाकपि—महादेव, कृष्ण, शक्ति  
 ( पुं० )

हेमपुष्प—अशोक व वृक्ष, जवापुष्प,  
 चपा, ( न० ) ॥ ३१ ॥

पपञ्चम ।

अमरपुष्प—काश, ओष, केतकी-  
 पुष्प, ( न० ॥ ३२ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
 पान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ फान्तवर्गः ।

फैकम् ।

फु मन्ने फे रुते सङ्ख्ये स्फा वृद्धौ फेरवे पुमान् ।

फः स्याज्ज्ञानिले पुंसि स्फूः स्फुटे फुलभापयोः ॥ १ ॥

फद्वितीयम् ।

गुम्फो बाहोरलंकारे गिरातन्तोश्च गुम्फने ।

रफो रवर्णे पुंस्येव कुत्सिते त्वभिधेयवत् ॥ २ ॥

शफं खुरे गवादीनां तरुणां चरणेषु च ।

शिफा जटायां नद्यां च मांसिकायां च मातरि ॥ ३ ॥

इति विश्वलोचने फान्तवर्गः ॥

## अथ वान्तवर्गः ।

वैकम् ।

वं प्रचेतसि पुंसि स्यादुपमाने तदव्ययम् ॥ १ ॥

अथ फान्तवर्गः ।

फैक ।

फु-तंत्र ( उच्चारण करके फूकदेना ),  
शब्द, युद्ध, ( पु० )

स्फा-वृद्धि, ( स्त्री० ) गीदह, ( पुं० )

फ-वृष्टिसहित वायु, ( पुं० )

स्फू-स्फुट ( प्रकट ), फूलाहुवा,  
( पुं० ) ॥ १ ॥

फद्वितीय ।

गुम्फ-भुजाओंका आभूषण, वाणी  
र तंतुओंका गुम्फन ( गुंफना ),रेफ-र-वर्ण, ( पुं० ) कुत्सित, ( त्रि० )  
॥ २ ॥शफ-गौआदिकोंका खुर, वृक्षोंकी जड़,  
( न० )शिफा-वृक्षकी जड़, नदी, जटामांसी,  
माता, ( स्त्री० ) ॥ ३ ॥इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
फान्तवर्ग समाप्तहुवा ॥

अथ वान्तवर्गः ।

वैक ।

व-वर्ण, ( पुं० ) उपमान ( अव्यय )  
॥ १ ॥

वद्वितीयम् ।

स्त्री वंशशि खजाकायां कंबिः कंबुः पुमान् गजे ।

वलये शङ्खशम्बूक कन्धरामलके खियाम् ॥ २ ॥

इत्वे सङ्खान्तरे खर्वश्वावीं स्याच्छोभनाधियोः ।

जम्बूः स्त्री मेरुसरिति द्वीपपादपभेदयोः ॥ ३ ॥

डिम्बस्तु विष्टवहीहफुप्फुसैरण्डभीतिषु ।

डिम्बः कलकलेऽपि स्याद्दूर्वा फणखजाकयोः ॥ ४ ॥

दार्वी दारुहरिद्रायां हरिद्रादेवदारुणोः ।

पुंभूम्नि पूर्वजेषु स्यात्पूर्वः प्रागाद्यथोत्थिषु ॥ ५ ॥

तिक्ततुम्बीश्रियोर्लम्बा विम्बं स्याद्विम्बिकाफले ।

मण्डले प्रतिविम्बे च विम्बः पुंसि नपुंसकम् ॥ ६ ॥

शंघः शुमान्विते वज्रे मुसलाग्रस्यमण्डले ।

शुम्बो मतः पुमानेव भृशगुल्माप्रकाण्डयोः ॥ ७ ॥

वद्वितीय ।

कंबि—वशाविभाग, कडली, ( स्त्री० )

कंबु—हस्ती ( पुं० ) कंकण, शंख,  
संखला, शीवा, शौवला ( स्त्री० )

॥ २ ॥

खर्व—बौना, सख्याभेद, ( पुं० )

खर्वी—सुदरी, बुद्धि, ( स्त्री० )

जंबू—मुमेरुकी नदी, ( स्त्री० ) जंबू-

द्वीप, जामन—वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ३ ॥

डिम्ब—हलचल या नाश, तिन्नी, फुप्फुस,

अरु, भय, कोलाहल ( पुं० )

दूर्वा—सर्पकी फणा, कडली, ( स्त्री० )

॥ ४ ॥

दार्वी—दारुहलदी, इलदी, देवदारु-  
वृक्ष, ( स्त्री० )

पूर्व—पहलेजन्मनेवाले ( पुं० ) बहु-  
वचनात् पूर्व ( पहल ) आदिर्भे-  
होनेवाला ( त्रि० ) ॥ ५ ॥

लंबा—बडवी तूँवी, लक्ष्मी, ( स्त्री० )

विम्ब—बिम्बिका ( मोहल ) फल, ( न० )

मंडल, प्रतिविम्ब, ( पुं० ) ॥ ६ ॥

शंघ—शुभयुक्त, ( त्रि० ) वज्र, मूस-

लके आगेका लोहमंडल, ( पुं० )

शुम्ब—सपनगुच्छा, शृङ्खलकन्ध ( वृक्ष-

की शाख ) ॥ ७ ॥

वचतुर्थम् ।

कदम्बं निकुरुम्बे स्यान्नीपसिद्धार्थयोः पुमान् ।  
 गजाह्वा गजपिप्पल्यां गजाह्वं हस्तिनापुरे ॥ ८ ॥  
 गन्धर्वो मृगभेदे स्याद्वायने खेचरे ह्ये ।  
 अन्तराभवसिद्धे च रससिद्धे च कोकिले ॥ ९ ॥  
 गोडुम्बः शीर्णवृक्षेऽपि गवादिन्याः फलेपि च ।  
 द्विजिह्वः पन्नगे पुंसि द्विजिह्वः पिशुने त्रिपु ॥ १० ॥  
 कटीचक्रे नितम्बः स्याच्छिखरिस्क्रंधरोधसोः ।  
 प्रलम्बो लम्बने दैत्ये तालाङ्कुरकशाखयोः ॥ ११ ॥  
 प्रालम्बो हारभेदेऽपि त्रपुपेपि पयोधरे ।  
 भूजम्बूरपि गोडुम्बे विकङ्कतफले स्त्रियाम् ॥ १२ ॥  
 हेरम्बो महिषे लम्बोदरशूरत्वगर्विते ।

वचतुर्थम् ।

राजजम्बूस्तु जम्बूभिःपिण्डखर्जूरयोर्मता ॥ १३ ॥

वचतुर्थम् ।

कदम्ब-समूह, कदम्ब-वृक्ष, सिरसौ  
 ( पु० )

गजाह्वा-गजपीपल, ( स्त्री० )

गजाह्व-हस्तिनापुर ( न० ) ॥ ८ ॥

गन्धर्व-मृगभेद, गवैया, खेचर ( गं-  
 धर्व ), अथ, अन्तराभवमे होने-  
 वाला सिद्ध, रससिद्ध, कोकिल  
 ( नर-कोयल ) ( पुं० ) ॥ ९ ॥

गोडुम्ब-गिराहुवा-वृक्ष, गड्डेभा ( कडु-  
 तुपी ) ( पुं० )

द्विजिह्व-सपे, ( पुं० ) जुगलसोद,  
 ( त्रि० ) ॥ १० ॥

नितम्ब-चूतइ या कटी, पर्वतकी  
 ऊँची चोटी, किनारा ( पुं० )

प्रलम्ब-लम्बन ( लटकना ), प्रलम्ब  
 दैत्य, तालका अकुर और शाखा,  
 ( पुं० ) ॥ ११ ॥

प्रालम्ब-हारभेद, राग, कुच, ( पुं० )  
 भूजम्बू-गड्डेभा, खटाईका फल, ( स्त्री० )  
 ॥ १२ ॥

हेरम्ब-भैसा, गणेश, शूरतासे गर्वित,  
 ( पुं० ) ।

वचतुर्थम् ।

राजजम्बू-जामनभेद, मैनफल-वृक्ष,  
 खजूर, ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥

ललज्जिह्वः प्रमानुष्ट्रे शुनि हिंसेऽभिधेयवत् ।

शतपर्वा तु दूर्वायां भार्गवस्य च योपिति ॥ १४ ॥

वपश्चमम् ।

गोरक्षजम्बूगोंधूमे तथा गोरक्षतंडुले ।

धूलीकदम्बस्तिनिशे कदम्बे वरुणद्रुमे ॥ १५ ॥

शृगालजम्बूगोंधुम्बे क्वचित्तु बदरीकले ॥ १६ ॥

इति विश्वलोचने भान्तवर्गः ॥

### अथ भान्तवर्गः ।

भैकम् ।

भा स्यान्मयूषे शुकेऽपि पुंसि पुष्पंधये तु भः ।

दीप्तौ च स्यान्मात्रे भा भं नक्षत्रे भये तु मी ॥ १ ॥

भूर्भुवि स्यान्मात्रेऽपि स्त्रियां भवितरि त्रिषु ।

सम्बुद्धावव्ययं भो स्यात्-

ललज्जिह्व—कँट, कुत्ता, ( पुं० ) हिं-

साकरनेवाला, ( त्रि० ) ।

शतपर्वा—दुष ( घस ), शुक्रकी स्त्री,

( स्त्री० ) ॥ १४ ॥

गोरक्षजम्बू—गेहूं, गुलसकरी, ( पुं० )

धूलीकदम्ब—तिरिच्छ वृक्ष, कदव,

वरुण-वृक्ष, ( पु० ) ॥ १५ ॥

शृगालजम्बू—गड़भा ( कटुतुंभी ), घेर,

( पुं० ) ॥ १६ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषा-

टीकामें भान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ भान्तवर्गः ।

भैक ।

भा—विरण ( स्त्री० ) भ—शुक, भौर,

( पुं० ) भा—दीप्ति, स्यान्मात्र,

( स्त्री० ) नक्षत्र, ( न० ) ।

मी—भय ( स्त्री० ) ॥ १ ॥

भू—पृथ्वी, स्यान्मात्र, ( स्त्री० ) होने-

वाला ( त्रि० ) ।

भो—संबोधनकरना ( अव्यय )



भद्वितीयम् ।

—कुम्भो राश्यन्तरे घटे ॥ २ ॥

समाधौ गजमूद्धशि कुम्भकर्णसुते विटे ।

कुम्भी स्यात्पाटला वारिपर्णी पिठरकट्फले ॥ ३ ॥

कुम्भं गुग्गुलुवृक्षे स्यात्त्रिवृतायां च न द्वयोः ।

गर्भो भ्रूणेऽर्भके कुक्षौ सन्धौ पनसरुण्टके ॥ ४ ॥

जम्भो दन्तेऽपि जम्बीरे दैत्यभेदेऽपि भक्षणे ।

जृम्भो विक्रासे पुंस्येव जृम्भस्तु त्रिषु जृम्भणे ॥ ५ ॥

डिम्भस्तु बालिशे पोते दम्भः कैतवरुलकयोः ।

दन्भूः सूर्ये पवौ नाभिर्ना क्षत्रे चक्रवर्तिनि ॥ ६ ॥

द्वयोः प्रधानचक्रान्त.प्राण्यङ्गेषु मदे स्त्रियाम् ।

निम्भस्तु सदृशे व्याजे संपूर्वः स्तुल्य एव सः ॥ ७ ॥

भद्वितीय ।

कुम्भ-धुम-राशि, घट, ॥ २ ॥ स-

साधि, हस्तीका मत्स्यक-भाग, कुम्भ-  
कर्णका पुत्र, कामी, ( पुं० )

कुम्भी-पादरका पुष्प, जलकुम्भी, ना-  
गरमोषा, वायफल, ( स्त्री० ) ॥३॥

कुम्भ-गूगल-वृक्ष, निसीत, ( न० )

गर्भ-गर्भ ( भ्रूण ), बालक, कुक्षि,  
सन्धि, पनसका काटा, ( पुं० )

॥ ४ ॥

जम्भ-दान, जम्बीरी नीबू, एक  
दैत्य, भक्षण, ( पुं० )

जृम्भ-खिलना-पुष्प आदिका, ( पुं० )

जैमाई, ( त्रि० ) ॥ ५ ॥

डिम्भ-मूखं, बालक, ( पुं० )

दम्भ-उल, कल्क ( तिलपीठा आदि )  
( पुं० )

दन्भू-सूर्य, वज्र, ( पुं० )

नाभि-चक्रवर्ती क्षत्रिय, नाभिराजा,

॥ ६ ॥ प्रधान, चक्रका मध्य-  
भाग, प्राणियोंका शंख ( सूँडी ),

कस्तूरीमद, ( स्त्री० )

निम्भ-संनिभ-सदृश, व्याज ( ब-  
हाना ) ( पुं० ) ॥ ७ ॥

रम्भा कदल्यप्सरसो रम्भो वैणवदण्डके ।

परिपूर्वस्तु संक्षेपे विभुर्नित्ये शिवे प्रभौ ॥ ८ ॥

शुम्भः स्याद्ब्रह्मशिवयोरर्हत्यपि च केशवे ।

योगे शुभः शुभं क्षेमे शोभा कान्तीच्छयोर्मता ॥ ९ ॥

सभा सामाजिके गोष्ठ्यां धूतमन्दिरयोः सभा ।

स्तम्भो जडत्वे स्थूणाया स्वभूर्गोविन्दवेधसोः ॥ १० ॥

भर्तृतीयम् ।

पापेऽप्यरिष्टेऽप्यशुभमात्मभूः सारवेधसोः ।

आरम्भ उद्यमे दर्पे त्वरायां च वधेऽपि च ॥ ११ ॥

ऋषभः श्रेष्ठवृषयोरष्टवर्गौषधान्तरे ।

खराद्रिभेदे वराहपुच्छे रन्ध्रे च कर्णयोः ॥ १२ ॥

रम्भा—बेला, अप्सारा, ( स्त्री० )

रम्भ—बांसका दंड, परिरम्भ—  
अच्छीतरह मिलना, ( पुं० )

विभु—नित्य, शिव, प्रभु, ( पुं० ) ८

शुम्भ—ब्रह्मा, शिव, अर्हंत देव,  
केशव ( विष्णु ) ( पुं० )

शुभ—योग, ( पुं० ) क्षेम ( कुशल )  
( न० )

शोभा—वान्ति, इच्छा, ( स्त्री० ) ९

सभा—सामाजिक ( सहधर्मियोंकी  
सभा ), गोष्ठी, जूवा, मंदिर,  
( स्त्री० )

स्तम्भ—जडता, स्थूणा ( शून ) ( पु० )

स्वभू—विष्णु, ब्रह्मा, ( पुं० ) ॥ १० ॥

भर्तृतीय ।

अशुभ—पाप, खेद, ( न० )

आत्मभू—कामदेव, ब्रह्मा, ( पुं० )

आरम्भ—उद्यम, अभिमान, शीघ्रता,  
वध, ( मारना ) ( पुं० ) ॥ ११ ॥

ऋषभ—श्रेष्ठ, बैल, अष्टवर्गकी एक  
औपधि, एक गानेका स्वर, एक  
पर्वत, सूकरकी पूँछ, कानका  
छिद्र ( पुं० ) ॥ १२ ॥

ऋपभी तु नराकारनारीविधवयोपितोः ।  
 शूकशिब्यां शिरालायां श्रेष्ठे स्यादुत्तरस्वितः ॥ १३ ॥  
 ककुभोऽर्जुनवृक्षेऽपि रागभेदे प्रसेवके ।  
 ककुब् दिक्शोभयोः शास्त्रे कम्बले चम्पकसजि ॥ १४ ॥  
 करभो मणिबन्धादिकनिष्ठान्ते क्रमेलके ।  
 अष्टापदेऽपि करभः शरमे च मृगान्तरे ॥ १५ ॥  
 कुसुम्भं हेमनि महारजने ना कमण्डलौ ।  
 गर्दभी रासभे गन्धभेदे क्लीबं तु कैरवे ॥ १६ ॥  
 गर्दभी स्वल्परुजन्तुभेदयोरथ पुंस्ययम् ।  
 दुन्दुभिर्देत्यभेयोः स्त्री त्वक्षविन्दुत्रिके द्वये ॥ १७ ॥  
 दुष्प्रापे वल्लभे कच्छरोगिणि त्रिषु चल्लभः ।  
 निकुम्भः कुम्भकर्णस्य पुत्रे दन्त्यामपि स्मृतः ॥ १८ ॥

ऋपभी-नराकार ( दाढीमूछवाली )  
 स्त्री, विधवा स्त्री, बौल, कमरख  
 ( स्त्री० )

ऋपभ-शब्द क्रिष्णिके आगे जोड़ा-  
 हुवा थैष्ठ्याचक है ( पुं० )  
 ॥ १३ ॥

ककुभ-अर्जुन- ( कोद ) वृक्ष, राग-  
 भेद, वीणाकी तँवी, ( पुं० )

ककुम्भ-दिशा-पूर्व आदि, शोभा,  
 शाल, कंबल, चंपाकी माला,  
 ( स्त्री० ) ॥ १४ ॥

करभ-मणिबंध ( पहँचा )से लेकर  
 कनिष्ठाके अततक भाग, ऊँट,

चौपद या सुवर्ण, शरभ ( सावर ),  
 मृगभेद ( पु० ) ॥ १५ ॥

कुसुम्भ-सुवर्ण, कमण्डलु ( जलपान )  
 ( पुं० )

गर्दभ-गधा, गंधभेद, ( पुं० ) श्वेत  
 कमल ( न० ) ॥ १६ ॥

गर्दमी-धुररोग, जन्तुभेद ( स्त्री० )  
 दुन्दुभि-एक दैत्य, भेरी ( पु० ) चौपड  
 खेलनेके तीन पासे ( पुं० स्त्री० )  
 ॥ १७ ॥

वल्लभ-जो दुःखसे प्राप्त हो बह, प्रिय,  
 कच्छरोगवाला, ( त्रि० )

निकुम्भ-कुम्भकर्णका पुत्र, जनालगो-  
 टाकी जड, ( पुं० ) ॥ १८ ॥

मचतुर्थम् ।

वाण्यां छन्दःप्रभेदेऽपि स्यादनुष्टुप्त्रिति स्मृतः ।

अवष्टम्भः सुवर्णेऽपि प्रारम्भस्तम्भयोरपि ॥ २५ ॥

शातकुम्भं तु कनके शातकुम्भोऽधमारके ॥ २६ ॥

इति विश्वलोचने भान्तवर्गः ॥

अथ मान्तवर्गः ।

मैकम् ।

मः शिवे पुंसि मश्चन्द्रे मो विधौ मां तु मातरि ।

स्त्रियां स्यान्मा रमायां च भाक्षेपे मानवन्धयो ॥ १ ॥

मा निषेधेऽव्ययं मे च ममेत्यर्थे ममाव्ययम् ।

मद्वितीयम् ।

अमो रोगेऽपि तद्भेदे स्यादपके तु वाच्यवत् ॥ २ ॥

इध्मः पुंसि वसन्ते स्यादिध्मः स्यान्मीनकेतने ।

उमा गौर्यामतस्या च हरिद्राकान्तिकीर्तिषु ॥ ३ ॥

मचतुर्थम् ।

अनुष्टुम्—नारम्भती, छन्दोभेद, ( स्त्री० )

अवष्टम्भ—सुवर्णं, प्रारम्भ, तम्भ

( धंभ ) ( पुं० ) ॥ २५ ॥

शातकुम्भ—सुवर्णं, ( न० ) कनकरका

पेद, ( पुं० ) ॥ २६ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषा-

टीकामें भान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

अथ मान्तवर्गः ।

मैकम् ।

म—निष, बन्धना, प्रपत्ता, ( पुं० )

मा—माता, लक्ष्मी, ( स्त्री० )

मा—आक्षेप, माप, बधन, ॥ १ ॥

( स्त्री० )

मा—निषेध, ( अव्यय )

मे—प्रम—मम ( मेरा ) शब्दका अर्थ

( अव्यय )

मद्वितीयम् ।

अम—रोग, रोगभेद, ( पुं० ) अपक्व,

( त्रि० ) ॥ २ ॥

इध्म—वसत—कृत, कामदेव, ( पुं० )

उमा—पार्वती—देवी, अलसी, हलदी,

कान्ति, कीर्ति, ( स्त्री० ) ॥ ३ ॥

गमो द्यूतान्तरे मार्गेऽप्यपर्यालोचितेऽपि च ।  
 गुल्मः स्तम्बे चमूरक्षासैन्ययोः ष्ठीहृषट्टयोः ॥ १० ॥  
 गुल्मी स्यादामलक्येलावनिकावस्त्रवेश्मसु ।  
 ग्रामः खरे संवसथे वृन्दे शब्दादिपूर्वकः ॥ ११ ॥  
 धर्मः स्यादातपे ग्रीष्मे ऊष्मस्वेदजलेऽपि च ।  
 जाल्मः स्यात्पामरे कूरे जाल्मोऽसमीक्ष्यकारिणि ॥ १२ ॥  
 जिह्वं तु तगरे जिह्वस्त्रिपु स्यान्मन्दवक्रयोः ।  
 हरिद्यवेऽपि हरिते तोक्मस्तोक्मं श्रुतेर्मले ॥ १३ ॥  
 दमस्तु दमने दण्डे दमथे कर्द्दमेऽपि च ।  
 दस्मो वैश्वानरे चौरै यजमानेऽपि च स्मृतः ॥ १४ ॥  
 द्रुमस्तु पादपे पारिजाते किंपुरुषेश्वरे ।  
 धर्मः स्यादस्त्रियां पुण्ये धर्मो न्यायस्वभावयोः ॥ १५ ॥

गम-जूवा, मार्ग, अच्छी तरह नहीं देखा हुआ, ( पु० )	जिह्व-तगरका दृक्ष, ( न० ) मद, कुटिल, ( त्रि० )
गुल्म-गुच्छा, सेनाकी रक्षा, सेनाभेद, तिली, घाट, ( पुं० ) ॥ १० ॥	तोक्म-हरा जब, हरा ( सबजा ), ( पुं० ) कानका मूल, ( न० ) ॥ १३ ॥
गुल्मी-आँवला, इलायची, घनी ( छोटान ), तंबू-डेर, ( स्त्री० )	दम-दमनस्त्रना ( इंद्रियोंको शांत करना ) दंडदेना, रोकना, कीचड़ ( पु० )
ग्राम-खरभेद, ग्राम ( गाँव ), ग्रामके पूर्व शब्दआदि लगानेसे समूह, ( जैसे-शब्दग्राम ) ( पुं० ) ॥ ११ ॥	दस्म-अग्नि, चोर, यजमान, ( पुं० ) ॥ १४ ॥
धर्म-धूप, ग्रीष्म-ऋतु, गरमी, पत्तीनाका जल, ( पु० )	द्रुम-दृक्ष, फल्यदृक्ष, कुबेर ( पु० )
जाल्म-नीच, कूर, बिनाविचारे करनेवाला ( पुं० ) ॥ १२ ॥	धर्म-पुण्य, ( पुं० न० ) धर्म-न्याय, स्वभाव, ( पु० ) ॥ १५ ॥

उपमायां यमाचारवेदान्तेऽपि धनुष्यपि ।

यागे योगेऽप्यहिंसायां सोमपेऽपि क्वचिन्मतः ॥ १६ ॥

ध्यामो गन्धतृणे पुंसि ध्यामो दमनकेऽपि च ।

श्यामवर्णे त्रिपु ध्यामो नुमा नाम्नि परद्युतौ ॥ १७ ॥

नेमिः कूपत्रिकाया स्याच्चक्रान्ते तिनिशद्भुमे ।

नेमोऽर्द्धकीलसीमासु गर्त्तप्राकारकैतवे ॥ १८ ॥

पद्मोऽस्त्री पद्मनालेऽब्जे व्यूहसंख्यान्तरे निधौ ।

पद्मके नागभेदे ना पद्मा भार्ग्वीश्रियोः स्त्रियाम् ॥ १९ ॥

ब्राह्मी तु भारतीपद्मगतिकाब्रह्मशक्तिपु ।

फल्लिकाया तथा सोमवल्लरीशाक्योरपि ॥ २० ॥

भामः क्रोधे रवौ भासि भीमः शम्भौ वृकोदरे ।

स्यादम्लवेतसे भीमस्त्रिपु घोरे भयानके ॥ २१ ॥

उपमा, धर्मराज, आचार, वेदान्त,  
धनुष, याग, योग, अहिंसा, अमृ-  
त पान करनेवाला, ( पुं० ) ॥ १६ ॥

ध्याम—सुगंधि तृण—विशेष, दौना  
( पुष्पपेड ) ( पुं० ) श्यामवर्ण,  
( त्रि० )

नुमा—नाम, परमवाति, ( स्त्री० )  
॥ १७ ॥

नेमि—कूपकी त्रिका ( चौखटा ),  
चक्रकी पुटी, तिरिच्छ वृक्ष, ( पुं० )

नेम—आधा, बीला, सीमा, खण्ड,  
किला, कपट, ( पुं० ) ॥ १८ ॥

पद्म—कमलनाल, कमल, सेनारचना,  
सह्याभेद, निधि, पद्माक, नाग-  
भेद, ( पुं० )

पद्मा—भारगी, लक्ष्मी, ( स्त्री० ) १९

ब्राह्मी—सरस्वती, मत्स्यभेद ( कीच-  
डकी मच्छी ), ब्रह्मशक्ति, धमाया,  
सोमबेल, शाकभेद, ( स्त्री० ) २०

भाम—क्रोध, सूर्य, प्रभा, ( पुं० )

भीम—महादेव, भीमसेन, अम्लवेत,  
( पुं० ) घोर, भयानक ( पुं० )

॥ २१ ॥

भीष्मस्तु हरगाङ्गेयरक्षसि त्रिषु भीषणे ।  
 स्थानमात्रे क्षितौ भूमिभौमस्तु नरके कुजे ॥ २२ ॥  
 भ्रमो भ्रान्तौ च कुन्दाख्ययन्त्रे च जलनिर्गमे ।  
 संयमे यमजे धर्मराजे ध्वाङ्गे युगे यमः ॥ २३ ॥  
 नित्यकर्मप्रभेदे च यमुनायां यमी म्रियाम् ।  
 प्रहरे संयमे यामो यामिः स्वसुकुलस्त्रियोः ॥ २४ ॥  
 प्रधमश्चापेपि संग्रामे राममाधवयोपिति ।  
 रमस्तु मन्मथे कान्ते रमोऽशोकमहीरुहे ॥ २५ ॥  
 रश्मिरंशुप्रग्रहयो रश्मिलोचनलोमनि ।  
 रामस्तु राघवे जामदग्नये हलधरेऽपि च ॥ २६ ॥  
 पशुभेदे सितश्याममनोजेषु तु वाच्यवत् ।  
 रामाङ्गनादिङ्गुलिन्यो रामं वाम्तुककुष्ठयोः ॥ २७ ॥

भीष्म-महादेव, भीष्मपितामह, रा-  
 धस, ( पु० ) भीषण, ( त्रि० )  
 भूमि-स्थानमात्र, पृथ्वी, ( स्त्री० )  
 भौम-भौमासुर ( नरकासुर ), मंग-  
 लग्रह, ( पु० ) ॥ २२ ॥  
 भ्रम-भ्रान्ति, बुदनामरु यंत्र, जल-  
 निर्गम ( चक्रादार होकर जलोंका  
 नीचेको जाना ) ( पुं० )  
 यम-संयम ( इंद्रियादिकोंका रोकना ),  
 शनि ग्रह, धर्मराज, काग, जोडा  
 ॥ २३ ॥ नित्यकर्मभेदे, ( पुं० )  
 यमी-यमुना, ( स्त्री० )  
 याम-ग्रहर ( पहर ), संयम, ( पुं० )

यामि-बहन, कुलकी स्त्री, ( स्त्री० )  
 ॥ २४ ॥  
 प्रधम-धनुष, संग्राम, ( पुं० )  
 प्रधमा-बलदेव कृष्णरी स्त्री ( स्त्री० )  
 रम-शामदेव, सुंदर, अशोक-वृक्ष,  
 ( पुं० ) ॥ २५ ॥  
 रश्मि-किरण, घोडा आदिकोंकी  
 रस्सी, नेत्र, लोम, ( पलस ) ( पुं० )  
 राम-रामचंद्र, परशुराम, बलदेव,  
 ॥ २६ ॥ पशुभेद, ( पुं० ) श्वेत,  
 श्याम, सुंदर, ( त्रि० )  
 रामा-स्त्री, बटेहली, ( स्त्री )  
 राम-वसुका, कूट ( न० ) ॥ २७ ॥

मनोरमेऽभिपूर्वाया रुक्मं तु स्वर्णलोहयोः ।  
 रुमा सुग्रीवकान्ताया रुमा तु लवणाकरे ॥ २८ ॥  
 लक्ष्मीः श्रीरिव संपत्तौ पद्माशोभाप्रियङ्गुषु ।  
 लक्ष्मीः स्यादौषधीभेदे नजः पूर्वा तु निर्ऋतौ ॥ २९ ॥  
 वमिः स्यात्पावके पुसि वमिस्तु वमने स्त्रियाम् ।  
 वामः सव्ये हरे कामे धने वित्ते तु न द्वयोः ॥ ३० ॥  
 वल्गु प्रतीपयोर्वामस्त्रिषु वामा तु योषिति ।  
 वामी शृगाल्या बडवारासभीकरभीष्वपि ॥ ३१ ॥  
 शमी शक्तुफलाया स्याच्छिवाया वल्गुलावपि ।  
 शुष्मः पुमान्दिनपतौ मतं शुष्मं तु तेजसि ॥ ३२ ॥  
 श्यामस्तु हरिते कृष्णे प्रयागस्य वटद्रुमे ।  
 पिके पयोधरे वृद्धदारकेऽपि पुमानयम् ॥ ३३ ॥

अभिराम-सुदर, ( त्रि० )	देव, कामदेव, मेघ, ( पु० ) धन, ( न० ) ॥ ३० ॥
रुक्म-सुवर्ण, लोह, ( न० )	
रुमा-सुग्रीवकी स्त्री, नमककी खान, ( स्त्री० ) ॥ २८ ॥	वाम-सुदर, प्रतिकूल, ( पु० )
लक्ष्मी-(धी) संपत्ति, लक्ष्मी, शोभा, फूलप्रियंगु, औषधी-भेद (ऋद्धि- वृद्धि-आदि ( स्त्री० )	वामा-स्त्री, ( स्त्री० )
अलक्ष्मी-नरककी अशोभा ( स्त्री० ) ॥ २९ ॥	वामी-गीदही, घोड़ी, गर्दभी, ऊँटनी ( स्त्री० ) ॥ ३१ ॥
वमि-अग्नि, ( पुं० ) वमि-वमन ( स्त्री० )	शमी-जाँट-वृक्ष, कौँठ, बापल-पक्षा, ( स्त्री० )
वाम-सव्य ( बायां अंग ), महा-	शुष्म-सूर्य, ( पुं० ) शुष्म-तेज, ( न० ) ॥ ३२ ॥
	श्याम-हरित, कृष्ण, प्रयागका वट, कोयल-पक्षी, मेघ, भिदारा ( पुं० ) ॥ ३३ ॥



श्यामवर्णे हरिद्वर्णे त्रिषु श्यामा तु वल्गुलौ ।

अप्रसूताह्रनायां च श्यामा सोमलतोषधौ ॥ ३४ ॥

त्रिशृताशारिवागुन्द्रानिशानीलीप्रियङ्गुषु ।

श्यामं लवणभेदेऽपि श्यामं स्यान्मरिचेऽपि च ॥ ३५ ॥

श्रामस्तु मण्डपे काले विपूर्वः श्रमवक्षने ।

समा वर्षे सद्वत्सर्वमान्येषु च समं त्रिषु ॥ ३६ ॥

सीमाऽवधौ च वेलायां क्षेत्रे घाटे स्थितावपि ।

सूक्ष्मं तु नभसि क्षीरे सूक्ष्ममल्पेऽभिधेयवत् ॥ ३७ ॥

कतकाऽध्यात्मयोः सूक्ष्मं सूक्ष्मः पुंस्यणुमात्रके ।

सोमः सुधांशुकर्पूरकुबेरपितृदेवते ॥ ३८ ॥

दिव्यौषधीश्यामलतावसुभिद्वातवानरे ।

तुषारे चन्दने शीते हिमं त्रिषु तु शीतले ॥ ३९ ॥

श्यामवर्णवाला, हरितवर्णवाला (त्रि०)

श्यामा-भाषल-पक्षी, नहीं प्रसूति

दुरं श्री, सोमलता औषधि ॥ ३४ ॥

नितोष, अनंनमूल, भद्रनोषा, हलदी,

सौलसा पेड, फूलप्रियंगु, (श्री०)

श्याम-लवणभेद, स्याद् मिरच,

(न०) ॥ ३५ ॥

श्राम-मंडप, काल, (पुं०)

श्राम-धन (भेद) वा दृढकरना,

(पुं०)

समा-वर्ष, (श्री०)

सम-दुल्ल, संज्ञ, घेठ, (त्रि०) ॥ ३६ ॥

सीमा-अवधि, वेला (नदीआदिका

तीर), क्षेत्र, घाट, स्थिति, (श्री०)

सूक्ष्म-आकार, दुग्ध, (न०) अल्प

(त्रि०) ॥ ३७ ॥ सूक्ष्म-कनक

(निर्मलं), अध्यात्म (आत्म-

विचार) (न०) सूक्ष्म-अणु

(सूक्ष्माणु, (पुं०)

सोम-चंद्रमा, कर्पूर, कुबेर, पितृदेवता,

॥ ३८ ॥ दिव्य औषधि, सौमलता,

वसुभेद, वायु, वंदर, (पुं०)

हिम-बर्फ, चंद्र, दंडा, (पुं०)

हिम-दंडा, (त्रि०) ॥ ३९ ॥

होमिरमौ घृते चाथ क्षितौ क्षान्तावपि क्षमा ।

क्षमं युक्ते क्षमः शक्ते हिते क्षान्त्यन्वितेऽन्यवत् ॥ ४० ॥

क्षुमाऽतसीनीलिक्रयो क्षेमं स्याद्व्यरक्षणे ।

मङ्गले चोरके वा श्री क्षेमा चण्डाहरस्त्रियोः ॥ ४१ ॥

क्षौमं स्यादतसीवस्त्रे क्षौममद्दुःकूलयोः ।

मर्तृतीयम् ।

अधमः कुत्सिते न्यूनेऽप्यागमः शास्त्र आगतौ ॥ ४२ ॥

आश्रमो ब्रह्मचर्यादौ मुनिस्थाने मठे स्त्रियाम् ।

उत्तमा दुग्धिकाया स्यादुत्कृष्टे तु त्रिभूतमम् ॥ ४३ ॥

कलमः शालिलेखन्योश्चौरे लाक्षारसेऽपि च ।

कुसुमं पुष्पफलयोरार्चवे लोचनामये ॥ ४४ ॥

कृत्रिमं लवणे पुंसि सिहके कृतके त्रिषु ।

गुडार्मः स्याद्गुडक्षौदे क्षीरदारुणि च स्मृतः ॥ ४५ ॥

होमि—अग्नि, घृत, ( पु० )

क्षमा—घृष्टी, क्षान्ति, ( स्त्री० )

क्षम—युक्त, ( न० ) समर्थ, हित ( पु० )

क्षान्तियुक्त, ( त्रि० ) ॥ ४० ॥

क्षुमा—अलसी, नीली ( लील ) ( स्त्री० )

क्षेम—लवणकी रक्षा, मङ्गल, चोरक

गणद्रव्य, ( भटेडर ) ( न० स्त्री० )

क्षेमा—चढा—शौषधी, पार्वती ( स्त्री० )

॥ ४१ ॥

क्षौम—अलसीवस्त्र, अट ( अटारी ),

रेशमीवस्त्र ( न० )

मर्तृतीय ।

अधम—निन्दित, न्यून ( कमती ),

( पु० )

आगम—शास्त्र, आना, ( पुं० ) ॥ ४२ ॥

आश्रम—ब्रह्मचर्य आदि, मुनिका

स्थान, मठ ( विद्यार्थियोंका स्थान )

( पुं० न० )

उत्तमा—दूधी—औषधि, ( स्त्री० )

उत्तम—उत्कृष्ट ( श्रेष्ठ ) ( त्रि० )

॥ ४३ ॥

कलम—साँटी—चावल, कलम, चोर,

लाखका रंग, ( पुं० )

कुसुम—पुष्प, फल, स्त्रीका रज,

नेत्रका रोग, ( न० ) ॥ ४४ ॥

कृत्रिम—लवण, हींग, ( पुं० ) नकली

वस्तु, ( त्रि० )

गुडार्म—गुडका चूर्ण, दूधवाला वृक्ष,

( पु० ) ॥ ४५ ॥

गोधूमो व्रीहिभेदे स्यान्नारङ्गे भेषजान्तरे ।

गोलोमी श्वेतदूर्वायां घारस्त्रीवचयोरपि ॥ ४६ ॥

गौतमः शाक्यसिंहेऽपि मुनिभेदेऽपि गौतमः

गौतमी चण्डिकायां च रोचन्यामपि गौतमी ॥ ४७ ॥

तल्लिमं कुट्टिमं तल्पे वित्ताने यावकेऽपि च ।

दाडिमः पुंसि दाडिम्ब एलायामपि दाडिमः ॥ ४८ ॥

निगमो हृष्टपूर्वदकटलुण्डीषु वाणिजे ।

नियमो निश्चये बन्धे यन्नणे संविदि व्रते ॥ ४९ ॥

निष्क्रमो निर्गमे बुद्धिसम्पत्तौ दुष्कुलेऽपि च ।

नैगमः क्षुरिवेदान्तवणिग्वाणिज्यनागरे ॥ ५० ॥

पञ्चमो रागभेदे स्यात्पञ्चानां पूरणे त्रिषु ।

त्रिषु दक्षिणमेघेऽपि पञ्चमी पाण्डवस्त्रियाम् ॥ ५१ ॥

गोधूम-गेहूँ, नारंजी, औषधिभेद  
( पुं० )

गोलोमी-सफेद-दूब, वेर्या, वच-  
औषधि, ( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥

गौतम-बुद्धदेव, एकमुनि, ( पुं० )

गौतमी-चंडिका, गोरोचन, ( स्त्री० )  
॥ ४७ ॥

तल्लिम-कुट्टिम (रहितभूमि), शय्या,  
चैशेवा, यावक (कुल्माष) (न०)

दाडिम-अनार, इलायची, ( पुं० )

॥ ४८ ॥

निगम-हाट, पुर, वेद, कट (सुदी),  
न्यायसारिणी, वाणिज, ( पुं० )

नियम-निश्चय, बन्ध, प्रेरणा, बुद्धि,  
व्रत, ( पुं० ) ॥ ४९ ॥

निष्क्रम-निकसना, बुद्धिसंपत्ति,  
दुष्कुल ( नेष्टकुल ) ( पुं० )

नैगम-नाई, वेदान्त, बणिया,  
वाणिज्य, नागर ( नगरमें होने-  
वाला पुरुष ) ( पुं० ) ॥ ५० ॥

पञ्चम-रागभेद, ( पुं० ) पाचोंको-  
पूर्ण करनेवाला ( पाचवां ) ( त्रि० )  
दक्षिण दिशाका मेघ, ( त्रि० )

पञ्चमी-पाण्डवोंकी स्त्री(शंपदी)(स्त्री०)  
॥ ५१ ॥

परमन्तु त्रिप्लुक्छे प्रधानाद्योश्च पुंसि तु ।

ओंकारे परमं तु स्यादनुजायामसंज्ञकम् ॥ ५२ ॥

प्रक्रमोऽवसरे चानुक्रमे चापक्रमे क्रमे ।

प्रतिमाऽनुकृतौ दन्तबन्धनेऽपि च दन्तिनाम् ॥ ५३ ॥

आदावपि प्रधानेऽपि प्रथमं वाच्यलिङ्गकम् ।

प्रहर्मः सौधकूटस्थकलशाद्रिनितम्बयोः ॥ ५४ ॥

मध्यमो मध्यदेशे स्यात्स्वरे मध्येऽथ मध्यमा ।

त्रिपु दृष्टरजोनारीराक्योर्मध्यमा स्त्रियाम् ॥ ५५ ॥

कर्णिकात्र्यक्षरच्छन्दकरमध्याङ्गुलीषु च ।

विक्रमस्तुद्यमक्रान्तौ क्षमाया शक्तिसंपदि ॥ ५६ ॥

विद्रुमो रत्नवृक्षेऽपि प्रवाले नृवपल्लवे ।

विभ्रमस्तु विलासे स्याद् विभ्रमो भ्रान्तिहाययोः ॥ ५७ ॥

परम-श्रेष्ठ, ( त्रि० ) प्रधान (मुख्य)  
आदि, ( पु० )

परम-उँकार, ( न० ) आज्ञा ( अ-  
व्यय ) ॥ ५२ ॥

प्रक्रम-अवसर, अनुक्रम, अपक्रम  
( उलटा क्रम ) क्रम, ( पुं० )

प्रतिमा-अनुकृति ( अनुकरण ),  
हस्तियोंका दंतबंधन, ( स्त्री० ) ५३

प्रथम-आदि, प्रधान, ( त्रि० )

प्रहर्म-महलकी शिखरका बलश,  
पर्वतका नितंब, ( पुं० ) ॥ ५४ ॥

मध्यम-मध्यदेश, मध्यम-स्वर, ( पु० )

मध्यमा-रजस्तला स्त्री, पूर्णचंद्रवाली  
पूर्णमा, ( स्त्री० ) ॥ ५५ ॥

कर्णिका ( पुष्पकी केसर ), तीन  
अक्षरोंका छंद, हायकी मध्यम अं-  
गुली, ( स्त्री० )

विक्रम-उद्यम, क्रान्ति, क्षमा, शक्ति,  
सपत्न, ( पुं० ) ॥ ५६ ॥

विद्रुम-रत्नवृक्ष, मूंगा, नवीन पत्ता,  
( पुं० )

विभ्रम-विलास, भ्रान्ति, हाव ( स्त्री-  
करणभेद ) ( पुं० ) ॥ ५७ ॥

विलोमो विपरीतेऽपि मुजङ्गेङ्गुलिरोमनि ।  
 विलोमी तु व्यवस्थायां विलोममरघट्टके ॥ ५८ ॥  
 व्यायामो दुर्गसंचारे वियामे पौरुषे श्रमे ।  
 सङ्क्रमः सङ्क्रमणेऽस्त्री तु वारिसंचारयत्रके ॥ ५९ ॥  
 त्रिपूतमे पूज्यतमे साधीयसि च सत्तमः ।  
 सम्भ्रमस्त्वादेरे पुंसि संवेगे साध्वसेऽपि च ॥ ६० ॥  
 सुपमं चारुसमयोस्त्रिपु स्यात्सुपमा द्युतौ ।  
 अतिद्युतौ च सुपमा सुपीमः पन्नगान्तरे ॥ ६१ ॥  
 सुपीमं शिशिरे क्लीत्रं चारुशीतलयोस्त्रिपु ।

मचतुर्थम् ।

सुन्दरेऽप्युपमाशून्ये भवेदनुपमोऽन्यवत् ॥ ६२ ॥  
 गौरीनायकदिङ्नागयोपित्यनुपमा मता ।  
 अभ्यागमोऽन्तिके घाते विरोधेऽप्युद्गमे युधि ॥ ६३ ॥

विलोम-विपरीत, सर्प, अगुलियोंके रोम, ( पुं० )	सुपम-सुंदर, सम ( तुल्य ), ( त्रि० )
विलोमी-व्यवस्था, ( स्त्री० )	सुपमा-वान्ति, अतिवान्ति, ( स्त्री० )
विलोम-अरहट्ट ( न० ) ॥ ५८ ॥	सुपीम-सर्पभेद, ( पुं० ) शिशिर, ( न० ) सुंदर, शीतल, ( त्रि० ) ॥ ६१ ॥
व्यायाम-दुर्गसंचार, श्रम, पौरुष, परिश्रम, ( पुं० )	मचतुर्थम् ।
सङ्क्रम-सङ्क्रमण, ( पुं० ) अलमे संचारका यंत्र, ( पुं० न० ) ॥ ५९ ॥	अनुपम-सुंदर, उन्माशून्य, ( द्वि० ) ॥ ६२ ॥
सत्तम-उत्तम, पूज्यतम, अतिथेष्ठ, ( पुं० )	अनुपमा-ईशान कोनट्टे इर्दई हयिनो, ( स्त्री० )
सम्भ्रम-आदर, संवेग, भय, ( पुं० ) ॥ ६० ॥	अभ्यागम-कनोत, वत्र, विरोध, उद्गम, युद्ध, ( पुं० ) ॥ ६३ ॥

उपक्रमश्चिकित्सायामुपधाने च विक्रमे ।  
 भवेदुपगमः पार्श्वगमनेऽङ्गीकृतावपि ॥ ६४ ॥  
 जलगुल्मो जलावर्त्तजलचत्वरकच्छपे ।  
 दण्डयामस्तु दिवसे कीनाशे कुम्भसम्भवे ॥ ६५ ॥  
 पराक्रमस्तु सामर्थ्ये विक्रमोद्योगयोरपि ।  
 प्लवङ्गमः कर्पौ भेके महापद्मं तु मानके ॥ ६६ ॥  
 महापद्मः पुमान्सङ्घचानिधिनागान्तरे मतः ।  
 यातयामो मतो जीर्णे परिभुक्तोज्जिते त्रिषु ॥ ६७ ॥  
 सार्वभौमस्तु दिग्भागभेदे सर्वमहीपतौ ।  
 अभ्युपगमः स्वीकारे समीपगमनेऽपि च ॥ ६८ ॥

इति विश्वलोचने मान्तवर्गः ॥

उपक्रम—चिकित्सा ( इलाज ), उपधा, विक्रम, ( पुं० )

उपगम—समीपजाना, अगीकार, ( पु० ) ॥ ६४ ॥

जलगुल्म—जलका भँवर, जलचौक, कटुवा ( पुं० ) ।

दण्डयाम—दिन, धर्मराज, अगस्त्य मुनि, ( पुं० ) ॥ ६५ ॥

पराक्रम—सामर्थ्य, विक्रम, उद्योग, ( पुं० ) ।

प्लवङ्गम—बन्दर, भेटक, ( पुं० )

महापद्म—प्रमाण, ( न० ) ॥ ६६ ॥

महापद्म—सख्याभेद, निधिभेद, नागभेद, ( पुं० )

यातयाम—जीर्ण, अच्छीतरह भोगा-हुवा, त्यागाहुवा, ( त्रि० ) ॥ ६७ ॥

सार्वभौम—दिग्हस्तीभेद, संपूर्णपृथ्वीका राजा, ( पुं० )

अभ्युपगम—अगीकार, समीपमें आना, ( पुं० ) ॥ ६८ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषामें मान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ यान्तवर्गः ।

यकम् ।

यो वातयशसोः पुंसि या यानत्यागयातृषु ।

यद्वितीयम् ।

अन्योऽसमाने भिन्ने च स्यादन्त्योऽन्तभवेऽधमे ॥ १ ॥

अथ्यो बुधे त्रिषु न्याय्ये शिलाजतुनि न द्वयोः ।

अर्घार्थं यत्तदर्घ्यं स्यात्त्रिषु यश्चार्थमर्हति ॥ २ ॥

अर्घ्यः स्याद्योग्यमात्रेऽपि स्यादर्यः स्वामिवैश्ययोः ।

पुंस्यार्यः सौविदले स्यादार्यस्त्वभ्यर्हिते त्रिषु ॥ ३ ॥

आस्या स्थितौ मुखे चास्यं मुखमध्ये मुखोद्भवे ।

इज्यो गुरौ पुमानिज्या दानार्चासङ्गमेष्टिषु ॥ ४ ॥

इभ्य आख्यं भवेदिभ्या करेष्वामपि शल्लकी ।  
 कन्या कुमारिकानार्यो राशिभेदौषधीभिद्रोः ॥ ५ ॥  
 प्रातर्द्धादिनयोः कल्यं कल्यो नीरोगदक्षयोः ।  
 सज्जेऽपि त्रिषु कल्या तु मधे कल्या च वाचि च ॥ ६ ॥  
 कश्यं मधे कशार्हं च कश्यं मध्ये च वाजिनाम् ।  
 कक्ष्या वृहतिक्राकाशोर्मध्यवन्धे च दन्तिनाम् ॥ ७ ॥  
 हर्म्यादीना प्रकोष्ठे तु कांस्यं स्यात्पानभाजने ।  
 तैजसद्रव्यभेदेपि वाद्यभेदेऽपि न द्वयोः ॥ ८ ॥  
 कायो वर्म स्वभावे च सहे लक्ष्ये फदैवते ।  
 कार्यं मनुष्यतीर्थे स्यात्कार्यं हेतौ प्रयोजने ॥ ९ ॥  
 काव्यः शुक्रग्रहे पुंसि काव्या स्यात्पूतनाधियोः ।  
 काव्यं ग्रन्थान्तरे क्लीवं कुड्यं भित्ती विलेपने ॥ १० ॥

इभ्य—पनी ( पु० )

इभ्या—हथिनी, शल्लकी ( शालई )

वृक्ष ( स्त्री० )

कन्या—कुमारी, स्त्रीमान, राशिभेद,

औषधिभेद, ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥

कल्य—प्रातःकाल, कलका दिन, ( न० )

कल्य—नीरोग, चतुर, सज्ज ( वक्त्र )

आदिसे सज्जहुवा ( त्रि० )

कल्या—मदिरा, वाणी, ( स्त्री० ) ६

कश्यं—मय ( मदिरा ), चायुक्त लगाने

योग्य, ( त्रि० ) घोड़ोंका मध्यभाग

( न० )

कक्ष्या—कटेहली, करधनी, हस्त्रियोंका

मध्यबंध, ( नाडी ) ॥ ७ ॥

हर्म्यं ( महल ) शारिर्वाद्या प्रकोष्ठ

( कोठा ) ( स्त्री० )

कांस्य—जलआदि पीनेका पात्र, तैजस

द्रव्यभेद, वाद्य ( वाजा ) भेद,

( न० ) ॥ ८ ॥

काय—शरीर, स्वभाव, समूह, निशाना

क ( प्रजापति ) देवतावाला, ( पुं० )

कार्यं—हेतु, प्रयोजन ( न० ) ॥ ९ ॥

कार्यं—मनुष्यतीर्थ, ( न० )

काव्य—शुक्र—ग्रह, ( पुं० )

काव्या—पूतना, बुद्धि, ( स्त्री० )

काव्य—ग्रंथ, ( न० )

कुड्य—दीवार, विलेपन ( लीपना )

( न० ) ॥ १० ॥



कुल्यो मान्ये कुलोद्भूतकुलातिहितयोस्त्रिषु ।

कुल्यं स्यादामिषे शूर्पेप्यष्टद्रोण्यां च कीकसे ॥ ११ ॥

कुल्याऽल्पकृत्रिमनदीनदीजीवासु निर्झरे ।

कृत्या क्रियादेवतयोस्त्रिषु भेद्ये धनादिभिः ॥ १२ ॥

विद्विष्टकार्ययोश्चायं कृत्यास्तव्यादिषु स्मृताः ।

क्रिया कर्मणि चेष्टायां करणे संप्रधारणे ॥ १३ ॥

उपायारम्भशिक्षार्चाचिकित्सानिष्कृतिष्वपि ।

गव्यं नपुंसकं ज्यायां गवां क्षीरादिकेऽपि च ॥ १४ ॥

रागद्रव्येऽपि गव्या तु गोकुले गोहिते त्रिषु ।

गुह्यं रहस्युपस्ये च गुह्यो दम्भेपि कच्छपे ॥ १५ ॥

गृह्या शाखापुरे गृह्यस्त्वसक्तमृगपक्षिणोः ।

गुह्यं पुरीषमार्गेऽपि गृह्यमस्त्रैरिपक्षयोः ॥ १६ ॥

कुल्य-मान्य-पुरुष ( पुं० ) कुलमें  
उत्पन्नहुवा, कुलका अतिहित, ( त्रि० )

कुल्य-मांस, छाज, अष्ट द्रोणी, अस्थि  
( हाड ) ( न० ) ॥ ११ ॥

कुल्या-छोटी कृत्रिमनदी, नदी,  
जीवन्ती-औषधि, सिरना, ( स्त्री० )

कृत्या-क्रिया, देवता, ( स्त्री० ) धन  
आदिकरके भेद्ये, ॥ १२ ॥

शत्रु, कार्य, ( त्रि० )

कृत्य-तव्य आदि प्रत्यय, ( पुं० )

क्रिया-कर्म, चेष्टा, करण, संप्रधारण  
( अच्छे प्रकार धारण ) ॥ १३ ॥

उपाय, आरम्भ, शिक्षा, पूजा,  
चिकित्सा, निकालना, ( स्त्री० )

गव्य-धनुषकी ज्या, गौबोंका दूध दधि  
आदि ॥ १४ ॥ रगनेका द्रव्य, ( न० )

गव्या-गोकुल, गोहित, ( त्रि० )

गुह्य-रहस्य ( गुप्तसलाह ), स्त्रीपुरुष-  
का योनि और शिक्ष, ( न० ) दंभ,  
बहुवा, ( पुं० ) ॥ १५ ॥

गृह्या-शाखानगर ( एकपुरमाहेंसे ब-  
साहुवा दूसरा नगर ), ( स्त्री० )

गृह्य-परमें हिलाहुवा मृग और पक्षी,  
( पुं० ) गुद, ( न० ) रोकाहुवा,  
पक्षकरने योग्य, ( त्रि० ) ॥ १६ ॥

गेयन्तु त्रिषु गतत्र्ये गेयः न्याद्रायने पुमान् ।

गोप्यो दाम्या अपये न्याद्रक्षणीयेऽपि वाच्यवत् ॥ १७ ॥

ग्राम्यो जने त्रिषु ग्राम्यं त्वष्ठीरस्तवन्धयो ।

चयस्त्राहरणे वृन्दे प्राकारे मूलवन्धने ॥ १८ ॥

चव्यं तु चविके यच्च चव्या दूर्वोप्रगन्धयो ।

चित्या मृतचिताया स्याच्चित्यं मृतकचैत्यके ॥ १९ ॥

चैत्यमायतने क्षीत्र न्याशिताचूडकेऽपि च ।

बुद्धनिम्बे पुमाश्चैत्यश्चैत्य उद्देश्यपादपे ॥ २० ॥

चोद्य प्रश्नेऽद्भुते चोद्यं वाच्यवचोदनोचिते ।

छाया न्यादातपाभावे सत्कान्त्युत्कोचमन्त्रिषु ॥ २१ ॥

प्रतिविम्बेऽर्कान्ताया तथा पद्मौ च पालने ।

जन्यस्ताते वरवधूजातिमृत्युप्रियेहिते ॥ २२ ॥

गेय-गानके गेय, ( त्रि० ) गायन  
( पु० )

गोप्य-दासीकी सतान, रक्षाकरने  
गेय, ( त्रि० ) ॥ १७ ॥

ग्राम्य-ग्राममें जानेवाला जन, ( त्रि० )  
अष्ठील, रतवध, ( न० )

चय-इकड़ाकरना, समूह, किला,  
जड़का बाधना, ( पु० ) ॥ १८ ॥

चव्य-चव्य, ( न० )

चव्या-दूब, अजमोद, ( स्त्री० )

चित्या-मृतककी चिता, ( स्त्री० )

चित्य-मृतकका चौतरा, ( न० )  
॥ १९ ॥

चैत्य-यहस्थान, चिताका बिह, ( न० )  
बुद्धदेवकी मूर्ति, उद्देश्य(प्राउद्ध)वृष  
(चिन सभाका वृष) ( पु० ) ॥ २० ॥

चोद्य-प्रश्न, अद्भुत ( न० ) प्रेरणाक  
गेय, ( त्रि० )

छाया-धूदका अभाव, अच्छा कान्ति,  
खिलना, रोमा, ॥ २१ ॥ प्रति-  
बिंब, सूर्यकी छी, पक्षि, पाल  
नकरना, ( स्त्री० )

जन्य-पिता, वरवधू, शाति, मृत्यु,  
प्रिय, हित ( हिंद ) ॥ २२ ॥ ✓

जन्यस्तु जननीये स्यान्निपु जन्यं तु सयुगे ।  
 परीवादेऽपि हृष्टेऽपि जन्या मातृसखीमुदो ॥ २३ ॥  
 जन्युः प्राणिनि वह्नौ च जन्युः स्यात्परमेष्ठिनि ।  
 जयो जयन्ते विजये जया तिथ्यन्तरोमयोः ॥ २४ ॥  
 उमासखीजयन्त्योश्च पथ्यायामग्निमन्थके ।  
 जात्यं कुलीने श्रेष्ठेऽपि ताक्षर्योऽनूरुसुपर्णयो ॥ २५ ॥  
 रथेऽथे चाश्वकर्णद्रौ मत ताक्षर्यं रसाङ्गने ।  
 तिष्यः पुष्ये कलौ तिष्या धान्या तिष्यैव पुष्यवत् ॥ २६ ॥  
 त्रयी त्रिवेद्या त्रितये पुरन्ध्या सुमतावपि ।  
 दस्युर्विद्विपि चौरै च दायः सोल्लुण्ठभाषिते ॥ २७ ॥  
 यौतकादिधने दाने भागार्हपितृवस्तुनि ।  
 दिव्यं तु शपथे बाले लवङ्गकुसुमेऽपि च ॥ २८ ॥

जननेके योग्य, ( त्रि० )  
 जन्य-शुद्ध, परिवाद, हाड, ( न० )  
 जन्या-माताकी सखी, आनद ( स्त्री० )  
 ॥ २३ ॥  
 जन्यु-प्राणी, अग्नि, ब्रह्मा, ( पु० )  
 जय-जयन्त ( इन्द्रिय ), विजय  
 ( जीतना ) ( पु० )  
 जया-तिथिभेद, पार्वती, ॥ २४ ॥  
 पार्वतीकी सखी, जयती या अगेधु  
 पुष्पवृक्ष, हरड, अरड्ड, ( स्त्री० )  
 जात्य-कुलीन, श्रेष्ठ, ( त्रि० )  
 ताक्षर्य-अरुण, गहड, ॥ २५ ॥  
 रथ, अश्व, साल-वृक्षभेद, ( पु० )

ताक्षर्य-रसोत-औषधि ( न० )  
 तिष्य पुष्य-पुष्य-नक्षत्र, कलि युग,  
 ( पु० )  
 तिष्या-आँवला, ( स्त्री० ) ॥ २६ ॥  
 त्रयी-त्रिवेदी ( तीनवेद ), तीन अव-  
 यवोंवाला, पतिपुत्रवाली स्त्री, श्रेष्ठ-  
 बुद्धि, ( स्त्री० )  
 दस्यु-शत्रु, चोर, ( पुं० )  
 दाय-हास्य सहित भाषण ॥ २७ ॥  
 बरवधुको देनेका द्रव्य, दान, भाग-  
 करने योग्य पिताकी वस्तु, ( पु० )  
 दिव्य-सौगन्, बालक, लौग, पुष्प,  
 ( न० ) ॥ २८ ॥

दिव्याऽऽमलक्या दिव्यं तु वल्गौ दिविभवेऽन्यवत् ।  
 दूप्यं वल्लगृहे वल्ले दूपणीये तु वाच्यवत् ॥ २९ ॥  
 दैत्या सुरासुराचण्डौषधीषु दितिजे पुमान् ।  
 द्रव्यं तु पितले वित्ते द्विकारे जतुन्यापि ॥ ३० ॥  
 भेषने च पृथिव्यादौ त्रिषु भव्यविलेपयो ।  
 धन्या धायामलक्यो स्याद्धन्यः पुण्ययति त्रिषु ॥ ३१ ॥  
 धान्यं व्रीहिषु धान्याके धिष्ण्यः स्यादनले पुमान् ।  
 धिष्ण्यं सन्ननि नक्षत्रे स्थाने शक्तौ च न द्वयो ॥ ३२ ॥  
 नयो घृतान्तरे नीतौ व्यङ्गके त्वभिपूर्वक ।  
 नाट्यं तौर्यत्रिके लास्ये नित्यं तु सतते ध्रुवे ॥ ३३ ॥  
 हरीतक्या मता पथ्या मत पथ्यं हिते त्रिषु ।  
 पद्यः शब्दे पुमान्पद्यं श्लोके पद्या तु कर्मणि ॥ ३४ ॥

दिव्या-आंबला, ( स्त्री० )

दिव्य-मुदर, आकाश या स्वर्गमे  
 होनेवाला, ( त्रि० )

दूप्य-वल्लका घर ( तबूडेर ), वल्ल,  
 ( न० ) दूपणीय ( निदनीय ) ( त्रि० )  
 ॥ २९ ॥

दैत्या-मदिरा, कपूरकचरी, चोर  
 नामक गंध-द्रव्य, ( स्त्री० )

दैत्य-दितिके पुत्र, ( असुर ) ( पु० )

द्रव्य-पीतल, धन, वृक्षविकार, लाख,  
 ॥ ३० ॥ औषधि, पृथिवी आदि,  
 कल्याण, विलप, ( त्रि० )

धन्या-धाय ( बच्चोंको दूध पिलाने  
 वाली ), आंबला, ( स्त्री० )

धन्य-पुण्यवान्, ( त्रि० ) ॥ ३१ ॥

धान्य-व्रीहि ( धान ), धनियो, ( न० )

धिष्ण्य-अग्नि, ( पु० ) मकान  
 नक्षत्र, स्थान, शक्ति, ( न० )

॥ ३२ ॥  
 नय-घृतभेद, नीति, ( पु० )

अभिनय-हाथ आदिके इशारेसे वा  
 तका समझाना, ( पु० )

नाट्य-नाचना-गाना-बजाना, नाचना  
 ( न० )

नित्य-निरंतर, ध्रुव ( स्थिर ) ( न० )  
 ॥ ३३ ॥

पथ्या-हरड, ( स्त्री० )

पथ्य-हित भोजनादि, ( त्रि० )  
 पद्य-शब्द, ( पु० ) श्लोक ( न० )  
 पद्या-मार्ग ( स्त्री० ) ॥ ३४ ॥

नपुंसकं तु पाक्यं स्याद्यवक्षारे विडाह्वये ।  
 पाद्यं पयसि निन्दे च पीयुः कालार्कपेचके ॥ ३५ ॥  
 पुण्यं तु सुकृते धर्मे त्रिषु मध्यमनोज्ञयोः ।  
 श्वशुरे पुंसि पूज्यः स्यात्पूज्यो वन्द्योऽभिधेयवत् ॥ ३६ ॥  
 पेयं पातव्यपयसोः पेया श्राणाच्छमण्डयोः ।  
 प्रायः पुमाननशने मृत्युबाहुल्ययोस्तथा ॥ ३७ ॥  
 प्रियस्तु त्रिषु ह्ये स्याद्भवे वृद्धौषधे पुमान् ।  
 वन्द्यं त्रिषु वनोद्भूते वन्द्या वृन्दे वनाम्भसोः ॥ ३८ ॥  
 अप्रजातस्त्रियां वन्ध्या वन्ध्यस्त्रिषु हलिद्रुमे ।  
 बल्यं प्रधानधातौ स्याद्बल्यं बलकरे त्रिषु ॥ ३९ ॥  
 वरेण्ये वाच्यवद्वर्यो वर्यः पञ्चशरे पुमान् ।  
 विन्ध्या ऋटौ लवल्यां च विन्ध्यो व्याघ्राद्रिभेदयोः ॥ ४० ॥

पाक्य-जवाखार, विड-नमक, (न०)	प्रिय-मनोरम, (त्रि०) पति, वृद्धि- नामक औषधि, (पुं०)
पाद्य-जल, निध, (न०)	वन्द्य-वनमें उत्पन्न होनेवाला, (त्रि०)
पीयु-काल, सूर्य, उलू, (पुं०) ॥ ३५ ॥	वन्द्या-वनका और जलका समूह (स्त्री०) ॥ ३८ ॥
पुण्य-सुकृत (अच्छा कर्म करना), धर्म, (न०) मध्य, सुंदर, (त्रि०)	वन्ध्या-अप्रसूता स्त्री, (स्त्री०)
पूज्य-समुद्र (पुं०) वदनाके योग्य, (त्रि०) ॥ ३६ ॥	वन्ध्य फलिहारी-वृक्ष (पुं०)
पेय-पीनेके योग्य, दुग्ध, (न०)	बल्य-प्रधान-धातु (वीर्य) (न०) बल करनेवाला (त्रि०) ॥ ३९ ॥
पेया-पकायाहुवा पतला अन्न, स्वच्छ- माँड, (स्त्री०)	वर्य-श्रेष्ठ, (त्रि०) कामदेव, (पुं०)
प्रायः-अतजलका लागना, मृत्यु, बाहुल्य (जियादहपना) (पुं०)	विन्ध्या-छोटी-इलायची, हरफा रेवड़ी, (स्त्री०)
॥ ३७ ॥	विन्ध्य-व्याघ्र, पर्वत-भेद, (पुं०) ॥ ४० ॥

माया दम्भे कृपायां च स्यान्माया शाम्बरीधियोः ।  
 माल्यं पुष्पेऽपि मालायां, मूल्यं वेतनवस्त्रयोः ॥ ४७ ॥  
 मृत्युः स्यान्मरणे दैवे मेध्यं पूतेऽपि मेदुरे ।  
 मेध्या रक्तवचायां च रोचनायामपि स्त्रियाम् ॥ ४८ ॥  
 क्लीवं स्यादाश्रमे मेध्यं ययुः क्रतुहये हये ।  
 याम्याऽपाच्यां भरण्यां च याम्योऽगस्त्येऽपि चन्दने ॥ ४९ ॥  
 योग्यः प्रवीणयोगार्हशक्तोपायिषु वाच्यवत् ।  
 योग्याऽभ्यासेऽर्कक्रान्तायां योग्यमृद्धचाख्यभेषजे ॥ ५० ॥  
 रथ्या तु विगिस्त्रायां स्याद्रथौवे पथि चत्वरे ।  
 मतो रथोद्धे रथ्यो रथ्यं त्रिषु मनोरमे ॥ ५१ ॥  
 रम्या विभावरी रम्यः पुंसि चम्पकपादपे ।  
 रूप्यं स्यादाहृतस्पर्णरजते रजते तथा ॥ ५२ ॥

माया-दंभ, कृपा, बाजीगरकी विद्या, बुद्धि, ( स्त्री० )	योग्य-प्रवीण (चतुर), योगके योग्य, समर्थ, उपायवाला ( त्रि० )
माल्य-पुष्प, पुष्पमाला, ( न० )	योग्या-अभ्यास, सूर्यकी स्त्री, ( स्त्री० )
मूल्य-नीकरी, वस्तुना मोल (कीमत) ( न० ) ॥ ४७ ॥	योग्य ऋद्धि-औषध (न०) ॥ ५० ॥
मृत्यु-मरना, धर्मराज, ( पुं० )	रथ्या-गली, रथोका समूह, मार्ग, परका आंगन, ( स्त्री० )
मेध्य-पवित्र, सपन साविदण, ( त्रि० )	रथ्य-रथो पहनेवाला वस्त्र आदि ( पुं० )
मेध्या-रक्तवच, गोरोचन, ( स्त्री० ) ॥ ४८ ॥	रम्य-सुंदर, ( त्रि० ) ॥ ५१ ॥
मेध्या-आश्रम ( न० )	रम्या-राशि, ( स्त्री० )
ययु-राके द्विजे अथ, वक्त्र-नाम, ( पुं० )	रम्य-चंपका वृक्ष, ( पुं० )
याम्या-दक्षिण दिशा, भरणी-नक्षत्र, ( स्त्री० )	रूप्य-पद्मालुवा ( विद्या ) सुवर्ण वा रज ( चाँदी ) का, चाँदी-नाम, ( न० ) ॥ ५२ ॥
याम्य-भगवत्-मुनि, चन्दन ( पुं० ) ॥ ४९ ॥	

इत्स्वलासु स्त्रियः सौम्या बुधे सौम्योऽथ वाच्यवत् ।

वौद्धे मनोरमेऽनुमे पामरे सोमदैवते ॥ ६५ ॥

विवादपक्षनिर्णेतयेपि स्थेयः पुरोहिते ।

स्थेयं स्याद्रव्यमात्रेऽपि पुंसि गवेष्यते स्मयः ॥ ६६ ॥

हार्यो विभीतक्रीवृक्षे हर्षव्ये हार्थमन्यवत् ।

हृद्यस्तु वशकृद्देवमग्रे वृद्धचाम्यभेषजे ॥ ६७ ॥

स्याच्छ्रेतजीरके हृद्यं हृत्प्रिये हृद्भवे त्रिषु ।

क्षयोऽपचयकल्पान्तनिवासेषु रुगन्तरे ॥ ६८ ॥

यत्तीयम् ।

अत्ययो दूषणे कृच्छ्रेऽतिक्रमे नाशदण्डयोः ।

अधृष्यन्तु प्रगल्भे स्यादधृष्या सरिदन्तरे ॥ ६९ ॥

अनयो व्यसनानीतिदैवाशुभविपत्तिषु ।

अपत्यं पुत्रयोः क्लीबमभयो निर्भये त्रिषु ॥ ७० ॥

सौम्या-इत्स्वला ( मृगशिरके ऊप-  
रकी पांच तारा ) ( स्त्री० )

सौम्य-बुध, ( पुं० ) बौद्ध ( बुद्ध-  
शास्त्र ) सुंदर, नाम, पामर, सोमदै  
देवता जिसका यह ( त्रि० ) ॥ ६५ ॥

स्थेय-विवादपक्षका निर्णेता, पुरोहित,  
( पुं० ) द्रव्यमात्र, ( त्रि० )

स्मय-गर्व, अहृत, ( पुं० ) ॥ ६६ ॥

हार्य-बहेडाका-वृक्ष, ( पुं० ) हृद्यने  
योग्य, ( त्रि० )

हृद्य-वशमें करनेवाला वेदमंत्र, ( पुं० )

हृद्या-श्रद्धिनामक औषधि, ( स्त्री० )  
॥ ६७ ॥

हृद्य-सफेद जीरा, ( न० ) हृद्यको  
प्रिय, हृद्यमें प्राप्त ( त्रि० )

क्षय-कमहोना, कल्पका अन्त, निवास,  
रोगभेद ( पुं० ) ॥ ६८ ॥

यत्तीय ।

अत्यय-दूषण, कृच्छ्र ( कष्ट ), उल्लंघन,  
नाश, दंड ( पुं० )

अधृष्य-प्रगल्भ ( श्रेष्ठ ) ( त्रि० )

अधृष्या-नदीभेद, ( स्त्री० ) ॥ ६९ ॥

अनय-व्यसन ( फिराक ), अनीति,  
दंड, अशुभ, विपत्ति, ( पुं० )

अपत्य-पुत्री, पुत्र, ( न० )  
अभय-निर्भय, ( त्रि० ) ॥ ७० ॥

मत्ताऽभया तु पथ्यायामभयं स्यादुशीरके ।  
 अभिख्या तु यज्ञकीर्तिशोभाविख्यातिनामसु ॥ ७१ ॥  
 त्रिष्वन्ध्यं वधानर्हं क्लीबेऽनर्थकभाषिते ।  
 स्यादवन्ध्यं तु सफले त्रिषु त्रिष्वफलेग्रहौ ॥ ७२ ॥  
 अश्वीयमश्वसङ्घातेऽश्वीयमश्वहिते त्रिषु ।  
 अहल्याप्सरसोभेदे तथा गौतमयोपिति ॥ ७३ ॥  
 अहार्यः पर्वते पुंसि स्यादहार्यः स्थिरे त्रिषु ।  
 आतिथ्यमातिथेयेस्यादातिथ्यस्त्वतिथौ पुमान् ॥ ७४ ॥  
 आत्रेयी पुष्पवत्यां स्यादात्रेयी निम्नगान्तरे ।  
 आत्रेयस्तु मुनेभेदे स्यादादित्यः सुरे रवौ ॥ ७५ ॥  
 आम्नाय उपदेशेपि स्यादाम्नायः श्रुतावपि ।  
 आशयः स्यादभिप्रायेऽप्याधारे पनसे धने ॥ ७६ ॥

अभया-हरण, ( स्त्री० )  
 अभय-लक्ष, ( न० )  
 अभिख्या-यज्ञ, कीर्ति, शोभा,  
 विख्याति, नाम, ( स्त्री० ) ॥ ७१ ॥  
 अवन्ध्य-वधके अवयव, ( त्रि० )  
 अनर्थक भाषण, ( न० )  
 अवन्ध्य-सफल, ( त्रि० ) कालके  
 अनुकूल फलको धारण करनेवाला  
 वृक्ष, ( त्रि० ) ॥ ७२ ॥  
 अश्वीय-अश्वोक्ता समूह, ( न० )  
 अश्वोक्ता हित, ( त्रि० )  
 अहल्या-अप्सरभेद, गौतमऋषिकी  
 स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ७३ ॥

अहार्य-पर्वत, ( पु० ) स्थिर, ( त्रि० )  
 आतिथ्य-जो वस्तु अतिथिके लिये  
 हो वह, ( त्रि० ) अतिथि ( पुं० )  
 ॥ ७४ ॥  
 आत्रेयी-रजसला, नदीभेद, ( स्त्री० )  
 आत्रेय-मुनिभेद ( पुं० )  
 आदित्य-देवता, सूर्य, ( पुं० ) ॥ ७५ ॥  
 आम्नाय-उपदेश, वेद, ( पुं० )  
 आशय-अभिप्राय, आधार, पनम-  
 वृक्ष, धन ॥ ७६ ॥



कोष्ठागारेऽप्यजीर्णेऽपि किंपचानेऽपि चाशयः ।  
 इन्द्रियं रेतसि क्लीबमिन्द्रियं विपयीन्द्रिये ॥ ७७ ॥  
 पुंसि स्यादुदयः पूर्वपर्वतेऽपि समुन्नतौ ।  
 उपायः सामभेदादावुपायः स्यादुपागतौ ॥ ७८ ॥  
 ऊर्णाद्युरेडके मेपकम्बलक्षणमङ्गयोः ।  
 एण्येयमेण्याश्चर्मार्धे रतबन्धान्तरे स्त्रियाः ॥ ७९ ॥  
 औचित्यमुचितत्वे स्यादौचित्यं सत्ययोग्ययोः ।  
 अस्त्री कपायो निर्यासे रसे रक्ते विलेपने ॥ ८० ॥  
 अङ्गरागे सुगन्धे तु त्रिषु स्याल्लोहितेऽपि च ।  
 कालेयो दैत्यभेदे स्यात्कालेयं कालखण्डकम् ॥ ८१ ॥  
 कुलायो नीडवत्पक्षिनिलयस्थानयो पुमान् ।  
 कौकृत्यमनुतापे स्यादयुक्तकरणेऽपि च ॥ ८२ ॥

कोष्ठागार (शरीरके भीतरकी पोल, अजीर्ण, घनलोभी, ( पुं० )	औचित्य—उचितपना, सत्य, योग्य, ( न० )
इन्द्रिय—वीर्यं, विपयि ( चक्षुआदि ) इदिय, ( न० ) ॥ ७७ ॥	कपाय—काढा, रस, रक्त, विलेपन, ( पुं० ) ॥ ८० अङ्गराग, सुगंध, लोहित, ( त्रि० )
उदय—पूर्वपर्वत, समुन्नति (ऊँचापना) ( पु० )	कालेय—दैत्यभेद, ( पुं० ) कालखंड, ( न० ) ॥ ८१ ॥
उपाय—साम भेद आदि, समीपमें आना, ( पुं० ) ॥ ७८ ॥	कुलाय ( नीड )—पक्षीका घूमला, स्थान, ( पुं० )
ऊर्णाद्यु—भेड, भेडीके ऊनका कंबल, क्षणभंग ( मकड़ी ) ( पुं० )	कौकृत्य—पथात्ताप, अयुक्त करना, ( न० ) ॥ ८२ ॥
एण्येय—मृगीवा चर्म आदि, स्त्रीका रतबंध, ( न० ) ॥ ७९ ॥	

गाङ्गेयस्तु महासेने भीष्मे गङ्गामवे त्रिषु ।  
 चक्षुष्यः केतके पुण्डरीकवृक्षे रसाञ्जने ॥ ८३ ॥  
 अस्त्री स्त्री तु कुलश्या स्यादयुक्तकरणेऽपि च ।  
 गाङ्गेयं मुस्तकवर्णकसेरुपु नपुंसकम् ॥ ८४ ॥  
 गाङ्गेयस्तु महासेने भीष्मे गङ्गोद्भवे त्रिषु ।  
 चक्षुष्यः केतके पुंसि शुभगेऽक्षिहिते त्रिषु ॥ ८५ ॥  
 चांपेयश्चाम्पके नागकेसरे पुष्पकेसरे ।  
 स्वर्णे श्नीव जघन्यं तु निन्द्ये चरमशिशयो ॥ ८६ ॥  
 जटायुः पक्षिभेदे स्यात्पुंसि गुग्गुलुपादये ।  
 तपस्या श्रतचर्याया तपस्यः फाल्गुने पुमान् ॥ ८७ ॥  
 देवयुद्धाधिके देवयात्रिकेऽप्यभिधेयवत् ।  
 द्वितीया तिथिभित्पत्न्यो पूरणेऽपि द्वयोस्त्रिषु ॥ ८८ ॥

गाङ्गेय-स्वामिकार्तिक, भीष्म, (पु०) गङ्गासे होनेवाला, ( त्रि० )	अच्छे भाग्यवाला, नेत्रोंका हित- कारी ( त्रि० ) ॥ ८५ ॥
चक्षुष्य-केतकी ( पुष्पवृक्ष ), दंता पुष्पवृक्ष, कमलवृक्ष, रसाञ्ज, ॥८३॥ ( पु० न० ) कुम्भी, ( स्त्री० ) अलग करना ( न० )	चांपेय-चपा, नागकेर, पुष्पकेसर, ( पु० ) मुक्ता, ( न० ) जघन्य-निच, पिछला, शिश्र ( लिंग ) ( न० ) ॥ ८६ ॥
गाङ्गेय-नागबोधा, मुसुं, कछेह- र, ( न० ) ॥ ८४ ॥	जटायु-पक्षिभेद, गुग्गुलु-वृक्ष, ( पु० ) तपस्या-श्रतचर्या, ( स्त्री० ) तपस्य-फाल्गुन-मास, ( पुं० ) ॥८७॥
गाङ्गेय-स्वामिकार्तिक, भीष्म, (पु०) गङ्गामें होनेवाला ( त्रि० )	देवयु-धर्मात्मा, देवयात्रिक, ( त्रि० ) द्वितीया-तिथिभेद, पत्रा ( स्त्री० ) दोनोंमें पूरण करनेवाला, ( त्रि० )
चक्षुष्य-केतक ( केतक ) ( पु० )	॥ ८८ ॥

नादेयी नीरवानीरे भूजम्बूनागरङ्गयोः ।  
 जपाजयन्त्योर्व्यङ्गुष्ठे निकायन्त्वात्मवेश्मनोः ॥ ८९ ॥  
 सधर्मिनिवहे लक्ष्ये संहतानां च मेलके ।  
 रङ्गभूमौ तु नेपथ्यं नेपथ्यं च प्रसाधने ॥ ९० ॥  
 पयस्या क्षीरकाकोल्या स्वर्णक्षीर्यामपि स्मृता ।  
 पयस्या दुग्धिकाया च पयोहितभवेऽन्यवत् ॥ ९१ ॥  
 पर्जन्यो घासवे मेघध्वनौ च ध्वनदम्बुदे ।  
 पर्यायः कमनिर्वाणप्रकारावसरे पुमान् ॥ ९२ ॥  
 पेयवारिणि पानीयं पारुष्यस्तु बृहस्पतौ ।  
 पारुष्यं परुषत्वे स्यादपि शक्रस्य कानने ॥ ९३ ॥  
 पौलस्त्य किन्नरापीथे पौलस्त्यो दशकन्धरे ।  
 प्रकीर्यः पूतिकरजे विनिकीर्णे तु वाच्यवत् ॥ ९४ ॥

नादेयी—जलवेत, भूइजामन, नारंगी, जपा ( अल्सी ), जैत—पुष्पवृक्ष, व्यङ्गुष्ठ ( अगूठाहीन ) ( स्त्री० )	पर्जन्य—इंद्र, मेघध्वनि, गर्जताहुवा मेघ, ( पुं० )
निकाय—परमात्मा, स्थान ॥ ८९ ॥ सधर्मियोंका समूह, लक्ष्य, सहतोंका मिलाप, ( पुं० )	पर्याय—कम, निर्वाण ( मोक्ष ), प्रकार, अवसर, ( पुं० ) ॥ ९२ ॥
नेपथ्य—रंगभूमि, अलंकरणको शोभा ( न० ) ॥ ९० ॥	पानीय—पीनेके योग्य ( त्रि० ), जल, ( न० )
पयस्या—क्षीरकाकोली, एक प्रकारकी कटेहरी, दूधी, दुग्धका हित, दूधसे उत्पन्नहुवा, ( त्रि० ) ॥ ९१ ॥	पारुष्य—बृहस्पति, ( पुं० ) पारुष्य- कटोरता, इन्द्रका वन, ( न० ) ॥ ९३ ॥
	पौलस्त्य—बुधेर, रावण, ( पुं० ) प्रकीर्य—कौटुकरंज ( करतुवा ), ( पुं० ) विखराहुवा, ( त्रि० ) ॥ ९४ ॥

प्रणयः प्रेमविश्रम्भप्रश्रयप्रसरेऽर्थने ।  
 प्रणाय्योऽसंमते तृष्णावर्जितेऽप्यभिधेयवत् ॥ ९५ ॥  
 प्रत्ययः शपथे हेतौ ज्ञानविश्वासनिश्चये ।  
 सन्नाद्यधीनरन्ध्रेषु ख्यातत्वाचारयोरपि ॥ ९६ ॥  
 प्रलयो मृत्युकल्पान्तमूर्च्छासु विदितः पुमान् ।  
 प्रसव्यमन्यलिङ्गं स्यात्प्रतिकूलानुकूलयोः ॥ ९७ ॥  
 बलयः कङ्कणे न स्त्री बलारूढरुजोरपि ।  
 बालेयः फलिकायां स्यात्खरे बालहिते मृदौ ॥ ९८ ॥  
 ब्रह्मण्यस्तु शनौ यूषे ब्रह्मसाधौ तु वाच्यवत् ।  
 ब्राह्मण्यं ब्राह्मणत्वे स्याद्ब्राह्मणानां च संहतौ ॥ ९९ ॥  
 भुजिष्यस्तु सहायेऽपि हस्तसूत्रेऽप्यथ त्रिषु ।  
 अनधीते भुजिष्या तु वेश्याचेटिकयोर्मता ॥ १०० ॥

प्रणय-प्रेम, विश्वास, नम्रता, प्रसर ( फैलना ), याचना ( पुं० )	बालेय-भारंगी, गर्दम, बालहित, कोमल, ( पु० ) ॥ ९८ ॥
प्रणाय्य-असंमत ( नहीं मानाहुवा ), तृष्णासे रहित, ( त्रि० ) ॥ ९५ ॥	ब्रह्मण्य-शनैश्चर, यूष, ( पुं० ) ब्रह्ममें साधु ( धेठ ) ( त्रि० ) ✓
प्रत्यय-सौमन, हेतु ( कारण ), ज्ञान, विश्वास, निश्चय, सन् आदि-प्रत्यय, अधीन, छिद्र, विख्यात, आचार, ( पुं० ) ॥ ९६ ॥	ब्राह्मण्य-ब्राह्मणपना, ब्राह्मणोंका समूह, ( न० ) ॥ ९९ ॥
प्रलय-मृत्यु, कल्पान्त, मूर्च्छा, ( पुं० )	भुजिष्य-दाम ( नौकर ), हस्तसूत्र ( मंगलसूत्र ) ( पुं० ) विनाच्छ ( त्रि० )
प्रसव्य-प्रतिकूल, अनुकूल, ( त्रि० ) ॥ ९७ ॥	भुजिष्या-वेश्या, दासि, ( इ० ) ॥ १०० ॥
बलय-बंगन, सरंगी, बंटरोग, ( पुं० न० )	

भुव्युः स्याद्दृहद्भानुभानुशीतलभानुषु ।

भ्रातृव्यो भ्रातृतनये त्रिषु पुसि तु विद्विषि ॥ १०१ ॥

मङ्गल्यं दधि मङ्गल्यं तत्रसाधौ मनोहरे ।

मङ्गल्यः श्रीफले खच्छे भसूरत्रायमाणयो ॥ १०२ ॥

मङ्गल्या रोचनाया स्यात्प्रियङ्गुशतपुष्पयो ।

मल्लिगन्धि च यत्कृष्णागुरु तत्रापि सा स्मृता ॥ १०३ ॥

अथ पुष्पीशमीखण्डपुष्पीश्वेतवचासु च ।

मलयः पुसि देशाद्रिभेदयो पर्वताशके ॥ १०४ ॥

आरामे चन्दने चाथ मलया तृवृतौषधौ ।

मृगयुर्ब्रह्मणि प्रोक्तो गोमायुर्व्याधयोरपि ॥ १०५ ॥

रहस्यं वाच्यवद्रोष्ये रहस्या तु नदीभिदि ।

लौहित्यं रक्तताया स्यात्पुसि श्रीहौ नदान्तरे ॥ १०६ ॥

वक्तव्यः कुत्सिते हीनेऽप्यधीने वाच्यवत्रिषु ।

वदान्यस्तु सुधाग्नात्रोर्विजयो जयपार्थयो ॥ १०७ ॥

भुवन्व्यु-अग्नि, सूर्य, चंद्रमा, ( पु० )

भ्रातृव्य-भाईका पुत्रआदि ( त्रि० )

शत्रु, ( पु० ) ॥ १०१ ॥

मंगल्य-दही ( न० ) मंगलकरने

वाला, सुदर, ( त्रि० )

मंगल्य-बेलका-शुद्ध, निर्मल, मसूर,

त्रायमाणा, ( पु० ) ॥ १०२ ॥

मंगल्या-गोरोचन, फूलप्रियंगु, सौंफ,

मन्त्रिका ( मोगरा ) सदीखी गंध

वाला काला अगर, ( स्त्री० ) ॥ १०३ ॥

गोमी, जांड, सडपुष्पी ( शरता

हुली ), सफेद बब, ( स्त्री० )

मलय-देशभेद, पर्वतभेद, पर्वतका

भाग, ( पु० ) ॥ १०४ ॥ घाग, चंदन,

निसोत, ( स्त्री० )

मृगयु-ब्रह्म, गौदक, व्याधा ( शिकारी )

( पु० ) ॥ १०५ ॥

रहस्य-गोप्य, ( त्रि० )

रहस्या-नदीभेद, ( स्त्री० )

लौहित्य-रक्तता, ( न० ) धान,

नदभेद, ( पु० ) ॥ १०६ ॥

वक्तव्य-निर्दिष्ट, हीन, अधीन,

( त्रि० )

वदान्य-अच्छी धाणीवाला, दान-

शील ( बहुत देनेवाला ) ( पु० )

विजय-जय, अर्जुन, ( पु० ) ॥ १०७ ॥

विजया तु मता गौर्या तत्सखीतिथिभेदयोः ।  
 विनयस्तु नतौ नीतौ शिक्षाया विनयो द्वयोः ॥ १०८ ॥  
 विशल्याऽग्निशिखादन्तीगुहूचीवृष्टि स्त्रियाम् ।  
 वाच्यवद्गतशल्ये स्याद्विस्मयोऽद्भुतगर्वयोः ॥ १०९ ॥  
 विषयो गोचरे देशे इन्द्रियार्थेऽपि नीवृति ।  
 प्रबन्धाद्यस्य यो ज्ञात स तस्य विषयः स्मृतः ॥ ११० ॥  
 व्यवायः सुरतेन्तर्द्धौ व्यवायं तेजसि स्मृतम् ।  
 शाण्डिल्यो मुनिभेदेऽपि श्रीफले पावकान्तरे ॥ १११ ॥  
 शालेयः शतपुष्पाया त्रिषु शाल्युद्भवोचिते ।  
 शीर्षण्यः पुंसि विशदे कचे क्लीबं तु शीर्षके ॥ ११२ ॥  
 शैलेयं सिन्धुलवणे तालपर्ण्यां च शैलजे ।  
 मृङ्गे पुंसि श्वशुर्यस्तु देवरे श्यालकेऽपि च ॥ ११३ ॥

विजया-गौरी, गौरीकी सखी, तिथिभेद, ( स्त्री० )	व्यवाय-द्वीसग, व्यवधान, ( पु० )
विनय-नति, नीति, शिक्षा, ( पु० स्त्री० ) ॥ १०८ ॥	व्यवाय-तेज, ( न० )
विशल्या-बलिहारी, जमालगोटाकी जड, गिलोय, निसोत, ( स्त्री० ) शल्यरहित ( त्रि० )	शाण्डिल्य-एकमुनि, धिल्य रुक्ष, अ- ग्निभेद, ( पु० ) ॥ १११ ॥
विस्मय-अद्भुत, गर्व, ( पुं० ) ॥ १०९ ॥	शालेय-साँप, ( पु० ) शालि ( चा- वल ) की उत्पत्तिवाला क्षेत्र ( त्रि० )
विषय-गोचर ( समक्ष ), देश, शब्द स्पर्श आदि, जनपद, ( मनु- ष्यके नामसे विख्यात देश ), जिसके प्रबन्धसे जो जाना है वह उसका विषय कहा है ( पु० ) ॥ ११० ॥	शीर्षण्य-श्वेत, कैद्य, ( पु० ) शि- रकी रक्षाकरनेवाला, ( न० ) ११२
	शैलेय-समुद्रलवण, तालपर्णा ( मु- सली ), पत्थरका फूल, ( न० ) माँरा, ( पुं० )
	श्वशुर्य-देवर, साला, ( पु० ) ११३

पृष्ठस्वायिवले नीतौ समवायेऽपि सन्नयः ।  
 समयः पुंसि सिद्धान्तशपथाचारसंविदि ॥ ११४ ॥  
 कालसिद्धान्तनिर्देशक्रियाकारेषु सङ्गमे ।  
 मेलके योगियोगिन्यो समयः क्वापि दृश्यते ॥ ११५ ॥  
 सरण्युर्वारिदे वाते सामर्थ्यं योग्यतावले ।  
 सौकर्यं स्यादनायासे क्रियायां सूकरस्य च ॥ ११६ ॥  
 सौभाग्यं सुभगत्वे स्याद्योगभेदे पुमानयम् ।  
 सौरभ्यं तु सुगन्धत्वे गुरुत्वे गुणगौरवे ॥ ११७ ॥  
 संस्त्यायः सन्निवेशेऽपि संस्थाने विस्मृतौ गणे ।  
 हरिण्यमक्षये द्रव्ये वराटे स्वर्णरेतसि ॥ ११८ ॥  
 घटिताऽघटितस्वर्णरूप्ययोर्मानभिद्यपि ।  
 बुकायां हृदयं श्रेय हृदयं हृदि वक्षसि ॥ ११९ ॥

सन्नय—पिछारी स्थितहुई सेना,  
 नीति, समूह, ( ५० )

समय—सिद्धान्त, सौगन, आचार,  
 बुद्धि ॥ ११४ ॥ काल, सिद्धान्त,  
 निर्देश, क्रियाकार, सगम, कहीं  
 योगी और योगिनीके मिलाप में  
 भी समय देखा है ( ५० )  
 ॥ ११५ ॥

सरण्यु—मेघ, वायु, ( ५० )

सामर्थ्य—योग्यता, बल, ( न० )

सौकर्य—विनापरिश्रमं, सूकरकी क्रिया  
 ( न० ) ॥ ११६ ॥

सौभाग्य—सुभगपना ( न० ) योग-  
 भेद, ( ५० )

सौरभ्य—सुगंधपना, गुरुपना, गुणोंके  
 बडपन, ( न० ) ॥ ११७ ॥

संस्त्याय—अच्छीतरह बनाहुवा वास-  
 स्थान, अच्छीतरह स्थिति, विलार,  
 ( ५० )

हरिण्य—अक्षय, द्रव्य, काँडी, सुवर्ण,  
 वीर्य, ॥ ११८ ॥ घडाहुवा नहीं  
 घडाहुवा सुवर्ण और चाँदी, मान-  
 भेद, ( न० )

हृदय—हृदयके अंदर कमलाकार  
 मासभेद, हृदय, छाती, ( न० )  
 ॥ ११९ ॥

तनौ स्त्रियां क्षिपण्युः स्यात्क्षिपण्युः लुरभौ नरि ।  
परदाररताऽसाध्यरोगयोः क्षेत्रियः पुमान् ॥ १२० ॥  
अन्यदेहे चिकित्साहं क्लीवं क्षेत्रतृणेपि च ।

यचतुर्थम् ।

दीर्घद्वेषानुतापानुबन्धेष्वनुशयः पुमान् ॥ १२१ ॥  
अन्तशय्या तु मरणे भूमिशय्याश्मशानयोः ।  
अपसव्यमवामे स्यात्प्रतिकूले तु वाच्यवत् ॥ १२२ ॥  
गर्वेऽपि तुहिनेपि स्यादवश्यायः पुमानयम् ।  
उपकार्या नृपावासेऽप्युपकारोचितेऽन्यवत् ॥ १२३ ॥  
उपक्रयश्चिकित्सायामारम्भवधयोरपि ।  
काद्रवेयः पुमानागे तथा सीसकरङ्गयोः ॥ १२४ ॥  
चन्द्रोदयो वित्ताने स्यात्स्त्रियामेवोपधीभिदि ।  
जलाशयो जलाधारे जलदे तु जलाशयम् ॥ १२५ ॥

क्षिपण्यु-शरीर ( स्त्री० ) क्षिपण्यु-  
मुग्धि द्रव्य ( त्रि० )

क्षेत्रिय-परस्त्रीमें रत, असाध्य रोग,  
( पुं० ) ॥ १२० ॥ दूमराका  
शरीर, चिकित्साके योग्य, क्षेत्रका  
तृण, ( न० )

यचतुर्थम् ।

अनुशय-बहुतदिनोका बैर, विछ-  
ताना, प्रकृति-प्रलय-आगम-आ-  
देशमें विनश्वर, ( पुं० ) ॥ १२१ ॥

अन्तशय्या-मरना, भूमिशय्या, श्म-  
शान ( मरघट ) ( स्त्री० )

अपसव्य-दहना-हाथ आदि, प्रति-  
कूल, ( त्रि० ) ॥ १२२ ॥

अवश्याय-अभिमान, पाला या बर्फ  
( पु० )

उपकार्या-राजभवन, ( स्त्री० )  
उपकारके योग्य, ( त्रि० ) ॥ १२३ ॥

उपक्रय-चिकित्सा, आरंभ, बध  
( मारना ) ( पु० )

काद्रवेय-नाग ( सर्प ), शीशा,  
राग, ( पुं० ) ॥ १२४ ॥

चन्द्रोदय-चंदोवा, ( पुं० ) औपधी-  
भेद ( स्त्री० )

जलाशय-नालाव आदि, ( पुं० )  
सत, ( न० ) ॥ १२५ ॥



तण्डुलीयो विडङ्गद्रावल्पमारिपताप्ययोः ।

तृणशून्यं तु केतक्याः फले मह्यां च निस्तृणे ॥ १२६ ॥

धनजंयोऽग्नौ ककुभे नागदेहानिलेऽर्जुने ।

निरामयं हुडुके स्यात्कल्पे त्रिपु निरामयः ॥ १२७ ॥

परिधायो जलस्थाने नितम्बे च परिच्छदे ।

पाञ्चजन्यो हरेः शङ्खे शङ्खपोटगलेऽनले ॥ १२८ ॥

पौरुषेयस्तु पुरुषविकारेऽपि पदान्तरे ।

पुस समूहवधयोः पुरुषेण कृते त्रिपु ॥ १२९ ॥

झीवं प्रतिभयं भीतौ वाच्यवत्तु भयानके ।

प्रतिश्रयः सभाया स्यादाश्रयेऽपि प्रतिश्रयः ॥ १३० ॥

फलानामुदये लाभे त्रिदिवेऽपि फलोदयः ।

मंतो विलेशयः पुंसि मूपिकेऽपि भुजङ्गमे ॥ १३१ ॥

तण्डुलीय—वायविडङ्ग—रुक्ष, चोलाई  
शाक, सोनामाखी, ( पुं० )

तृणशून्य—केतकीका फल, मलिका  
( नोतिया ) ( न० ) तृणरहित  
( त्रि० ) ॥ १२६ ॥

धनजय—शमि, कोह—रुक्ष, सर्प, श-  
रीरका वायु, अर्जुन, ( पुं० )

निरामय—वायभेद(एकवाजा),(न०)  
समर्थं (नीरोग) ( त्रि० ) ॥१२७॥

परिधाय—जलस्थान, नितंब, परि-  
कर, ( पुं० )

पाञ्चजन्य—त्रिपुका शंख, शंख-भात्र,

काश या देवनल, अग्नि ( पुं० )  
॥ १२८ ॥

पौरुषेय—पुरुषविकार, पदान्तर,  
( त्रि० ) समूह, वध, ( पु० )  
पुसका सियाहुवा ( त्रि० ) ॥१२९॥

प्रतिभय—भय, ( न० ) भयानक,  
( त्रि० )

प्रतिश्रय—सभा, आश्रय, ( पुं० )  
॥ १३० ॥

फलोदय—फलोका उदय, लाभ,  
स्वर्ग, ( पुं० )

विलेशय—भूमा, सर्प, ( पुं० )  
॥ १३१ ॥

भागधेयं स्मृतं भाग्ये पुंसि स्यात्करभागयोः ।  
 भूतेन्द्रियं तु करणशब्दगोचरसंहतौ ॥ १३२ ॥  
 महोदयः समुदये कान्यकुब्जापवर्गयोः ।  
 महालयो विहारेऽपि तीर्थेऽपि परमात्मनि ॥ १३३ ॥  
 महामूल्यं पद्मरागे महार्धे त्वभिधेयवत् ।  
 मार्जारीयस्तु शूद्रे स्याद्विडाले कायशोधने ॥ १३४ ॥  
 रौहिणेयः प्रलम्बघ्ने बुधे वत्से तु वाच्यवत् ।  
 वैनतेयस्तु कथितो गरुडे गरुडाग्रजे ॥ १३५ ॥  
 उत्सेधेऽपि विरोधेपि पुमानेव समुच्छ्रयः ।  
 मतः समुदयो वृन्दे संयुगे समुपक्रमे ॥ १३६ ॥  
 समुदायः समूहे स्यात्समुद्भूतौ रणेऽपि च ।  
 संपरायस्तु सङ्ग्रामे विपदुत्तरकालयोः ॥ १३७ ॥  
 समाह्वयो रणे नाम्नि क्रीडायां पशुपक्षिभिः ।  
 स्थूलोच्चयस्त्वसाकल्पे गण्डोपलवरण्डयोः ॥ १३८ ॥

भागधेय-भाग्य, ( न० ) कर ( दंड ), विभाग, ( पुं० )	रौहिणेय-शूद्र, बुध-ग्रह, ( पुं० ) प्रिय, ( त्रि० )
भूतेन्द्रिय-करण ( इंद्रिय ), शब्द आदि गोचर, समूह ( न० )	वैनतेय-गरुड, अरुण, ( पुं० ) ॥ १३५ ॥
॥ १३२ ॥	समुच्छ्रय-कंचापन, विरोध, ( पुं० )
महोदय-अच्छे प्रकारसे उदय, कान्यकुब्ज, मोक्ष, ( पु० )	समुदाय-समूह, युद्ध, प्रारंभ या उद्गम ( पुं० ) ॥ १३६ ॥
महालय-विहार ( क्रीडा ), तीर्थ, परमात्मा, ( पुं० ) ॥ १३३ ॥	समुदाय-समूह, उद्भव, रण, ( पुं० )
महामूल्य-पुष्करराज, ( न० ) बहु- त कीमतवाला, ( त्रि० )	संपराय-संग्राम, विपत्, उत्तर- काल, ( पुं० ) ॥ १३७ ॥
मार्जारीय-शूद्र, विलाव, शरीरशो- धन, ( पुं० ) ॥ १३४ ॥	समाह्वय-रण, नाम, पशुपक्षियों वरके क्रीडा, ( पु० )
	स्थूलोच्चय-असंपूर्णता, परंतसे गिरा श्रंग, मुखरोग, ॥ १३८ ॥

स्थूलोच्चयो मतज्ञानां स्यान्मध्यमगतेऽपि च ।

हिरण्मयः स्वर्णमये लोकधात्रन्तरे पुमान् ॥ १३९ ॥

चपञ्चमम् ।

कालानुसार्यं कालेये शैलेये शिशपाद्रुमे ।

मतं तु दुग्धतालीयं दुग्धाग्रे दुग्धफेनके ॥ १४० ॥

स्याद्दुग्धचमसेऽप्येतत्खण्डकीटे पुमानयम् ॥

त्रिपु प्रवचनीयं स्यात्प्रवाच्येऽपि प्रवक्तरि ॥ १४१ ॥

वृषाकपायी श्रीगौरीजीवन्तीपु शतावरौ ।

यपष्टम् ।

प्रत्युद्गमनीयमुपस्थेये धौताशुकद्वये ।

चिष्वक्सेनप्रिया तु स्यात्कमलात्रायमाणयोः ॥ १४२ ॥

इति विश्वलोचने यान्तवर्गः ॥

हस्तियोंका मध्यम गमन, ( पुं० )  
हिरण्मय-सुवर्णमय, लोकधातृ  
( मन्ना ) ( पुं० ) ॥ १३९ ॥

चपञ्चम ।

कालानुसार्यं-मालम होनेवाला,  
शिलाजीत, सीसम-वृक्ष, ( न० )

दुग्धतालीयं-दुग्ध-आन्न, दुग्धका  
फेन ( क्षाम ) ॥ १४० ॥ दुग्ध-  
पीनेका पात्र, ( न० ) शकरका  
कीट ( पुं० )

प्रवचनीयं-बहनेके योग्य, बहने-  
वाला, ( वि० ) ॥ १४१ ॥

वृषाकपायी-लक्ष्मी, गौरी, जीवन्ती,  
शतावरी, ( स्त्री० )

यपष्ट ।

प्रत्युद्गमनीय-आगेसे उठनेके योग्य  
या धौतवस्त्रजोडा ( न० )

चिष्वक्सेनप्रिया-लक्ष्मी, प्रायमाण-  
औषधि, ( स्त्री० ) ॥ १४२ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
यान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ रान्तवर्गः ।

रैकम् ।

रस्तु कामाऽनले वह्नौ तीक्ष्णे रास्त्वर्थरुक्मयोः ।

रुर्ना शब्दे भये भागे रीः श्रोतरि भुवि स्त्रियाम् ॥ १ ॥

क्रेतरि क्रीः क्रये तु स्त्री घ्रा घ्राणे घ्रातरि स्मृतः ।

द्रुर्वृक्षेऽपि द्रुमेऽपि स्याद्द्रुः स्वर्णे कामरूपिणि ॥ २ ॥

श्रीलक्ष्मीभारतीशोभाप्रभासु सरलद्रुमे ।

वेशत्रिवर्गसम्पत्तौ शेषापकरणे मत्तौ ॥ ३ ॥

स्रुः स्रवे निर्झरे चाथ ह्रीर्त्राडि लज्जिते त्रिपु ।

रद्वितीयम् ।

अग्रं त्रिपु प्रधाने स्यादग्रं मूर्द्धाधिकदिपु ॥ ४ ॥

पुरस्तात्पलमाने च त्रातेप्यालम्बनान्तयोः ।

अङ्घ्रिः पुंस्येव चरणे मूलेऽपि च महीरुहे ॥ ५ ॥

अथ रान्तवर्गः ।

रैक ।

र-कामाग्नि, अग्नि, तीक्ष्ण, (पु०)

रा-द्रव्य, सुवर्ण, (पु०)

रु-शब्द, भय, भाग, (पु०)

री-भ्रोता (पुं०) पृथ्वी, (स्त्री०) ॥१॥

क्री-खरीदनेवाला, (पुं०) खरी-

दना, (स्त्री०)

घ्रा-नासिका, (स्त्री०) सूक्ष्मनेवाला,

(पुं०)

द्रु-वृक्ष, करपत्र, सुवर्ण, यद्येच्छरूप

धारण करनेवाला, (पुं०) ॥ २ ॥

श्री-लक्ष्मी, सरस्वती, शोभा, प्रभा,

(स्त्री०) सरल-वृक्ष, वेश (शुभार),

त्रिवर्गसंपत्ति, शेषका नहीं करना,

बुद्धि, (स्त्री०) ॥ ३ ॥

स्रु-स्रव (शिरना), निर्झर (कुंवार),

ह्री-लज्जा, (स्त्री०) लज्जावान, (त्रि०)

रद्वितीय ।

अग्र-आदि, (त्रि०) मस्तक, अधिक

आदि, ॥ ४ ॥ अगाड़ी, पल

( ४ तोला प्रमाण) समूह, आल-

म्बन, अन्त, (न०)

अंघ्रि-पाँव, जड़, रूक्ष, (पुं०) ॥५॥

अद्रिः शैले द्रुमे सूर्येऽप्यभ्रं खे गिरिजेऽम्बुदे ।  
 स्वर्गेऽप्यथाऽरं शीघ्रे स्वाचक्राङ्गे शीघ्रगे त्रिषु ॥ ६ ॥  
 अस्त्रं तु शोणिते लोभेऽप्यस्त्रः स्यात्कोणकेशयो ।  
 अस्त्रं प्रहरणे चापेऽप्यार्द्रा भे स्तिमिते त्रिषु ॥ ७ ॥  
 आरा तु चर्मवेधन्यामारो भौमे शनैश्चरे ।  
 आरुर्ना द्रुमभेदे स्यादपि कर्कटदंष्ट्रिणो ॥ ८ ॥  
 इन्द्रः शक्रात्मसूर्येषु योगेऽपीन्द्रा फणिज्जके ।  
 इरा तु मदिरावारिभारव्यसनभूमिषु ॥ ९ ॥  
 उग्रस्तीव्रे त्रिषु क्षात्राच्छूद्रापुत्रे हरे पुमान् ।  
 उग्रा वचालिक्रियोरुष्ट्रस्तु स्यात्क्रमेलके ॥ १० ॥  
 उष्ट्री गोलकिन्नाया स्यादुष्ट्री करभयोपिति ।  
 उच्चा गव्युपचित्रायामुस्त्रस्तु किरणे पुमान् ॥ ११ ॥

अद्रि—पर्वत, वृक्ष, सूर्य, ( पु० )

अभ्र—आकाश, धातुभेद, मेघ, स्वर्ग,  
( न० )

अर—शीघ्र, चक्रा अग ( अरा ) ( न० )  
शीघ्रचलनेवाला, ( त्रि० ) ॥ ६ ॥

अस्त्र—रथिर, लोभ, ( न० )

अस्त्र—कोण, केश ( बाल ) ( पुं० )

अस्त्र—पेकवर मारनेका हथियार,  
धनुष, ( न० )

आर्द्रा—एक नक्षत्र, ( स्त्री० ) गीला,  
( त्रि० ) ॥ ७ ॥

आरा—चर्मवेधनी ( आर ) ( स्त्री० )

आर—भौम, शनैश्चर, ( पुं० )

आर—वृक्षभेद, कर्कट ( केकड़ा ) प्राणी,  
डाडोवाला प्राणी, ( पु० ) ॥ ८ ॥

इन्द्र—इन्द्र, आत्मा, सूर्य, योग, ( पु० )

इन्द्रा—छोटेपत्तोंकी तुलतां ( स्त्री० )

इरा—मदिरा, जल, भार, व्यसनभूमि,  
( स्त्री० ) ॥ ९ ॥

उग्र—तीव्र, ( त्रि० ) क्षत्रियसे शूद्राका  
पुत्र, महादेव, ( पु० )

उग्रा—बच, नफछोक्नी, ( स्त्री० )

उष्ट्र—ऊँट ( पुं० ) ॥ १० ॥

उष्ट्री—चावलआदिके धोनेना उपयोगी  
पात्र, ऊँटनी, ( स्त्री० )

उच्चा—गौ, चीना—औषधि, ( स्त्री० )

उस्त्र—किरण, ( पु० ) ॥ ११ ॥

ऐन्द्रिः काके जयन्ते म्यादोड् जनपदान्तरे ।  
 ओड् जने जवावृक्षे देशे पुष्पे तु न द्वयो ॥ १२ ॥  
 अंघ्रि पादे च बुध्ने च कद्रुः कनकपिङ्गले ।  
 तद्वति त्रिपु कद्रुः स्यात्कद्रुः स्त्री नागमातरि ॥ १३ ॥  
 करस्तु पाणिप्रत्यायशुण्डारश्मिघनोपले ।  
 कारो वधे तुपाराद्रौ निश्चये यतियत्नयो ॥ १४ ॥  
 वलावप्यथ कारा स्याद्धन्धनागारन्धयो ।  
 सुवन्ते कारिकापीटादृत्तिकासु प्रसेवके ॥ १५ ॥  
 कारुः शिल्पिनि शिल्पे च कारके विश्वरुर्मणि ।  
 कारिः क्रियानापिताद्यो कीरो जनपदे शुके ॥ १६ ॥  
 कुरुर्नृपान्तरे भक्ते कुरुः श्रीरुण्ठजङ्गले ।  
 कृच्छ्रं तु कष्टे पापे च तथासान्तपनादिके ॥ १७ ॥

ऐन्द्रि-काग, जयत ( इद्रपुत्र )  
( पु० )

ओड्-जनपद ( देशविशेष ) ( पु०  
बहुवचनात् )

ओड-जन, जया वृक्ष, देश, ( पु० )  
पुष्प, ( न० ) ॥ १२ ॥

अंघ्रि-चरण, वृक्षकी जड, ( पु० )  
कद्रु-सुवर्ण, कुल्लूक पीला रंग, ( पु० )

बुछपीलारगवाला ( त्रि० ) नाग  
माता ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥

कर-दस्त, निश्चय, हस्तीनी सँड,  
धिरण, ओला, ( पु० )

कार-मारना, हिमाद्रि ( पर्वत ), निश्चय,  
यति, यज्ञ, ॥ १४ ॥

वलि, ( पु० )

कारा वधनका स्थान, वधन,  
सुवन्त, कारिका, पीडा, दूती,  
वीणाकी तूँडी, ( स्त्री० ) ॥ १५ ॥

कार-शिल्पी, शिल्प, करनेवाला,  
विश्वरुर्मां, ( पु० )

कारि-क्रिया, ( स्त्री० ) नाई आदि,  
( त्रि० )

कीर-देशविशेष, ( पु० बहुवचनान )  
सूवा-पक्षी, ( पु० ) ॥ १६ ॥

कुरु-वृषभेद, अत, महादेव, जागल-  
देश, ( पु० )

कृच्छ्र-कष्ट, पाप, सान्तपन आदि-  
मत, ( न० ) ॥ १७ ॥

ऋरस्त्रिपु नृशंसे स्यादपि निर्दयधोरयोः ।

क्रोष्टी शृगालिकाक्षीरविदारीलाङ्गलीपत्रथ ॥ १८ ॥

देवताडे द्वये तीक्ष्णे त्रिपु ना गर्दभे खरः ।

खरुर्दशन ईशेऽश्वे दर्पे पुंसि सिते त्रिपु ॥ १९ ॥

खुरः सफे कोलदले खन्नादेश्वरणेऽपि च ।

गरौ विषे चोपविषे गरं करणरोगयोः ॥ २० ॥

गात्रं गजाग्रजङ्घादिविभागेऽप्यङ्गदेहयोः ।

गिरिर्गीर्णौ गिरियकग्रावनेत्रगदेषु ना ॥ २१ ॥

गिरिः पूज्येऽन्यलिङ्गः स्याद्भारत्यां भाषणे च गीः ।

गुरुर्निषेकादिकरे पित्रादिसुरमञ्जिणोः २२ ॥

गुरुस्त्रिपु स्यान्महति दुर्जरे वाऽलघुन्यपि ।

गुन्द्रस्तेजनके गुन्द्रा मुस्तके भद्रमुस्तके ॥ २३ ॥

ऋर—हिंसाकरनेवाला, निर्दय, भयंकर  
( पु० )

क्रोष्टी—गौदन्ती, क्षीरविदारीकद, कलि-  
हारी, ( स्त्री० ) ॥ १८ ॥

खर—देवताक, ( पुं० स्त्री० ) तीक्ष्ण,  
( त्रि० ) गर्दभ, ( पुं० )

खरु—दात, महादेव, अश्व, अभिमान,  
( पुं० ) सफेदरंगवाला, ( त्रि० )

॥ १९ ॥

खुर—पशुका खुर, नख नामका गधद्रव्य,  
गैडा आदिका चरण, ( पुं० )

गर—विष, उपविष ( धतूरा आदि )  
( पुं० )

गर—करण, रोग, ( न० ) ॥ २० ॥

गात्र—गजका अग्रभाग, जघा आदि-  
विभाग, अंग, शरीर, ( न० )

गिरि—निगलना, खिन्न, पत्रेत, मेत्ररोग  
( पुं० ) ॥ २१ ॥

गिरि—पूज्य, ( त्रि० )

गिर्—सरस्वती, भाषण, ( स्त्री० )

गुरु—निषेक ( गर्भाधान ) आदि  
सस्कार करानेवाला, पिता आदि,  
देवताओंका मंत्री, ( पु० ) ॥ २२ ॥

गुरु—महान्, दुर्जर, भारी, ( त्रि० )

गुन्द्र—सरकडा, ( पुं० )

गुन्द्रा—मोथा, भद्रमोथा, ॥ २३ ॥

कुट्टनटे प्रियङ्गौ च गृध्रो लुब्धे खगान्तरे ।

गोत्रः क्षोणीधरे गोत्रं कुले क्षेत्रे च नामि च ॥ २४ ॥

सम्भावनीयबोधेऽपि वित्ते वर्त्मनि कानने ।

गोत्रा भुवि गवा वृन्दे गौरः पुंसि निशाकरे ॥ २५ ॥

गौरः पीतारणश्चेतविशुद्धेष्वभिधेयवत् ।

गौरी तु पार्वतीनम्रकन्ययोर्वरुणस्त्रियाम् ॥ २६ ॥

नदीभिद्यामिनीपिङ्गारोचनीक्षमाप्रियङ्गुषु ।

गौरं तु विशदे श्वेतसर्पये पद्मकेसरे ॥ २७ ॥

घस्रोऽहि हिंसे घोरस्तु हरे भीमेऽभिधेयवत् ।

अथ पुस्येव चक्रः स्याच्चक्रवाकसमूहयो ॥ २८ ॥

चक्रं सैन्ये रथाङ्गेऽपि आम्रजालेऽम्भसाम्भ्रमे ।

कुलालकृत्यनिष्पत्तिभाण्डे राष्ट्रसूत्रभेदयो ॥ २९ ॥

अरल या टेंद्र-वृक्ष, फूलप्रियङ्गु,  
( स्त्री० )

गृध्र-व्याध, पक्षिभेद, ( पु० )

गोत्र-पर्वत, ( पु० )

गोत्र-कुल, क्षेत्र, नाम, ॥ २४ ॥

सम्भावनीय बोध, धन, मार्ग, वन,  
( न० )

गोत्रा-पृथ्वी, गौवाका समूह, ( स्त्री० )

गौर-चंद्रमा, ( पु० ) ॥ २५ ॥

गौर-पीला, लाल, सफेद, स्वच्छ,  
( त्रि० )

गौरी-पार्वती, नदीं उत्पन्न हुवा है  
रजसू तिसके ऐसी कन्या, वरुणकी  
स्त्री, ॥ २६ ॥

नदीभेद, रात्रि, पीलारगवाली, गो-  
रोचन, पृथ्वी, फूलप्रियङ्गु, ( स्त्री० )

गौर-स्वच्छ ( सफेद ) ( त्रि० )

सफेद सरसों, कमलकेसर, ( न० )

॥ २७ ॥

घस्र-दिन, हिंसाकरनेवाला, ( पु० )

घोर-महादेव, ( पु० ) भयकर,  
( त्रि० )

चक्र-चक्रवा पक्षी, समूह, ( पु० ) २८

चक्र सेना, रथका पहियाँ, आम्रजाल,  
जलोंका भ्रमण, कुम्हारके कृत्यके-  
लिये पात्र, देशभेद, अन्नभेद, ( न० )  
॥ २९ ॥



चन्द्रः सुधांशुर्गुरुरस्वर्णकम्पिलवारिषु ।  
 चरश्चारे चले द्यूतप्रभेदे जङ्गमेऽपि च ॥ ३० ॥  
 चरुर्माण्डेऽपि हव्यान्ने चारश्चरपियालयोः ।  
 गतौ बन्धेऽपि चित्रं तु कर्बुराद्भुतयोस्त्रिषु ॥ ३१ ॥  
 चित्रमालेरुयतिलकव्योमसु स्यान्नपुंसकम् ।  
 चित्राऽस्तवन्तीनक्षत्रमुजङ्गाऽप्सरसाम्भिदि ३२ ॥  
 चित्राऽखुपर्णागिडुवासुभद्रादन्तिकामु च ।  
 चीरं तु वस्त्रे चूडाया त्रपुण्यालेखरेखयोः ॥ ३३ ॥  
 चीरी कच्छादिकाशिल्योश्चुक्रम्वम्लेऽम्लवेतसे ।  
 चुक्री चाङ्गेरिकाया स्याच्चुक्रं वृक्षाम्लके मतम् ३४ ॥  
 मासाद्रिभेदयोश्चैत्रश्चैत्रं मृतकचैत्यके ।  
 चौरश्चौरे सुगन्धे च छत्रमातपवारणे ॥ ३५ ॥

चन्द्र-चंद्रमा, कपूर, सुवर्ण, कबीला- औषधि, जल, ( पु० )	चित्रा-मूसकनी, गहूँमा, सरिवन, जमालमोटाकी जड़ ( स्त्री० )
चर-चार ( फिरताहुवा ) पुरुष, हि लताहुवा, जूवाभेद, जगम, ( पुं० ) ॥ ३० ॥	चीर-बख, चोटी, सोसा, लेखभेद, रेखा, ( न० ) ॥ ३३ ॥
चर-भाड ( पात्र ), हव्यअन्न ( देवान्न ) ( पु० )	चीरी-धोतीकी कच्छ, भैंभीरी (वर्षा- ऋतुमे शीं शीं धोलनेवाला प्राणी ) ( स्त्री० )
चार-राजाका युक्त पुरुष, चरौची, गमन, वषट, ( पु० )	चुक्र-खट्टा-द्रव्य, अम्लवेत, ( पुं० ) चुफ्री-अम्ललोना ( स्त्री० )
चित्र-वपरा, अद्भुत, ( त्रि० ) ॥ ३१ ॥	चुक्र-चूना वृक्ष, ( न० ) ॥ ३४ ॥
चित्र-आलेख्य ( चित्रनिकालना ), तिलक, आवाश, ( न० )	चैत्र-चैत्र-मास, पर्वतभेद, ( पु० ) चैत्र-मृतकवा चौतरा, ( न० )
चित्रा-नदी, नक्षत्र, सर्प, और अप्सरा औसा भेद, ( स्त्री० ) ॥ ३२ ॥	चौर-चोर, सुगन्ध-द्रव्य, ( पुं० ) छत्र-छत्र, ( न० ) ॥ ३५ ॥

छत्रा मधुरिकायां स्यात्कुस्तुम्बुरुशिलीन्द्रयोः ।  
 जारस्तूपपतौ जारी मता वश्यौषधीभिदि ॥ ३६ ॥  
 जीरस्तू जीरे खञ्जे च टारो लिङ्गतुरङ्गयोः ।  
 तत्रं प्रधाने सिद्धान्ते श्रुतिशास्त्रान्तरेऽपि च ॥ ३७ ॥  
 कुटुम्बधारणे शास्त्रे कारणे च परिच्छेदे ।  
 इतिकर्तव्यतायां च सूत्रवायेऽगदोत्तमे ॥ ३८ ॥  
 तत्रं द्विसाधके पात्रे तन्त्री स्याद्वल्लकी गुणे ।  
 शिरायां च गुड्ढ्या च तन्द्री निद्राप्रमीलयोः ॥ ३९ ॥  
 वस्त्रादिपेटके नावि दशाया च तरिः स्त्रियाम् ।  
 ताम्रं शुल्ये त्रिष्वरुणे तारोऽप्युच्चध्वनौ त्रिषु ॥ ४० ॥  
 तारो मुक्तादिसंशुद्धौ तरुणे शुद्धमौक्तिके ।  
 तारं तु रजते तारा सुग्रीवगुरुर्योषितोः ॥ ४१ ॥

छत्रा-सौंफ, घनियाँ, छत्राक ( भो-  
 फो ) ( स्त्री० )  
 जार-उपपति, ( पु० )  
 जारी-वशीभूत करनेवाली औषधीभेद  
 ( स्त्री० ) ॥ ३६ ॥  
 जीर-जीरा, रज, ( पुं० )  
 टार-लिंग, अश्व, ( पुं० )  
 तन्त्र-प्रधान, सिद्धान्त, वेदशास्त्राभेद,  
 ॥३७॥ कुटुम्बधारण, शास्त्र, कारण,  
 सामग्री, निश्चित करना, सूत्रबुनने-  
 वाला, उत्तम औषधी, ( न० )  
 ॥ ३८ ॥  
 तत्र-दोनोंका साथक, पात्र, ( न० )

तन्त्री-बीणाका तार, नाडी, गिलोय,  
 ( स्त्री० )  
 तन्द्री-निद्रा, आलस्य, ( स्त्री० ) ॥३९॥  
 तरि-वस्त्रआदिनी पेटा, नौका, बस्त्रका  
 पत्र, ( स्त्री० )  
 ताम्र-ताम्र, ( न० ) रक्तवर्णवाला,  
 ( त्रि० )  
 तार-अति उच्चध्वनि, ( त्रि० ) ॥४०॥  
 तार-मोती आदिकी संशुद्धि, जवान,  
 खच्छमोती, ( पुं० )  
 तार-चाँदी, ( न० )  
 तारा-सुग्रीवकी स्त्री, वहस्पतिकी  
 स्त्री ( स्त्री० ) ॥ ४१ ॥

बुद्धदर्शनदेव्यां च दृग्मध्यतारके न ना ।  
 तीरस्त्रपौ नटे तीरं तटे प्रादुत्तरं च तत् ॥ ४२ ॥  
 तीव्रमत्यन्तरुदुके नितान्ते तद्वतोस्त्रिषु ।  
 तीव्रा तु कटुरोहिण्यामासुरीगण्डदूर्वयोः ॥ ४३ ॥  
 वेणुके प्राजने तोत्रं दरोऽस्त्री भीतिगर्तयोः ।  
 दरी स्यात्कन्दरे स्त्री तदीपदर्थे दराऽव्ययम् ॥ ४४ ॥  
 दस्रः खरेऽप्याश्विनेये दारु स्याद्देवदारुणि ।  
 अस्त्री त्वारेऽप्यथ क्लीव द्वारं द्वाराऽभ्युपाययोः ॥ ४५ ॥  
 धरः कच्छपनाथे स्याद्विरौ कर्प्पासतूलके ।  
 धरा धरण्या स्त्रीणा च गर्भाधारेऽपि मेदसि ॥ ४६ ॥  
 धात्री त्वामलकीक्षित्योरुपमातरि मातरि ।  
 धारस्तु धारासम्पातवर्षणे स्यादृणेऽपि च ॥ ४७ ॥

बुद्धधर्मकी देवी, ( स्त्री० ) नेत्रका तारा ( स्त्री० न० )	दस्र—गर्दभ, अश्विनीकुमार, ( पुं० )
तीर—राग, नट, ( पुं० ) तीर	दार—देवदार—वृक्ष ( न० ) पीतल ( पु० न० )
तीर—प्रतीर—तट—नदी आदिका, ( न० ) ॥ ४२ ॥	द्वार—दरवाजा, अभ्युपाय ( अगोकार या उपाय ) ( न० ) ॥ ४५ ॥
तीव्र—अत्यन्त चर्चरा, अत्यर्थ, ( न० ) बटुरासवाला, अत्यर्थवाला ( त्रि० )	धर—कूर्माधिप ( बदा बहुवा ), पर्वत, कपासकी रुई, ( पुं० )
तीव्रा—कुटकी, राई, गोंडर दूब, ( स्त्री० ) ॥ ४३ ॥	धरा—पृथ्वी, स्त्रियों का गर्भाशय, मेद, ( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥
तोत्र—चातुक, पैनी, ( न० )	धात्री—आँवला, पृथ्वी, धाय ( स्तन प्यानेवाली ), माता ( स्त्री० )
दर—भय, खडा, ( पुं० न० )	धार—धारापूर्वक वरसना, ऋण, ( पुं० ) ॥ ४७ ॥
दरी—गुफा, ( स्त्री० )	
दर—इपत्का अर्थ ( धोडा ) ( अ- यय ) ॥ ४४ ॥	

धारा पङ्क्तौ द्रवद्रव्यस्रवेऽश्वगतिपञ्चके ।

खड्गादीनां मुले सेनाग्रिमस्कन्धपुरान्तरे ॥ ४८ ॥

भृङ्गारादेश्च नालायां धाराभ्यासे जुतावपि ।

हरिद्रानिशयोश्चाथ धीरः स्यात्पुंसि पण्डिते ॥ ४९ ॥

धैर्यशालिनि मन्दे च त्रिषु धीरं तु कुङ्कुमे ।

नक्रस्तु पुंसि कुम्भीरे नक्रं प्राणेऽग्रदारुणि ॥ ५० ॥

नरः पार्थाजयोर्मर्त्ये रामकर्पूरके नरम् ।

नारस्तु तन्दुके नीरे नीध्रः पुंसि निशापतौ ॥ ५१ ॥

नीध्रं बलीके नेमौ च रेवतीतारके वने ।

नेत्रं विलोचने वृक्षमूले धस्त्रे गुणे मधि ॥ ५२ ॥

नेत्रं रथेऽपि नद्यां च नेत्रो नेतरि वाच्यवन् ।

पत्रं पर्णे च पश्मे च नृत्योद्यतनटेषि च ॥ ५३ ॥

ऋत्विगादौ पात्रं स्यात्पारः ? एरंजयन्तमाः ।

कर्करीपूरयो. पारी पारी पूरपरागयो. ॥ ५४ ॥

हस्तिन पादरज्ज्वा च पुण्ड्राः म्युर्नीट्टदन्तरे ।

पुण्ड्रो वासन्तिक्रियाया च दिक्षु दैत्यप्रभेदयोः ॥ ५५ ॥

पुण्ड्रखिलकभेदेपि पुण्डरीके क्रमावपि ।

पुरं पाटलिपुत्रे स्याद्दृहोपरिगृहे गृहे ॥ ५६ ॥

पुरं देहे गुग्गुलौ तु पुरः पुरि पुरं न ना ।

दशपूर्वस्तु वालेये पूर्वकाले पुराञ्जयम् ॥ ५७ ॥

पुरुः स्वर्गे परागे च पुरुः प्राज्यनृपान्तरे ।

पूरो वारिप्रवाहे स्यात्पूरः स्यात्पिष्टक्रान्तरे ॥ ५८ ॥

पोत्रं वज्रे मुखाम्रे च सूकरस्य हलस्य च ।

पौरः पुरभवे वाच्यलिङ्ग पौरं तु ऋत्तृणे ॥ ५९ ॥

पात्र-ऋत्विक् आदि, ( न० )

पार- ( पु० )

पारी-शारी, जलसी वृद्धि, मणशुद्धि,  
पुष्पकी रज्ज्, ॥ ५४ ॥ हस्तादि पाँ-  
वकी रस्ती, ( स्त्री० )

पुण्ड्र-देशविशेष ( पु० बहुवचनात् )  
जुही-पुष्पकेल, दक्षुभेद, दैत्यभेद,  
॥ ५५ ॥ निळरभेद, वनल, कृत्ति  
( वीरा ) पु० )

पुर-पटना शहर, परके ऊपर पर,  
घर, ॥ ५६ ॥ शरीर, ( न० )

पुर-गूगल, ( पु० )

दशपुर-गर्दभ, ( पु० )

पुरा-पूर्वकाल, ( अज्यय ) ॥ ५७ ॥

पुर-स्वर्ग, पुरराज, बहुत, एक राजा,  
( पुं० )

पूर-जलप्रवाह, पिष्टभेद, ( पुं० )  
॥ ५८ ॥

पोत्र-वज्र, सूकरके मुखका अग्रभाग,  
हलका अग्रभाग, ( न० )

पौर-पुरमें होनेवाला मनुष्यआदि,  
( त्रि० ) सुगधिक तृण, ( रोहिण )  
( न० ) ॥ ५९ ॥

वक्रः शनैश्चरे वक्रं पुटभेदेऽथ वाच्यवत् ।  
 वक्रः स्वात्कुटिले कूरे वध्रं त्रपुवरत्रयोः ॥ ६० ॥  
 वभ्रुर्मुनौ कृशानौ च नकुले च हरीशयोः ।  
 पिङ्गलेऽपि विशालेऽपि वभ्रुः स्यादभिधेयवत् ॥ ६१ ॥  
 त्रिफलायां वरा प्रोक्ता शतावरी मता वरी ।  
 वारः सूर्यादिदिग्घसे द्वारेऽप्यवसरे हरे ॥ ६२ ॥  
 कुल्लवृक्षे च गन्धे च वारं स्यान्मद्यभाजने ।  
 वारी तु गजबन्धन्यां घटिकायामपि स्मृता ॥ ६३ ॥  
 वारिः सरस्वतीदेव्यां वारि हीवेरनीरयोः ।  
 वास्रः पुंसि दिने वास्रं मन्दिरेऽपि चतुष्पथे ॥ ६४ ॥  
 वीरस्तु सुभटे श्रेष्ठे वीरं शृङ्ग्यां नते त्रिषु ।  
 वीरा तु रम्भागम्भारीतामलक्यैल्व्यालुषु ॥ ६५ ॥

वक्र-शनैश्चर-ग्रह, ( पुं० ) पुट ( पत्र-  
 पात्र ) भेद, ( न० ) ✓  
 वक्र-कुटिल, कूर, ( त्रि० )  
 वध्र-सीता, वधी ( चर्मरन्ध्र ) ( न० )  
 ॥ ६० ॥  
 वभ्रु-मुनिभेद, अग्नि, नैला, ( पुं० )  
 विष्णु, महादेव, ( पुं० )  
 वभ्रु-विंगलवर्णवाला, विशाल ( वडा )  
 ( त्रि० ) ॥ ६१ ॥  
 वरा-त्रिफला, ( स्त्री० ) ✓  
 वरी-सतावरा, ( स्त्री० ) ✓  
 वार-सूर्य आदिका दिन, द्वार, अवसर,  
 महादेव, ॥ ६२ ॥

चिराचिरा-वृक्ष, गन्ध, ( पुं० ) मदि-  
 रापान, ( न० )  
 वारी-गजबन्धनी, हाथीको बाँधनेकी  
 जगह, कलशो, ( स्त्री० ) ॥ ६३ ॥  
 वारि-सरस्वती देवी, ( स्त्री० ) ✓  
 वारि-नेत्रवाला, जल, ( न० )  
 वास्र-दिन, ( पुं० ) मन्दिर, चैत्र-  
 रात्ता, ( न० ) ॥ ६४ ॥  
 वीर-बोधा, भेद ( पुं० ), इन्द्रदेव,  
 ( न० ) इतर ( त्रि० )  
 वीरा-देव, इन्द्र, सुकर्म  
 एव, ( स्त्री० ) ॥ ६५ ॥

स्त्री सुराक्षीरकाकोलीपतिपुत्रवतीप्वपि ।

गोष्ठोदुम्बरिकाक्षीरविदार्योरपि सा स्मृता ॥ ६६ ॥ .

वृत्रो दानवशक्रादिध्वान्तवारिदवैरिषु ।

भद्रो हरे रामवले वृषे मेरुकदम्बके ॥ ६७ ॥

लक्ष्मणाद्योऽवशः शीघ्र यः प्रकुप्यति कोपितः ।

गजे तत्राऽपि भद्रः स्याद्वाच्यवच्छ्रेष्ठसाधुनोः ॥ ६८ ॥

भद्रं तु करणप्रीतिमुल्लङ्घ्ये महेमसु ।

भद्रा तु जाह्नवीरास्त्राकृष्णानन्तासु कटूफले ॥ ६९ ॥

भद्रा भद्रालिकायां च गम्भार्या हेमदुग्धके ।

भरम्ब्वतिशये भारे भरुर्भर्तारि काञ्चने ॥ ७० ॥

भारम्बु वीवधे स्वर्णपलानामयुतद्वये ।

वाच्यवत्कातरे भीरु भीरुिन्द्रीवरीस्त्रियोः ॥ ७१ ॥

मरिता, क्षीरकाकोली, पतिपुत्रवाली  
स्त्री, गोमा, दूधविदारी वंद  
( स्त्री० ) ॥ ६६ ॥

वृत्र-एकदानव, इंद्रादि, अधवार, भेष,  
सनु, ( पु० )

भद्र-महादेव, रामचंद्र, बलदेव, वंल,  
मुमेहवा कदव वृक्ष, ॥ ६७ ॥

जो लक्ष्मणसे कुपित रिचाहुवा शीघ्र  
अवशहुवा प्रकोपको प्राप्त हुवा वह  
अर्थात् परशुराम, ( पु० ) धेष्ठ,  
साधु ( अच्छा ) ( त्रि० ) ॥ ६८ ॥

भद्र-करण, प्रीति, नागरमोथा, मंगल,  
सुवर्ण, ( न० )

भद्रा-आराशगगा, रायसल, पीपल,  
अनंतमूल, कायफल, ॥ ६९ ॥

गंधाली या पसरन, कभारी, गूलर-  
वृक्ष, ( स्त्री० )

भर-अत्यंत भार, ( पुं० )

भर-भर्ता, सुवर्ण, ( पुं० ) ॥ ७० ॥

भार-धानआदिका समूह या नार्ग,  
सुवर्ण पल्लोका २० सहस्र पल  
( ८००० तोला सुवर्ण ) ( पुं० )

भीरु-डरपोर, शतावर या कटेहली,  
स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ७१ ॥

भूरि प्राज्ये सुवर्णे च भूरिर्व्रक्षेशशौरिषु ।  
 मन्त्रो वेदान्तरे गुप्तवादे देवादिसाधने ॥ ७२ ॥  
 मरुर्धन्वनि शैले च मात्रं कात्ख्येऽवधारणे ।  
 मात्रा परिच्छेदे विचे मानेऽल्पे कर्णभूषणे ॥ ७३ ॥  
 अक्षिभागेऽप्यथो मारो विघ्ने मृत्यौ सरे वृषे ।  
 मारी जनक्षये चण्ड्यां मित्रं सख्यौ रवौ पुमान् ॥ ७४ ॥  
 मीरोविधिशैलनीरेषु मुरो दैत्ये मुरौपधे ।  
 यात्राऽनुवृत्तौ गमने यापने देवतोत्सवे ॥ ७५ ॥  
 विषयोत्पातयो राष्ट्रमन्त्री दैत्ये मृगे रुहः ।  
 रेत्रं रेतसि पीयूषे पारदे पटवासके ॥ ७६ ॥  
 रोधः सावरके लोधो रोधं पापापराधयोः ।  
 रौद्री तु चण्ड्या रौद्रस्तु त्रिषु तीव्रे भयानके ॥ ७७ ॥

भूरि-बहुत ( त्रि० ) सुवर्ण, ( न० ) मीर-समुद्र, पर्वत, जल, ( पु० )  
 मन्त्रो-मन्त्रा, महादेव, कृष्ण, ( पुं० ) मुर-दैत्य, ( पुं० )  
 मरु-वेदभेद, गुप्तसलाह, देवआ- मुरा-कपूरकचरी, ( स्त्री० )  
 दिक्कोला साधन, ( पुं० ) ॥ ७२ ॥ यात्रा-अनुवर्तन, गमन, भोजना, देव-  
 मरु-मारवाड देश, पर्वत, ( पुं० ) ताका उत्सव ( स्त्री० ) ॥ ७५ ॥  
 मात्र-सपूर्णता, निधम ( न० ) राष्ट्र-देश, उत्पात, ( पुं०न० )  
 मात्रा-उपकरण ( सामान ), दैत्य, रुह-दैत्यविशेष, मृगविशेष, ( पुं० )  
 परिमाण, अल्प, कर्णभूषण, नेत्र- रेत्र-वीर्य, अमृत, पारा, बडुचा,  
 भाग, ( स्त्री० ) ॥ ७३ ॥ ( न० ) ॥ ७६ ॥  
 मार-विघ्न, मृत्यु, कामदेव, पैल, ( पुं० ) रोध-लोध-लोध, ( पुं० )  
 मारी-जनोका नाच, बंडी ( देवी ) रोध-याप, अपराध, ( न० )  
 ( स्त्री० ) रौद्री-बंडी ( देवी ) ( स्त्री० )  
 मित्र-यत्ना, ( न० ) त्र्यं, ( पु० ) रौद्र-तीव्र, भयानक, ( त्रि० ) ॥ ७७ ॥  
 ॥ ७४ ॥



रौद्रं स्यादातपे क्लीवं रौद्रो नाश्वरसान्तरे ।  
 छन्दोभेदे मुखे वक्रं स्याद्वज्रा तंत्रिकौपथौ ॥ ७८ ॥  
 वज्रोऽस्त्री हीरके शम्भे वज्रो योगान्तरे पुमान् ।  
 क्लीवं स्यादारनालेऽपि वक्रं वामेऽलकेऽपि च ॥ ७९ ॥  
 वप्रस्तातेऽस्त्रिया तीरे तु क्षेत्रचयरेणुषु ।  
 चेरं शरीरकाश्मीरवार्त्ताकीषु नपुंसकम् ॥ ८० ॥  
 न्याकुलाशक्तयोर्व्यग्रो व्याघ्रो द्वीपिकरजयोः ।  
 शरस्तेजनके काण्डे शरं नीरे नपुंसकम् ॥ ८१ ॥  
 द्युरिकाया मता शस्त्री शस्त्रमायुधलोहयोः ।  
 शारम्बु शबले वाते शारिः शाकुनिकान्तरे ॥ ८२ ॥  
 युद्धार्थगजपर्याणे नाऽक्षोपकरणे पणे ।  
 आज्ञायामागमे शास्त्रं शिशुः काक्षीवशाक्योः ॥ ८३ ॥

रौद्र-धूप, ( न० )	व्यग्र-व्याकुल, अशक्त, ( पुं० )
रौद्र-नाश्वरभेद, रसभेद, ( पुं० )	व्याघ्र-वधेरा, करतुवा ( पु० )
वक्र-छन्दभेद, मुख ( न० )	शर-सरकंडा, बाण, ( पुं० ) जल ( न० ) ॥ ८१ ॥
वज्रा-मिलेय, ( स्त्री० ) ॥ ७८ ॥	शस्त्री-द्युरी, ( स्त्री० )
वज्र-हीरा, वज्र-आयुध, ( पुं० न० )	शस्त्र-आयुध ( हथियार ), लोह ( न० )
वज्र-एकयोग ( पुं० ) बाजी, ( न० )	शार-शबरा ( त्रि० ) वायु ( पुं० )
वक्र-टेडा, जुल्फ, ( न० ) ॥ ७९ ॥	शारि-वक्षीभेद, ( स्त्री० ) ॥ ८२ ॥
वप्र-तात, तीर, क्षेत्र, चय ( डेर ), रेणु, ( पुं० न० )	युद्धके लिये हस्तीका साजना, चीं- पटकी सार, जूवा ( पुं० )
चेर-शरीर, शंभारी, बैंगन, ( न० ) ॥ ८० ॥	शिशु-सहजना, शाकमात्र ॥ ८३ ॥

चक्राङ्गोशीरयोः शीघ्रं तूर्णेपि त्रिषु तद्वति ।  
 शुक्रः काव्येऽनले ज्येष्ठे शुक्रं रेतोऽक्षिरोगयोः ॥ ८४ ॥  
 शुक्लेऽपि शुभ्रं त्वभ्रे स्वात्प्रदीप्तधेतयोस्त्रिषु ।  
 शूरः शूरे भटे ख्यातः शूरः सूर्येपि दृश्यते ॥ ८५ ॥  
 सत्रं यज्ञे सदादाने कैतवे वसने वने ।  
 शरो हारे शरे पुंसि दध्यग्रेऽपि शरः पुमान् ॥ ८६ ॥  
 क्लीवं तु कानने सान्द्रं सान्द्रं त्रिषु घने मृदौ ।  
 सारः स्यान्मज्जनि बले स्थिराशेऽपि पुमानयम् ॥ ८७ ॥  
 सारं न्याद्ये जले विचे सारं स्याद्वाच्यवद्वरे ।  
 निदाघसलिले सिप्रः सिप्रा तु सरिदन्तरे ॥ ८८ ॥  
 सीरस्तु लाङ्गले पुंसि सीरो दिनपतावपि ।  
 सुरो देवे सुरा तु स्यान्मदिरापानपात्रयोः ॥ ८९ ॥

शीघ्र-चक्रका अग, सप्त, जल्दी,

( न० ) शीघ्रतावाला, ( त्रि० )

शुक्र-भागव, अग्नि, ज्येष्ठ-भास, (पुं०)

शुक्र-वीर्य, नेत्ररोग ( न० ) ॥ ८४ ॥

शुक्लवर्ण, ( पुं० )

शुभ्र-भोडर, ( न० ) उदीप्त, स-

फेदरगवाला, ( त्रि० )

शूर-एक यादव, योधा, सूर्य, (पुं०)

॥ ८५ ॥

सत्र-यज्ञ, सदादान, कपट, वध,

वन, ( न० )

शर-हार, बाण, ( पु० )

शर-दक्षिणी मलाई, (पुं०) ॥ ८६ ॥

सान्द्र-घन, ( न० )

सान्द्र-सपन, कोमल ( त्रि० )

सार-मज्जा, बल, स्थिरभाग, (पु०)

॥ ८७ ॥ न्याद्ये ( युक्त ), जल,

द्रव्य ( न० ) धेष्ट ( त्रि० )

सिप्र-धोष्मकृतुना जल ( पमीना )

( पु० )

सिप्रा-एक नदी, ( स्त्री० ) ॥ ८८ ॥

सीर-हल, सूर्य, ( पुं० )

सुर-देवता ( पुं० )

सुरा-मदिरा, जलमदिरानेच ८३,

( स्त्री० ) ॥ ८९ ॥

सूत्रं तु सूचनाग्रन्थे सूत्रं तंतुव्यवस्ययोः ।

स्थिरस्तु निश्चले मोक्षे शालपर्णीभुवोः स्थिरा ॥ ९० ॥

स्फारः स्याद्विकृते स्फारः करटादेश्च बुहुदे ।

स्वरोऽकाराद्युदात्तादिमध्यमादिषु निस्वने ॥ ९१ ॥

स्वरो नासासमीरेऽपि स्वैरं स्वच्छन्दमन्दयोः ।

स्वरुर्वज्रे शरे यजे यूपखण्डेऽपि च स्वरुः ॥ ९२ ॥

हरिर्गोविन्दवारीन्द्रचन्द्रवातेन्द्रभानुषु ।

यमाऽहिकपिभेकाश्चशुके शोकान्तरे त्विपि ॥ ९३ ॥

त्रिषु पिङ्गेऽपि हरिते हारो मुक्तावलौ युधि ।

हिंसा काकादनीमास्योर्हिंस्रः स्याद्वातकेऽन्यवत् ॥ ९४ ॥

रक्तैरण्डेऽप्यथ व्याघ्री स्पृश्या श्रेष्ठे परस्थितः ।

शक्रः पुलोमजाकान्ते कुटजेऽर्जुनपादपे ॥ ९५ ॥

सूत्र—सूचनाग्रन्थ, तंतु ( सूत ), व्यवस्था ( नं० )

स्थिर—निश्चल, मोक्ष, ( पुं० )

स्थिरा—शालपर्णी—औषधि, पृथ्वी, ( स्त्री० ) ॥ ९० ॥

स्फार—विकृत (सकृद्), ओलाआदिका बुहुदा, ( पुं० )

स्वर—अकार आदि, उदात्तआदि, मध्यम पदज आदि, शब्द ( ध्वनि ) ( पुं० ) ॥ ९१ ॥

स्वरो—नासिकाका वायु ( पुं० )

स्वैरं—स्वच्छन्द, मन्द, ( त्रि० )

स्वरु—वज्र, धाण, यज्ञ, यज्ञसंभवा टुकड़ा ( पुं० ) ॥ ९२ ॥

हरि—विष्णु, बरुण, चंद्रमा, वायु, इंद्र,

सूर्य, ॥ ९३ ॥ धर्मराज, सप, वन्दर, मंडक, अश्व, सूबा ( तोता ),

शोकभेद, कान्ति, ( पुं० ) पिंगल वर्ण-वाला, हरितवर्णवाला ( त्रि० )

हार—मोतियोंकी लड़ी, युद्ध, ( पुं० ) ॥ ९४ ॥

हिंसा—काकादनी—वृक्ष या काँआ टोडी, जटामासी, ( स्त्री० )

हिंस्र—घातक ( जीव मारनेवाला ) ( त्रि० ) रक्तअरंड, ( पुं० )

व्याघ्री—कटेहली, ( स्त्री० ) व्याघ्र-शब्द अन्यशब्दके आगे जुड़ाहुवा

श्रेष्ठवाचक कहा है, ( पुं० )

शक्र—इंद्र, कुडा-वृक्ष, अर्जुन-वृक्ष, ( पुं० ) ॥ ९५ ॥

शत्रिः शचीपतौ मेघे स्वरुः कुलिशकोपयोः ।

हीरा पिपीलिकालक्ष्म्योर्हीरो वज्रेऽपि शङ्करे ॥ ९६ ॥

होरा रेखान्तरे शास्त्रभेदे राश्यर्द्धलग्नयोः ।

क्षरो मेघे क्षरं नीरे क्षारः स्याद्भस्मकाचयोः ॥ ९७ ॥

चूर्णादौ धूर्तलवणे रसभेदेऽपि दृश्यते ।

क्षीरं नीरेऽपि दुग्धेऽपि वटादीनां पयस्यपि ॥ ९८ ॥

क्षुद्रः खल्पाऽधमकूरकृपणेष्वभिधेयवत् ।

क्षुद्रा वेश्यानटीव्यङ्गासरघावृहतीष्वपि ॥ ९९ ॥

चाङ्गेर्यां कण्टकार्यां च हिंसामक्षिकुरोरपि ।

नापितस्योपकरणे गौक्षुरे च क्षुरं क्षुरः ॥ १०० ॥

क्षेत्रं शरीरे दारेषु केदारे सिद्धसंश्रये ।

क्षौद्रं तु माक्षिके क्लीयं मतं क्षौद्रं पयस्यपि ॥ १०१ ॥

शत्रि-शत्रु, मेघ, ( पुं० )

स्वरु-वज्र, कोप, ( पुं० )

हीरा-चीटी, लक्ष्मी, ( स्त्री० )

हीर-उग्र, महादेव, ( पुं० ) ॥ ९६ ॥

हीरा-रेखाभेद, शास्त्रभेद, राशिसा  
अर्द्धभाग, लग्न ( स्त्री० )

क्षर-मेघ, ( पुं० )

क्षर-जल, ( न० )

क्षार-भस्म, काच, ॥ ९७ ॥ चूर्ण  
आदि, विरियासंघर नौन, रसभेद  
( पुं० )

( पुं० )

क्षीर-जल, दूध, वदआदिकोना दूध,  
( न० ) ॥ ९८ ॥

क्षुद्र-खल्प, अधम, कूर, कृपण,  
( त्रि० )

क्षुद्रा-वेश्या, नटी, अगहीना, मधु-  
मक्खी, बड़ी कटेहली, ( स्त्री० )  
॥ ९९ ॥ चूरा, कटेहली, जटामांसी,  
मक्षिकामात्र, ( स्त्री० )

क्षुर-नाईका उस्तारा, गीयारू, ताल-  
मखाना, ( पुं० )

क्षेत्र-शरीर, कुटुंबिनी स्त्री, खेत,  
सिद्धोक्ती पृथ्वी, ( न० ) ॥ १०० ॥

क्षौद्र-शहद, जल, ( न० ) ॥ १०१ ॥

रतृतीयम् ।

अगुरु स्याच्छिद्यपायां जोङ्गके लघुनि त्रिषु ।

अङ्कुरः स्यादभिनवोद्भिदि रोम्यप्सु शोणिते ॥ १०२ ॥

अङ्गारमूलमुके न स्त्री पुंस्यङ्गारो महीसुते ।

वातेऽजिरः प्राङ्गणाङ्गविषये ददुरेऽजिरः ॥ १०३ ॥

अन्तरं तु विशेषे स्यादुत्तरीयावकाशयोः ।

आत्मात्मीयविनाऽतद्विबहिर्भ्रम्यावधिष्वपि ॥ १०४ ॥

तादर्थ्येऽवसरे रन्ध्रेऽप्यन्यार्थेऽपि तथान्तरम् ।

अपरा तु जरायौ स्यादर्वाचीनेऽपरं त्रिषु ॥ १०५ ॥

अपरं त्वधुनार्थेऽपि पश्चाद्गान्धेऽपि दन्तिनाम् ।

अवरा हिमवत्पुत्र्यां चरमे त्ववरं त्रिषु ॥ १०६ ॥

अवीरा निष्पतिसुता स्त्रियां शौर्येऽङ्गिते त्रिषु ।

अमरस्तु सुरेऽप्यस्थिसंहारे कुलिशद्रुमे ॥ १०७ ॥

रतृतीय ।

अगुरु-शिक्षा ( तीसम-वृक्ष ), अ-  
गर, ( न० ) लघु ( छोटा )  
( त्रि० )

अङ्कुर-वृक्षआदिका नया अङ्कुर, रोम,  
जल, सधिर, ( पुं० ) ॥ १०२ ॥

अङ्गार-मुराह ( पुं० न० ) मंगल-  
ग्रह, ( पुं० )

अजिर-वायु, आँगन, अग, देश,  
मेडक ( पुं० ) ॥ १०३ ॥

अन्तर-विशेष ( भेद ), इपश, अव-  
काश, आत्मा, आत्मीय, विना,  
आच्छादन ( ढक्ना ), बाहिर,

मध्य, अवधि, तादर्थ्य, अवसर,  
छिद्र, अन्यार्थ ( न० ) ॥ १०४ ॥

अपरा-जरायु ( जेर ) ( स्त्री० )

अपर-अर्वाचीन ( उरे होनेवाला )  
( त्रि० ) ॥ १०५ ॥ अधुना

( अब ) का अर्थ, हस्तियोंके शरीरका  
पिछला भाग, ( न० )

अवरा-पार्वती, ( स्त्री० )

अवर-उरे होनेवाला, ( त्रि० ) १०६  
अवीरा-पतिपुत्ररहिता स्त्री, ( स्त्री० )

वीरतासे रहित, ( त्रि० )

अमर-देवता, हडसंकरा-औषधि,  
यूहर, ( पुं० ) ॥ १०७ ॥

अमरा त्विन्द्रनगरीदूर्वास्थूणागुड्गचिपु ।  
 अम्बरं रसकर्प्यासव्योमरागसुगन्धके ॥ १०८ ॥  
 गृहे कपाटेऽप्यररमशिरोऽर्काग्निराक्षसे ।  
 असुरो दानवे सूर्ये निशाराशयोर्मताऽसुरा ॥ १०९ ॥  
 अक्षरं न द्वयोर्मोक्षे ब्रह्मणि व्योमवर्णयोः ।  
 उत्पत्तिस्थाननिवहश्रेष्ठेषु ख्यात आकरः ॥ ११० ॥  
 आकार इङ्गितेऽपि स्यात्स्यात्स्थानाह्वानयोरपि ।  
 स्यादाधारोऽधिकरणेऽप्यालत्रालेऽम्बुधारणे ॥ १११ ॥  
 आसारस्तु प्रसरणे धारावृष्टौ सुहृद्बले ।  
 आह्वरं तिमिरे युद्धे स्वावलायां स्वसाध्वसे ॥ ११२ ॥  
 आहारो भोजने पुंसि स्यादाहरणहारयोः ।  
 इतरः पामरेऽन्यसिन्नित्वरो गत्वरेऽन्यवत् ॥ ११३ ॥

अमरा-इन्द्रनगरी, दूर्वा, लोहेकी मूर्ति  
 या रांभा, गिलोय, ( स्त्री० )  
 अम्बर-रस, कपास, आकाश, राग,  
 सुगन्धद्रव्य, ( न० ) ॥ १०८ ॥  
 अरर-घर, क्वाड, ( न० )  
 अशिर-सूर्य, अग्नि, राक्षस, ( पुं० )  
 असुर-दानव, सूर्य, ( पुं० )  
 असुरा-रात्रि, राशि, ( स्त्री० ) २०९  
 अक्षर-मोक्ष, ब्रह्म, आकाश, वर्ण,  
 ( न० )  
 आकर-उत्पत्तिस्थान, समूह, श्रेष्ठ,  
 ( पुं० ) ॥ ११० ॥

आकार-चेष्टित, स्थान, बुलाना,  
 ( पुं० )  
 आधार-अधिकरण, वृक्षकी क्यारी,  
 जलका धारणकरना, ( पुं० ) १११  
 आसार-फैलना, वेगसे वर्षा, निर-  
 बल ( पुं० )  
 आह्वर-अधकार, युद्ध, अपनी स्त्री,  
 अपना भय, ( न० ) ॥ ११२ ॥  
 आहार-भोजन, हरना, हार,  
 ( पुं० )  
 इतर-नीच, अन्य ( दूसरा ) ( त्रि० )  
 इत्वर-गमनशीलवाला, ॥ ११३ ॥

इत्यरो दुर्विधे नीचे पथिके क्रूरकर्मणि ।  
 ईश्वरो धनसम्पन्ने शिवे व्याधिनि मन्मथे ॥ ११४ ॥  
 ईश्वरी स्वामिनीगौर्योरीश्वरा स्कन्दमातरि ।  
 उत्तरं प्रतिवाक्ये स्याद्विराटतनये पुमान् ॥ ११५ ॥  
 उत्तरा तु मतोदीच्यामूर्द्धोदीच्योत्तमे त्रिषु ।  
 उदरो जठरे युद्धेऽप्युद्धारस्तूद्धृतौ रणे ॥ ११६ ॥  
 उदारो दातृमहतोर्दक्षिणस्थूलयोस्त्रिषु ।  
 सर्वशस्यात्वमेदिन्यां भेदिन्यामपि चोर्वरा ॥ ११७ ॥  
 ऋक्षरं वारिघारायां पुंसि ऋत्विजि ऋक्षरः ।  
 एकाग्रमन्यलिङ्गं स्यादेकतानेऽप्यनाकुले ॥ ११८ ॥  
 औशीरं चामरे दण्डेऽप्येकोक्त्या शयनाशने ।  
 कर्बुरं पामरेऽपि स्यात्पुंश्वलेऽप्यथ कर्बुरा ॥ ११९ ॥

दरिद्र, नीच, पथिक (धडाऊ), क्रूर- कर्मवाला, ( त्रि० )	उद्धार-उद्धार ( उबारना ), रण, ( पुं० ) ॥ ११६ ॥
ईश्वर-धनसम्पन्न, महादेव, व्याधि- वाला, कामदेव, ( पुं० ) ॥ ११४ ॥	उदार-दाता, महान् ( बडा ), चतुर, स्थूल ( मोटा ) ( त्रि० )
ईश्वरी-स्वामिनी, गौरी, ( स्त्री० )	उर्वरा-संपूर्ण सस्य ( कृषि ) संयुक्त भूमि, भूमि-मात्र, ( स्त्री० ) ११७
ईश्वरा-पार्वती ( स्त्री० )	ऋक्षर-जलही धारा, ( न० )
उत्तर-प्रतिवाक्य ( जवाब ) ( न० ) विराटका पुत्र ( पुं० ) ॥ ११५ ॥	ऋक्षर-ऋत्विज् ( यज्ञरानेवाला ) ( पुं० )
उत्तरा-उत्तर दिशा, ( स्त्री० )	एकाग्र-अनन्यवृत्ति, अनाकुल (व्या- पुलतारहित ( त्रि० ) ॥ ११८ ॥
उत्तर-ऊर्ध्व ( ऊपर ) होनेवाला, उत्तर दिशामें होनेवाला, उत्तम, ( त्रि० )	औशीर-बैबर, डंढा, सोना और भोजनकरना, ( न० )
उदर-जठर ( पेट ), युद्ध, ( पुं० )	कर्बुर-नीच, व्यभिचारी, ( पुं० ) कर्बुरा-॥ ११९ ॥

दुरालभायां दुःस्पर्शाशूकशिबीशटीषु च ।  
 कुञ्जरो वारणे सूर्ये विरञ्चिमुनिकुक्षिषु ॥ १२० ॥  
 कङ्करं तु मतं तत्रे कङ्करं कुत्सिते त्रिषु ।  
 कटमू रक्षसीशेऽक्षदेवने सत्ययीवने ॥ १२१ ॥  
 कटित्रं कटिवस्त्रे स्यात्काञ्चीचर्माङ्गयोरपि ।  
 कडारः पिङ्गले दासे पिङ्गवर्णे तु वाच्यवत् ॥ १२२ ॥  
 कणेरुः करिणीवेद्याऋणिकारे गणेरुवत् ।  
 कदरः श्वेतखदिरे रुग्भेदे क्ररुचे सृणौ ॥ १२३ ॥  
 वा स्त्री तु कन्दरो दर्यामङ्कुशे पुंसि कन्दरः ।  
 कन्धरः पुंसि जलदे ग्रीवायां कन्धरा स्त्रियाम् ॥ १२४ ॥  
 कवरं लवणेऽम्ले च शाककेशमिदोः स्त्रियाम् ।  
 नपुंसकं तु कर्धूरं शटीकाञ्चनयोर्मतम् ॥ १२५ ॥

अक्षवर्ग, जवौता, काँच, कचूर ( स्त्री० ) कुञ्जर-हस्ती, सूर्य, ब्रह्मा, एफ मुनि, कुक्षि, ( पुं० ) ॥ १२० ॥ कङ्कर-छाछ, कुक्षित, ( त्रि० ) कटमू-राक्षस, महादेव, पासोसे खेल- नेवाला, सत्य बोलना, यौवन ( पुं० ) ॥ १२१ ॥ कटित्र-कटिवस्त्र, करधनी, चर्मभेद, ( न० ) कडार-पिङ्गल वर्णवाला, दास, ( पु० ) पिङ्गल वर्ण, ( त्रि० ) ॥ १२२ ॥	कणेरु-गणेरु-हथिनी, वेद्या, क- णिकार-वृक्ष या पागारा ( स्त्री० ) कदर-सपेद-रौर, रोगभेद, करीत, अकुश, ( पुं० ) ॥ १२३ ॥ कन्दर-शुफा- ( पु० स्त्री० ) कन्धर-अकुश ( पुं० ) कन्धर-मेघ ( पुं० ) कन्धरा-ग्रीवा ( गरदन ) ( स्त्री० ) ॥ १२४ ॥ कवर-नमक, सद्य, ( न० ) कवरी-शाकभेद, केशविन्यास, ( स्त्री० ) कर्धूर-कचूर, सुवर्ण, ( न० ) १२५
--	--



कर्परस्तु कपाले स्यादस्त्रभेदकटाहयोः ।

कररः खगभित्तिश्च करीरः क्रकचार्थकः ॥ १२६ ॥

वंशाङ्कुरे करीरोऽस्त्री पुंसि वृक्षान्तरे घटे ।

करीरी चीरिकाया च दन्तमूले च दन्तिनाम् ॥ १२७ ॥

कर्करी तु गलन्त्या स्यात्कर्करो दर्पणे दृढे ।

कर्बुरो राक्षसे पापे जले हेम्नि च कर्बुरम् ॥ १२८ ॥

कर्बुरा कृष्णवृन्ताया कर्बुरं शबलेऽन्यवत् ।

कर्बरी तु शिवाया स्याद्व्याघ्रे पुंसेव कर्बुरः ॥ १२९ ॥

कलत्रं भूभुजा दुर्गास्थानेऽपि श्रोणिर्भाययोः ।

कान्तार उपसर्गादौ कोशकारान्तरे पुमान् ॥ १३० ॥

कान्तारं दुर्गमार्गेऽपि महारण्येऽपि न स्त्रियाम् ।

कावेरी तु नदीभेदे हरिद्रापण्ययोपितोः ॥ १३१ ॥

कर्पर—कपाल, अस्त्रभेद, कटाह, (पु०)

करर—पक्षीभेद, (पु०)

करीर—करोत, ॥ १२६ ॥ वंशका अङ्कुर,

(पु० न०) कैर—वृक्ष, घट, (पु०)

करीरी—चीं, चीं, बोलनेवाला पक्षी-

वाला कीट, हस्तियोंके दाँतोंका

मूल, (स्त्री०) ॥ १२७ ॥

कर्करी—चावलआदिको धोनेका पात्र,

(स्त्री०)

कर्कर—दर्पण (शीशा), दृढ, (पुं०)

कर्बुर—राक्षस, पापी, (पुं०)

कर्बुर—जल, मुवर्ण (न०) ।

कर्बुरा—पाठर—वृक्ष या मपवन, (स्त्री०)

कर्बुर—कवरांगवाल (त्रि०)

कर्बरी—गीदड़ी, (स्त्री०)

कर्बुर—बपेरा (पुं०) ॥ १२९ ॥

कलत्र—राजाओंका दुर्ग (किलाआदि)

स्थान, वमर, स्त्री, (न०)

कान्तार—उत्पातआदि, कोशकारभेद,

(पुं०) ॥ १३० ॥

कान्तार—कटिनमार्ग, वंश वन,

(पु० न०)

कावेरी—नदीभेद, हलदी, वेत्या

(स्त्री०) ॥ १३१ ॥

काश्मीरं कुङ्कुमेऽपि स्यादृक्कपुष्करमूलयोः ।  
 किंशारुविंशिले सस्यशूके कङ्काख्यपक्षिणि ॥ १३२ ॥  
 किर्म्मिरो दैत्यकव्यादभेदयोः कर्बुरे त्रिपु ।  
 वर्णमात्रेऽपि किर्म्मिरः किशोरो वाजिबालके ॥ १३३ ॥  
 सूर्येऽपि तरुणावस्थे तैलपर्ण्यामपि स्मृतः ।  
 कुङ्कुरः सारमेये स्याद्ग्रन्थिपर्णे तु कुङ्कुरम् ॥ १३४ ॥  
 कुञ्जरो हस्तिकरयोर्धातक्यां पाटलौ स्त्रियाम् ।  
 कुठरं मैथिले क्लीवं कुठरं फवलेऽपि च ॥ १३५ ॥  
 कुठारुः पादपेऽपि स्यात्कर्मठेऽपि पुमानयम् ।  
 कुमारो बालके स्कन्दे युवराजेश्ववारके ॥ १३६ ॥  
 कीरे च वरुणद्रौ च कुमारं जात्यकाञ्चने ।  
 कुमारी कन्यकागौर्योर्नवमहत्यां नदीभिदि ॥ १३७ ॥

काश्मीर-केसर, राजआमृक्ष, पो-  
हकरमूल, ( न० )

किंशारु-बाण, सस्यका तीखाभाग,  
कंक ( सफेद चील ) पक्षी, ( पुं० )  
॥ १३२ ॥

किर्म्मिर-दैत्यभेद, राक्षसभेद, ( पु० )  
कवरावर्णवाला ( त्रि० ) वर्णमात्र,  
( पुं० )

किशोर-धोडाका यच्चा ॥ १३३ ॥  
तरुण अवस्थावाला, सूर्य, सरलका  
गौंद या सिलारस, ( पुं० )

कुङ्कुर-उत्ता, ( पुं० )

कुङ्कुर-गठिवन या घनहर नामका सु-  
गधद्रव्य ( न० ) ॥ १३४ ॥

कुंजर-हस्ती, कर ( हाथीकी सूँड )  
( पुं० )

कुंजरा-धायके फूल, पाडर-पुष्पशू,  
( स्त्री० )

कुठर-मैथिल, प्रास ( न० ) ॥ १३५ ॥

कुठारु-शूक्ष्म, कर्मकरानेवाला ( पुं० )

कुमार-बालक, स्वामिकारिण, युव-  
राज, घोडा फेरनेवाला, ॥ १३६ ॥  
सूवा ( तोता ) पक्षी, वरुणा-शूक्ष्म,  
( पुं० )

कुमार-अच्छा सुवर्ण, ( न० )

कुमारी-कन्या, गौरी, नेवारी-पुष्प-  
शूक्ष्म, नदीभेद ॥ १३७ ॥

कैवर्धीमुस्तके द्वारि पुरद्वारे तु गोपुरम् ।  
 घर्घरस्तु चलद्वारिशब्दे घूके नदान्तरे ॥ १५१ ॥  
 चमरं चामरे बल्यां चमरी मज्जरी मृगे ।  
 चातुरश्चातुरकवच्चक्रगण्डौ नियन्तरि ॥ १५२ ॥  
 दृगोचरे चाटुकारे चिकुरश्चञ्चले कचे ।  
 गृहे बभ्रौ भुजङ्गे च शैले पक्षिद्रुमान्तरे ॥ १५३ ॥  
 छित्वरं छेदनद्रव्ये छित्वरो धूर्त्तविद्विषो ।  
 छिदिरस्तु बृहद्भानुखङ्गरञ्जुपरश्वधे ॥ १५४ ॥  
 जठरं कठिने वृद्धे त्रिषु स्यादुदरेऽस्त्रियाम् ।  
 जम्बीरः पुंसि जम्बीरपादपप्रस्थपुष्पयो ॥ १५५ ॥  
 जर्जरं वाच्यवज्जीर्णे जर्जरं वासवध्वजे ।  
 जलेन्द्रो वरुणे सिन्धौ जलेन्द्रो जम्भले मत ॥ १५६ ॥

गोपुर-कैवर्धीमोथा, दरवाजा, पुरदर  
 वाता, ( न० )

घर्घर-चलताहुवा जलका शब्द,  
 लङ्-पक्षी, नदभेद ( घाघर नदी )  
 ( पु० ) ॥ १५१ ॥

चमर-चर्वर, बेल ( न० )

चमरी-मज्जरी, मृगभेद ( स्त्री० )

चातुर-चातुरक-चक्रगण्ड (कपोल  
 पर) चक्रवाला, प्रेरणवाला, ॥१५२॥  
 नेत्रगोचर, चाटुकार ( सुशामद )  
 ( पु० )

चिकुर-चञ्चल, केरा, घर, नौका,  
 सप, पर्वत, पक्षिभेद, पृक्षभेद,  
 ( पु० ) ॥ १५३ ॥

छित्वर-छेदनद्रव्य ( न० )

छित्वर-धूर्त्त, शत्रु, ( पु० )

छिदिर-अग्नि, खङ्ग, रस्ती, फरसा  
 ( पु० ) ॥ १५४ ॥

जठर-कठिन, वृद्ध ( त्रि० )

जठर-उदर ( पेट ) ( पु० न० )

जम्बीर-जम्बीरी नींबूरक्ष, मरवा,  
 ॥ १५५ ॥

जर्जर-वृद्ध ( त्रि० )

जर्जर-इन्द्रध्वज, ( न० )

जलेन्द्र-वरुण, समुद्र, जम्बीरी नींबूर  
 ( पु० ) ॥ १५६ ॥

जमुरिः पुंसि वज्रे स्याज्जमुरिः पावके पुमान् ।  
 झर्झरः स्यात्कलियुगे वाद्यभेदे नदान्तरं ॥ १५७ ॥  
 झल्लरी झल्लरी च द्वे हुडुके बालचक्रके ।  
 टगरटङ्गणे टैरे हेलाविभ्रमगोचरे ॥ १५८ ॥  
 टङ्कारः शिञ्जिनीध्वाने प्रसिद्धौ विस्मयेऽपि च ।  
 डिङ्गरो वाच्यवक्षेपे डिङ्गरो डङ्गरे पुमान् ॥ १५९ ॥  
 तिमिरं दृग्गदे ध्वान्ते तीवरो लुब्धकेऽम्बुधौ ।  
 तुम्बरी तु मता शुन्यामार्द्रधान्याकयोरपि ॥ १६० ॥  
 तुपारो हिमतद्भेदश्लेकरे तद्वति त्रिषु ।  
 कषायशृङ्गवृषयोः श्मश्रुपुंसि तु तूवरः ॥ १६१ ॥  
 स्यात्त्वक्पत्री तु कारव्यां त्वक्पत्रं तु वराङ्गके ।  
 दण्डारः कुम्भकृच्चके वहने मत्तवारणे ॥ १६२ ॥

जमुरि-वज्र ( पुं० )  
 जमुरि-अग्नि ( पुं० )  
 झर्झर-कलियुग, वाद्यभाण्ड, एक नद,  
 ( पुं० ) ॥ १५७ ॥  
 झल्लरी-झल्लरी-हुडुब-बाजा, बा-  
 लोंका चक्र, ( स्त्री० )  
 टगर-मुहागा, काणा, हेला ( लीला )  
 विभ्रम ( स्त्रीकरण ) विषय, ( पु० )  
 ॥ १५८ ॥  
 टङ्कार-धनुषकी ज्याका शब्द, प्रसिद्धि,  
 आश्चर्य, ( पु० )  
 डिङ्गर-क्षेप ( फेंकनेकी वस्तु ) ( त्रि० )  
 डिङ्गर-डंगर ( पुं० ) ॥ १५९ ॥  
 तिमिर-नेत्ररोग, अंधकार, ( न० )

तीवर-व्याधा, समुद्र, ( पुं० )  
 तुम्बरी-वृत्ती, अदरक, धनिया  
 ( स्त्री० ) ॥ १६० ॥  
 तुपार-हिम ( पाला ), हिमभेद,  
 श्लेकर ( जलमण ) ( पुं० ) इन  
 बाला ( त्रि० )  
 तूवर-कंसला रस, वहे सींगोंवाला-  
 बँल, वडी मूछडादीवाला पुरुष  
 ( पुं० ) ॥ १६१ ॥  
 त्वक्पत्री-हींगपत्री, ( स्त्री० )  
 त्वक्पत्र-स्त्रीकी योनि ( न० )  
 दंडार-कुम्हारका चाक, सवारी,  
 उन्मत्तहत्ती, ॥ १६२ ॥

शरयन्ने दन्तुरस्तु विपमोन्नतदन्तयो ।  
 दहरो मूपिकाया स्यात्सल्पभ्रातरि बालके ॥ १६३ ॥  
 दह्वरः शैलभेदे स्यात्किञ्चिद्भ्रमे तु वाच्यवत् ।  
 दर्दुरो भेकघनयोर्वाद्यभाण्डाद्रिभेदयो ॥ १६४ ॥  
 दर्दुरा हरकान्ताया ग्रामजाले तु दर्दुरम् ।  
 दासेरो दासिकापत्ये त्रिषु पुंसि क्रमेलके ॥ १६५ ॥  
 दीनारो नाणके स्वर्णमानभेदेऽपि दृश्यते ।  
 दुर्द्धरं त्रिषु दुर्द्धार्ये पुमास्तु ऋषभौपथौ ॥ १६६ ॥  
 दैत्यारिखिदिवे विष्णौ द्वापरः सशये युगे ।  
 धूसरस्तु खरे स्वल्पपाण्डुरे तद्वति त्रिषु ॥ १६७ ॥  
 नरेन्द्रः पृथिवीनाथे विपवेद्येऽपि वार्षिके ।  
 गजादौ सरलादयोर्निष्फलाया च नर्मरा ॥ १६८ ॥

शरयन्ने, ( पु० )  
 दन्तुर—उंचानीचा, उंचे दाँतोंवाला  
 ( पु० )  
 दहर—छोटा मूसा, छोटा भ्राता, बालक  
 ( पु० ) ॥ १६३ ॥  
 दर्दुर—पर्वतभेद ( पु० ) कुलक फूटा  
 हुवा पात्र आदि ( त्रि० )  
 दर्दुर—नेडक, मेघ, वाद्यभेद, पर्वत  
 भेद, ( पु० ) ॥ १६४ ॥  
 दर्दुरा—पावती, ( स्त्री० )  
 दर्दुर—ग्रामजाल, ( न० )  
 दासेर—दासीकी सतान ( त्रि० ) ऊँट  
 ( पु० ) ॥ १६५ ॥

दीनार—नाणा ( द्रव्यमात्र ), स्वर्णमा-  
 नभेद, ( पु० )  
 दुर्द्धर—दु खसे धारनेके योग्य, ( त्रि० )  
 ऋषभ—आपथि ( पु० ) ॥ १६६ ॥  
 दैत्यारि—देवता, विष्णु, ( पु० )  
 द्वापर—सदेह, द्वापर—युग ( पु० )  
 धूसर—गर्दभ, गोडापीला रंग, ( पु० )  
 धोडापीलारंगवाला ( त्रि० ) १६७  
 नरेन्द्र—गजा, विपवेद्य, शक्ति ( आ  
 जीविका ) देनेवाला, हस्तीआदि,  
 ( पु० )  
 नर्मरा—त्रिधारा, गुफा, कलारहिता  
 ( स्त्री० ) ॥ १६८ ॥

नागरो नगरोद्भूते विदग्धेऽप्यभिधेयवत् ।

नागरं मस्तके शुण्ठवां रतभेदेऽपि नागरम् ॥ १६९ ॥

निकरो निवहे सारे न्यायदेयधनान्तरे ।

निकारः स्यात्परिभवे धानस्योत्क्षेपणेऽपि च ॥ १७० ॥

सूर्याश्चे फेनकर्पासतुपवह्निषु निर्झरः ।

निर्झरस्त्रिदशे त्यक्तजराके र्वभिधेयवत् ॥ १७१ ॥

निर्झरा तु गुड्मच्यां स्यात्तालपत्र्यां च दृश्यते ।

निर्वरं निल्लपे सारे निर्भये कठिनेऽपि च ॥ १७२ ॥

निष्ठुरः कठिनेऽपि स्यान्नपाशून्येऽपि निष्ठुरः ।

स्यान्नीवरो वाणिजके वास्तव्ये त्रिषु नीवरः ॥ १७३ ॥

पङ्कारः सेतुसोपानशैवले जलकुञ्जके ।

पञ्जरस्तु शरीरे स्यात्पक्षिपाशे तु पञ्जरम् ॥ १७४ ॥

नागर-नगरमें होनेवाला, चतुर,  
( त्रि० )

नागर-नागरमोथा, सोंठ, मैथुनभेद  
( न० ) ॥ १६९ ॥

निकर-समूह, सार, न्यायसे देनेयो-  
ग्य धन, ( पुं० )

निकार-तिरस्कार, धान्यका पिछो-  
दना, ( पु० ) ॥ १७० ॥

निर्झर-सूर्यका घोडा, शाग, कपास,  
तुपोंकी आदि, ( पुं० )

निर्झर-देवता, ( पुं० ) वृद्धावस्थार-  
हित ( त्रि० ) ॥ १७१ ॥

निर्झरा-गिलोय, तालपर्णा, ( स्त्री० )  
निर्वर-निल्लज, सार, निर्भय, कठिन  
( त्रि० ) ॥ १७२ ॥

निष्ठुर-कठिन, लज्जारहित, ( त्रि० )  
नीवर-वाणिजकरनेवाला ( पुं० )  
बसनेवाला, ( त्रि० ) ॥ १७३ ॥

पङ्कार-पुल, पैड़ी, सिवाल, काई(पुं०)  
पञ्जर-शरीर ( पुं० )

पञ्जर-पक्षीका पिंजरा ( न० ) १७४

पादालिन्दे पदारः स्यात्पदारः पादधूलिषु ।  
 पवित्रमुपवीतांबुताम्रे दर्भेऽपि धर्मणि ॥ १७५ ॥  
 मेघे त्रिष्वथ पाटीरः केदारे तितउन्यपि ।  
 मूलके वार्तिके वङ्गे वेणुसारेऽपि बारिदे ॥ १७६ ॥  
 पाण्डुरं स्यान्मरुबके वर्णे ना तद्वति त्रिषु ।  
 पामरो वाच्यवत्रीचे मूर्खे स्वस्येऽपि पामरः ॥ १७७ ॥  
 राजयश्मणि कीनाशे भक्तशिक्षथेपि पार्षरः ।  
 पार्षरो भस्ममात्रेऽपि जठरे नीपकेसरे ॥ १७८ ॥  
 पिञ्जरं कनके पीते त्रिषु पुंसि हयान्तरे ।  
 पिठरस्तु मतः स्थाल्यां पिठरं मन्थमुस्तयोः ॥ १७९ ॥  
 पिण्डारो महिषीपाले क्षेपक्षपणशाखिषु ।  
 पीवरः कच्छपे पुंसि पीनेषु त्रिषु पीधरः ॥ १८० ॥

पदार—पादालिन्द, पावोंकी धूलि  
( पुं० )

पवित्र—यज्ञोपवीत, जल, तौबा, कुशा,  
धर्म ( न० ) पवित्र ( त्रि० ) ॥ १७५ ॥

पाटीर—खेत, चलनी, मूली, वार्तिक  
( वृत्तिकरनेवाला ), रांगा, सरलवा  
गौद, मेघ, ( पुं० ) ॥ १७६ ॥

पाण्डुर—भस्मा ( न० ) धतरंग ( पुं० )  
श्वतरंगवाला ( त्रि० )

पामर—नीच, मूर्ख, स्वस्य ( श्रुतिमें  
स्थित ) ( त्रि० ) ॥ १७७ ॥

पार्षर—राजयश्मा रोग, धर्मराज

या मृत्यु, जठार ( जयवाला ),  
कद्वकेसर, ( पु० ॥ १७८ ॥

पिञ्जर—मुवर्ण ( न० ) पीलारंगवाला  
( त्रि० ) अश्वमेद ( पुं० )

पिठर—चावल आदि पकानेका वर्तन,  
( पुं० ) दधिआदिमयनेका दंड,  
नागरमोथा, ( न० ) ॥ १७९ ॥

पिण्डार—भैंसोंका पालनेवाला, क्षेप  
( फेंकनेका द्रव्य ), मिथुन, वृश्च,  
( पुं० )

पीवर—कच्छुवा, ( पुं० ) मोटा ( स्थूल )  
( त्रि० ) ॥ १८० ॥

पुष्करं व्योम्नि पानीये हस्तिहस्ताग्रपद्मयोः ।

रोगोरगौषधिद्वीपतीर्थभेदेऽपि सारसे ॥ १८१ ॥

काण्डे खड्गफले वाद्यभाण्डवक्त्रे च पुष्करम् ।

प्रकरो निकुरुम्ये स्यात्प्रकीर्णकुसुमादियु ॥ १८२ ॥

प्रकरं जोङ्गके जेयं प्रकरी चत्वरावनौ ।

प्रकारः सदृशे भेदे प्रखरोऽतिखरे त्रिषु ॥ १८३ ॥

प्रखरः स्यात्तुरङ्गादिसन्नाहेऽश्वतरे शुनि ।

प्रदरः स्त्रीरुजो भेदे प्रदरः शरभङ्गयोः ॥ १८४ ॥

प्रान्तरं दूरशून्याऽध्ववनयोरपि कोटरे ।

प्रवीरः सुभटेऽपि स्यात्प्रवीरः कचिदुत्तरे ॥ १८५ ॥

प्रवरं सन्ततौ गोत्रे प्रवरस्तु वनेऽन्यवत् ।

प्रकारः सङ्करे वेशे प्रसरः प्रणयेऽपि च ॥ १८६ ॥

पुष्कर-आकाश, जल, हस्तीकी सँ-  
डका अग्रभाग, कमल, रोगभेद,  
सर्पभेद, औषधिभेद ( कूट ),  
पुष्करनामक द्वीप, पुष्करतीर्थ, सार-  
स-पक्षी, ( त्रि० ) ॥ १८१ ॥  
वाण, खड्गकी मूठ, वाद्यभाण्डका मुख  
( पुं० न० )

प्रकर-समूह, बिखरेहुए पुष्पआदि,  
( पुं० ) ॥ १८२ ॥

प्रकर-अगर ( न० ) प्रकरी-  
औगनकी भूमि ( स्त्री० )

प्रकार-सदृश ( तुल्य ), भेद ( पुं० )

प्रसर-आतिवांश ( त्रि० ) ॥ १८३ ॥

अश्वआदिका कवच, सिखर, कुत्ता  
( पुं० )

प्रदर-स्त्रीका रोगभेद ( पैरा ), वाण,  
भग, ( पु० ) ॥ १८४ ॥

प्रान्तर-लवा और जलआदिसे  
शून्यमार्ग, वनवृक्षके भीतरकी थोथ,  
( न० )

प्रवीर-अच्छा योद्धा, उत्तर ( पुं० )  
॥ १८५ ॥

प्रवर-सन्तति, गोत्र, ( न० )

प्रवर-भेष्ट ( त्रि० )

प्रकार-संग्राम, वेश, ( पुं० )

प्रसर-नम्रता, ( पुं० ) ॥ १८६ ॥



प्रस्तरः पुंसि पापाणे मणौ च प्रस्तरः पुमान् ।  
 वण्ठरस्तु करीरस्य कोपे स्यात्तालपल्लवे ॥ १८७ ॥  
 वकोटे स्थगिकारज्जी लाङ्गुले कुङ्कुरस्य च ।  
 वदरी कोलिकापार्स्योर्वदरं तु फले तयोः ॥ १८८ ॥  
 एलापर्ण्या तु वदरा विष्णुकान्तौपधावपि ।  
 वन्धूरवन्धुरौ रम्ये नम्रे त्रिप्वय वन्धुरः ॥ १८९ ॥  
 वन्धूके विहगे हंसे वन्धुरं तून्नतानते ।  
 वन्धुरा पण्ययोपायां वरत्रा वध्निकान्ययोः ॥ १९० ॥  
 वर्वरः केशविन्यासे पारसीकेऽपि पामरे ।  
 वर्वरा फल्लिकायां च वर्वरा शाकपुष्पयोः ॥ १९१ ॥  
 वागरो निर्नरे शाणे वारके वारवेष्टयोः ।  
 वागरो विगतातङ्के मुमुक्षौ च विशारदे ॥ १९२ ॥

प्रस्तर—पत्थर, मणि, ( पुं० )

वण्ठर—कैरफा कोश, ताडके पल्लव  
( पत्ते ) ( पुं० ) ॥ १८७ ॥ कुत्तेकी  
पुं० ( पु० )

वदरी—बेरी—वृक्ष, कपास ( स्त्री० )  
वदर—बेर या कपासका फल ( न० )  
॥ १८८ ॥

वदरा—रायसन—ओषधि, विष्णुकान्ता  
ओषधि ( स्त्री० )

वन्धू(न्धु)र—रमणीक, नम्र, ( त्रि० )

वन्धुर— ॥ १८९ ॥

विजयसार, या दुपहरिया—वृक्ष,  
पक्षी, हंस, ( पुं० )

वन्धुर—ऊंचानीचा ( न० )

वन्धुरा—वैद्या, ( स्त्री० )

वरत्रा—चमरंज्जु, अन्यरंज्जु, ( स्त्री० )  
॥ १९० ॥

वर्वर—केशोंकी रचना, पारसीक—देश,  
नीच, ( पुं० )

वर्वरा—भारंगी, शाकभेद, पुष्पभेद,  
( स्त्री० ) ॥ १९१ ॥

वागर—मनुष्यरहित स्थल, कसौटी,  
भासवार,.....

आतक ( रोगादि ) रहित, मुमुक्षु,  
विशारद ( बुद्धिमान् ) ( पुं० )

॥ १९२ ॥

वासरो दिवसे पुंसि नागभेदेऽपि वासरः ।

वासुरा वासिताया स्यान्निशाभूम्योश्च वासुरा ॥ १९३ ॥

भार्यारुः क्रीडया यस्य पुत्रोऽभूत्परयोपिति ।

तस्मिन्मृगाद्रिभेदे च भास्करो वह्निसूर्ययोः ॥ १९४ ॥

भृङ्गारी शिल्लिकायां स्याद्भृङ्गारः कनकालुके ।

भ्रमरः कामुके भृङ्गे भ्रामरं माक्षिकाशगयो ॥ १९५ ॥

मकरस्तु मराले स्यान्निधिराशिप्रभेदयो ।

मकुरो मुकुरश्चैव दर्पणे वकुलद्रुमे ॥ १९६ ॥

मत्सरोऽन्यशुभद्वेषे मात्सर्ये ऋधि मत्सरः ।

त्रिषु तद्वत्कृष्णयोर्मक्षिकाया तु मत्सरा ॥ १९७ ॥

मन्दारः सिन्धुरे धूर्ते मधुद्रौ भृङ्गकामिनो ।

मधुरस्तु रसे पुंसि मधुरं तु विपान्तरे ॥ १९८ ॥

वासर-दिन ( पु० ) नागभेद,  
( पु० )

वासुरा-हथिनी, रात्रि, पृथ्वी,  
( स्त्री० ) ॥ १९३ ॥

भार्यारु-क्रीडाकरते जिसके परस्त्रीमे  
पुत्र हुवा है वह, मृगभेद, पर्वतभेद,  
( पु० )

भास्कर-अग्नि, सूर्य, ( पुं० ) ॥ १९४ ॥

भृङ्गारी-शिल्लिका ( भौं, भी, बोलनेवाला  
कीटविशेष ) ( स्त्री० )

भृङ्गार-शारी ( पु० )

भ्रमर-कामी-पुरुष, भौरा, ( पुं० )

भ्रामर-शहद, पक्षर ( न० )  
॥ १९५ ॥

मकर-हंस पक्षी, निधिभेद, राशिभेद,  
( पु० )

मकुर-मुकुर-दर्पण, बौलथ्रीका वृक्ष,  
( पु० ) ॥ १९६ ॥

मत्सर-दूसरेके शुभका द्वेष, मत्सरता,  
क्रोध ( पु० )

मत्सरता वाला, द्वेषण ( त्रि० )

मत्सरा-मम्षी ( स्त्री० ) ॥ १९७ ॥

मन्दार-हस्ता, धूर्त, महुवा-वृक्ष,  
भौरा, कामीपुरुष, ( पु० ) ॥ १९८ ॥

मधुरो रसवत्त्वादुमियेषु त्रिषु वाच्यवत् ।

मधुरा मधुकुक्कुट्यां शतपुष्पाऽपुरीभिदोः ॥ १९९ ॥

मिश्रेयाश्चक्रयोर्मैदामधुलीयष्टिकासु च ।

मन्थरः सूचके कोशे मन्थानेऽप्यथ मन्थरम् ॥ २०० ॥

कुसुंभ्यां मन्थरस्तु स्यान्मन्दे वक्त्रे पृथौ त्रिषु ।

मन्दारः स्वर्गमन्दारमन्थशैलेषु पुंस्ययम् ॥ २०१ ॥

मन्दरस्तु मतो मन्दे वहलेऽप्यभिधेयवत् ।

मन्दिरं नगरेऽगारे मन्दिरो मकरालये ॥ २०२ ॥

मंदारो देववृक्षे स्यात्पारिभद्रार्कपर्णयोः ।

मन्दुरा वाजिशालाया शयनीयार्थवस्तुनि ॥ २०३ ॥

मयूरः शिस्यपामार्गशिखिचूडासु दृश्यते ।

मर्मरौ वल्लभेदेऽपि पत्रभेदेऽपि मर्मरः ॥ २०४ ॥

मधुर—मधुर रसवाला, (पुं०) त्रिप-

भेद (न०) स्वादिष्ट, प्रिय, (त्रि०)

मधुरा—एकप्रकारका नींबू, सौंफ, पुरीभेद (मधुरा) ॥ १९९ ॥

सोआ, चीता-वृक्ष, महामेदा, राई, जेठीमध (स्त्री०)

मन्थर—सूचना करनेवाला, कोश (खजाना) (पुं०)

मन्थर—दधिमथनेका ढंडा, (न०) ॥ २०० ॥

मन्थर—कुसुभी, (.....) मन्द, टेडा, स्थूल (त्रि०)

मन्दार—स्वर्ग, मन्दार-वृक्ष (देवतरु),

मन्थपर्वत, (पुं०) ॥ २०१ ॥

मन्दर—मन्द, बहुत (त्रि०)

मन्दिर—नगर, घर, (न०) मन्दिर-नगरका स्थान, (पुं०) ॥ २०२ ॥

मन्दार—देव-वृक्ष, निंब वृक्ष, आकका पत्ता, (पुं०)

मन्दुरा—अश्वशाला, शय्याकी उपयोगी वस्तु (स्त्री०) ॥ २०३ ॥

मयूर—मोर, चिरन्विता, मोरशिखा, (पुं०)

मर्मर—वल्लभेद, पत्रभेद, अर्थात् वल्ल व पत्रका शब्द, (पुं०)

॥ २०४ ॥

मर्मरी दारुवर्णिन्यां पीतदारौ च मर्मरी ।  
 मसुरो मसुरश्चैव व्रीहिमित्पण्ययोपितोः ॥ २०५ ॥  
 मसूरा मसूरा चात्र मसूरी पापरुग्भिदि ।  
 मिहिरस्तपने बुद्धे महेन्द्रे वासवे गिरौ ॥ २०६ ॥  
 स्यात्पारिपार्श्विके भानोर्द्विजभेदेऽपि माठरः ।  
 मायूरं चापि मार्जारं क्रीडावन्धे च तद्गणे ॥ २०७ ॥  
 मार्जार ओतौ खट्वाशे मुदिरः कामुकेऽम्बुदे ।  
 लोष्टादिभेदनोपाये मल्लीभेदेऽपि मुद्गरम् ॥ ॥ २०८ ॥  
 मुर्मुः सूर्यतुरगे तुपवहौ च मन्मथे ।  
 मुहिरः पुंसि मदने मूर्खे तु मुहिरस्त्रिषु ॥ २०९ ॥  
 रुधिरं कुङ्कुमे रक्ते रुधिरो मूमिनन्दने ।  
 वठरः कमठेऽपि स्याद्द्वठरः शठवस्त्रयो ॥ २१० ॥

मर्मरी-दारुवर्णिनी ( .. ) देव दारु ( स्त्री० )	मार्जार-बिलाव ( मार्जार ), खट्वाश ( वनमार्जार ) ( पु० )
मसूर-मसुर-व्रीहिभेद, ( पुं० )	मुदिर-कामीपुरुष, मेघ, ( पुं० )
मसूरा-मसूरा-वेदया ( स्त्री० ) ॥ २०५ ॥	मुद्गर-डला आदिके फोडनेका अन्न, मल्लिका ( मोतिया ) भेद ( न० ) २०८
मसूरी-पाप और रोगभेद, ( स्त्री० )	मुर्मु-सूर्यका अथ, तुपकी अग्नि, कामदेव ( पुं० )
मिहिर-सूर्य, बुद्ध भगवान् ( पु० )	मुहिर-कामदेव, ( पुं० ) मूर्ख ( त्रि० ) ॥ २०९ ॥
महेन्द्र-इंद्र, पर्वत, ( पुं० ) ॥ २०६ ॥	रुधिर-केसर, लोही, ( न० ) रुधिर- मंगल-ग्रह ( पुं० )
माठर-सूर्यके समीप होनेवाला एक ग्रह, द्विज ( ब्राह्मण ) भेद ( पु० )	वठर-बहुवा, शठ, वस्त्र ( पु० ) ॥ २१० ॥
मायूर-मार्जार-क्रीडावन्ध, (... ) और कमठे मयूर व मार्जारों ( बिलाओं ) का समूह ( न० ) ॥ २०७ ॥	

विधुरा तु रसालायां विधुरं विकलेन्यवत् ।

विवरं वर्त्तते गर्ते दोषेऽपि छिद्ररन्ध्रवत् ॥ २१७ ॥

विसरः प्रसरे पुंसि विसरो निकुरम्बके ।

विस्तरः पुंसि विस्तारे प्रपञ्चे प्रणयेऽपि च ॥ २१८ ॥

विस्तारः पुंसि विटपे विस्तारो विस्तृतावपि ।

विष्टरः कुशमुष्टौ स्यादासनेऽपि महीरुहे ॥ २१९ ॥

विहारो भ्रमणे स्कन्धे सुगतालयलीलयोः ।

छन्दोभेदे नदीभेदे मेखलायां च शक्करी ॥ २२० ॥

शङ्करः पार्वतीनाथे त्रिषु कल्याणकारिणि ।

शणीरं शोणमध्यस्थपुलिने दर्दरीतटे ॥ २२१ ॥

शर्करा शर्करायुक्तदेशे स्यात्कर्पूरांशके ।

ले खण्डविकृतावुपलाया च तद्भिदि ॥ २२२ ॥

मर्मरी-दाखणि

दाख ( स्त्री० ) -दाख, या सिखरन, ( स्त्री० )

मसूर-मसूर-विकल, ( त्रि० )

मसूरा-मसूरा-खट्टा, दोष, ( न० ) ( ऐसे

॥ २०५ ॥ छेद्र-रन्ध्र-जानना ॥ २१७ ॥

मसूरी-पाप-कैलना, समूह ( पुं० )

मिहिर-स-तर-विस्तार, प्रपंच, नन्नता

महेन्द्र-पुं० ) ॥ २१८ ॥

माडर-विस्तार-वृक्षकी टहनी आदि,

विस्तार ( पुं० )

विष्टर-कुशमुष्टि, आसन, वृक्ष ( पु० )

॥ २१९ ॥

नूका मंदिर, लीला ( पुं० )

शक्करी-छन्दोभेद, नदीभेद, मेखला

( तागडी ) ( स्त्री० ) ॥ २२० ॥

शंकर-महादेव ( पुं० ) कल्याण

करनेवाला ( त्रि० )

शणीर-शोणनदके मध्यका टीला,

( नदीभेद ) का किनारा ( न० )

॥ २२१ ॥

शर्करा-शर्करा ( बली ) युक्त स्थल,

खप्परका टुकडा, टुकडामात्र,

खौंडका विकार (शक्कर), पत्थरभेद,

( स्त्री० ) ॥ २२२ ॥

शर्वरी तु त्रियामायां हरिद्रायोपितोरपि ।  
 श(घ)वरो म्लेच्छभेदेऽपि शवरः शङ्करे जले ॥ २२३ ॥  
 शकरस्तु वलीवर्दे छन्दोभेदे तु शाकरम् ।  
 शाङ्करिर्विघ्नपे स्कन्दे शारीरो देहजे वृषे ॥ २२४ ॥  
 शार्करो दुग्धफेने स्याद्वाच्यवच्छर्करावति ।  
 शार्वरं त्वन्वतमसे घातुके त्रिषु शार्वरम् ॥ २२५ ॥  
 शालारं स्याद्धस्तिनखे सोपाने पक्षिपञ्जरे ।  
 शावरो लोध्रवृक्षे स्यात्तथा पापाऽपराधयोः ॥ २२६ ॥  
 शावरी शूकशिम्ब्यां च तद्भवे त्रिषु शावरम् ।  
 शिखरं शैलवृक्षाम्ने कक्षापुलकक्रोडिषु ॥ २२७ ॥  
 पकदाडिमबीजाभमाणिक्यशकलेऽपि च ।  
 शिलीन्ध्रस्तु पुमान्मीनभेदे वृक्षप्रभेदयोः ॥ २२८ ॥

शर्वरी—रात्रि, हलदी, स्त्री ( स्त्री० )  
 शव(घ)र—म्लेच्छभेद, महादेव, जल  
 ( पुं० ) ॥ २२३ ॥

शकर—बैल ( पुं० )  
 शाकर—छन्दोभेद ( न० )  
 शांकरि—गणेश, स्वामिकार्तिक, ( पु० )

शारीर—शरीरसे उत्पन्न होनेवाला  
 ( त्रि० ) बैल ( पुं० ) ॥ २२४ ॥

शार्कर—दूधके क्षाग ( पुं० ) शर्करा  
 ( डलियो ) बाला देश ( त्रि० )

शार्वर—अधकार, ( न० )

शार्वर—जीवोंको मारनेवाला ( त्रि० )  
 ॥ २२५ ॥

शालार—पुरदारवाजाका खडंजा,  
 पैडी, पक्षीका पिंजरा ( न० )

शावर—लोध्र-वृक्ष, पाप, अपराध,  
 ( पुं० ) ॥ २२६ ॥

शावरी—कौल, ( स्त्री० ) शावर-  
 कौलकी फली आदि ( त्रि० )

शिखर—पर्वत या वृक्षकी चोटी,  
 धुधुची, मुरदासग या हरताल  
 कोटि (असवरग) ( न० ) ॥ २२७ ॥  
 पकेहुए अनारके बीजोंके तुल्य  
 माणिक्यका टुकड़ा ( न० )

शिलीन्ध्र—मीन ( मच्छो ) भेद,  
 वृक्षभेद ( पुं० ) ॥ २२८ ॥

शिलीन्ध्रं कवके रम्भापुष्पत्रिपुटयोरपि ।  
 शिलीन्ध्री विहगीभेदे तथा गण्डूपदीमृदि ॥ २२९ ॥  
 शिशिरस्तु ऋतौ पुंसि तुपारे शीतलेऽन्यवत् ।  
 शीकरः शरले वाते नि.सृताम्बुरुणेपु च ॥ २३० ॥  
 शुपिरं विवरे वाधे नाऽग्नौ रन्ध्रवति त्रिपु ।  
 शृङ्गारः सुरते नाख्यरसे द्विरदभूपणे २३१ ॥  
 शृङ्गारं चूर्णसिन्दूरे लवङ्गकुसुमे मतम् ।  
 सङ्कारोऽग्निचटत्कारे सम्मार्जन्यपमार्जिते ॥ २३२ ॥  
 नरदूषितकन्याया सङ्करी कचिदिप्यते ।  
 सङ्गरस्तु प्रतिज्ञाजिक्रियाकारे विपापदोः ॥ २३३ ॥  
 सङ्गरं स्यात्फले शम्याः सम्भारः सम्भृतौ गणे ।  
 संवरस्तु मृगक्षमाभृद्वैत्यमत्स्यजिनान्तरे ॥ २३४ ॥

शिलीन्ध्र-कवक (मत्स्यभेद) केलाका पुष्प, मटर, ( न० )	संकार-अग्निचा चटत्कार ( शब्द ), झाड़से इकट्टाकिया कूडा, ( पुं० ) ॥ २३२ ॥
शिलीन्ध्र-पक्षिभेद-सादीन, गिँडो एकी मिट्टी ( स्त्री० ) ॥ २२९ ॥	संकर-ननुष्यसे दूषितहुई कन्या ( स्त्री० )
शिशिर-शिशिर-ऋतु ( पुं० ) पाला, ठण्डा ( त्रि० )	संगर-प्रतिज्ञा, युद्ध, क्रियाकरनेवाला विप, विपत् ( पुं० ) ॥ २३३ ॥
शीकर-सरल-वृक्ष, वायु, वायुके प्रेरेहुए जलरूप ( पुं० ) ॥ २३० ॥	संगर-जाटकी फली ( साँगर ) ( न० )
शुपिर-भूमिछिद्र, बाजा, अग्नि ( पुं० ) छिद्रवाला ( त्रि० )	संभार-सामग्री, समूह ( पु० )
शृङ्गार-मैधुन, शृङ्गार रस, हस्तीका आभूषण ( पुं० ) ॥ २३१ ॥	संवर-मृग, पर्वत, एक दैत्य, मच्छी, जिन भगवान् ( पुं० ) ॥ २३४ ॥
शृङ्गार-चूर्ण ( पिसा हुआ ) सिंदूर, लौकका पुष्प ( न० )	

संवरं सलिले बौद्धमतभेदे घनेऽपि च ।  
 संवरी त्वौपधीभेदे सामुद्रं त्वङ्गलक्षणे ॥ २३५ ॥  
 सामुद्रं स्यात्समुद्रीयलवणादिषु धाच्यवत् ।  
 सावित्री देवताभेदे सावित्रः पार्वतीपति ॥ २३६ ॥  
 सिन्दूरस्तरुभेदे ना सिन्दूरं रक्तवालुके ।  
 सिन्दूरमपि सिन्दूरयुक्तलेखे महीभृताम् ॥ २३७ ॥  
 सिन्दूरी धातकीरक्तचेलिकारोचनीष्वपि ।  
 सुन्दरी नायिकाभेदे तरुभेदेऽपि सुन्दरी ॥ २३८ ॥  
 सुनारस्तु शुनीस्तन्ये सर्पाण्डकल्बिद्भयोः ।  
 सैरिन्धी परवेशमस्यशिल्पकृत्स्ववशस्तियाम् ॥ २३९ ॥  
 वर्णसङ्करजायादौ वधाधां च महल्लके ।  
 सौवीरं काञ्चिके सोतोऽने बदरदेशयोः ॥ २४० ॥  
 संस्कारः पुंस्यनुभवे सङ्कल्पप्रतियत्तयोः ।  
 संस्तरः प्रस्तरे पुंसि पुंसि यज्ञेऽपि संस्तरः ॥ २४१ ॥

संवर—जल, बौद्धमतभेद, घन (न०)	सिन्दूरी—धायके पुष्प, रक्तवोरीवाली
संवरी—औपधीभेद ( स्त्री० )	स्त्री, गोरोचन ( स्त्री० )
समुद्र—अगोत्रा शुभाशुभ लक्षण ( न० ) ॥ २३५ ॥	सुन्दरी—नायिकाभेद, वृक्षभेद, ( स्त्री० ) ॥ २३८ ॥
सामुद्र—सामुद्रमें होनेवाला लक्षण ( नमक ) आदि ( त्रि० )	सुनार—उत्तीका दूध, सर्पिणीका अंश, बिडा—पक्षी ( पुं० )
सावित्री—देवताभेद, ( स्त्री० )	सैरिन्धी—दूगरेके परमें स्थितहुई मी स्त्री अपने वसा रहकर शिल्प- करनेवाली ( स्त्री० ) ॥ २३९ ॥
सावित्र—पार्वतीपति ( महादेव ) ( पुं० ) ॥ २३६ ॥	सौवीर—कौन्डी, सीसा, घेर, सौवीर- देश ( न० पुं० ) ॥ २४० ॥
सिन्दूर—वृक्षभेद ( पु० )	संस्कार—अनुभव, संकल्प, जनन(पुं०)
सिन्दूर—रक्तवालुक ( सिद्ध ), राजा- ओंका सिद्धरयुक्त लेख ( न० ) २३७	संस्तर—गघर, यज्ञ ( पुं० ) ॥ २४१ ॥



हिण्डीरस्तु पुमान्फेने तथा वातिङ्गने नरि ।

रचतुर्थम् ।

अकूपारः खवन्तीनां नाथे कर्मठनायके ॥ २४२ ॥

अग्निहोत्रो मतो वह्नौ वह्निहोत्रे हविष्यपि ।

अनुत्तरं त्रिषु श्रेष्ठे प्रतिवाक्यविवर्जिते ॥ २४३ ॥

उपर्युदोच्यश्रेष्ठानां विपर्यासे त्वनुत्तरः ।

वधे युद्धेऽप्यभिमरः खबलादपि साध्यसे ॥ २४४ ॥

अभिहारोऽभियोगे स्याच्चौर्ये सन्नहनेऽपि च ।

अरुष्करस्तु मल्लाते व्रणकारिणि वाच्यवत् ॥ २४५ ॥

अर्द्धचन्द्रस्तु खण्डेन्दौ गलहस्ते शरान्तरे ।

चन्द्रकेऽप्यर्द्धचन्द्रः स्यादर्द्धचन्द्रा त्रिवृद्धिदि ॥ २४६ ॥

अलङ्कारस्तु भूपायामुपमादिगुणेषु च ।

भवेदवसरः पुंसि मतः प्रस्ताववर्षयोः ॥ २४७ ॥

हिंडीर-समुद्रस्नान, वैगन, (पुं०)

रचतुर्थम् ।

अकूपार-समुद्र, कर्मठोंका अधिपति  
(पुं०) ॥ २४२ ॥

अग्निहोत्र-अग्नि, अग्निहोत्र, हवि  
(होमकरनेका द्रव्य) (पुं०)

अनुत्तर-श्रेष्ठ (त्रि०) उत्तर नहीं  
देना (न०) ॥ २४३ ॥

अनुत्तर-नहीं ऊपर (आगे), नदी  
उदीची (उत्तर), नहीं अश्रेष्ठ (त्रि०)

अभिमर-वध, युद्ध, अपनीसेनासे  
भय (पुं०) ॥ २४४ ॥

अभिहार-लुट्टाईमें पुकारना, चोरी,

कवच धारण करना (पुं०)

अरुष्कर-भिलावा (पुं०) मण  
(घाव) करनेवाला (त्रि०)

॥ २४५ ॥

अर्द्धचंद्र-आधाखिबवाला चंद्रमा, ग-  
लहस्त (तर्जनी अंगूठा फेंकाया हुआ

हाथसे प्रोवाके धक्का देकर निकाल-  
ना), बाणभेद, मोरकी पंख, (पुं०)

अर्धचंद्रा-निसोतभेद (स्त्री०)  
॥ २४६ ॥

अलंकार-आभूषण, उपमाआदि  
गुण (पुं०)

अवसर-प्रस्ताव, वर्षा, (पुं०) २४७

अवतारोऽवतरणे तीर्थं खातादिकैपि च ।

अवहारः पुमान्ग्रामे युद्धघृतादिविभ्रमे ॥ २४८ ॥

निमग्नणोपनेतव्ये द्रव्ये चोरे च सम्मतः ।

अवस्करः पुमान्पूथे गुह्येऽपि स्यादवस्करः ॥ २४९ ॥

भवेदश्वतरो वेगसरे नागाधिपान्तरे ।

असिपत्रं पुमान्कोपकारेऽपि नरकान्तरे ॥ २५० ॥

आडम्बरः करीन्द्राणां गर्जिते तूर्यनिस्वने ।

समारम्भे प्रपञ्चे च रचनाया च दृश्यते ॥ २५१ ॥

आत्मवीरो महाप्राणे श्यालपुत्रे विदूषके ।

इन्दीवरं कुवलये वर्यामिन्दीवरी स्त्रियाम् ॥ २५२ ॥

उदुम्बरो जन्तुफले देहल्यां लघुभेदके ।

उदुम्बरं कुष्ठभेदे ताम्रेऽपि स्यादुदुम्बरम् ॥ २५३ ॥

अवतार—अवतरण, तीर्थ, खात

( खोदाहुवा ) आदिक ( पुं० )

अवहार—ग्रामभेद, युद्धज्वाआदिसे

विभ्रम, ॥ २४८ ॥ शर्वराआदिसे

स्वादृष्ट किञ्चिद्रव्य, चोर ( पुं० )

अवस्कर—विष्टा, गुह्य ( शुभ )

( पुं० ) ॥ २४९ ॥

अश्वतर—वेगसर ( खचरा ), नागोका

स्वामी, ( पुं० )

असिपत्र—कोशवार ( कीट ), नरक

भेद, ( पुं० ) ॥ २५० ॥

आडम्बर—हस्तियोंका गर्जना, तूर्यका

शब्द, समारंभ, प्रपंच ( फैलाव ),

रचना ( पुं० ) ॥ २५१ ॥

आत्मवीर—बहुतपराक्रमवाला, सा-

लका पुत्र, विदूषक ( नाटकका

भंडुवा ) ( पुं० )

इन्दीवर—नीलाकमल ( न० )

इन्दीवरी—शतानर ( औषधि ),

( स्त्री० ) ॥ २५२ ॥

उदुम्बर—गूलर-वृक्ष, देहली, नपुंसक

( पुं० )

उदुम्बर—कुष्ठभेद, ताँबा ( न० ) २५३

उदन्तुरः स्यादुत्तुङ्गे करालोत्कटदन्तयोः ।

उपकारो मतः कीर्णकुसुमायुधकृत्ययोः ॥ २२४ ॥

उपह्वरं समीपे स्याद्रहोमात्रेऽप्युपह्वरम् ।

औदुम्बरः श्राद्धदेवे रोगभेदे नपुंसकम् ॥ २५५ ॥

कटम्भरा प्रसारिण्या रोहिणीकरियोषितोः ।

कलम्बिकायां गोलाया वर्षाभूमूर्वयोरपि ॥ २५६ ॥

करवीरोऽधमारे स्याद्वैत्यभेदकृपाणयो ।

सपुत्रादेवसूत्रेष्ठगवीषु करवीर्यपि ॥ २५७ ॥

मल्लिकाप्रतिहार्योस्तु करवीरी कचिन्मता ।

कार्णिकारो मतः पुसि शम्याके च द्रुमोत्पले ॥ २५८ ॥

कर्णपूरं कुवलयेऽप्यवतसशिरीषयो ।

त्रिषु कर्मकरो भृत्ये भृतिजीविनि कर्पके ॥ २५९ ॥

उदन्तुर-ऊँचा, भयकर, भयकर  
दौंतोवाला ( त्रि० )

उपकार-बिखराहुवा पुष्पआदि,  
हथियारसे कृत्य ( पु० ) ॥ २५४ ॥

उपह्वर-समीप, एकान्तमात्र ( न० )

औदुम्बर-धर्मराज ( पुं० ) रोग-  
भेद, ( न० ) ॥ २५५ ॥

कटम्भरा-पसरन, कुटकी, हथिनी,  
बलवी शाक, मनसिल, साँठी,  
मरोरफली, ( स्त्री० ) ॥ २५६ ॥

करवीर-बनेर, वैत्यभेद, तलवार  
( पु० )

करवीरी-पुनवाली स्त्री, देवमाता  
( अदिति ), श्रेष्ठ गौ, ॥ २५७ ॥

मल्लिका ( मोतियाभेद ), द्वारपा-  
लिनी ( स्त्री० )

कार्णिकार-अमलतास, छोटा संदल,  
( पु० ) ॥ २५८ ॥

कर्णपूर-कमल, कर्णआभूषण या शिर-  
आभूषण, तिरस-गृह्य ( न० )

कर्मकर-नौकर, नौकरीकी आजीवि-  
कावाला, किसान ( खेतीकरनेवाला )

( त्रि० ) ॥ २५९ ॥

मूर्वाया विम्बिकाया च स्त्रिया कर्मकरी क्वचित् ।  
फलिकारस्तु धूम्याटे पीतमुण्डे करञ्जके ॥ २६० ॥

कादम्बरस्तु दध्यग्रे मद्यभेदेऽपि न द्वयो ।  
कादम्बरी परभृतासीधुगी सारिकास्वपि ॥ २६१ ॥

कालंजरो योगिचक्रमेलके भैरवे गिरौ ।  
देशभेदेऽपि पार्वत्या भवेत्कालञ्जरी मता ॥ २६२ ॥

कुम्भकारः कुलाले स्यात्कुलध्या तु स्त्रियामपि ।  
कृष्णसारो मृगे पुंसि सुहीशिंशपयो स्त्रियाम् ॥ २६३ ॥

गङ्गाधरो गिरिसुतानाथे नाथे च पाथसाम् ।  
गिरिसारस्तु लौहे स्यान्मलयाचललिङ्गयो ॥ २६४ ॥

कम्बलच्छन्नदोलाया कुन्थाङ्गेऽपि गृहाम्बर ।  
घनसारोऽप्यु कर्पूरे दक्षिणावर्त्तपारदे ॥ २६५ ॥

कर्मकरी-पुरनहार या मत्तोरपली,  
कद्दुती, ( स्त्री० )

फलिकार-सुन्दरवर्द्धया-पक्षी, गुर  
सल पक्षी, वरञ्जका ( पु० ) २६०

कादम्बर-दहीकी मलाइ ( पु० )  
मद्यभेद ( न० )

कादम्बरी-कोयल, सीधु ( वाष्णी ),  
वाणी, मैना-पक्षी ( स्त्री० )

॥ २६१ ॥

कालंजर-योगिचक्रका मिलाप, भैरव,  
एकपर्वत, देशभेद, ( पु० )

कालञ्जरी-पार्वती ( स्त्री० ) २६२

कुम्भकार-कुम्हार, ( पु० ) कुम्भकारी-  
कुम्भी ( स्त्री० )

कृष्णसार-मृग ( पु० )  
कृष्णसारा-घोहर, शिंपा-वृक्ष

( स्त्री० ) ॥ २६३ ॥  
गङ्गाधर-महादेव, समुद्र ( पु० )

गिरिसार-लोहा, मलयाचल-पर्वत,  
लिङ्ग ( पु० ) ॥ २६४ ॥

गृहाम्बर-कम्बलसे ढकीहुइ डोली,  
सुदहीवाला मनुष्य, ( पु० )

घनसार-जल, कर्पूर, दक्षिणावर्त्त  
पार ( पु० ) ॥ २६५ ॥

भवेच्चक्रधरो विष्णौ मुजङ्गे ग्रामजालिनि ।

चराचरं तु भुवने स्यादिङ्गे जङ्गमे त्रिपु ॥ २६६ ॥

चर्मकारः पुमान्पादकृति चर्मकपौषधौ ।

चर्मकारी स्त्रियां चित्राटीरस्तु रजनीपतौ ॥ २६७ ॥

घण्टाकर्णबलिहतच्छागस्तिलकेऽपि च ।

जटाटीरो जटायां स्यादोफणे पार्वतीपतौ ॥ २६८ ॥

वरोहे पादपानां च समावेदोक्तवैजवे ।

रण्डायां तालपत्री स्यात्तालपत्रं तु कुण्डले ॥ २६९ ॥

तुङ्गभद्रा नदीभेदे तुङ्गभद्रो मदोत्कटे ।

तुण्डिकेरी तु कर्पास्यां बिम्बिकायामपि स्त्रियाम् ॥ २७० ॥

तुलाधारस्तुलाराशौ तुलाधारो वणिकृष्वपि ।

भवेत्तौयधरो मेघे मुस्तके सुनिपण्णके ॥ २७१ ॥

चक्रधर-विष्णु, सर्प, ... ( पुं० )

चराचर-जगत्, अभिप्रायके अनु  
रूप चेष्टा, जंगम ( चलनेवाला ),  
( त्रि० ) ॥ २६६ ॥

चर्मकार-चमार-जाति ( पुं० )

चर्मकारी-शोहरका भेद ( स्त्री० )

चित्राटीर-चंद्रमा, घंटाकर्णयक्षकी  
बलिके लिये माराहुवा वरुकाके  
रधिरका जिसने तिलक किया है  
वह, ( पुं० ) ॥ २६७ ॥

जटाटीर-जटा, महादेव, ( पुं० )

॥ २६८ ॥ वृक्षकी जडसे चलकर

आगेतक गई हुई शाखा ( पुं० )

तालपत्री-रंडा स्त्री, ( स्त्री० )

तालपत्र-कुंडल ( न० ) ॥ २६९ ॥

तुंगभद्रा-नदीभेद ( स्त्री० )

तुंगभद्र-मदोन्मत्त ( पुं० )

तुंडिकेरी-कपास, कन्दूरी, ( स्त्री० )

॥ २७० ॥

तुलाधार-तुला-राशि, वणियां, ( पुं० )

तौयधर-मेघ, नागरमोघा, चौप-  
तिया या सिरिआरी शाक, ( पुं० )

॥ २७१ ॥

यमे नृपे दण्डधरो दण्डधारो यमे नृपे ।

दण्डयात्रा दिग्विजये सयानवरयात्रयो ॥ २७२ ॥

इति दशपुरं देशे पुरगोनर्दयोरपि ।

दिगम्बरस्तु क्षपणे नमे ध्वान्ते च शूलिनि ॥ २७३ ॥

दरोदरं पणे घूते घूतकारे दुरोदरः ।

देहयात्रा मता मृत्यौ देहयात्राऽपि भोजने ॥ २७४ ॥

द्वैमातुरो जरासन्धे द्वैमातुर इमानने ।

धराधरश्चक्रधरे क्षमाधरे च धराधरः ॥ २७५ ॥

भवेद्धाराधरो वारिकाहिनिर्लिङ्गयो पुमान् ।

धाराङ्कुरस्तु ना सीरे करकाया च शीकरे ॥ २७६ ॥

धार्तराष्ट्रोऽसितैश्च्युपदैर्हसेऽपि कौरवे ।

सपेऽप्यथो धवतरौ पूर्वहे च धुरन्धर ॥ २७७ ॥

दण्डधर-धमराज, राजा, ( पु० )

दण्डधार-धमराज, राजा, ( पु० )

दण्डयात्रा-दिग्विजय, अन्धीतरह

यात्रा, श्रेष्ठ यात्रा, ( स्त्री० ) २७२

दशपुर-देश, पुर, केवगीमोषा,

( न० ) ।

दिगम्बर-मुनि, नाम, अधकार,

महादेव, ( पु० ) ॥ २७३ ॥

दुरोदर-गण, उवा, ( न० ) अवाकर

नेवाला, ( पु० )

देहयात्रा-मृत्यु, भोजन, ( स्त्री० )

॥ २७४ ॥

द्वैमातुर-जरासन्ध, गणरा, ( पु० )

धराधर-विष्णु पवत, ( पु० ) २७५

धाराधर-मष सप्त, ( पु० )

धाराङ्कुर-हृत्, ओश, वायुप्रेरित

जलबिन्दु ( पु० ) ॥ २७६ ॥

धार्तराष्ट्र-श्यामचोच चरणोवाला

हस्त, कौरव, सपभेद, ( पु० )

धुरधर-धव-शुश, धुरको बहनेवाला

बैठआदि, ( पु० ) ॥ २७७ ॥

धुन्धुमारः शक्रगोपे गृहधूमे पदालिके ।

धृतराष्ट्रस्त्वांशिकेये पक्षिभेदे सुराज्ञि च ॥ २७८ ॥

धृतराष्ट्री मता हंसपदीनामौषधान्तरे ।

नभश्चरो घने विद्याधरे वाते विहङ्गमे ॥ २७९ ॥

निशाचरः फेरबभूतरक्षोभुजङ्गघूकेषु निशाचरी तु ।

भवेदसत्यां हि निपद्मरः स्यात्पङ्के निशाया तु निपाद्वरी स्यात्

परम्परः प्रपौत्रादौ मृगभेदे परम्परः ।

परम्परा तु सन्ताने खड्गकोशे परिच्छदे ॥ २८१ ॥

भोत्परिसरो दैवोपात्ते मृत्युप्रदेशयोः ।

यूथत्रष्टृथकारिगजे पक्षचरो विधौ ॥ २८२ ॥

पात्रटीरो जरत्पात्रे मुक्तव्यापारमन्त्रिणि ।

सिद्धाणे लौहकांस्ये च जतुपात्रे च पाठके ॥ २८३ ॥

धुन्धुमार-बीरबहूटी, गृहधूम ( घर-  
का धुवा ), ( पु० )

धृतराष्ट्र-अश्विकाका पुत्र ( धृतराष्ट्र-  
राजा ), पक्षिभेद, श्रेष्ठराजा, ( पुं० )

॥ २७८ ॥

धृतराष्ट्री-लालरंगका लज्जात् ( स्त्री० )

नभश्चर-मेघ, विद्याधर, वायु, पक्षी,  
( पुं० ) ॥ २७९ ॥

निशाचर-गीदङ्ग, भूत, राक्षस,  
मर्ष, उल्लू पक्षी, ( पुं० )

निशाचरी-कुलटा स्त्री ( स्त्री० )

निपद्मर-कीच, ( पु० ) निपद्मरी-  
रतिरि ( स्त्री० ) ॥ २८० ॥

परम्पर-प्रपौत्र आदि, मृगभेद,  
( पुं० )

परम्परा-सन्तान ( वंश ), तलवारका  
म्यान, ढकनेवाला, ( स्त्री० ) ॥ २८१ ॥

परिसर-भाग्यवशसे प्राप्त, मृत्यु,  
प्रदेश, ( प्रान्त ) ( पुं० )

पक्षचर-समूहसे विच्छिन्नकर अलग  
विचरनेवाला हस्ती, चन्द्रमा, ( पुं० )

॥ २८२ ॥

पात्रटीर-व्यापाररहित मंत्री, नासि-  
काका मल, लोहेका पात्र, काँसीका-

पात्र, लाखका पात्र, अभि, ( पुं० )  
॥ २८३ ॥

पारावारः सरिक्ताथे पारावारं तद्व्यये ।

पारिभद्रः पुमान्निम्बतरौ मन्दारपादपे ॥ २८४ ॥

मत पीताम्बरश्चक्रपाणौ पीताम्बरो नटे ।

पीतसारस्तु गोमेदे मणौ मलयसम्भवे ॥ २८५ ॥

पूर्णपात्र तु सम्पूर्णपात्रे वर्धापकेऽपि च ।

यात्राया पटहे चैव पूर्णपात्रमिति स्मृतम् ॥ २८६ ॥

द्वारि द्वा स्वे प्रतीहारः प्रतीहारी त्वनन्तरा ।

पुसि प्रतिसरो माल्ये चमूपृष्ठेऽपि कङ्कणे ॥ २८७ ॥

भूपाया मणशुद्धौ च नियोज्याऽऽरक्षयोरपि ।

मन्त्रभेदे स्त्रिया पुसि हस्तसूत्रेऽपि न स्त्रियाम् ॥ २८८ ॥

समे प्रतिक्रियाया च प्रतीकारो भटेऽपि च ।

प्रभाकरोके दहने यक्रनक्रः शुके खले ॥ २८९ ॥

पारावार-समुद्र ( पु० ) पारावार  
दोनों तट ( न० )

पारिभद्र-नीच-वृक्ष, कम्पशुभेद  
( देवतट ), ( पु० ) ॥ २८४ ॥

पीताम्बर-विष्णु, नट, ( पु० )

पीतसार-गोमेद-मणि, मलयज  
( चदन ), ( पु० ) ॥ २८५ ॥

पूर्णपात्र-पूर्णहुवा पात्र, शक्तिकरने  
वाला, यात्रा, पट्ट ( यात्रा ), ( न० )  
॥ २८६ ॥

प्रतीहार-द्वार, द्वारपाल, ( पु० )

प्रतीहारी-द्वारपालनी ( स्त्री० )

प्रतिसर-माला, सेनापीठ, कङ्कण,  
॥ २८७ ॥ आभूषण, मणशुद्धि,  
प्रयोगके योग्य, हस्तिके हटाटका  
मर्म, मन्त्रभेद, ( स्त्री० पु० )  
हस्तसूत्र ( पु० न० )

प्रतीकार-तम ( तुल्य ), प्रतिक्रिया  
( बदला ), भट ( बोद्धा ), २८८

प्रभाकर-सूर्य, भूमि, ( पु० )

यक्रनक्र-सूबा, खल-पुरख, ( पु० )

॥ २८९ ॥



बलभद्रा कुमारीं स्यान्नायमाणे बले पुमान् ।  
 वार्वटीरखपौ चूतास्थ्यङ्कुरे गणिकामुत्ते ॥ २९० ॥  
 उकणे वारकीरः स्यान्नीराजितहयेऽपि च ।  
 वीरभद्रोऽश्वमेधाश्वे महावीरेऽपि वीरणे ॥ २९१ ॥  
 क्लीबं वीरतरं वीरश्रेष्ठे वीरणगुन्द्रयोः ।  
 मणिच्छिद्रा तु मेदात्यामृषमाख्यौपधावपि ॥ २९२ ॥  
 महावीरस्तु गरुडे शूरे कण्ठीरवे पवौ ।  
 महावीरः पित्रे चाश्वमखामौ च जराटके ॥ २९३ ॥  
 महामात्रो हस्तिपके समूहामात्ययोरपि ।  
 रथकारस्तु माहिष्यात्करणीजेऽपि तक्षणि ॥ २९४ ॥  
 रागसूत्रं तुलासूत्रे षट्सूत्रेऽपि न द्वयोः ।  
 वसन्तकङ्कणाभिख्यशङ्खे नोगण्डिपट्टके ॥ २९५ ॥

बलभद्रा-धीकुमार, नायमान, (स्त्री०)

बलभद्र-बलदेव ( पु० ) ॥ २९० ॥

वार्वटीर-सीसा, या राँगा, आमकी  
गुठली और अक्षुर, वेश्याका पुत्र,  
( पु० ) ॥ २९१ ॥

वारकीर-...आरती कियाहुवा अश्व,  
( पुं० )

वीरभद्र-अश्वमेघ यज्ञा अश्व, महा-  
वीर, ( पु० ) वीरनमूल ( न० )  
॥ २९२ ॥

वीरतर-वीरश्रेष्ठ, वीरनमूल, शर,  
( पु० )

मणिच्छिद्रा-मेदा-औपधि, ऋष-  
भाख्य औपधि, ( स्त्री० ) ॥ २९३ ॥

महावीर-गरुड, शर, सिंह, वज्र,  
कोयल-पक्षी, अश्वमेधयज्ञका अग्नि,  
( पु० ) ॥ २९३ ॥

महामात्र-फीलवान, समूह, मंत्री,  
( पु० )

रथकार-वैश्याके क्षत्रियसे उपजे  
पुरुषसे शूद्रोंके वैश्यसे उपजी स्त्रियों  
उपजहुवा, ( बडई ) ( पु० ) ॥ २९४ ॥

रागसूत्र-तराजूका सूत्र, पाटका सूत्र,  
( न० ) वसंतकङ्कण नाम शख,  
हस्तीका पत्र, ( पु० ) ॥ २९५ ॥

दग्धदीपदशान्वेष मतो लङ्गंश्चतुः पुमान् ।

लम्बोदरः स्यादुध्माने हेरम्बे लम्बकुक्षिके ॥ २९६ ॥

लक्ष्मीपुत्रस्तु फन्दर्पे लक्ष्मीपुत्रस्तुरङ्गमे ।

वात्पुत्रो महाधूर्ते हनूमद्भीमयोरपि ॥ २९७ ॥

त्रिन्दुतन्त्रः पुमान्शारिफलके चतुरङ्गके ।

विभाकरो बृहद्भानौ चित्रभानौ विभाकरः ॥ २९८ ॥

विभायरी तमस्त्रिन्यां हरिद्रायां विभायरी ।

विषाहवस्त्रगुण्ठयाञ्च कुट्टिन्यां वक्रयोषिति ॥ २९९ ॥

विश्वम्भरो हरौ शके स्त्रियां विश्वम्भरा मुवि ।

विश्वकद्रुः खले ध्वाने स्यादाखेटिकुकुरे ॥ ३०० ॥

वीतिहोत्रो बृहद्भानौ वीतिहोत्रो दिवाकरे ।

भवेद्यतिकरः पुंसि व्यसनव्यतिपङ्गयोः ॥ १ ॥

व्यवहारो व्यवहृतौ वृक्षभेदे स्थितावपि ।

शतपत्रो राजकीरे दार्वीपाटे शिरःण्डिनि ॥ २ ॥

लम्बोदर-जलंधर रोगवाल, गणेश, विश्वंभर-विष्णु, इद, ( पुं० )

लंबापेटवाल, ( पु० ) ॥ २९६ ॥ विश्वंभरा-भृषी, ( स्त्री० )

लक्ष्मीपुत्र-रामदेव, अश्व ( पुं० ) विश्वकद्रु-खल-पुरष, खन्द, शिकारी

वात्पुत्र-महाधूर्त, हनूमान, भीम- पुत्रा, ( पुं० ) ॥ २९७ ॥

त्रिन्दुतन्त्र-चौपटखेलनेवा पट, चतुर- वीतिहोत्र-अग्नि, सूर्य, ( पुं० )

रंग-खेल, ( पुं० ) व्यतिकर-क्षीक ( मदितापानआदि),

विभाकर-अग्नि, सूर्य, ( पुं० ) उलटा, ( पुं० ) ॥ १ ॥

॥ २९८ ॥ व्यवहार-व्यवहार, वृक्षभेद, स्थिति

विभायरी-रात्रि, हल्दी, पुट्टिनी-स्त्री, शतपत्र-राजकीर ( पद्म-सूत्र ), पु-

ष्क स्त्री ( स्त्री० ) ॥ २९९ ॥ रणा, मोर, ( पुं० ) ॥ २ ॥

शतपत्रं तु राजीवे वरीशुण्ठ्यो शतावरी ।  
 शिशुमारो जलरूपौ तारात्मकद्वरावपि ॥ ३ ॥  
 समुद्रारुर्मत सेतुवन्धे ग्राहे तिमिङ्गिले ।  
 संप्रहारो मृतौ युद्धे शिण्ठ्या सहचरी द्वयो ॥ ४ ॥  
 स्याद्वयस्ये सहचरस्त्रिषु प्रतिकृतौ पुमान् ।  
 सालसारो मतो हिङ्गौ सालसारो महीरुहे ॥ ५ ॥  
 सुकुमारस्तु पुण्ड्रेक्षो कोमले त्वभिधेयवत् ।  
 सूत्रधारो मत शिल्पिप्रभेदेऽपि पुरन्दरे ॥ ६ ॥  
 नान्वनन्तरसञ्चारिपात्रभेदेऽपि स स्मृत ।  
 स्थिरदंष्ट्रो भुजङ्गे स्याद्बराहाकृतिकेशवे ॥ ७ ॥

रपचमम् ।

उत्पलपत्रं तूत्पलच्छदे योपिन्नखक्षते ।  
 स्वर्गनद्या तु कपिलधारा तीर्थान्तरे पुमान् ॥ ८ ॥

शतपत्र-कमल ( न० )  
 शतावरी-शतावर, सौंठ, ( स्त्री० )  
 शिशुमार-जलजतु ( मकरभेद ),  
 तारात्मक विष्णु, ( पु० ) ॥ ३ ॥  
 समुद्रारु-सेतुवध, ग्राह, तिमिङ्गिल  
 ( मकरभेद ), ( पु० )  
 संप्रहार-मृत्यु युद्ध, ( पु० )  
 सहचरी-कटसरैया वृक्ष ( पु० स्त्री० )  
 ॥ ४ ॥  
 सहचर-समानउमरवाला, ( त्रि० )  
 मूर्ति ( पु० )  
 सालसार-हींग, वृक्ष, ( पु० ) ॥ ५ ॥

सुकुमार-पौंडा ( ऊस ) ( पु० )  
 कोमल ( त्रि० )  
 सूत्रधार-शिल्पिभेद, इन्द्र, ॥ ६ ॥  
 नादीके पीछे आनेवाला नाटकका  
 पात्रभेद, ( पु० )  
 स्थिरदंष्ट्र-सर्प, बराह अवतार, ( पु० )  
 ॥ ७ ॥

रपचम ।

उत्पलपत्र-कमलपत्र, स्त्रीके नखसे  
 हुवा घाव, ( न० )  
 कपिलधारा-स्वर्गनदी ( स्त्री० )  
 कपिलधार-तीर्थभेद ( पु० ) ॥ ८ ॥

तमालपत्रं तिलके तापिच्छे पत्रकेऽपि च ।  
 तालीशपत्रं तालीशे तामलक्यां च न द्वयोः ॥ ९ ॥  
 सैकते करके छागे पिप्पले पादचत्वरः ।  
 परदीपप्रकाशैकतत्परेऽपि मतो नरे ॥ ३१० ॥  
 क्लीवं तु पीतकाघेरं पिप्ले कुङ्कुमेऽपि च ।  
 स्यात्पांशुचामरो धूलीगुच्छकेऽपि प्रशंसने ॥ ११ ॥  
 वर्द्धापके पुरोटौ च दूर्वाधिततटीभुवि ।  
 बबुले वेधके नागकुसुमे नागकेसरः ॥ १२ ॥  
 स्याद्राजवदरं रक्तामलके लवलीफले ।  
 रोमगुच्छे च मन्तौ च रोमकेसर इष्यते ॥ १३ ॥  
 वस्यौकसारा थीदस्य नलिन्यामलकापुरि ।  
 विप्रतीसारः कौटुत्ये रोपेऽप्यनुशयेऽपि च ॥ १४ ॥

तमालपत्र—तिलक—गुग्गुलु, तमा-  
 ल—वृक्ष, क्षेत्रपात, ( न० )  
 तालीशपत्र—तालीशपत्र, भुईं औव-  
 ला ( न० ) ॥ ९ ॥  
 पादचत्वर—रेवीनाला—स्थल, ओला  
 ( वर्षाका पत्थर ), बकरा, पीपल-  
 वृक्ष, दमरुके दोष प्रकाशितकरना-  
 एक इसी धानमें तारर मनुष्य,  
 ( पुं० ) ॥ ३१० ॥  
 पीतकाघेर—पीपल, केसर, ( न० )  
 पांशुचामर—धूनिगुच्छ, प्रशंसा ११  
 वर्द्धापक ( ..... ), पुरोटि

( ..... ) दूध जमे हुये तट  
 वाली पृथ्वी, ( पुं० )  
 नागकेसर—बौलथ्री, अम्लवेत, नाग-  
 केसर ( पुं० ) ॥ १२ ॥  
 राजवदर—लालऔवला, हरपारेबडी-  
 का पत्थ, ( न० )  
 रोमकेसर—रोमोंका गुच्छा, अपराध,  
 ( पु० ) ॥ १३ ॥  
 वस्यौकसारा—कुवेरकी अल्का  
 नामकी पुटी, कमठिनी, ( स्त्री० )  
 विप्रतीसार—श्रीच, पछाना, ( पुं० )  
 ॥ १४ ॥

मतः समभिहारस्तु पौनःपुन्ये भृशार्थके ।

पुंस्येव सर्वतोभद्रः काव्यचित्रे गृहान्तरे ॥ १५ ॥

निम्बेऽथ सर्वतोभद्रा गम्मार्या नटयोपिति ॥ ३१६ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानायां मुक्तावल्यां रेफान्तवर्गः समाप्तः॥

### अथ लान्तवर्गः ।

लैकम् ।

ल इन्द्रे ला तु दाने स्यादाश्लेषेऽपि लयेऽपि च ।

अपि लूश्छेदके पुंसि लवणे लूरपि स्मृता ॥ १ ॥

लद्वितीयम् ।

अम्लो रसप्रभेदे स्यादम्ली चाङ्गेरिकौषधौ ।

अलिर्भृङ्गे सुरायां स्त्री स्यादालिः पिण्डले स्त्रियाम् ॥ २ ॥

सख्यां पङ्क्तावपि ख्याता वाच्यवद्विशदाशये ।

आलुर्गलन्तिकायां स्त्री क्लीबे भेलककन्दयोः ॥ ३ ॥

समभिहार—वारवार, अत्यंत (पुं०)

सर्वतोभद्र—काव्य-चित्रबंध, गृह

(घर) भेद ॥ १५ ॥ नीव वृक्ष (पुं०)

सर्वतोभद्रा—कंबारी, नटकी स्त्री,

(स्त्री०) ॥ ३१६ ॥

॥ इस प्रकार विश्वलोचनकी भाषा

टीकामें रान्तवर्ग समाप्त हुवा ॥

### अथ लान्तवर्गः ।

लैक ।

ल-इन्द्र (पुं०)

ला दान, मिलना, प्रलय, (पुं०)

लू-काटनेवाला, (पुं०) लू-नमक

(स्त्री०) ॥ १ ॥

### लद्वितीय ।

अम्ल-रसभेद (पुं०)

अम्ली-चूका-औषधि (स्त्री०)

अलि-भौरा (पुं०) मदिरा (स्त्री०)

आलि-पुल, ॥ २ ॥ सखी, पंक्ति,

(स्त्री०) खच्छहृदयवाला (त्रि०)

आलु-झारी (स्त्री०) भेलक

(नदीतैरनेको पूलाआदि), कन्द,

(न०) ॥ ३ ॥

इला गोभूमिपीयूषे भारत्यां सौम्ययोपिति ।  
 ओलड्मु सूरणे पुंसि स्यादात्रे त्वभिधेयवत् ॥ ४ ॥  
 कलस्तु मधुराव्यक्तशब्देऽजीर्णे कलं सिते ।  
 कला तु पौडशांशे स्यादिन्द्रोरप्यंशमात्रके ॥ ५ ॥  
 मूलार्धवृद्धौ शिल्पादौ कलनाकालभेदयोः ।  
 कलिरन्त्ययुगे कन्दे कन्दले सुमटे पुमान् ॥ ६ ॥  
 कालस्तु समये मृत्यौ महाकाले धमे शितौ ॥  
 कृष्णे त्रिष्वथ काली स्यात्कालिकामातृभेदयोः ॥ ७ ॥  
 गौर्या नवाम्बुदानीके क्षीरकीटापवादयोः ।  
 काला तु कृष्णत्रिवृत्ति नीलीमज्जिष्ठयोरपि ॥ ८ ॥  
 कीला कफोणिघाते स्यात्काले शकौ च कौलवत् ।  
 कुलं सजातीयगणे गोत्राङ्गगृहनीवृत्ति ॥ ९ ॥

इला-गौ, भूमि, अमृत, वाणी  
 ( सरस्वती ), युधप्रह्वकी स्त्री,  
 ( स्त्री० )

ओलड्-जमीकंद ( पुं० ) गीला ( त्रि० )  
 ॥ ४ ॥

कल-मधुर और अप्रकट शब्द,  
 ( पुं० ) अजीर्ण ( त्रि० )

कल-वीर्यं ( न० )

कला-सोलहवाँ भाग, चंद्रमाकी  
 कला, ॥ ५ ॥ मूलद्रव्यकी वृद्धि,  
 शिल्पआदि, कलना ( सख्या-  
 जोडना ), कालभेद, ( स्त्री० )

कलि-कलियुग, कन्द, कंदल ( नवीन  
 अंडुर ), योद्धा, ( पुं० ) ॥ ६ ॥

काल-समय, मत्स्य, महाकाल, धर्म-  
 राज, नीला रंग, ( पुं० ) काला  
 रंगवाला ( त्रि० )

काली-काला रंगवाली, मातृभेद ( देवी  
 भेद ), ( स्त्री० ) ॥ ७ ॥ गौरी,  
 नवीनमेघकी घटा, दुग्धका कीट,  
 निंदा, ( स्त्री० )

काला-काली निसोप, नीली, मैजीट,  
 ( स्त्री० ) ॥ ८ ॥

कीला-कील-कोहनीसे भारना,  
 अमितेज, शंकु ( कीला ), ( स्त्री० पुं० )

कुल-सजातीयसमूह, गोत्र, शरीर,  
 घर, देश, ( न० ) ॥ ९ ॥

कूलं प्रतीरे सैन्यस्य पृष्ठे स्तूपतडागयोः ।

कोलोङ्कपालाद्युत्सङ्गे क्रोडे मेलकचित्रयोः ॥ १० ॥

खड्गे कोलं तु कुवले कोला पिप्पलिवन्ययोः ।

खलः शठेऽधमे नीचे त्रिषु स्यात्तु खलं भुवि ॥ ११ ॥

खलं स्थानेऽपि कल्केऽपि सत्यस्थानेऽपि न द्वयोः ।

खड्गा चर्मणि निम्नेऽपि वस्त्रभेदेऽपि चातके ॥ १२ ॥

खड्गी तु हस्तपादावगर्दनाख्यरुजि स्त्रियाम् ।

खिलं भवेदप्रहते सारसङ्घिसवेधसो ॥ १३ ॥

गलः कण्ठे सर्जरसे गलः स्कन्धे महीरुहे ।

गोला गोदावरीसख्योर्गोला पत्राङ्गने मता ॥ १४ ॥

कुनथ्यामपि गोलं तु मणिके मण्डलेऽपि च ।

चलश्चलाचले कम्पे कमलाविद्युतोश्चला ॥ १५ ॥

कूल-तीर-नदीआदिका, सेनायु  
पीठ, मसाआदि, तालाव, (न०)

कोल-गोदका तिरा या घाय, गोद,  
सूकर, नदीतरनेका पूलाआदि,  
चीता औपयि ॥ १० ॥ लँगडा,  
(५०)

कोल-वेर (न०)

कोला-पीपल, चय, (स्त्री०)

खल-मूर्ख, अधम, नीच, (त्रि०)

खल-पृथ्वी, ॥ ११ ॥ स्थान, तिल  
आदिषु खली, तृणस्थान, (न०)

खड्गा-चर्म, यज्ञ, वस्त्रभेद, पपीहा  
(स्त्री०) ॥ १२ ॥

खड्गी-हाथपरोंमे अवमर्दन नामका  
रोग, (स्त्री०)

खिल-नवीन, सारसङ्घिस, (त्रि०)  
मङ्गा (पुं०) ॥ १३ ॥

गल-कंठ, रालवृक्ष, कंधा, वृक्ष, (पुं०)

गोला-गोदावरी-नक्षी, सखी, तेज-  
पात, मनसिल, (स्त्री०)

गोल-यडाकुंभ, गोल आकारवाला  
मंडल, (न०) ॥ १४ ॥

चल-चलनेके स्वभाववाला, कौपना,  
(त्रि०)

चला-लक्ष्मी, विजली, (स्त्री०)  
॥ १५ ॥

चालश्छदिपि पुंसेव चालः स्यात्कम्पनेऽपि च ।

क्लिन्नाक्षितायिनोश्चिल्लश्चिल्ली स्यात्क्षुद्रवास्तुके ॥ १६ ॥

क्लिन्ननेत्रयुते तु स्याच्चिल्लः खुल्लश्च वाच्यवत् ।

चुल्लः क्लिन्नेऽक्षिण चुल्ली तु चित्तावुद्धानवाचयोः ॥ १७ ॥

चेलं स्यादंशुके नीचे गर्हितेऽप्यभिधेयवत् ।

छल्ली तु वल्कले पुष्पभेदे सन्नतिवीरुधोः ॥ १८ ॥

छलं तु स्वलितेऽपि स्याद्वाजेऽपि छलमद्वयोः ।

जलं शोकरवे नीरे ह्रीवरेऽपि जडे त्रिषु ॥ १९ ॥

जालस्तु क्षारकानायगवाक्षे दम्भवृक्षयोः ।

जाली पटोलिकायां स्याज्जालो नीपमहीरुहे ॥ २० ॥

झला स्यादातपस्योर्मौ तथा पुत्रीसुलुबयोः ।

झिल्ली त्वातपरुग्मन्या शीरुकोद्वर्चनांशयो ॥ २१ ॥

चाल—छपर, कौपना ( पु० )

चिल्ल—चिदपदानेत्रवाला, चील्ल—पक्षी ( पु० )

चिल्ली—छोटा बयुवा ( स्त्री० ) ॥ १६ ॥

चिल्ल—खुल्ल चिदपदानेत्रवाला ( त्रि० )

चुल्ल—चिदपदानेत्र ( पुं० )

चुल्ली—चिता, चूहा, बाजा ( स्त्री० ) ॥ १७ ॥

चेल—वस्त्र ( न० ) नीच, निदित, ( त्रि० )

छल्ली—वृक्षका बटला, पुष्पभेद, सतति ( सतान ), बेल, ( स्त्री० ) ॥ १८ ॥

छल—छलना, पहना, ( न० )

जल—शोक वा शब्द, पशो, नेत्रवाला, ( न० ) जड ( त्रि० ) ॥ १९ ॥

जाल—जवाहार, जाल, जाली मरोखा, दम्भ, वृक्ष, ( पुं० )

जाली—परखल—शाक ( स्त्री० )

जाल—कदब—वृक्ष ॥ २० ॥

झला—धूपकी लहरी, पुत्री, ( स्त्री० )

झिल्ली—आतपकाति, बन्दी, चीरी-कीट, ( स्त्री० )

झीरुका—उबटना, विभाग, ( पुं० ) ॥ २१ ॥



तलस्ताले तलं खड्गमुष्टौ ज्याघातवारणे ।  
 वने चपेटे न स्त्री तु स्वरूपाऽऽधारयोस्तलम् ॥ २२ ॥  
 तल्ली तरुण्या तल्लस्तु विले पुसि नपुसके ।  
 तालो द्रुमान्तरेद्भुष्टमध्यमाभ्या च सम्मिते ॥ २३ ॥  
 गीतकालक्रियाभावे तालः खड्गादिमुष्टिषु ।  
 तालः स्यात्कास्वरचितवाद्यभाण्डान्तरे तथा ॥ २४ ॥  
 करास्फारे करतले तालं तु हरितालके ।  
 तुला राशौ पलशते तुल्यतामानभेदयो ॥ २५ ॥  
 वन्धाय गृहदारूणा पीठिकाया सभाजने ।  
 तूल पिचौ पुमास्तूलभाकाशे ब्रह्मदारणि ॥ २६ ॥  
 अपद्रव्ये छदोच्छ्रायखण्डे शस्त्रीछदे दलम् ।  
 डुलिः पुसि मुनेर्भेदे कमठ्या तु खिया डुलिः ॥ २७ ॥

तल-ताड-वृक्ष ( पु० ) तल-  
 खड्गकी मूठ, धनुषके ज्याघातको  
 रोकनेवाला, वन, थप्पड, ( पु०  
 न० ) स्वरूप, आधार, ( न० )  
 ॥ २२ ॥

तल्ली जवान स्त्री ( स्त्री० ) तल्ल-  
 हीग ( पु० न० )

ताल-अँगूठा और मध्यमा अँगुलीका  
 प्रमाण, ॥ २३ ॥ गानेकी  
 कालक्रियाका मान, खड्ग आदिकी  
 मूँठ, कौंसीका यजानेका पात्र  
 ॥ २४ ॥ दोनों हाथ फैलाकर  
 प्रमाण, ( पुरस ) हथेली, ( पु० )  
 हरिताल ( न० )

तुला-तुला-राशि, सौ ( १०० )  
 तोले, तुल्यता, तौलभेद, ॥ २५ ॥  
 घरका काठ बाँधनेके लिये पी-  
 टिका ( चौकीरूप काष्ठ ), सत्कार,  
 ( स्त्री० )

तूल-हड्का गीला फोया, ( पु० )  
 तूल-आकाश, ब्रह्मदारु, ( न० )  
 ॥ २६ ॥

दल-अपद्रव्य ( खराब वस्तु ), पत्ता,  
 कँचा, टुकड़ा, छुरीको निवारण  
 करनेवाला द्रव्य, ( न० )

डुलि-मुनिभेद ( पु० ) डुलि-  
 कछवी ( स्त्री० ) ॥ २७ ॥

दोला यानान्तरे नील्यां धूलिः शङ्खचान्तरे रजे ।  
 नलः पोटगले राज्ञि कपीशे पितृदेवते ॥ २८ ॥  
 नली मनःशिलायां स्यान्नलं तु सरसीरुहे ।  
 पञ्चदण्डे न ना नाला नाली शाककदम्बके ॥ २९ ॥  
 नाला पानकरङ्गादिरन्ध्रे नालस्तु पञ्जरे ।  
 नीलस्तु कृष्णवर्णे स्यान्निषु नीलः कपीश्वरे ॥ ३० ॥  
 नीलो नगान्तरे कृष्णे नीलं वृक्षाङ्गभेदयोः ।  
 पल्ली तु कुट्यां कुमामे पल्लः स्थूलकुसूलयोः ॥ ३१ ॥  
 पलं मासे तथोन्माने पालिः पङ्क्तिप्रदेशयोः ।  
 प्रस्ये कर्णलताप्रदेशे यूकासश्मश्रुयोपितोः ॥ ३२ ॥  
 इन्द्रादेदेयभागे च विश्राम्य चागतज्वरे ।  
 अश्रौ चिहे च पिल्लस्तु क्लिन्नेऽक्षिण त्रिषु तद्वति ॥ ३३ ॥

दोला—सवारीभेद ( डोली ), नीली,  
( स्त्री० )

धूलि—संख्याभेद, रज ( धूल ), ( स्त्री० )

नल—कास या देवनल, नल—राजा,  
पानरोंका राजा, पितृदेव, ( पु० ) २८

नली—मनसिल ( स्त्री० ) नल—कमल  
( न० )

नाला—कमलकी डंडी ( स्त्री० न० )

नाली—शाकका समूह ( स्त्री० )  
॥ २९ ॥

नाला—पीना, हृद्दिआदिका छिद्र,  
( स्त्री० )

नाल—पिञ्जरा ( पुं० )

नील—बाला रंग ( त्रि० ) नील—  
कपीश्वर ( पुं० ) ॥ ३० ॥

नील—पर्वतभेद, काला द्रव्य, ( पुं० )

नील—वृक्ष, अक्षभेद, ( न० )

पल्ली—कुटिया, कुमाम, ( स्त्री० )

पल्ल—बडा, कुटला, ( पुं० ) ॥ ३१ ॥

पल—मास, उन्मान ( तोल ), चार  
तोल, ( न० )

पालि—पंक्ति, प्रदेश ( स्थल ),

६४ तोला, कर्णलताका अग्रभाग,  
विभाग, जूं, डाडीमूछोंवाली स्त्री

॥ ३२ ॥ इन्द्रादिको देनेयोग्य  
भाग, विश्राम करके आयाहुवा  
ज्वर, कोण चिह्न, ( त्रि० )

पिल्ल—विहपडा नेत्र, चिह्नपडानेत्र-  
वाला, ( त्रि० ) ॥ ३३ ॥

पीलुद्रुमे गजे पुष्पे काण्डतालास्त्रिखण्डयोः ।

अणुमात्रेऽप्यथ पुलः पुलके विपुले त्रिषु ॥ ३१ ॥

फलं तु सस्ये हेतूथे फलके व्युष्टिलामयोः ।

जातीफलेऽपि कङ्कोले मार्गणाम्रेऽपि न द्वयोः ॥ ३५ ॥

स्यात्फलं त्रिफलायां च फलिन्यां तु फलीं विद्यात् ।

फालं सीरस्य लौहे स्यात्कर्पासादेश्च वासनि ॥ ३६ ॥

बलो हलिनि दैत्येङ्गे काके वलिनि वाच्यवत् ।

बलं गन्धरसे सैन्ये सामनि सौख्यरूपयोः ॥ ३७ ॥

बला वाटचालके प्रोक्ता वलिः पुंनुरान्तरे ।

वलिश्चामरदण्डेषु करपूजोपहारयोः ॥ ३८ ॥

सैन्धवेऽपि वलिः स्त्री तु जरसा क्षयचर्मणि ।

कुक्षिभागविशेषे च गृहकाष्ठान्तरे द्वयोः ॥ ३९ ॥

पीलु-पील ( जाल ) वृक्ष, हर्ना,

पुष्प, दंड या बाण, ताटकी गुट-  
लीका इकडा, अणुमात्र, ( पुं० )

पुल-पूलना, विपुल ( बहुत ),  
( नि० ) ॥ ३४ ॥

फल-वृक्षआदिका फल, किंसाकार-  
णसे उत्पन्नहुवा, टाल, फल या  
समृद्धि, लाभ, जायफल, कडोड,  
बाणवा अग्रभाग, ( पुं० न० )  
॥ ३५ ॥

फल-त्रिफला, ( न० ) फली-  
प्रियंगु-वृक्ष, ( स्त्री० )

फाल-हलका लोहा ( कुस ), काय

आदिका वृक्ष, ( न० ) ॥ ३६ ॥

बल-बलदेव, एक दैत्य, बग, बग,  
( पुं० ) वचन ( त्रि० )

बल-गोनग, मंग, म्निग, म्निग-  
पन, म, ( न० ) ॥ ३७ ॥

बला-बलदेव ( स्त्री० )

वलि-शुभमेद ( वृक्ष ), वैश्वदेव  
दोह, गृहका व, प्रामे म्  
॥ ३८ ॥ सैन्ध-जमद, ( पुं० )

वलि-वृद्धा काके शिविउद्धा शक्ति-  
रत्न ( स्त्री० ) दण्डका एड भाग,  
करका कर्मदे, ( न० ) ॥ ३९ ॥

बह्नी स्यादजमोदायां लतायां कुसुमान्तरे ।  
 बालः पुंसि शिशौ केशे वाजिवारणबालधौ ॥ ४० ॥  
 मूर्खेऽपि बालो बालं तु हीवेरे पुंनपुंसकम् ।  
 विलं गुहायां रन्ध्रे च विलस्त्विन्द्रहये पुमान् ॥ ४१ ॥  
 वेला कालेऽपि सीमायामीश्वराणां च भोजने ।  
 दत्तमासेऽधिवेला स्यात्पयोनाशेऽपि नीरधेः ॥ ४२ ॥  
 तन्नीरेऽक्लिष्टमरणे राशौ वाचि बुधस्त्रियाम् ।  
 भद्रो वाणेऽपि भद्रुके भह्नी भद्रातवाणयो ॥ ४३ ॥  
 भालं तु न द्वयोरेव ललाटमहसोर्मतम् ।  
 ऋषिभेदे श्वे भेलो भेलं भीरुहृदि त्रिषु ॥ ४४ ॥  
 मलस्त्रिष्वेव कूपणे न स्त्री विट्किट्टकिल्बिषे ।  
 मह्यः पात्रे कपाले च मत्स्यभेदे कपालिनि ॥ ४५ ॥

बह्नी—अजमोद, बेल, पुष्पभेद (स्त्री०)  
 बाल—शिशु (छोटा लटका), (त्रि०)  
 बेश ( बाल ), घोडे और हस्तीका  
 बेशसमूहयुक्त पूँछ, (पुं०) ॥ ४० ॥  
 मूर्ख ( त्रि० )  
 बाल—नेत्रबाला ( पुं० न० )  
 विल—गुफा, छिद्र, ( न० ) विल-  
 इन्द्रका अश्व ( उच्च भवा ) ( पुं० )  
 ॥ ४१ ॥  
 वेला—काल, सीमा, राजाआदिकोंका  
 भोजन, दत्तमांस (दियाहुवा मांस),  
 अधिवेला—समुद्रके जलका नाश,  
 समुद्रका जल, एकांतका मरण,

राशि ( समूह ), वाणी, बुधकी  
 स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ४२ ॥  
 भद्र—वाण ( भाला ), रीठ, ( पु० )  
 भह्नी—भिलावा, वाण ( भाला ),  
 ( स्त्री० ) ॥ ४३ ॥  
 भाल—मस्तक, (ललाट), तेज, (न०)  
 भेल—ऋषिभेद, छोटी नौका, ( पुं० )  
 भेल—डरपोखहृदय (त्रि०) ॥ ४४ ॥  
 मल—कूपण ( कजूस ) ( त्रि० )  
 मल—विष्टा, फानआदिका मल, पाप,  
 ( पुं० न० )  
 मह्य—पात्र, कपाल, मत्स्यभेद, कपा-  
 लबाला, ( पु० ) ॥ ४५ ॥

मल्लो बलाढ्ये सुभगे मल्ली तु कुसुमान्तरे ।

मालुः पत्रलतायां स्याद्वनितायामपि स्त्रियाम् ॥ ४६ ॥

मालं क्षेत्रे जने मालो माला पुष्पादिदामनि ।

मूलमाद्यशिफापार्श्वकुञ्जे मूलेऽपि तारके ॥ ४७ ॥

मसिभेरुकयोर्मैला मौलिर्धम्मिल्लचूडयोः ।

फिरीटेऽपि द्वयोरेव पुंसि वङ्गुलपादपे ॥ ४८ ॥

लीला हावान्तरे स्त्रीणां केलौ खेलाविलासयोः ।

लौला जिह्वाश्रियोर्लौलः सतृष्णचलयोस्त्रिषु ॥ ४९ ॥

व्यालः शठे भुजङ्गे च श्वापदे दुष्टदन्तिनि ।

शलं तु शलकीलोम्नि शलो भृङ्गिगणे विधौ ॥ ५० ॥

शालो मत्स्यान्तरे वृक्षसामान्ये हालभूमुजि ।

शाला वेदमनि वेदमैकप्रदेशे स्फन्धशाखयोः ॥ ५१ ॥

मल्ल-पहलवान, अच्छे ऐश्वर्यवाला,  
( पुं० )

मल्ली-पुष्पभेद, ( मोतिया-भेद )  
( स्त्री० )

मालु-पान-बेल, स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥

माल-क्षेत्र, ( न० )

माल-जन ( पुं० )

माला-पुष्पआदिकी लडो, ( स्त्री० )

मूल-आदिमें होनेवाला, वृक्षकी जड़,  
समीप, कुंज ( लताकुटी ), मूल-  
नक्षत्र ( न० ) ॥ ४७ ॥

मैला-स्याही ( अजन ), मिलना  
( स्त्री० )

मौलि-केशवेस, चोटी, मुकुट ( पुं०  
स्त्री० ) अशोक वृक्ष ( पुं० ) ॥ ४८ ॥

लीला-स्त्रियोंका हावभेद, वीडा,  
खेलना कूदना, विलास, ( स्त्री० )

लौला-जीम, लक्ष्मी, ( स्त्री० )

लौल-तृष्णावाला, चचल ( त्रि० )  
॥ ४९ ॥

व्याल-शठ ( मूर्ख ), सर्प, वनजीव,  
खोटाहस्ती ( पुं० )

शल-सेहकी शल ( न० ) भृङ्गिनामका  
गण, चंद्रमा ( पुं० ) ॥ ५० ॥

शाल-मत्स्यभेद, वृक्षमात्र, हाल  
नामका राजा, ( पुं० )

शाला-मकान, मकानका एक हिस्सा,  
डाइया, शाखा ( दहती ) ( स्त्री० )  
॥ ५१ ॥

शालुः कपायद्रव्येषु शालुश्चोराख्यभेषजे ।

मत शालिः पुमान् गन्धमार्जारै कलमादिषु ॥ ५२ ॥

शिला कुनट्या द्वाराधोदारणि प्रावणि स्त्रियाम् ॥

शिलमुञ्जशिले क्लीबं गण्डूषद्या शिली मता ॥ ५३ ॥

शीलं स्वभावे सद्रृते शुक्ले धवलयोगयोः ।

शुक्लं तु रूप्यके शुक्लं त्रिषु शुक्लगुणान्विते ॥ ५४ ॥

शूलं मृत्यौ ध्वजे ना तु योगे न स्त्री रुगस्तयोः ।

शूला तु पण्ययोपाया दुष्टनाशाय क्लीलकः ॥ ५५ ॥

शैलः क्षमाभृति शैलं तु शैलेये ताक्ष्यशैलके ।

शालः स्याद्दरणे हाले पादपे सर्जपादपे ॥

स्थालं भाजनभेदे स्यात्स्थाली स्यात्पाटलोखयोः ॥ ५६ ॥

शालु—कपाय द्रव्य, असवरग या  
भटेउर औषधि ( पु० )

शालि—गन्धमार्जार, ( गन्धकिलाय )  
कलम ( सौंटी चावल ) ( पु० )  
॥ ५२ ॥

शिला—मनसिल, द्वारके नीचेरा  
काष्ठ, पत्थर ( शिला ) ( स्त्री० )

शिल—उंछ ( दुस्मानआदिमे पडा )  
अप्रका इन्द्रावरना, मेतमे से जन  
लेना, ( न० )

शिली—गिंडोवा, ( स्त्री० ) ॥ ५३ ॥

शील—स्वभाव, भेष्टरतांत, ( न० )

शुक्ल—ध्वज ( सफेद ), योग ( पु० )

शुक्ल—चाँदी ( न० )

शुक्ल—सफेदरगवाला ( त्रि० ) ॥ ५४ ॥

शूल—मृत्यु, ( न० ) ध्वजा, योग  
( पु० ) रोग, अस्त्र ( पु० न० )

शूला—वेरवा, दुष्टोके मारनेकेडिवे  
वाला ( शूली ) ( स्त्री० )  
॥ ५५ ॥

शैल—पर्वत, ( पु० )

शैल—शिलाजीत, रसोन ( न० )

शाल—गण्डूषा वृक्ष, शाल वृक्ष,  
शाला वृक्ष ( पुं० ) ।

स्थाल—पात्रभेद (पाल), स्थाली—  
पाठरि, बटलोई ( स्त्री० ) ॥ ५६ ॥

स्थूलस्तु वाच्यवत्पीने कूटनिष्प्रज्ञयोरपि ।

हाला मधे नृपे हालो हेलाऽवज्ञाविलासयोः ॥ ५७ ॥

लघुतीयम् ।

स्यादङ्गुली तु मातङ्गकर्णिकाकरशाखयोः

अचलः पर्वते कीले निश्चलेऽप्यचला भुवि ॥ ५८ ॥

अञ्जलिः पुंसि कुडवे करसंपुटकेऽञ्जलिः ।

अनलो वसुभेदेऽप्रावनिलो वसुवातयोः ॥ ५९ ॥

अवेलः पूगरागेऽपि रवतोयचशालयो ।

अपलापेऽप्यवेलं स्यादवैला पूगचूर्णयोः ॥ ६० ॥

अमला कमलायां स्यादमलं विशदेऽभ्रके ।

स्यादरालः पुमान्सर्जे मत्तेभे कुटिलेऽन्यवत् ॥ ६१ ॥

स्थूल-मोटा ( त्रि० ) ढेर, बुद्धिहीन,  
( पु० )

हाला-मदिरा, ( स्त्री० )

हाल-एकराजा ( पुं० )

हेला-तिरस्कार, स्त्रियोक्ता विलास  
( स्त्री० ) ॥ ५७ ॥

लघुतीय ।

अङ्गुली-हस्तीकी कर्णिका ( सूँड ),  
हाथकी शाखा ( अङ्गुली ) ( स्त्री० )

अचल-पर्वत, कीला, निश्चल ( नहीं  
चलनेवाला ) ( पुं० )

अचला-पृथ्वी ( स्त्री० ) ॥ ५८ ॥

अञ्जलि-कुडव ( १६ तोला ),  
हाथोंका संपुट ( अञ्जलि ) ( पु० )

अनल-वसुभेद, अग्नि, ( पुं० )

अनिल-वसु, वायु ( पु० ) ॥ ५९ ॥

अवेल-सुपारीका रग, ( पु० )

अवेल-मोष्य ( न० )

अवैला-सुपारी, चूना ( स्त्री० )  
॥ ६० ॥

अमला-लक्ष्मी, ( स्त्री० )

अमल-निर्मल ( त्रि० ) मोडल  
( न० )

अराल-राल-वृक्ष, उन्नत हस्ती  
( पुं० ) कुटिल ( त्रि० ) ॥ ६१ ॥

अन्तःकपाटयोर्दण्डे कल्लोलेऽप्यर्गलं त्रिषु ।

आभीलं न द्वयोः कष्टे त्रिष्वामीलं मयानके ॥ ६२ ॥

मृगशीर्षशिरस्तारास्विल्वलाः स्युरथेल्बलः ।

मीने दैत्यप्रभेदे च शृङ्गार उज्ज्वलः पुमान् ॥ ६३ ॥

उज्ज्वलो वाच्यवद्दीप्ते परिव्यक्तविरुशिषु ।

उत्तालो मर्कटे श्रेष्ठे विकरालोत्कटे त्रिषु ॥ ६४ ॥

उत्पलं कुवले कुष्ठे निर्मूले तु त्रिपूत्पलम् ।

उत्फुल्लः करणे स्त्रीणामुत्ताने विरुचेऽन्यवत् ॥ ६५ ॥

उत्ताल उद्गते श्रेष्ठेष्वूर्ध्वनालेऽपि वाच्यवत् ।

उपला शर्करायां स्यादुपलो प्रावरलयोः ॥ ६६ ॥

कदलीभपताकाया पताकायां मृगान्तरे ।

रम्भाया चाथ कदली पृश्न्या डिम्ब्यां च शात्मलौ ॥ ६७ ॥

धर्गल-भीतरका विचारोका डडा  
( अरली ), तर्ग ( त्रि० )

आभील-कष्ट ( न० ) भयानक  
( त्रि० ) ॥ ६२ ॥

इल्बला-मृगशिरसशत्रुके शिरऊप-  
रकी तारा, ( स्त्री० )

इल्बल-मच्छं, दैत्यभेद, ( पुं० )

उज्ज्वल-शृङ्गार ( पुं० ) ॥ ६३ ॥

उज्ज्वल-दीप्त, प्रकट, प्रकाशवाला  
( त्रि० )

उत्ताल-बन्दर, श्रेष्ठ, विकराल  
( भयंकर ), उक्कट ( तेज )

( त्रि० ) ॥ ६४ ॥

उत्पल-कमल या बदरीफल ( घेर )  
( न० ) मातरहित ( त्रि० )

उत्फुल्ल-त्रियोंध्र कारण ( हाव )  
भाशदि ( पुं० ) स्त्रीया, खिल-  
हुका ( त्रि० ) ॥ ६५ ॥

उत्ताल-ऊपरको प्राप्त, श्रेष्ठ, ऊप-  
रकी नालवाला ( त्रि० )

उपला-शर्करा ( शङ्कर ) ( स्त्री० )

उपल-पत्थर, रत्न ( पुं० ) ॥ ६६ ॥

कदली-हरतीवी ध्वजा, ध्वजामात्र,  
मृगभेद, वेला, पृथि ( एही ),

भारी, साल-वृक्ष, ( स्त्री० )

॥ ६७ ॥



कन्दलं कलहे युद्धे नवाङ्कुरकपालयोः ।  
 कलध्वनौ चाथ तरौ मृगभेदेऽपि कन्दली ॥ ६८ ॥  
 कपिलौ मुनिभेदेऽमौ शुनि पिङ्गे तु वाच्यवत् ।  
 कपिला शिशपागोत्रभिद्वहिदिग्दन्तयोपिति ॥ ६९ ॥  
 रेणुकायां च कपिला कपालोऽस्त्री शिरोस्थनि ।  
 घटादिशकले कुष्ठरोगभेदे व्रजेऽपि च ॥ ७० ॥  
 कमलं जलजे नीरे क्लोन्नि तोपे च भेषजे ।  
 कमलो मृगभेदे स्यात्कमला श्रीवरस्त्रियाम् ॥ ७१ ॥  
 कम्बलो नागराजे ना सास्त्रायां च कुथे कूमौ ।  
 अपि स्यादुत्तरासङ्गे क्लीबं पयसि कम्बलम् ॥ ७२ ॥  
 करालो दन्तुरे तुङ्गे भीषणेऽप्यभिधेयवत् ।  
 करालो धूनतैले स्यात्करालं तु कुठेरके ॥ ७३ ॥

कंदल-कलह, युद्ध, नवीन अङ्कुर, कपाल, मधुरध्वनि ( न० )

कन्दली-केला, मृगभेद ( स्त्री० )  
॥ ६८ ॥

कपिल-कपिल-मुनि, अग्नि, कुत्ता,  
( पुं० ) कपिलवर्णवाला ( त्रि० )

कपिला-सीतम-वृक्ष, पर्वतभेद,  
अग्निकोणके हाथीकी हथनी ( स्त्री० )  
॥ ६९ ॥

कपिला-रेणुका, ( स्त्री० )

कपाल-शिखी खोपरो, घडाआ-  
दिका डुकश, कुष्ठरोग-भेद, समूह  
( पुं० न० ) ॥ ७० ॥

कमल-कंबल, जल, फेफडा, सतोप,  
औपधि ( न० )

कमल-मृगभेद, ( पुं० )  
कमला-लक्ष्मी, श्रेष्ठ स्त्री, ( स्त्री० )  
॥ ७१ ॥

कंबल-नागरराज, गौके गलकी चर्म,  
हस्तीनी पीठपर विछानेका कपडा,  
कुम्भ, डुपहा, ( पुं० )

कंबल-जल ( न० ) ॥ ७२ ॥

कराल-बडेदाँतोवाला, ऊँचा,  
भयंकर ( त्रि० )

कराल-रालका तेल, ( पुं० )

कराल-सफेदवनतुलसी ( न० )  
॥ ७३ ॥

कल्लोलः स्यात् उल्लोलः प्रमोदपरिपन्थिपु ।  
 काकोली द्रोणकाके स्याद्विषभेदकुलालयोः ॥ ७४ ॥  
 अपि काकोलकाकोल्यां स्यातामोषधिभेदयोः ।  
 काकीलस्तु कलाजीवे कामकेलिप्रणालयोः ॥ ७५ ॥  
 अपाश्रयमनोहारितरुच्छायार्थकोप्ययम् ।  
 कामलः कामुके रोगभेदे मरुवसन्तयोः ॥ ७६ ॥  
 काहली तु तरुण्यां स्यात्काहलं भृशशुष्कयोः ।  
 काहला वाद्यभाण्डस्य विशेषे काहलः खले ॥ ७७ ॥  
 किट्टालस्ताम्रकलशे लोहगूथेऽप्ययं पुमान् ।  
 कीलालं रुधिरेऽपि स्यात्पानीयेऽपि नपुंसकम् ॥ ७८ ॥  
 कुकूलं शङ्कुसङ्कीर्णश्वभ्रे पुंसि तुषानले ।  
 कुचेला विद्वकण्यां स्यात्कुचेली मलिनांशुके ॥ ७९ ॥

कल्लोल—भारीतरंग, आनंद, शत्रु,  
( पुं० )

काकोल—कामभेद, विषभेद पुम्हार  
( पु० ) ॥ ७४ ॥

काकोल—काकोली—औषधिभेद  
( प्रमत्ते पुं० स्त्री० )

काकील—कलासे आजीविका करने-  
वाला, कामकेलि, प्रजाति ( जल-  
निर्गमस्थान ) ( पुं० ) ॥ ७५ ॥  
आश्रयरहित, सुंदर वस्तु, वृक्षलाया  
( पुं० )

कामल—कामी पुरुष, रोगभेद, मरु-  
स्थल, वसंत-ऋतु ( पुं० ) ७६ ॥

काहली—जवान स्त्री, ( स्त्री० )

काहला—अत्यंत, सूखा ( न० )

काहला—वाद्यभाण्डभेद ( स्त्री० )

काहल—खल-पुरुष ( पुं० ) ॥ ७७ ॥

किट्टाल—ताम्रकलश, लोहेका मल,  
( पुं० )

कीलाल—रुधिर, जल ( न० )  
॥ ७८ ॥

कुकूल—शंकु ( बीटाआदि ) मे-  
कियाहुवा सज्ञा, तुषका अग्नि  
( पुं० )

कुचेला—गोनापाठा ( स्त्री० )

कुचेल—मलिनवस्त्रोवाला ( स्त्री० )

॥ ७९ ॥

कुटिलं वाच्यवद्गुणं कुटिला निम्नगान्तरे ।

कुण्डलं कर्णभूषाया तथा वलयपाशयो ॥ ८० ॥

काञ्चनद्रौ गुह्य्या च कुण्डली वर्तते खियाम् ।

कुहालो युगपत्रे स्यात्कुहालो भूमिदारणे ॥ ८१ ॥

कुन्तलाः स्युर्जनपदे देशे केशे च कुन्तलः

कुन्तलो लाङ्गलेऽपि स्याद्यवे भालेऽपि दृश्यते ॥ ८२ ॥

लोकच्छायाहरे चौरै श्याले मीने च कुम्भिलः ।

कुरलः पक्षिभेदे स्यात्कुरलश्चूर्णकुन्तले ॥ ८३ ॥

कुलालः कुम्भकारेऽपि कुक्कुभे कौशिकेपि च ।

कुवलं तूपले मुक्ताफलेऽपि बदरीफले ॥ ८४ ॥

कुशलं धर्मपर्याप्तिक्रमेपु त्रिपु शिक्षिते ।

वाच्यवर्तकेवलम्ब्वेककृत्स्नयो कुहनेऽपि च ॥ ८५ ॥

कुटिल-दुग्मस्थानआदि ( त्रि० )

कुटिला-नदी, ( स्त्री० )

कुण्डल-कर्णोका आभूषण, कर्ण,  
पादा ( फौशी ) ( न० ) ॥ ८० ॥

कुण्डली-सुवर्णवृक्ष ( नागकेशर ),  
गिलोय, ( स्त्री० )

कुहाल-रचनार, खुशल ( पु० )  
॥ ८१ ॥

कुन्तल-जनपद देशभेद ( पु० बहु  
वचनात् ) कुन्तल-केश ( बाल ),  
हल, जव, भाला, ( पु० ) ॥ ८२ ॥

कुम्भिल-शोकही छायाहरनेवाला,  
चोर, साला, मच्छ, ( पु० )

कुरल-पक्षिभेद, कुल्फके बाल, ( पु० )  
॥ ८३ ॥

कुलाल-कुम्हार, वनमुर्गा, उ० पक्षी  
( पु० )

कुचल-कमल, मोती, घेर ( न० )  
॥ ८४ ॥

कुशल-धर्म, सामर्थ्य, श्रेय, ( न० )

कुशल-शिक्षित ( त्रि० )

कुवल-एक, सपूर्ण ( त्रि० ) कुहन  
( दगनेकेलिये तपआदि करनेवाला )  
( पु० ) ॥ ८५ ॥

निर्णीते केवलं ज्ञानभेदे म्यात्केवली न ना ।  
 मत कौ वारिके केशद्रुमजातेऽपि कैशिलः ॥ ८६ ॥  
 कोमलं मृदुले नीरे मुनौ मधे च कोहलः ।  
 गन्धोली वरदाया स्याद्द्राशद्योरपि स्मृता ॥ ८७ ॥  
 विषे मानेऽपि गरलं गरलं तृणपूलके ।  
 गोकिलो मुसले सीरे गोपालो गोपभूपयो ॥ ८८ ॥  
 गैरिलो लोहचूर्णे स्याद्गौरिलो गौरसर्पपे ।  
 ग्रन्धिलस्त्रिपु समन्थौ ना करीरे विकङ्कते ॥ ८९ ॥  
 चञ्चला च तडिलक्ष्म्योश्चञ्चलश्चलरामिनो ।  
 वाते पुस्यथ चत्वालः स्याद्गर्भे हेमकुण्डले ॥ ९० ॥  
 चन्द्रिलश्चन्द्रमौलौ च वास्तूके नापितेऽपि च ।  
 चपल क्षणिके शीघ्रे चञ्चलेऽप्यभिधेयवत् ॥ ९१ ॥

केवल-निर्णयनियमाहुवा, ( न० )

केवली ज्ञानभेद ( स्त्री० )

कैशिल-पृथ्वी, जल, केशसमूह,  
वृक्षसमूह ( पु० ) ॥ ८६ ॥

कोमल-सुसमार, जल, ( न० )

कोहल-मुनि, मद्य ( पु० )

गन्धोली-हृत्ता, पीपलरायसनआदि,  
कचूर ( स्त्री० ) ॥ ८७ ॥

गरल-विष, प्रमाण, वृणरा पूला  
( न० )

गोकिल-मूसल, हल ( पु० )

गोपाल-गोप, राजा ( पु० ) ॥ ८८ ॥

गौरिल-लोहचूर्ण, सफेद सरसो  
( पु० )

ग्रन्धिल-गोंठोंगाला, ( त्रि० ) कैर-  
रुश, कनाई या विकरत-वृक्ष  
( पु० ) ॥ ८९ ॥

चञ्चला-दिनली लक्ष्मी ( स्त्री० )

चञ्चल-चगयमान, कामी ( पु० )

चत्वाल-वायु, गर्भ, सुरण-बुडल  
( पु० ) ॥ ९० ॥

चन्द्रिल-महादेव, पशुवा-शाक, नाई  
( पु० )

चपल-अस्थिर बुद्धिवाला, शीघ्रता  
वाला, चञ्चल, ( त्रि० ) ॥ ९१ ॥

चपलः पारदे मीने शिलाभेदेऽपि चोरके ।  
 चपला कमला विद्युत्पुंश्चलीपिप्पलीष्वपि ॥ ९२ ॥  
 चूडाला चकलायां स्याद्वाच्यवचूडयान्विते ।  
 छगली छागयोपायां छगली वृद्धदारके ॥ ९३ ॥  
 छगलस्तु मतश्छागे छगलं नीलवाससि ।  
 जगलो भेदके मद्ये कैतवे मदनद्रुमे ॥ ९४ ॥  
 जङ्गलक्षिपु निर्वारिदेशेऽस्त्री जङ्गलं पले ।  
 जटिलस्तु जटायुके जटिला मासिकौषधौ ॥ ९५ ॥  
 जम्भलः पुंसि जम्बीरे जम्भलो देवतान्तरे ।  
 जम्बूलो जम्बुविटपे जम्बूलः क्रकचच्छदे ॥ ९६ ॥  
 जम्बालः शैवले पङ्के जाङ्गलस्तु कपिञ्जले ।  
 वाच्यवज्जङ्गलोद्भूते शूकशिम्ब्यां तु जाङ्गली ॥ ९७ ॥

चपल-पारा, मच्छ, शिलाभेद, चोर,  
( पुं० )

चपला-लक्ष्मी, विजली, पुंश्चली  
स्त्री, पीपल, ( स्त्री० ) ॥ ९२ ॥

चूडाला-निर्विषी घास, ( स्त्री० )  
चोदीवाला ( त्रि० )

छगली-बकरी, भिदारा-औषधि  
( स्त्री० ) ॥ ९३ ॥

छगल-बकरा ( पुं० )

छगल-नीला वस्त्र ( न० )

जगल-भेदक ( जगल ), मदिरा,  
कपट, मौलसिरी या मैनफल रक्ष  
( पु० ) ॥ ९४ ॥

जंगल-जलरहितदेश ( त्रि० )

जंगल-मास ( पु० न० )

जटिल-जटावाला, ( त्रि० )

जटिला-जटामासी-औषधि ( स्त्री० )  
॥ ९५ ॥

जम्भल-जम्बीरी नीबू, देवताभेद  
( पु० )

जम्बूल-जामन-रक्ष, शान्-रक्ष  
( पुं० ) ॥ ९६ ॥

जम्बाल-निवाल, कीच, ( पुं० )

जांगल-वर्षिजल-पक्षी, ( पु० )  
जंगलमे होनेवाला ( त्रि० )

जांगली-बौबकी फली ( स्त्री० )  
॥ ९७ ॥

जाङ्गुली विषविद्यायां जाङ्गुलं जालिनीफले ।

स्यात्तण्डुलस्तु धान्यादिनिकरेऽपि विडङ्गके ॥ ९८ ॥

तमालः सङ्गे तापिच्छे तिलके वरुणद्रुमे ।

तरलश्चञ्चले सङ्गे भासुरे त्रिपु पुंसि तु ॥ ९९ ॥

हारमध्यमणौ मद्ययवाग्वोस्तरला स्त्रियाम् ।

ताम्बूली नागवह्यां स्यात्ताम्बूलं क्रमुके मतम् ॥ १०० ॥

तुमुलं रणसङ्घटे तुमुलस्तु कलिद्रुमे ।

तैतिलो गण्डके पुंसि तैतिलं करणान्तरे ॥ १०१ ॥

दुकूलमद्वयोः क्षौमे दुकूलः सूक्ष्मवाससि ।

धवलः सुन्दरे श्वेते त्रिपु पुंसि महावृषे ॥ १०२ ॥

धवली सौरभेय्या स्यान्नकुलः पाण्डवान्तरे ।

वभ्रौ च नकुली तु स्यात्कुक्कुट्यां मासिक्रौपधौ ॥ १०३ ॥

जाङ्गुली—विषविद्या ( स्त्री० )

जाङ्गुल—तिमनी तोरईके फल ( न० )

तण्डुल—धान्यआदिना समूह, वाय-  
विडङ्ग ( पु० ) ॥ ९८ ॥

तमाल—सङ्ग, तमाल—वृक्ष, तिलक-  
पुष्पवृक्ष, वरुणा—वृक्ष ( पुं० )

तरल—चंचल, सङ्ग, ( पुं० ) तेज-  
वाला ( त्रि० ) ॥ ९९ ॥

हारनी मध्यमणि, ( पुं० )

तरला—नदिरा, यवागू ( पतला रेंधा  
दुया अप्र ( स्त्री० )

ताम्बूली—नागरखेल, ( स्त्री० )

ताम्बूल—मुसारी ( न० ) ॥ १०० ॥

तुमुल रणसंघट ( रणसमूह, ) ( न० )

तुमुल—वहेडा—वृक्ष ( पुं० )

तैतिल—सैदा ( पु० )

तैतिल—वरुण ( न० ) ॥ १०१ ॥

दुकूल—रेसमीवस्त्र ( न० )

दुकूल—यारीकवस्त्र ( पुं० )

धवल—सुन्दर, श्वेत ( सफेद ) ( त्रि० )

वडावेल ( पुं० ) ॥ १०२ ॥

धवली—गौ, ( स्त्री० )

नकुल—एक पाण्डव, नीला ( पु० )

नकुली—सेमर—वृक्ष, जयानांती

( औषधि ) ( स्त्री० ) ॥ १०३ ॥

नाकुली कुकुटीकन्दे नाकुली चव्यरात्रयोः ।  
 नाभीलं नाभिगर्माण्डे बह्वणे चोत्तमस्त्रियः ॥ १०४ ॥  
 निचुलस्तु निचोले स्यान्निचुलो हिज्जलद्रुमे ।  
 निर्माल्येऽप्यभ्रके क्लीवं विमले त्रिषु निर्मलम् ॥ १०५ ॥  
 निष्कलस्तु कलाशून्ये नष्टबीजेऽपि वाच्यवत् ।  
 निष्कला तु मता तस्यां या नारी विगतार्त्तवा ॥ १०६ ॥  
 वर्तुलेऽपि चलेऽपि स्यान्निस्तलं वाच्यलिङ्गकम् ।  
 नैपाली नवमाल्यां स्यात्कुनटीसुवहास्त्रयोः ॥ १०७ ॥  
 पञ्चाली पुत्रिकागीत्यो पञ्चालो जनदेशयो ।  
 पटलं तु छदिनेत्ररुक्मिपटके परिच्छदे ॥ १०८ ॥  
 न पुंसि वृन्दे पटलं पटोलं कर्कशच्छदे ।  
 पटोलं वल्लभेदे स्याज्ज्योत्स्निकायां पटोल्यपि ॥ १०९ ॥

नाकुली-कुकुटीकंद, चव्य, रायमन ( स्त्री० )	निस्तल-गोल आकार, चल ( अस्थिर ) ( त्रि० )
नाभील-श्रेष्ठस्त्रीको नाभि ( इडी ) के भीतरका अडा, जघा की सधि ( न० ) ॥ १०४ ॥	नैपाली-नेवारी, मनसिल, काले फूलवाली निर्गुडी ( स्त्री० ) ॥ १०७ ॥
निचुल-अगरखा, हिज्जल ( जलवेत ) का भेद ( पुं )	पञ्चाली-पुतली, गीति, ( स्त्री० )
निर्मल-निर्माल्य ( भोगीहुईवस्तु ), मोडल, ( न० ) मलरहित ( त्रि० ) ॥ १०५ ॥	पञ्चाल-जन, देश ( पुं० )
निष्कल-कलारहित, नष्टबीज ( नष्टबीर्य ) पुरुषआदि ( त्रि० )	पटल-परदा, नेत्ररोग, पिटारी, टकना, ( न० ) ॥ १०८ ॥
निष्कला-रजखलाहोनेसे बंदहुई स्त्री ( स्त्री० ) ॥ १०६ ॥	पटल-समूह ( स्त्री० न० )
	पटोल-परवल, वल्लभेद, ( न० )
	पटोली-सफेद फूलकी तोरई या रं-पुका ( स्त्री० ) ॥ १०९ ॥

तिलचूर्णे पले पङ्के पललं राक्षसे पुमान् ।  
 पाकलं कुष्ठभैषज्ये पाकलः कुजरज्वरे ॥ ११० ॥  
 कुटपूर्वश्च तत्रैव नवपाके तु पाकली ।  
 पाचलो राधनद्रव्ये दहने पवनेऽपि च ॥ १११ ॥  
 पाटला पाटलितरौ पुष्पे स्यात्पाटला न ना ।  
 पाटली पाटलाया स्यादाशुग्रीहौ तु पाटलः ॥ ११२ ॥  
 पाटल श्वेतरक्तेऽपि तद्वति त्रिषु पाटलम् ।  
 मृत्पात्रभेदे वामाया वागुराया च पातिली ॥ ११३ ॥  
 पातालं भूतलेऽप्यौर्वे बन्धक्या मुवि पांशुला ।  
 पांशुलः पुश्चले शम्भुखट्वाङ्गे पाशुसयुते ॥ ११४ ॥  
 पिङ्गलो मुनिभेदेऽग्रे चण्डाशो पारिपार्श्विके ।  
 निधिभेदे कूपौ रुद्रे पिङ्गलः कपिलेऽन्यवत् ॥ ११५ ॥

पलल-तिलचूर्ण, पल ( कालमान ) कीच ( न० )	पाटल-श्वेतमिश्रित रक्तवर्ण, ( पु० ) श्वेतरक्तवर्णवाला ( त्रि० )
पलल-राक्षस, ( पु० )	पातिली-मिट्टीके पात्रमा भेद, छी- भेद, मृगवधिनी ( बाबर ) ( छी० ) ॥ ११३ ॥
पाकल-कूट-औषधि, ( न० )	पाताल-पृथ्वीका तलभाग, षडधानल ( पु० )
पाफल-हस्तीका ज्वर ( पु० ) ॥ ११० ॥	पांशुला-व्यभिचारिणी छी, पृथ्वी ( छी० )
कुटपाफल-हस्तीका ज्वर ( पु० )	पांशुल-व्यभिचारी पुण्य, शिवका खट्वांग ( पु० ) धूलियुक्त ( त्रि० ) ॥ ११४ ॥
पाकली-नवीन-पाक ( छा० )	पिङ्गल-मुनिभेद, अग्नि, सूर्यरा गमा- पवती, निधिभेद, बदर, रुद, ( पु० ) विगतत्वणवाला ( त्रि० ) ॥ ११५ ॥
पाचल-राधन ( सिद्ध ) द्रव्य, अग्नि, पवन, ( पु० ) ॥ १११ ॥	
पाटला-पाटल-पृश्न, पाटलके पुष्प ( छी० न० )	
पाटली-मोजा वा पाटल, ( छी० )	
पाटल-आगुधान ( पु० ) ॥ ११२ ॥	



स्त्रियां करायिकावेश्या कुमुदस्त्रीषु पिङ्गला ।

पिचुलो झबुके पुंसि निचुले वारिवायसे ॥ ११६ ॥

पिच्छिला शालमलौ सिन्धुभेदेशिशपयोः स्त्रियाम् ।

स्त्रियामुपोदिकायां च पिच्छिलो विजिले त्रिषु ॥ ११७ ॥

पिङ्गलं कुशपत्रे स्यात्पीतेऽपि त्रिषु पिङ्गलम् ।

पित्तलं तैजसद्रव्ये पित्तयुक्ते तु वाच्यवत् ॥ ११८ ॥

पिप्पला जलपिप्पल्या बोधिवृक्षे तु पिप्पलः ।

निरशुले पक्षिभेदे पिप्पलः पिप्पलं जले ॥ ११९ ॥

वसनच्छेदभेदेऽपि कणायां तु च पिप्पली ।

पुद्गलः सुन्दराकारे देहे चात्मनि पुद्गलः ॥ १२० ॥

पेशलो रुचिरे दक्षे चाल्शीलेऽपि वाच्यवत् ।

प्रस्त्रलो बाजिसन्नाहे त्रिषु ह्यन्तश्चले चले ॥ १२१ ॥

पिङ्गला-पक्षिभेद, वेश्याभेद, कु-  
मुदिनी ( स्त्री० )

पिचुल-शाक-वृक्ष, जलवेतका भेद,  
जलवाण ( पुं० ) ॥ ११६ ॥

पिच्छिला-शाल-वृक्ष, नदीभेद,  
शीसम-वृक्ष, शडुन-चिह्नौ ( स्त्री० )

पिच्छिल-मंडयुक्त दधिआदि ( त्रि० )  
॥ ११७ ॥

पिङ्गल-डुसाका पत्र ( नं० ) पीला  
रंगवाला ( त्रि० )

पित्तल-पीतल-धातु, ( नं० ) पि-  
त्तयुक्त ( त्रि० ) ॥ ११८ ॥

पिप्पला-जलपीपल ( स्त्री० )

पिप्पल-पीपल-वृक्ष ( पुं० )

पिप्पल-कातिहीन, पक्षिभेद, ( पुं० )

पिप्पल-जल ( नं० ) ॥ ११९ ॥

पिप्पली-पीपल-आपधि ( स्त्री० )

पुद्गल-सुंदर आकारवाला शरीर, आ-  
त्मा, ( पुं० ) ॥ १२० ॥

पेशल-सुंदर, चतुर, अच्छे स्वभाव-  
वाला ( त्रि० )

प्रस्त्रल-अशक कवच, ( पुं० )  
अन करणसे बलित, ॥ १२१ ॥

प्रतलः स्यात्संहतयोर्वामदक्षिणहस्तयोः ।

पाताललोके प्रतलस्तताङ्गुलिकेऽपि च ॥ १२२ ॥

वीणादण्डे प्रवालोऽस्त्री विद्रुमे नवपल्लवे ।

फेनिलोऽरिष्टवृक्षे स्यात्फेनिलं बदरीफले ॥ १२३ ॥

मदनद्रुफले चैव सफेने फेनिलस्त्रिषु ।

बन्धलम्बामले पुञ्जे पल्लवे मत्तकुञ्जरे ॥ १२४ ॥

बहुलं व्योम्नि बहुला त्वेलानीलिकयोर्भुवि ।

बहुलाः कृत्तिकासु म्यु कृष्णपक्षेऽनले पुमान् ॥ १२५ ॥

बहुलस्तु मत प्राज्ये कृष्णवर्णेऽपि वाच्यवत् ।

वार्दलो दुर्दिने पुंसि मसीधानेऽपि वार्दलः ॥ १२६ ॥

मङ्गला श्वेतदूर्वाया मङ्गलस्तु महीसुते ।

मङ्गलं श्रेयसि क्लीब तथा लब्धार्थरक्षणे ॥ १२७ ॥

प्रतल—बायें दायें दोनों हाथ मिले हुए, पाताललोक, फेंलीहुई जगु-लियोवाला हाथ ( पुं० ) ॥१२२॥	बहुला—दलायची, नीला ( नील ), पृथ्वी ( स्त्री० )
प्रवाल—बीजाका दंड, मृगा, नवीन पत्र ( पुं० )	बहुला—छहों कृत्तिका ( स्त्री० )
फेनिल—रीटाका वृक्ष, ( पुं० )	बहुल—कृष्णपक्ष, अग्नि ( पुं० ) ॥ १२५ ॥ बहुत, काला रंगवाला ( त्रि० )
फेनिल—बेरीका फल ( बेर ) ॥१२३॥	वार्दल—मेघोत्ते छायादिन, दवात ( पुं० ) ॥ १२६ ॥
मदनफल ( न० )	मंगला—सपेद दूल, ( स्त्री० )
फेनिल—फेनों ( क्षाणों ) चाला ( त्रि० )	मंगल—मंगल ग्रह ( पुं० )
बन्धल—भौवला, समूह, छोटी तालाई, उन्मत्त हत्ती ( पुं० ) १२४	मंगल—कन्याण, लब्धद्रव्यकी रक्षा ( न० ) ॥ १२७ ॥
बहुल—आकाश, ( न० )	

मञ्जुलो जलरङ्गौ स्यान्मञ्जौ तु त्रिपु पेपलः ।

मलञ्जुं शैवले कुञ्जे विम्बेषु त्रिपु मण्डलम् ॥ १२८ ॥

मण्डलं निकुरुम्बेऽपि देशे द्वादशराजके ।

कुष्ठाहिभेदे परिधौ चक्रवाले च मण्डलम् ॥ १२९ ॥

मण्डलं स्यान्मण्डलके सारमेये तु मण्डलः ।

महिला तु महेलाया महिलाऽभीरुगुन्द्रयोः ॥ १३० ॥

माचलो वन्दिचौरे स्यादामये ग्राहयादसोः ।

धत्तूरे सामके व्रीहौ मदनद्रौ च मानुलः ॥ १३१ ॥

समन्ताचालमूल्यास्तुकर्ण्योस्तु मुसली खियाम् ।

मुसली गृहगोधायामयोत्रे मुसलं मतम् ॥ १३२ ॥

काञ्च्या शैलनितम्बे च खड्गवन्दे च मेखला ।

मेखला कटिदेशे च रसालः सरसे त्रिपु ॥ १३३ ॥

मंजुल-जलरङ्ग, ( पुं० ) सुदर,  
( त्रि० )

चतुर-सुदर ( त्रि० )

मंजुल-सिवाल, कुंज, ( न० )

मंडल-विं ( त्रि० ) ॥ १२८ ॥

मंडल-समूह ( न० ) बारह राजा-  
ओंके मध्यका देश, कुष्ठभेद, सर्प-  
भेद, कर्मा दीखनेवाला सूर्यका  
कुंडल, ( गोल घेरा ) ( पुं० ) १२९

मंडल-गोल मंडल, ( न० ) वृत्ता  
( पुं० )

महिला-स्त्री, शतावर, फूल प्रियगू  
( स्त्री० ) ॥ १३० ॥

माचल-वन्दिचौर, गेग, ग्राह, जल-  
जतु ( पुं० )

मानुल-धत्तूरा, सामक, व्रीहि, मैन-  
फल-वृक्ष, ( पुं० ) ॥ १३१ ॥

मुसली-तालमूली, मूसासत्री, छप-  
दली, ( स्त्री० )

मुसल-मूसल ( न० ) ॥ १३२ ॥

मेखला-करधनी, पर्वतका नितंब,  
खड्गबंध, कटिदेश, ( स्त्री० )

रसाल-रसगाल, ( त्रि० ) ॥ १३३ ॥

रसाल इक्षौ चूते च रसालं बेलिसिंहयो ।

रसाला मार्जिताया स्याज्जिह्वादूर्वाविदारिषु ॥ १३४ ॥

रामिलो रमणे कामे लाङ्गलं पुच्छशेफयो ।

लाङ्गली जलपिप्पल्या लाङ्गलं कुसुमान्तरे ॥ १३५ ॥

गृहदारुविशेषे च सीरे ताले च लाङ्गलम् ।

लोहलः शृङ्खलाधाये त्रिषु त्वव्यक्तमापिणि ॥ १३६ ॥

वण्टालः शूरयोर्युद्धे पुसि नौकाखनित्रके ।

वातुलो वातसघाते वातले मारुनाऽप्यहे ॥ १३७ ॥

वातलं राजकूप्माण्डबीजफोलास्त्रिवीजयो ।

वामिलो दाम्भिकेऽपि स्यात्त्रिषु रामेऽपि वामिलः ॥ १३८ ॥

विडालः पुसि मार्जारे विडालो विहगान्तरे ।

विपुलः पृथुलेऽगाधे मेरुपश्चिमपर्वते ॥ १३९ ॥

रसाल-ऊस, आम, ( पु० ) बोल,  
शिलारस ( न० )

रसाला-दही शहद खाड मिरच  
अदरक आदिसे बनाई हुई चटनी,  
जीम, दूब, विदायीकद ( स्त्री० )  
॥ १३४ ॥

रामिल-रमण ( पति ), कामदेव,  
( पु० )

लाङ्गल-पैल, लिंग, ( न० )

लाङ्गली-जलपीपल, ( स्त्री० )

लांगल-पुष्पभेद, ( न० ) ॥ १३५ ॥

गृहदारुविशेष, हल, ताड-वृक्ष, ( न० )

लोहल-शखलाधार्य ( संकलसे रोक

नेयोग्य) ( पु० ) अप्रकट बोल  
नेवाला ( त्रि० ) ॥ १३६ ॥

वण्टाल-शुवारोंका लुद्ध, नौका,  
जमीन खोदनेका औजार ( पु० )

वातूल-वायुका समूह ( पु० ) वात  
पाला, वायुको नहीं सहनेवाला  
( त्रि० ) ॥ १३७ ॥

वातल-कोहलाके बाज, बेरकी गुं  
ली, ( न० )

वामिल-दभी, मुदर ( त्रि० ) १३८

विडाल-बिलाव, पक्षिभेद ( पु० )

विपुल-बडा, विनाघाहवाला, मुमे  
दका पश्चिमपर्वत ( पु० ) ॥ १३९ ॥

विमला शातलाभूमिभेदयोर्निर्मले त्रिषु ।  
 विशालो वृक्षभेदे स्याद्विशाले विपुलेऽन्यवत् ॥ १४० ॥  
 विशाला त्विन्द्रवारुण्यामुज्जयिन्यां च दृश्यते ।  
 वृषलः पुंसि शूद्रे स्याच्चन्द्रगुप्तेऽपि राजनि ॥ १४१ ॥  
 शकलं वल्कले खण्डे रागवस्तुत्वचोरपि ।  
 क्लीवं पाथेयकुलयोर्मत्सरे त्रिषु शम्बलम् ॥ १४२ ॥  
 शयालुः शुन्यजगरे निद्राशीले तु वाच्यवत् ।  
 शरालं नीरसोपाने वास्तुपोतेऽपि पञ्जरे ॥ १४३ ॥  
 ऋजौ वक्रे च शीले च शार्दूलो राक्षसान्तरे ।  
 अष्टापदेऽपि व्याघ्रेऽपि श्रेष्ठे स्यादुत्तरस्थितः ॥ १४४ ॥  
 शाल्मलिस्तु द्वयोर्वृक्षभेदे द्वीपान्तरेऽपि च ।  
 शीतलं शैलजे पुष्ये काशीशे मलयोद्भवे ॥ १४५ ॥

विमला-शातला (शूअर) भेद,  
 पृथ्वीभेद, (क्ली०) निर्मल, (त्रि०)  
 विशाल-वृक्षभेद, (पुं०) बडा,  
 बहुत, (त्रि०) ॥ १४० ॥  
 विशाला-श्रायण-औषधि, उज्जैन-  
 नगरी (क्ली०)  
 वृषल-शूद्र, चंद्रगुप्त राजा (पुं०)  
 ॥ १४१ ॥  
 शकल-वृक्षका बल्कल, दुग्धा, रँग-  
 नेकी वस्तु, चर्म (न०)  
 शम्बल-भार्गवी खरची, कुल, (न०)  
 मत्सरी-पुरपआदि (त्रि०)  
 ॥ १४२ ॥

शयालु-कुत्ता, अजगर, (पु०)  
 निद्राशील (त्रि०)  
 शराल-तालावकी पैदी, गृहनौका,  
 पीजरा, (न०) ॥ १४३ ॥  
 सरल, वक्र, शील, (त्रि०)  
 शार्दूल-राक्षसभेद, अष्टापद (धत्तरा  
 या सोना) वषेरा, और दूसरे  
 शब्दके आगे जुडा होनेसे धेष्ट,  
 (पु०) ॥ १४४ ॥  
 शाल्मलि-वृक्षभेद, द्वीपभेद, (पुं०  
 क्ली०)  
 शीतल-पत्थरका फूल या भूरिल-  
 रीला, कमीस, मलयाचलमें होने-  
 वाला (चंदन) (न०) ॥ १४५ ॥

शीते चासनपर्ण्या च शीतलः शीतले त्रिपु ।

शेवाले शीतलं क्लीव शैलेयेऽपि च शीतलम् ॥ १४६ ॥

शृगाली तु शिवाभीत्यो शृगालः फेरुदैत्ययो ।

शृङ्खला निगडेऽपि स्यात्पुंस्कटीरखवन्धने ॥ १४७ ॥

शेवाले पद्मकाष्ठेऽपि शैवलं मतमद्वयो ।

शौष्कल शुष्कमासत्य पाणिके पिशिताशिनि ॥ १४८ ॥

श्यामलम्बसितेऽस्वच्छे श्यामवर्णे तु वाच्यवत् ।

श्रद्धालुर्दोहदिन्या स्याद्वाच्यवच्छ्रद्धयान्विते ॥ १४९ ॥

श्रीफली नीलिकाध्यायोर्माखरे श्रीफली पुमान् ।

पण्डाली तु सरोजिन्या कामुकीतैलमानयोः ॥ १५० ॥

सङ्कुलं वाच्यवद्वापेऽस्पष्टार्थवचनेऽपि च ।

सन्धिला तु सुरङ्गाया नदीमदिरयोरपि ॥ १५१ ॥

शीतल—ठड, रमुनिया घास या को- थद्दालु—दोहद ( इच्छा ) वाली  
यल, ( पु० ) ठडा, ( त्रि० ) स्त्री, ( स्त्री० ) थद्दालुफ, ( त्रि० )  
शिलात्रीत ( न० ) ॥ १४६ ॥ ॥ १४९ ॥

शृगाली—गोदडी, भीति, ( भय ) ( स्त्री० ) श्रीफली—नीली, ( नीलका पेड ), औं  
शृगाल—गीदड, दैत्य, ( पु० ) वला, ( स्त्री० )

शृङ्खला—बेडी, पुस्तकी बटिवन्धना श्रीफल—बेल-वृक्ष, ( पुं० )  
बंधन ( स्त्री० ) ॥ १४७ ॥ पण्डाली—कमलिनी, सभोगकी इ-

शैवल—डिवाल, पद्मकाष्ठ—औषधि च्छावाली स्त्री, तैलप्रमाण, ( स्त्री० )  
( न० ) ॥ १५० ॥

शौष्कल—सूखे मासकी दुकानवाला, सङ्कुल—व्याप्त, ( त्रि० ) अस्पष्टार्थ-  
मासभक्षी ( पुं० ) ॥ १४८ ॥ वाला वचन, ( न० )

श्यामल—नीलवर्ण, मलिनवर्ण ( पु० ) सन्धिला—सुरंग, नदी, मदिता,  
श्यामवर्णवाला ( त्रि० ) ( स्त्री० ) ॥ १५१ ॥

लचतुर्थम् ।

बलाभेदे त्वातवला प्रवलेऽतिवलस्त्रिपु ॥

अक्षमाला विजानीयादरुन्धत्यक्षसूत्रयोः ॥ १५२ ॥

उदूखलं गुग्गुलौ स्यादुलूखलमुलूखले ।

एकाष्ठीला स्त्रियां पुंसि पापचेत्यां बुके क्रमात् ॥ १५३ ॥

कचमालो मरुद्वाहे नागभेदे जटान्तरे ।

कन्दरालः पुमान्गर्द्भाण्डेऽक्षपृक्षवृक्षयोः ॥ १५४ ॥

अस्त्री कमण्डलुः कुण्ड्या पर्कटीपादपे पुमान् ।

कृषिं कर्मफलं कर्मरङ्गकर्मविपाकयोः ॥ १५५ ॥

पुंसि कोलाहले सर्जरसे कलकलः स्मृतः ।

कुतूहलं कौतुके स्यात्त्रिपु शस्ते कुतूहलम् ॥ १५६ ॥

कृताञ्जलिस्तु भैषज्ये विहितो येन चाञ्जलिः ।

खतमालः पुमान्धूमे खतमालो बलाहके ॥ १५७ ॥

लचतुर्थम् ।

या बहेजा, पिलखनवृक्ष, (पुं०)

अतिवला-खरंहटीभेद ( पीलेरगकी  
खरंहटी, ) ( स्त्री० )

॥ १५४ ॥

अतिवल-प्रवल-पुरुष आदि ( त्रि० )

कमण्डलु-कूडी, पिलखन-वृक्ष, (पुं०)  
( पुं० न० )अक्षमाला-अरुन्धती ( वसिष्ठकी  
स्त्री ), स्राक्षकी माला, ( स्त्री० )कर्मफल-कर्मरस फल, कर्मोका फल,  
( न० ) ॥ १५५ ॥

॥ १५२ ॥

उदू(लू)खल-गूगल, ऊँखल, ( न० )

कलकल-कोलाहल, ( हल ), राल-  
वृक्ष, ( पुं० )

एकाष्ठीला-सौनापाठा, ( स्त्री० )

कुतूहल-कौतुक, श्रेय, ( न० )  
॥ १५६ ॥

एकाष्ठील-गूमा-आंपधि ( पुं० )

॥ १५३ ॥

कचमाल-....., नागभेद, जटाभेद  
( पुं० )कृताञ्जलि-आंपधि, जिसने अजलि  
करी है वह, ( पुं० )

कन्दराल-थारसपापल, अखरोट

खतमाल-धूँ, मेघ, ( पुं० ) १५७

गण्डशैलो गिरिभ्रष्टस्थूलोपलकपोलयोः ।

स्त्रियां गन्धफली फल्यां तथा चम्पककोरके ॥ १५८ ॥

गोलांगूलं तु गोपुच्छे गोलाङ्गूलः कपौ पुमान् ।

चक्रवालो गिरेर्भेदे चक्रवालं तु मण्डले ॥ १५९ ॥

जलाञ्चलं तु शैवाले स्वतः पानीयनिर्गमे ।

दलामलं मरुवके दमनेऽपि दलामलम् ॥ १६० ॥

ध्वनिनाला तु वीणायां वेणुकाहलयोरपि ।

भवेत्परिमलश्चित्तहारिगन्धविमर्दयोः ॥ १६१ ॥

रतामर्दसमुन्मीलदङ्गरागादिसौरभे ।

पीठकेलिः पीठमर्दं करकाकेशिरागयोः ॥ १६२ ॥

दौर्गतौ वारिवाहे च पीठकेलिपटाभिधा ।

स्त्रीपुंसयोर्बहुफला मलयूनीपयोः क्रमात् ॥ १६३ ॥

गण्डशैल—पर्वतसे गिराहुवा बडा

पत्थर, कपोल ( गाल ), ( पुं० )

गन्धफली—फूलप्रियगू, चपाकी

फली, ( स्त्री० ) ॥ १५८ ॥

गोलांगूल—गौकी पूल, ( न० ) बन्दर,

( पुं० )

चक्रवाल—पर्वतभेद, ( पुं० ) मंडल,

( न० ) ॥ १५९ ॥

जलाञ्चल—शिवाल, आपसे पानीवा

सिरना, ( न० )

दलामल—मरुवा, दौना, ( न० )

॥ १६० ॥

ध्वनिनाला—वीणा, वेणु ( वंशी ),

काहल, ( बडा ) नगाटा, ( स्त्री० )

परिमल—चित्तको हरनेवाला गंध,

( पुं० ) ॥ १६१ ॥

विशेषमर्दन, सुरतके मर्दनमें उत्पन्न

हुवा अंगरागका गंध, ( पुं० )

॥ १६२ ॥

पीठकेलि—अतिघृष्ट, ओला, नेत्रद-

जन, दुर्गतिवाला, मेघ, ( पुं० स्त्री० )

बहुफला—बहुमर, ( स्त्री० )

बहुफल—कदंब-वृक्ष, ( पुं० ) ॥ १६३ ॥



बृहन्नलो गुडाकेशे महापोटगलेऽपि च ।  
 भद्रकाली तु पार्वत्यां गन्धोल्यामोषधीभिदि ॥ १६४ ॥  
 भस्मतूलं हिमे पांशुवर्षणग्रामकूटयोः ।  
 भणिमाला मता योषिद्दशनक्षतहारयोः ॥ १६५ ॥  
 मदकलः स्यान्मत्तेभे मदेनाऽव्यक्तवाचि च ।  
 महाकालो महादेवे किम्पाके प्रमथान्तरे ॥ १६६ ॥  
 महानीलो नागभेदे महानीलश्च मार्कवे ।  
 महावलं सीसके च बलप्रौढे तु वाच्यवत् ॥ १६७ ॥  
 गोरक्षतण्डुलायां तु खियामेव महाबला ।  
 मुक्ताफलं तु मुक्तायां कर्णपूरे बले फले ॥ १६८ ॥  
 स्यात्कदल्यां मृत्युफली महाकालतरौ पुमान् ।  
 पुमान्व्यवफलो वेणौ कुटजे मासिकौषधौ ॥ १६९ ॥

वृहन्नल-अजुन, बडा देवनल या काश, ( पु० )	महानील-नागभेद, कूकरभंगरा, ( पु० )
भद्रकाली-पार्वती, छोटाकूपूर, औषधिभेद, ( स्त्री० ) ॥ १६४ ॥	महावल-महावल शोशा, ( न० ) बहुतबलवान, ( नि० ) ॥ १६७ ॥
भस्मतूल-हिम ( टंड ), गोंवका कुरङ्ग, रजका वरसना,	महाबला-गंगेरन ( स्त्री० )
भणिमाला-झोके दांतोंसे काटनेका चिह्न, हार, ( स्त्री० ) ॥ १६५ ॥	मुक्ताफल-मोती, कर्णग्रामूरन, बल, फल, ( न० ) ॥ १६८ ॥
मदकल-उन्मत्त हस्ती, मदसे अव्यक्तवाणीवाला, ( पु० )	मृत्युफली-केला, ( स्त्री० )
महाकाल-महादेव, महाकाललता, शिवगणभेद, ( पु० ) ॥ १६६ ॥	कदल-महाकालवृक्ष, ( पु० )
	व्यवफल-बन्ध, इंद्रव, इन्द्रवन्तं औषधि, ( पु० ) ॥ १६९ ॥

रजस्वलस्तु महिषे पुष्पमत्या रजस्वला ।  
 वातकेलिः कलालापे पिङ्गाना दन्तस्रण्डने ॥ १७० ॥  
 ह्रीव वायुफलं शक्रार्मुके वर्षणोपले ।  
 पुमान्विचकिलो मल्लीभेदे दमनकेऽपि च ॥ १७१ ॥  
 उदुम्बरे स्कन्धफले नालिकेरे सदाफलः ।  
 हरिताली नभोरेखाखङ्गदूर्वासु दृश्यते ॥ १७२ ॥  
 हलाहलो ब्रह्मसर्पे ज्येष्ठिकाया विपान्तरे ।  
 ऐरावते हस्तिमहो हस्तिमहो विनायके ॥ १७३ ॥

लपचमम् ।

आसुतोवलशब्दस्तु मतो यज्वनि शौण्डिके ।  
 भवेद्दुद्गण्डपालस्तु मत्स्यसर्पप्रभेदयो ॥ १७४ ॥  
 राजराजेऽपि कालिन्दीभेदनेप्येककुण्डलः ।  
 गजपित्तज्वरे पाके पवने कूटपाकलः ॥ १७५ ॥

रजस्वल-भैसा, ( पु० )  
 रजस्वला-ऋतुपर्मावाली स्त्री, ( स्त्री० )  
 वातकेलि-सूक्ष्मशब्दसे आलाप, का-  
 मीपुण्यके दांतोंसे काटना, ( स्त्री० )  
 ॥ १७० ॥  
 वायुफल-इद्रधनुष, वर्षाका पत्थर  
 ( ओला ), ( न० )  
 विचकिल-मल्लिकाभेद, दौना, ( पु० )  
 ॥ १७१ ॥  
 सदाफल-गूलर, , नालीर  
 ( पु० )  
 हरिताली-आकाशरेखा, खड्ग, दूब,  
 ( स्त्री० ) ॥ १७२ ॥

हलाहल-ब्रह्मसर्प ( नागभेद ), जे  
 ठीमधु, विषभेद ( पु० )  
 हस्तिमहो-ऐरावत हस्ती, गणेश  
 ( पु० ) ॥ १७३ ॥  
 लपचम ।  
 आसुतोवल-यज्ञकरनेवाला, मदिरा  
 बेचनेवाला, ( पु० )  
 उद्दुद्गण्डपाल-मच्छभेद, सर्पभेद, ( पु० )  
 ॥ १७४ ॥  
 एककुण्डल-कुबेर, बलदेव, ( पु० )  
 कूटपाकल-हस्तीका पित्तज्वर, पाक,  
 पवित्रकरण, ( पु० ) ॥ १७५ ॥

कृपीटपालः पुंस्येव केनिपातसमुद्रयोः ॥ १७६ ॥ ॥

स्यात्पाण्डुकम्बलः श्वेतकम्बले ग्रावदन्तरे ।

विवाहदिनसम्बन्धशिरोमाल्येऽपि सम्मता ॥ १७७ ॥

मता सुरतताली तु दूतिकामस्तकस्रजोः ।

मन्त्रचूर्णलमिच्छन्ति वशीकरणवेदिनि ॥ १७८ ॥

डाकिनीमोक्षमन्त्रे कुशाम्बुप्रोक्षणेऽपि च ॥ १७९ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्वा लकारान्तवर्गः ॥

### अथ वान्तवर्गः ।

वैकम् ।

घः कुम्भे वरुणे व स्यादिवार्ये सांत्वनेऽव्ययम् ।

वा वाततातयोर्ग्रन्थौ विः स्वगाकाशयोः पुमान् ॥ १ ॥

स्वो जातावात्मनि स्वं तु त्रिप्वात्मीये धनेऽस्त्रियाम् ।

कृपीटपाल-पतवार, समुद्र, ( पुं० )  
॥ १७६ ॥

पाण्डुकम्बल-सफेद कम्बल, पत्थरभेद,  
( पुं० )

सुरतताली-विवाहदिनकी शिरकी  
माला, ( स्त्री० ) ॥ १७७ ॥

दूती, मन्त्रकारी माला, ( स्त्री० )  
॥ १७८ ॥

मन्त्रचूर्णल-वशी करण जाननेवाला,  
डाकिनी छोड़नेका मन्त्र जाननेवाला,  
कुशाके जलसे प्रोक्षण (छोटादेना),  
( पुं० ) ॥ १७९ ॥

इत प्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
लान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

### अथ वान्तवर्गः ।

वैकम् ।

घ-कुंभ, वरुण, ( पुं० ) व-इव-अ-  
व्ययका अर्थ ( सादृश्यार्थ ),  
सात्वना ( अव्यय ),  
वा-वायु, तात ( पिता पुत्र आदि ),  
( पुं० )

वि-पक्षी, आकाश ( पुं० ) ॥ १ ॥

स्व-जाति, आत्मा ( पुं० ) स्व-  
आत्मीय ( अपना ), ( त्रि० )  
धन, ( पुं० न० )

चद्वितीयम् ।

कविः शुक्रेऽपि वाल्मीके सूरौ काव्यकरे पुमान् ॥ २ ॥

किण्वं पापे सुराभीजे क्लीबः पण्डेऽप्यविक्रमे ।

खर्वो हस्ते न्यगर्थेऽपि खर्वः स्यादभिधेयवत् ॥ ३ ॥

ग्रीवा ग्रीवाशिराया स्याद्ग्रीवा म्यात्कन्धराभिधा ।

छविः स्यादपि शोभायां घटावपि मतश्छविः ॥ ४ ॥

ओन्द्रूपुष्पे जया वेगे जयो वेगिनि वाच्यवत् ।

जीवो वाचम्पतौ वृक्षप्रभेदे प्राणिमात्रयोः ॥ ५ ॥

जीवा जीवन्तिकामौर्वीक्षितिशिञ्जितश्चित्तु ।

मता जीवा वचाया च जीवा जीवं च जीविते ॥ ६ ॥

तत्त्वं स्वरूपे नृत्यस्य प्रभेदे परमात्मनि ।

दयो दावश्च पुंस्येव वनेऽपि वनपावके ॥ ७ ॥

दिवं स्वर्गेऽन्तरिक्षे च द्यौर्द्यौर्दिवि च स्वे त्रियाम् ।

देवो राज्ञि सुरे भेषे देवं स्यादिन्द्रिये मतम् ॥ ८ ॥

चद्वितीय ।

कवि-शुक, वाल्मीक, पंडित, काव्यको  
रचनेवाला, ( पुं० ) ॥ २ ॥

किण्व-पाप, मदिराका बीज, क्लोव  
( नपुंसक ), पराक्रमरहित, ( त्रि० )

खर्व-छोटा, ( स्त्री ), नीच, ( त्रि० )  
॥ ३ ॥

ग्रीवा-गरदनती नाडी, गरदन, ( स्त्री० )

छवि-शोभा, दीप्ति, ( स्त्री० ) ॥ ४ ॥

जया-गुह्यरपुष्प, ( स्त्री० )

जय-वेग ( शीघ्रता ), वेगवाला, ( त्रि० )

जीव-वृहस्पति, वृक्षभेद, प्राणी-  
मात्र, ( पुं० ) ॥ ५ ॥

जीव-जीवन्ती, मेंढासींगी, पृथ्वी,  
भूषणोका शब्द, वृत्ति ( जीविका ),

यच, ( स्त्री० ) जीव-जातिन,  
( पुं० न० ) ॥ ६ ॥

तत्त्वं-स्वरूप, नृत्यभेद, परमात्मा,  
( न० )

दय-दाव-वन, वनश्रमि, ( पुं० )  
॥ ७ ॥

दिव-स्वर्ग, अंतरिक्ष, ( पृथ्वी और  
आकाशका मध्य ), ( न० )

दिव्-स्वर्ग, आकाश, ( स्त्री० )

देव-राजा, देवता, भेष, ( पुं० )  
देव-इन्द्रिय, ( न० ) ॥ ८ ॥

देवी भट्टारिकायां च तेजनीपृक्कयोरपि ।

नाट्योक्त्यां चामिपिक्ताया देवी देवी नृपस्त्रियाम् ॥ ९ ॥

द्रवः स्यान्नर्मणि रसे प्रद्रावे विद्रवे गतौ ।

द्वन्द्वं तु मिथुने युग्मे द्वन्द्वः कलहगुह्ययोः ॥ १० ॥

धवः पत्नौ पुमान्वृक्षभेदे धूर्ते नरेऽपि च ।

ध्रुवः क्लीपे शिवे शङ्खौ मुनौ योगे वटे वसौ ॥ ११ ॥

ध्रुवं तु निश्चिते तर्के नित्यनिश्चलयोस्त्रिषु ।

ध्रुवा मूर्वाशालिपप्येर्गीतिसुग्भेदयोरपि ॥ १२ ॥

नवः काके स्तुतौ पुंसि नवं नव्येऽभिधेयवत् ।

नीवी तु स्त्रीकटीचक्रग्रन्थौ मूलधनेऽस्त्रियाम् ॥ १३ ॥

मत्तं पक्कं परिणते विनाशाभिमुखे त्रिषु ।

पार्श्वे कक्षाऽधरे चक्रोपान्ते पर्शुगणाऽन्तिके ॥ १४ ॥

देवी-भट्टारिकी स्त्री, बर्ही मालकागनी,  
असवरग, ( स्त्री० ) नाट्यमे अभि-  
पेयकरी हुई रानी, राजाकी रानी  
( स्त्री० ) ॥ ९ ॥

द्रव-टडा, रस, क्षिरना, विद्रव  
( द्रावणा ), ( पुं० )

द्वन्द्व-स्त्रीपुरुषका जोडा, दो सख्या,  
( न० ) द्वन्द्व-कलह गोप्य, ( पुं० )  
॥ १० ॥

धव-पति, वृक्षभेद, धूर्त मनुष्य,  
( पुं० )

ध्रुव-नपुंसक, शिव, स्त्रीला, मुनि,  
योगभेद, वक्त्र, वमुभेद, ( पुं० )  
॥ ११ ॥

ध्रुव-निश्चित, तर्क, ( न० ) नित्य,  
निश्चल ( त्रि० )

ध्रुवा-चुरनहार या मरोरफली, माय-  
पर्णा या मपवन, गीतिभेद, सुक्-  
भेद, ( स्त्री० ) ॥ १२ ॥

नव-काग, स्तुति, ( पुं० ) नव-  
नवीन, ( त्रि० )

नीवी-स्त्रीके कटिवस्त्रकी प्रथि ( बंधन ),  
मूलधन, ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥

पक्क-परिणामको प्राप्तहुवा, नाशको  
प्राप्त होनेवाला, ( त्रि० )

पार्श्वे-वगलके नीचे का भाग, ( पय-  
याहा ), चक्र का अंतभाग, पॉसु-  
बोका समूह, समीप, ( न० )  
॥ १४ ॥

पृथ्वी सुवि पृथौ हिङ्गुपत्रिकाऋष्णजीरयोः ।

प्राघ्यं तु बन्धने प्रहेऽप्यतिदूरपथे तथा ॥ १५ ॥

प्लवः कारण्डवे भेके भेलके वारिवायसे ।

प्लक्षे लुतिगतौ शब्दे निपादे कुलके कपौ ॥ १६ ॥

क्रमनिम्नक्षितौ गन्धतृणेऽपि न द्वयोः प्लवम् ।

भवः श्रीकण्ठससारश्रेय सत्तासिद्धन्मसु ॥ १७ ॥

भावः स्वभावचेष्टाऽभिप्रायसत्त्वात्मजन्मनि ।

भावः क्रियाया लीलाया पदार्थेऽभिनयान्तरे ॥ १८ ॥

जन्तौ बुधे विभूतौ च नाट्योक्त्या षण्डितेऽपि च ।

रेवा ज्वालिनीभेदे रेवा नीलीसरस्त्रियोः ॥ १९ ॥

मता लघ्वी तु हस्ताया प्रकारे स्यन्दनस्य च ।

लट्टा करंजभेदे स्यात्फले वाघे रगान्तरे ॥ २० ॥

पृथ्वी—भूमि, महती ( बड़ी ), हीमत्री  
या वंशपत्री, साहजोरा, ( स्त्री० )

प्राघ्य-बन्धन, प्रह ( ..... ), अति  
दूरमार्गं ( न० ) ॥ १५ ॥

प्लव-करडुवा पक्षी, मेंडक, छोटी  
नौका, जलकाग, पिलखन वृक्ष,  
बूदकर चलना, शब्द, निपाद  
( भील ), कुलक ( ..... ), बदर,  
( पु० ) ॥ १६ ॥

प्लव-क्रमसे मीची पृथ्वी, सुगधितृण-  
विशेष ( शखान ), ( न० )

भव-महादेव, ससार, कल्याण, सत्ता,  
प्राप्ति, जन्म, ( पु० ) ॥ १७ ॥

भाव-स्वभाव, चेष्टा, अभिप्राय,  
सत्त्व, ( सतीगुण ), जन्म, क्रिया,  
लीला, पदार्थ, अभिनय, ॥ १८ ॥  
जन्तु, पण्डित, विभूति, नाट्योक्तिमें  
पण्डित, ( पुं० )

रेवा-नदीभेद, नीली ( लील ), काम-  
देवकी स्त्री, ( स्त्री० ) ॥ १९ ॥

लघ्वी-छोटी, रथका भेद, ( स्त्री० )  
लट्टा-करंजुवाभेद, फल, बाजा, पक्षि-  
भेद, ( स्त्री० ) ॥ २० ॥

लवो लेशे विलासे च छेदने रामनन्दने ।  
 श्रीफलेऽपि फले त्रित्वं विश्वे देवेषु नागरे ॥ २१ ॥  
 विश्वा विपाया सर्वसिन्धुश्चं स्यादभिधेयवत् ।  
 विश्वं तु विष्टपे क्लीब शिविर्भूजे नृपान्तरे ॥ २२ ॥  
 शिवो हरे योगभेदे वेदे कीलेऽपि बालुके ।  
 गुग्गुले पुण्डरीकद्रौ शिवं मोक्षे सुखे जले ॥ २३ ॥  
 कुशलेऽपि शिवा तु स्वाद्गोर्यामलकहेतुषु ।  
 शिवा ज्ञातामलापथ्याक्रोष्टीसक्तुफलासु च ॥ २४ ॥  
 सत्त्वं जन्तुषु न स्त्री स्यात्सत्त्वं प्राणात्मभावयो ।  
 द्रव्ये बले पिशाचादौ सत्ताया गुणवित्तयो ॥ २५ ॥  
 स्वभावे व्यवसाये च सत्त्वमित्यभिधीयते ।  
 सवं जलाब्जयो ज्ञाने सवः सन्धानयज्ञयो ॥ २६ ॥

लव-लेश, ( थोडा ), विलास, छेदन,  
 रामचद्रका पुत्र, ( पु० )

वित्त-बलका वृक्ष, बेलरा फल,  
 ( न० )

विश्व-विश्वदेव, ( पु० ) विश्व-सोठ,  
 ( न० ) ॥ २१ ॥

विश्वा-अतीस, ( स्त्री० ) संपूर्ण, ( त्रि० )  
 विश्व-जगत्, ( न० )

शिवि-भोचपत्र, शिवि-राजा, ( पु० )  
 ॥ २२ ॥

शिव-महादेव, ग्रहयोगभेद, वेद,  
 कीला, बालू ( रेती ), गुग्गुल,  
 पुण्डरीक-वृक्ष, ( पु० )

शिव-मोक्ष, सुख, जल, ॥ २३ ॥  
 कुशल, ( न० )

शिवा-पावती, आँवला, हेतु, ( स्त्री० )

शिवा-भुईआवला, हरड, गीदही,  
 जान-वृक्ष, ( स्त्री० ) ॥ २४ ॥

सत्त्व-जन्तु, प्राण, आत्मभाव, द्रव्य,  
 बल, पिशाचआदि, सत्ता, गुण,  
 धन ॥ २५ ॥ स्वभाव, निधय,  
 ( पु० न० )

सव-जल, धनी, ज्ञान, ( न० )

सव-सन्तान, यज्ञ, ( पु० ) ॥ २६ ॥

सान्त्वं दाक्षिण्यमात्रेऽपि सांत्वं सामनि च स्मृतम् ।  
 स्रुवा सुग्मेदश्लक्षयोर्मूर्वायां च मता स्रुवा ॥ २७ ॥  
 ह्यः स्यादध्वराहाननिदेशेषु मतः पुमान् ।  
 ह्रस्वः खवं न्यगर्थेऽपि राजिकायां क्षुते क्षवः ॥ २८ ॥  
 चतुर्थीयम् ।

अभावः स्यादसत्तायामभावो मरणेऽपि च ।  
 अक्षीवत्त्रिष्वमन्दे स्यादक्षीवोऽवसरे पुमान् ॥ २९ ॥  
 आर्त्तवं पुष्परजसोः समुद्भूते तु वाच्यवत् ।  
 आश्रवः स्यात्प्रतिज्ञाया क्लेशेऽपि वचनस्थिते ॥ ३० ॥  
 आह्वन्तु पुमान्यागे सन्नरेऽप्याह्वस्तथा ।  
 उत्सवो मह उत्सेध इच्छाप्रसरकोपयोः ॥ ३१ ॥  
 उद्धवस्तूत्सवे कृष्णमातुले यज्ञपावके ।  
 कारवी दीप्यमधुरात्वक्पत्रीकृष्णजीरके ॥ ३२ ॥

सान्त्वं—चतुराई, साम (समझाना), ( न० )	अक्षीव—अमंद ( तेज ), ( त्रि० ) अवसर, ( पु० ) ॥ २९ ॥
स्रुवा—सुग्मेद ( यज्ञपात्र ), सेह— प्राणी, चुरनहार-औषधि, ( स्त्री० ) ॥ २७ ॥	आर्त्तव—पुष्प, स्त्रीका रजसु, ( न० ) ऋतुमे उत्पन्नहुवा, ( त्रि० )
ह्य—यज्ञ, बुलाना, आज्ञा, ( पुं० )	आश्रव—प्रतिज्ञा, क्लेश, वचनमे स्थित, ( त्रि० ) ॥ ३० ॥
ह्रस्व—बौना, नीच, ( पुं० )	आह्व—यज्ञ, बुद्ध ( पुं० )
क्षव—छीक, ( पुं० ) ॥ २८ ॥	उत्सव—उत्सव, ऊँचार्द, इच्छाका फैलना, क्रोध, ( पुं० ) ॥ ३१ ॥
चतुर्थीय ।	उद्धव—उत्सव, कृष्णका मामा, ( उ- द्धव ), यज्ञका अग्नि, ( पुं० )
अ च—असत्ता ( नहींहोना ), म- रणा, ( पुं० ),	कारवी—अजवायन, सोंप, हिंगपत्री, कालाजीरा, ( स्त्री० ) ॥ ३२ ॥



कितवः पुंसि घुस्तूरे मत्तवच्चक्रयोरपि ।  
 पुत्रागे नाधवे पुंसि केशाब्धे त्रिपु केशवः ॥ ३३ ॥  
 कैतवं तु छले द्यूते कैरवः शत्रुधूर्तयोः ।  
 कैरवं कुमुदे क्लीवं चन्द्रिकायां तु कैरवी ॥ ३४ ॥  
 कौट्टवी चण्डिकाया स्यात्तथा नमस्त्रियामपि ।  
 गाण्डीयगाण्डिवौ न स्त्री कार्मुकेऽर्जुनकार्मुके ॥ ३५ ॥  
 गालवस्तु मुनौ लोभ्रे ताण्डवं तृणनृत्ययोः ।  
 स्वर्गेऽन्तरिक्षे त्रिदिवस्त्रिदिवा सरिदन्तरे ॥ ३६ ॥  
 दीदिविस्त्रिदशाचार्ये भवेदन्तेऽपि दीदिविः ।  
 द्विजिह्वः पद्मगे पुंसि सूचके त्वभिधेयवत् ॥ ३७ ॥  
 निष्पावः शूर्पपवने पचने च कडङ्गरे ।  
 निष्पावो निर्विकल्पेऽपि शिम्बिकाराजमापयोः ॥ ३८ ॥  
 अपलापेऽपि निकृतावविश्वासेऽपि निह्वयः ।  
 पञ्चत्वं स्यात्तु पञ्चाना भावेऽपि निघनेऽपि च ॥ ३९ ॥

कितव-धतूरा, उन्नत, टग, (पु०)	तांडव-तृण, नृत्य, (न०)
केशव-पुत्राग-रुद्र, विष्णु, (पु०)	त्रिदिव-स्वर्ग, आकाश, (पुं०)
बहुतकेशोबारा, (त्रि०) ॥ ३३ ॥	त्रिदिवा-नदी, (स्त्री०) ॥ ३६ ॥
कैतव-छल, जूवा, (न०)	दीदिवि-बृहस्पति, अन्न, (पु०)
कैरव-शत्रु, धूर्त, (पु०) कैरव- कमोदनी, (न०)	द्विजिह्व-सर्प, (पुं०) चुण्डवोर, (त्रि०) ॥ ३७ ॥
कैरवी-चादवी चादनी, (स्त्री०) ॥ ३४ ॥	निष्पाव-छाजका वायु, वायु, सूत्र, (पुं०) निर्विकल्प, (त्रि०)
कौट्टवी-चण्डिका, नमस्त्री, (स्त्री०)	फली, कडङ्ग, (पुं०) ॥ ३८ ॥
गाण्डीय-गाण्डिय-पुत्र, अर्जुनका पुत्र, (पुं० न०) ॥ ३५ ॥	निह्वय-वचनको रण्यङ्ग, दन्त, ता, अशिशु, (पु०)
गालव-मुनि (गालव), सोप-रुद्र, (पु०)	पञ्चत्वं-गोत्रेण च, च, च, च, ॥ ३९ ॥

पद्मो विम्बरे त्वन्ने शृङ्गारलक्षणागयो ।  
 चलेऽप्यग्नी तु किमले विटपेऽपि च पद्म ॥ ४० ॥  
 तुगाया पार्थिवी मूषे पुमान्मूविट्तौ त्रिपु ।  
 पुद्गो वृषभे श्रेष्ठे गवोभेपजलान्तरे ॥ ४१ ॥  
 प्रभवो जन्महेतौ न्यादपामूले पराक्रमे ।  
 प्रभवः किंवदन्तीना सद्यारगतिकारके ॥ ४२ ॥  
 आद्योपलब्धये स्वाने प्रभाव शक्तितेजसो ।  
 प्रसवो गर्भमोक्षे त्यादृक्षाणा फलपुण्ययो ॥ ४३ ॥  
 परपराप्रसङ्गे च लोकोत्पादे च पुत्रयोः ।  
 प्रसेनो बलकीवाद्यकाष्ठे म्यूतेऽपि दृश्यते ॥ ४४ ॥  
 फेरचो राक्षसे फेरी बल्यः सूदगोपयो ।  
 भीमसेनेऽप्यथ पुमान्वन्धौ मुहृदि चान्धनः ॥ ४५ ॥

पद्मच शब्दविम्बार, सङ्ग, शृङ्गार, महाबलका रंग, चल, क्षोमलपत्ता, वृक्षकी टहनी, ( पु० ) ॥ ४० ॥

पार्थिवी-वश्लोचन, ( स्त्री० )  
 पार्थिव-राजा, ( पु० ) पृथ्वी-विकार, ( त्रि० )

पुगय-बल, धेष्ट, ( पु० ) ॥ ४१ ॥  
 प्रभव-जन्म ( उत्पत्ति ), का हेतु, जल्लोका मूल, पराक्रम, ( बल )

( पु० ) किंवदन्ती ( चुरपा ), का सद्यारव गति करनेवाला प्रयत्नदर्शी नके लिये स्थान, ( पु० ॥ ४२ ॥

प्रभाव-प्रभाव ( शक्ति ), तेज, ( पु० )  
 प्रसव-गर्भका छूटना, वृक्षोके फल और पुत्र, ॥ ४३ ॥

परपराका प्रसङ्ग, मनुष्योंसे उत्पादन कियाहुवा, पुत्री पुत्र, ( पु० )  
 प्रसेन-वीणाके बाजनेके लिये तूवा या काष्ठ, सीयाहुवा, ( पु० ) ॥ ४४ ॥

फेरच-राक्षस, गीदह, ( पु० )  
 बल्य-रसोईकरनेवाला, गोप, भीम सेन, ( पु० )

चान्धन-बधु, मित्र, ( पु० ) ॥ ४५ ॥

भार्गवः शुक्रगजयोः परशुरामे सुधन्वनि ।

भार्गवी पार्वतीलक्ष्मीसितदूर्वासु सम्मता ॥ ४६ ॥

भैरवः पुंसि भर्गे स्याद्भैरवं भीषणे त्रिषु ।

माधवः केशवे राघे वसन्तेऽप्यथ माधवी ॥ ४७ ॥

मधूत्थशर्करामधकुट्टनीप्वतिमुक्तके ।

राघवस्तु महामीनप्रभेदे रघुवंशजे ॥ ४८ ॥

राजीवो मत्स्यभृगयोस्त्रिषु राजोपजीविनि ।

क्षीवं पद्मे रौरवस्तु नरके त्रिषु भैरवे ॥ ४९ ॥

वडवाऽश्वाकुम्भदास्योः स्त्रीविशेषे द्विजस्त्रियाम् ।

वाडवा वडवासङ्घे स्त्रीणां च करणान्तरे ॥ ५० ॥

पाताले न स्त्रियामौर्ध्व विप्रे च नरि वाडवः ।

पद्मयोऽपक्रमे बुद्धौ विभवो निर्वृतौ धने ॥ ५१ ॥

भार्गव-शुक्र, हस्ती, परशुराम, श्रेष्ठ,  
धनुषवाला, ( पुं० )

भार्गवी-पार्वती, लक्ष्मी श्वेतदूर्वा,  
( स्त्री० ) ॥ ४६ ॥

भैरव-महादेव, ( पुं० ) भयकर,  
( त्रि० )

माधव-विष्णु, वैशाख-मास, वसन्त-  
ऋतु, ( पुं० ) ॥ ४७ ॥

माधवी-मधु ( शहद ) की शर्करा,  
मदिरा कुट्टनी स्त्री, कस्तूर मोगरा  
( स्त्री० )

राघव-बडामच्छभेद, रघु वंशमें होने-  
वाला, ( पुं० ) ॥ ४८ ॥

राजीव-नरक, भृग ( पुं० ) राजाघे

आजीविकावाला, ( त्रि० ) राजीव-  
कमल ( न० )

रौरव-नरक, ( पुं० ) भयंकर, ( त्रि० )  
॥ ४९ ॥

वडवा-घोड़ी, जललानेवाली दासी,  
स्त्रीभेद, ब्राह्मणकी स्त्री, ( स्त्री० )

वाडव-घोडियोंका समूह, स्त्रियोंका  
करण ( शबादि ), ( न० ) ॥ ५० ॥

पाताल, ( पुं० न० ) वाडव-  
जलमि ( वाडवानल ), ब्राह्मण,  
( पुं० )

पद्मय-उलटा जाना, बुद्धि, ( पुं० )

विभव-आनंद, धन, ( पुं० ) ॥ ५१ ॥

विभावः स्यात्परिचये कामस्योद्दीपनेऽपि च  
 शत्रूणां भावसंहत्योः शात्रवं शात्रवो द्विषि ॥ ५२ ॥  
 सुपयी कारवेष्टे स्याज्जीरके कृष्णजीरके ।  
 पाडवस्तु रसे नागेऽप्याशुनीहिप्रसूनयोः ॥ ५३ ॥  
 नौकायां वासने चाय सचिरो भृत्यमग्निणोः ।  
 सम्भवः स्मृत उत्पत्तौ हेतौ सत्त्वे च भेलके ॥ ५४ ॥  
 आधारानतिरक्तत्वे आधेयस्य च सम्भवः ।  
 सुग्रीवो वानरपत्तौ चारुग्रीवे तु वाच्यवत् ॥ ५५ ॥  
 सैन्धवो माणिमन्थेऽथे सिन्धुदेशमवे त्रिषु ।

वचतुर्थम् ।

अनुभावः प्रभावे स्यान्निश्चये भावसूचके ।  
 अपहृवोऽपलापेऽपि पुंसि स्नेहेऽप्यपहृवः ॥ ५६ ॥

विभाव-परिचय (पहृधान), कामको  
 उद्दीपन करनेवाला रस, (पुं०)

शात्रव-शत्रुवोका भाव और सहति  
 (समूह), (न०)

शात्रव-शत्रु, (पुं०) ॥ ५२ ॥

सुपयी-करैला, जीरा, कालाजीरा,  
 (स्त्री०)

पाडव-रस, चीसा, चावल, पुष्प,  
 ॥ ५३ ॥ नौका, वासना, (त्रि०)

सचिव-नौकर, मंत्री, (पुं०)

सम्भव-उत्पत्ति, हेतु (कारण), सत्त्व

(सत्व), मिलना, ॥ ५४ ॥ आधे-  
 यकी आधारसे एकता, (पु०)

सुग्रीव-चंद्रसेका पति, (पुं०) सुंदर-  
 श्रीवावाला, (त्रि०) ॥ ५५ ॥

सैन्धव-सैधानमक, अश्व, (पुं०)  
 सिन्धुदेशमें होनेवाला, (त्रि०)

वचतुर्थम् ।

अनुभाव-प्रभाव, निश्चय, भावको  
 सूचन करनेवाला, (पु)

अपहृव-छिपाहुवा वाक्य, स्नेह,  
 (पुं०) ॥ ५६ ॥

स्नानेऽपि मद्यसन्धाने यज्ञे चाभिपवः पुमान् ।

आदीनवस्तु दोषे स्यात्परिक्लिष्टदुरन्तयोः ॥ ५७ ॥

उत्पाते विप्लवे चैव सैहिकेयेऽप्युपप्लवः ।

बल्मीकजन्मनि नटे याचके च कुशीलवः ॥ ५८ ॥

एकयोक्त्या मतौ रामपुत्रयोश्च कुशीलवौ ।

जलदिल्वो मतः कूर्मर्भे कर्कटे जलचत्वरे ॥ ५९ ॥

जीवंजीवश्चकोरे स्यात्पक्षिभेदे हुमान्तरे ।

दोलाजीवो वार्द्धुपिके मिथ्याज्ञानप्रहर्षिते ॥ ६० ॥

धामार्गवस्त्वपामार्गे देवदाल्यामपि स्मृतः ।

चञ्चले व्याकुलेऽपि स्याद्वाच्यलिङ्गः परिप्लवः ॥ ६१ ॥

पराभवस्तिरस्कारे विनाशे च पराभवः ।

मतः पारशवः पारस्त्रौणे शूद्रामुक्ते द्विजात् ॥ ६२ ॥

अभिपव-ज्ञान, मदिराका निहालना,  
यज्ञ ( पुं० )

आदीनव-दोष, अति क्लेशित, अपार  
( पुं० ) ॥ ५७ ॥

उपप्लव-उत्पात, विप्लव ( मनुष्यों  
की हृदना आदि पीडा ) राहुग्रह  
( पुं० )

कुशीलव-वाल्मीकि-ऋषि, नट,  
याचक ( पुं० ) ॥ ५८ ॥

कुशीलव-एक पार बोलनेमें राम-  
चंद्रके पुत्र, ( पुं० द्वि० )

जलदिल्व-बहुधा, बकोडा-जनु,  
जलका हीज, ( पुं० ) ॥ ५९ ॥

जीवंजीव-चकोर, पक्षिभेद, वृक्ष-  
भेद ( पुं० )

दोलाजीव-व्याजसे जीनेवाला,  
झूठे ज्ञानसे हर्षित ( पुं० ) ॥ ६० ॥

धामार्गव-ऊँगा, देवदाली, ( पुं० )  
परिप्लव-चंचल, व्याकुल, ( त्रि० )  
॥ ६१ ॥

पराभव-तिरस्कार, विनाश ( पुं० )  
पारशव-पारस्त्रीका पुत्र, ब्राह्मणसे,  
उत्तरप्र हुवा शूद्राका पुत्र, ॥ ६२ ॥

शस्त्रेऽप्यथ पुटग्रीवो गर्गरीताम्रकुम्भयोः ।

वार्द्धुपिके बलदेवः स्याद्बलदेवो बलेऽनिले ॥ ६३ ॥

रोहिताश्वो हरिश्चन्द्रतनये जातवेदसि ।

शैलेये सैन्यवे क्लीवं मिश्या शीतशिवः पुमान् ॥ ६४ ॥

सहदेवा बलादण्डोत्पलयोः शारिवौषधौ ।

सहदेवी भुजङ्गाक्ष्या सहदेवस्तु पाण्डवे ॥ ६५ ॥

वर्षचमम् ।

स्यादाशितंभवस्तृप्तावन्नाथे त्वाशितंभवम् ॥ ६६ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्गा वकारान्तवर्गः ॥

### अथ शान्तवर्गः ।

शैकम् ।

शः शतायुषि हिंसाया शं घर्मे शा तु मातरि ।

शी स्त्रीषु स्वपरस्त्रीषु शीः स्यात्सदननिद्रयोः ॥ १ ॥

शख ( पुं० )

पुटग्रीव-गगरी, त्रिंवाका कलरा  
( पुं० )

बलदेव-व्याजको लेनेवाला, बलभद्र,  
बापु ( पु० ) ॥ ६३ ॥

रोहिताश्व-हरिश्चन्द्रराजाका पुत्र,  
अग्नि ( पुं० )

शीतशिव-शिलाजीव, संधानभक्त,  
( न० ) सौफ ( पुं० ) ॥ ६४ ॥

सहदेवा-खरहट्टीकी बंदो, कमल,  
सरिवन, ( स्त्री० )

सहदेवी-खरहट्टी, गडनी, ( स्त्री० )

सहदेव-पंड राजाका एक पुत्र ( पुं० )  
॥ ६५ ॥

वर्षचम ।

आशितंभव-वृत्ति ( पुं० )

आशितंभव-अग्नादि ( न० ) ६६

इसप्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें  
शान्तवर्ग समाप्तहुवा ॥

अथ शान्तवर्गः ।

शैक ।

श-सौवर्षकी आयुवाला, हिंसा,  
( पुं० )

श-घर्म ( न० )

शा-माता ( स्त्री० )

शी-अपना, पराया, स्त्री, ( त्रि० )

श-भक्तान, निद्रा ( न० ) ॥ १ ॥

शद्वितीयम् ।

आशा तृष्णादिशोराशुर्ब्रह्मै क्लीबं तु सत्त्वे ।  
 ईशा लाङ्गलदण्डे स्यादीशः स्यादीश्वरे प्रभौ ॥ २ ॥  
 अंशुस्त्वपि रवौ लेशे काशस्तु क्षवथौ तृणे ।  
 वाराणस्या तु काशी स्यात्कीशो मर्कटनमयोः ॥ ३ ॥  
 कुशो रामसुते द्वीपे योक्त्रे दर्भे तु न स्त्रियाम् ।  
 कुशो मत्सेऽपि पापिष्ठे त्रिषु क्लीबे तु वारिणि ॥ ४ ॥  
 मता कुशा तु बलाया कुशी फाले प्रकीर्तिता ।  
 केशो बालेऽपि ह्रीबेरे दैत्यभेदप्रचेतसो ॥ ५ ॥  
 क्लेशो दुःखेऽपि रोगादौ व्यवसाये च दृश्यते ।  
 दर्शस्तु दशमे पुंसि दर्शः सूर्येन्दुसङ्गमे ॥ ६ ॥  
 पक्षान्तवैदिकविधौ दशा तु वसनाशुके ।  
 दशा कर्मविपाकेऽपि स्याद्दशा वर्त्यवस्थयोः ॥ ७ ॥

शद्वितीयम् ।

आशा-तृष्णा, दिशा ( स्त्री० )  
 आशु-ब्रह्मि ( धान ) ( पुं० )  
 आशु-शीघ्रता ( न० )  
 ईशा-हलका दड ( हाल ) ( स्त्री० )  
 ईश-महादेव, प्रभु, ( पुं० ) ॥ २ ॥  
 अंशु-किरण, सूर्य, लेश ( पु० )  
 काश-छीक, तृण ( कौस ) ( पुं० )  
 काशी-काशी पुरी ( स्त्री० )  
 कीश-बंदर, नम ( नंगा ) ( पुं० )  
 ॥ ३ ॥  
 कुश-रामका पुत्र, कुश द्वीप, जौत  
 ( पुं० )  
 कुश-दर्भ ( दाम ) ( पुं० न० )

कुश-जन्मत्त-पापी, ( त्रि० )  
 कुश-जल ( न० ) ॥ ४ ॥  
 कुशा-खरहटी, ( स्त्री० )  
 कुशी-पाल ( हलकी कुश ) ( स्त्री० )  
 केश-बाल, नेत्रबाला, दैत्यभेद, वरुण  
 ( पु० ) ॥ ५ ॥  
 क्लेश-दुःख, रोग आदि, व्यवसाय,  
 ( पुं० )  
 दर्श-दशवर्ष पुरुष, सूर्यचंद्रमाका सग-  
 म ( अमावस्या ) ॥ ६ ॥ पक्षके  
 अतकी वैदिकविधि ( पुं० )  
 दशा-वर्मफल, यत्ती, अवस्था, ( स्त्री० )  
 ॥ ७ ॥

दृग् दर्शने च नेत्रे स्त्री ज्ञातृदर्शकयोस्त्रिषु ।  
 दंशः सन्नाहवनमक्षिकयोर्भुजगक्षते ॥ ८ ॥  
 दोषेऽपि खण्डने दंशो दंशो मर्मणि च स्मृतः ।  
 नाशः पलायनेऽपि स्यान्निधनानुपलम्भयोः ॥ ९ ॥  
 स्यान्नृशा निगडे कापि स्त्रियां रात्रिहरिद्रयोः ।  
 निशा दारुहरिद्राया महापूर्वा निशार्द्धके ॥ १० ॥  
 पशुर्मृगादौ च प्रमथे पशुर्मांसारिकात्मनि ।  
 अज्ञाने छागमात्रेऽपि पशु हव्यर्थमन्ययम् ॥ ११ ॥  
 पाशः पक्षादिवन्धे स्याच्चयार्थस्तु कचात्परः ।  
 छात्राद्यन्ते च निन्दार्थः कर्णाति शोभनार्थकः ॥ १२ ॥  
 पांशुर्धूलिषु शस्यार्थचिरसञ्चितगोमये ।  
 पेशी पल्लपिण्ड्या स्यान्मासीस्रज्जपिधानयोः ॥ १३ ॥

दृक्-दर्शन, नेत्र, ( स्त्री० ) जानने  
 वाला, देखनेवाला ( त्रि० )

दंश-कवच, वनमकखी, सर्पका डक  
 ॥ ८ ॥ दोष, खंडन, मर्म, ( पुं० )

नाश-भागना, मरना, नहीं प्राप्त-  
 होना ( पु० ) ॥ ९ ॥

निशा-बेंदी, रात्रि, हलदी, दाह-  
 हलदी, ( स्त्री० )

महानिशा-अर्धरात्रि ( स्त्री० ) १०

पशु-शृग आदि, शिकरण, मांसारि-  
 का आत्मा, अज्ञानी, छागमात्र,  
 ( पुं० )

पशु-देवताकी हविका दान, ( अ० )  
 ॥ ११ ॥

पाश-केशीमा बाधना, केशवाचक  
 शब्दसे परे पाश शब्द समूह अर्थ-  
 वाला है जैसे 'केशपाश' अर्थात्  
 केशसमूह, छात्रादिके अतर्मे  
 निन्दार्थक है जैसे 'छात्रपाश'  
 कर्णके अतर्मे सुंदरार्थक है जैसे  
 'कर्णपाश' ( पु० ) ॥ १२ ॥

पांशु-धूलि, खेतीके लिये बहुतदिन-  
 का इकट्ठाकिया गोबर, ( पु० )

पेशी-मांसकी पिंडी, जटामासी,  
 तलवारका म्यान, अच्छा पका-  
 हुआ कणिक, मंडभेद, ( स्त्री० ) १३



सुपक्रकणिके पेशी पेशी मण्डान्तरेऽपि च ।

राशिस्तु पुञ्जे पुंस्येव तथा मेघवृषादिषु ॥ १४ ॥

वशस्त्रिषु स्याद्विवशे वशं वाञ्छाप्रभुत्वयोः ।

वशा योपासुतावन्ध्यास्त्रीगवीकरिणीष्वपि ॥ १५ ॥

विद् पुंसि वैश्ये मनुजे प्रवेशे तु स्त्रियामियम् ।

वेशः प्रवेशे नेपथ्ये वेशो वेश्यागृहे गृहे ॥ १६ ॥

वंशो वैणौ कुले वर्गे षष्ठस्याचयवास्यनि ।

नासाविवरदेशेऽपि वाद्यमाण्डान्तरेऽपि च ॥ १७ ॥

शशः पशौ गन्धरसे पुरुषान्तरलोभ्रयोः ।

मतः शश इति कापि शीताशोरपि लाञ्छने ॥ १८ ॥

स्पर्शस्तु स्पर्शने दाने हजायां स्पर्शकेऽपि च ।

स्पर्शः स्यात्पुंसि सङ्ग्रामे प्रणिधौ च मतो ह्ययम् ॥ १९ ॥

राशि-समूह, मेघ वृष आदि राशि  
( पुं० ) ॥ १४ ॥

वश-वशमें होनेवाला, ( त्रि० )

वश-वाछा, प्रभुत्व, ( न० )

वशा-स्त्री, पुत्री, बन्ध्या, स्त्री, गौ,  
हथिनी ( स्त्री० ) ॥ १५ ॥

विद्(द) वैश्य, मनुष्य, ( पुं० )

विद्(द) प्रवेश, ( स्त्री० )

वेश-प्रवेश, वेशबनाना, वेश्याका  
पर, पर, ( पुं० ) ॥ १६ ॥

वंश-वंस, कुल, पीठका अवयवरूप  
अस्थि ( हाड ), नास्त्रिका छिद्र-  
देश, वाजेका पात्र ( बंसी ) ( पु० )  
॥ १७ ॥

शश-ससा, धनिकृदन्वविशेष, मनु-  
ष्यभेद, लोच, चंद्रमाका लाटन,  
( पुं० ) ॥ १८ ॥

स्पर्श-स्पर्श करना, दान, रोग, स्पर्श  
करनेवाला, सग्राम ( युद्ध ) ( पुं० )

स्पर्श-गुण वातदो कहनेवाला हठ-  
कारा, ( पुं० ) ॥ १९ ॥

शतृतीयम् ।

आदर्शः पुंसि मुखुरे टीकाया प्रतिपुस्तके ।

उड्डीशः पार्वतीकान्ते ग्रन्थभेदे च स स्मृत ॥ २० ॥

उपांशुर्जापभेदे स्यादुपांशु विजनेऽव्ययम् ।

माघव्या कपिशा श्यावे त्रिपु पुत्ति च सिंहके ॥ २१ ॥

कम्पिलकासमर्हेऽनुवृपाणे पुत्ति कर्कशः ।

निर्दये परुपे क्रूरे दृढे साहसिके त्रिपु ॥ २२ ॥

कुलिशो मत्स्यभेदेऽस्थिसंहारे कुलिशं पशौ ।

गिरीशः शङ्करे वाचस्पतावद्रिपतावपि ॥ २३ ॥

तुङ्गीशस्तु हरे चन्द्रे दुःस्पर्शः स्याद्यवास्तके ।

कण्टकार्या तु दुःस्पर्शा खरस्पर्शी तु वाच्यवत् ॥ २४ ॥

निदेशः स्यादुपान्तेऽपि शासने भाषणे पुमान् ।

निर्वेशो वेतने भोगे निर्वेशो मूर्छनेऽपि च ॥ २५ ॥

शतृतीयम् ।

आदर्श-दर्पण ( शीशा ), टीका,  
नकलपुस्तक ( पु० )

उड्डीश-महादेव, प्रथमभेद ( उड्डीश  
तत्र ) ( पु० ) ॥ २० ॥

उपांशु-आपभेद, ( पु० )

उपांशु-एकातस्थान ( अ० )

कपिशा-माघवीलता, ( स्त्री० )

कपिशा-बदरकेसे रंगवाला, ( त्रि० )  
होग ( पु० ) ॥ २१ ॥

कर्कश-कमोला, कर्कोदी या परबल,  
ऊस, तलवार, ( पु० ) दयाहीन,

कठोर, क्रूर, दृढ, साहसवाला ( त्रि० )

॥ २२ ॥

कुलिश-मत्स्यभेद, अस्थियों ( हड्डि-  
यों ) का समूह, ( पु० )

कुलिश-वज्र ( न० )

गिरीश-महादेव, बृहस्पति, पर्वतों  
का पति ( पु० ) ॥ २३ ॥

तुङ्गीश-महादेव, चन्द्रमा, ( पु० )

दु स्पर्श-जवाँला ( पु० )

दु स्पर्शा-कट्रेहली ( स्त्री० ) तीक्ष्ण  
स्पर्शवाला ( त्रि० ) ॥ २४ ॥

निदेश-समीप, शिक्षा, भाषण ( पुं० )  
निर्वेश-नीकरी, भोग, मूर्छा ( पु० )  
॥ २५ ॥

निवेशः शिविरे पुंसि तथोद्वाहविनाशयोः ।

निखिंशो निर्दये खड्गे नीकाशो निश्चये समे ॥ २६ ॥

पलाशः किंशुके शब्दां पलाशो निकपात्मजे ।

क्लीवं पलाशं छदने पलाशो हरिति त्रिपु ॥ २७ ॥

पक्षीशो गरुडे कृष्णे पिङ्गाशं जात्यकाञ्चने ।

मत्स्ये पक्षीपतौ पुंसि पिङ्गाशी नीलिकौपथौ ॥ २८ ॥

प्रकाशोऽतिप्रसिद्धे च प्रहासे चाऽऽपे स्फुटे ।

प्रदेशो देशभित्तयोः स्यात्तर्जन्यङ्गुष्ठसम्मिते ॥ २९ ॥

वालिशस्तु शिशौ बाल्यलिङ्गे मूर्खेऽपि वालिशः ।

भूकेऽयवल्गुजेऽपि स्याद्भूकेशः शैबले वटे ॥ ३० ॥

लोमशस्तु पुमान्मेपे वाच्यवल्लोमसयुते ।

शृगालीमर्कटीमासीशूकशिविपु लोमशा ॥ ३१ ॥

निवेश-सेनास्थान, विवाह, नाश  
( पुं० )

निखिंश-निर्दय, खड्ग ( पुं० )

नीकाश-निधय, तुल्य ( पुं० ) २६

पलाश-ढाक-शुक्ल, कचूर, राक्षस  
( पुं० )

पलाश-पत्र ( न० )

पलाश-हता रीवाला ( त्रि० ) २७

पक्षीश-गरुड, कृष्ण, ( पुं० )

पिंशाश-मुवर्णभेद, ( न० ) मत्स्य,

छोटा ग्रामका पति, ( पुं० )

पिंशाशी-नीलिका औपधि ( स्त्री० )

॥ २८ ॥

प्रकाश-अतिप्रसिद्ध, ठंडा, धूप,  
प्रकट ( पुं० )

प्रदेश-देश, दीवार, तर्जनी और  
अंगूठेका परिमाण ( पुं० ) ॥ २९ ॥

वालिश-वालक, बालभावका बिल्ह,  
मूर्ख ( पुं० )

भूकेशी-बावची, ( स्त्री० )

भूकेश-सिवाल, बट ( वक् ) ( पुं० )

॥ ३० ॥

लोमश-मैडा ( पुं० ) लोमोवाला

( त्रि० )

लोमशा-गोदही, बदरी, जटामांथी-  
औपधि, कौच ( स्त्री० ) ॥ ३१ ॥

लोमशा कारुजङ्घाया काशीशे शाकिनीभिदि ।  
 महाभेदातिबलयोर्वाकाशस्तु विकाशवत् ॥ ३२ ॥  
 प्रकाशे स्याद्विकसने विजनेऽपि मतः पुमान् ।  
 विकोशः पटवर्त्तं स्याद्विकाशे विकचे त्रिषु ॥ ३३ ॥  
 विपाशा तु नदीभेदे त्रिषु पाशसमुद्रते ।  
 विवशो विह्वलेऽपि स्यादवश्यात्मनि च त्रिषु ॥ ३४ ॥  
 सङ्काशः सन्निधौ तुल्ये सदृशं तूचिते समे ।  
 सदेशः सन्निधौ देशे सदेशो देशवत्यपि ॥ ३५ ॥  
 सुखाशो राजतिनिशे वरुणे सुमनोरथे ।  
 आसनेऽपि च संवेशः संवेशः शयनेऽपि च ॥ ३६ ॥  
 हताशो वाच्यवत्कूरे निर्दये निर्वाञ्छिते ।

शचतुर्थम् ।

अपदेशः स्मृतो लक्ष्ये निमित्तव्याजयोरपि ॥ ३७ ॥

लोमशा-कारुजङ्घा, काशीश, शाकिनीभेद, महाभेदा, सरहदी भेद, ( छी० )	संकाश-समीप, तुल्य ( पुं० )
वीकाश-विकाश-प्रकाश, पुष्प आदिका खिलना, जनरहित स्थान, ( पुं० ) ॥ ३२ ॥	सदृश-उचित, तुल्य ( त्रि० )
विकोश-वस्त्रकी वती, विकाश, खिलना ( त्रि० ) ॥ ३३ ॥	सदेश-समीप देश, ( पुं० )
विपाशा-नदीभेद, ( छी० ) पाशसे निकलाहुवा ( त्रि० )	सदेश-देशवाला ( त्रि० ) ॥ ३५ ॥
विवश-विह्वल, नदीं वद्य करनेयोग्य आत्मावाला ( त्रि० ) ॥ ३४ ॥	सुखाश-बडा तिरिच्छ-वृक्ष, वरुण, अच्छा मनोरथ ( पु० )
	संवेश-आसन, शय्या ( पु० ) ३६
	हताश-कूर, निर्दय, आशारहित ( त्रि० )
	शचतुर्थे ।
	अपदेश-लक्ष्य ( निशाना ), निमित्त, व्याज ( महाना ) ॥ ३७ ॥

अपभ्रंशो दुष्पतने भाषामेदापशब्दयोः ।

आश्रयाशो बृहद्भानौ त्रिप्वेवाश्रयनाशके ॥ ३८ ॥

उपदंशः पुमान्मेद्रे पीडाया च विदंशने ।

उपस्पर्शस्तु संस्पर्शे स्नानाचमनयोरपि ॥ ३९ ॥

क्रूरदृक् स्यात्खले वके खण्डपर्शुः पिनाकिनि ।

राहौ खण्डामलकयोर्लेपकृत्पर्शुरामयो ॥ ४० ॥

जीवितेशो यमे कान्ते जीवातौ जीवितेश्वरे ।

नागपाशः स्मृतः स्त्रीणां करणे वरुणायुधे ॥ ४१ ॥

वसेत्पञ्चदशी पौर्णमास्यमावस्ययोर्मता ।

परिवेशः परिवृत्तौ भानोश्चाभ्यर्णमण्डले ॥ ४२ ॥

पलंकशा तु मुण्डीर्या लाक्षाया पुसि गुग्गुले ।

पादपाशी चटुकाया शृङ्खलाकटुकेऽपि च ॥ ४३ ॥

अपभ्रंश-पदना, भाषामेद, वुरा श-  
ब्द ( पु० )

आश्रयाश-अग्नि, ( पु० ) आश्र-  
यका भाश करनेवाला ( त्रि० ) ३८

उपदश-लिंग-रोगभेद, विच्छ-  
वादिवा डक ( पु० )

उपस्पर्श-स्पर्श करना, स्नान, आ-  
चमन ( पु० ) ॥ ३९ ॥

क्रूरदृक् ( श् ) खल, वक ( त्रि० )  
खण्डपर्शु-महादेव, राहु, खडामलक

( खोंड और आँवला ), लेप करने-  
वाला, परुराम ( पु० ) ॥ ४० ॥

जीवितेश-धर्मराज, पति, जिला-  
नेकी औपध, जीवितका स्वामी

( पु० )  
नागपाश-स्त्रियोंका करण ( हावादि ),  
वरुणका अस्त्र ( पु० ) ॥ ४१ ॥

पंचदशी-पौर्णमासी, अमावास्या  
( स्त्री० )

परिवेश-घेरा, सूर्यके चारोंतरफका  
मंडल ( पु० ) ॥ ४२ ॥

पलंकशा-गोरखमुनी, लाख, ( स्त्री० )  
पलक ( व ) श-गूगल ( पु० )

पादपाशी- " , सबलका कडा  
( स्त्री० ) ॥ ४३ ॥

पुरोडाशो हविर्भेदे तथा सोमलतारसे ।

पिष्टकस्य चमस्या च हुतशेषे च सम्मतः ॥ ४४ ॥

वार्ताद्वरे पुरोगे च सहाये च प्रतिष्कदाः ।

भूमिस्पृक् सम्मतो वैश्ये भूमिस्पृग्मनुजेषु च ॥ ४५ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्यां शान्तवर्ग ॥

### अथ पान्तवर्गः ।

पैकम् ।

प—कारस्तु मतः श्रेष्ठेऽपि स्वाद्गर्भविमोचने ।

पद्वितीयम् ।

उषा बाणसुताया स्यात्प्रभातेऽपि विभावरौ ।

उपस्तु कासुके पुंसि गुग्गुलादावुपः पुमान् ॥ १ ॥

ऋषिश्छन्दे वसिष्ठादौ दीधितौ तु ऋषिः स्त्रियाम् ।

कर्पः पलचतुर्थांशे कर्पः स्यात्कर्पणेऽपि च ॥ २ ॥

पुरोडाश—हविर्भेद, सोमलताका रस

( पु० ) पीठीकी चमसी, हवनसे

शेष रहा, ( पु० ) ॥ ४४ ॥

प्रतिष्कदा—द्वलकार, आगे चलने-

वाला, सहायता करनेवाला ( पु० )

भूमिस्पृ(श) क्—वैश्यमात्र ( पु० )

॥ ४५ ॥

इसप्रकार विश्वलोचनकोशकी भाषा

टीकामें शान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ पान्तवर्ग ।

पैक ।

प—श्रेष्ठ, गर्भका छुदाना, ( त्रि० )

पद्वितीय ।

उषा—बाणासुरकी पुत्री, प्रभात, रात्रि,  
( स्त्री० )

उप—कामी पुरुष, गुग्गुल आदि ( पु० )

॥ १ ॥

ऋषि—छन्द, वसिष्ठ आदि, ( पुं० )

ऋषि—किरण ( स्त्री० )

कर्प—एक तोला प्रमाण, खेंचना

( पु० ) ॥ २ ॥

कर्पूः पुंसि करीषामौ कर्पूः कुल्याभिधायिनी ।  
 कोपोऽस्त्री कुब्जले दिव्ये पेश्यां शब्दादिसङ्गहे ॥ ३ ॥  
 अर्थोधि जातिकोशे च पात्रखङ्गपिधानयोः ।  
 पनसादिफलस्यापि कोपः स्यान्मध्यवर्तिनि ॥ ४ ॥  
 घोषा तु शतपुष्पायां घोषः कांस्येऽम्बुदध्वनौ ।  
 घोषः स्याद्दोषकाभीरनिखनाभीरपल्लिपु ॥ ५ ॥  
 झपा नागबलायां स्याज्झपो वैसारिणि स्मृतः ।  
 पिपासालिक्षयोस्तर्पस्तुपो धान्यत्वगक्षयोः ॥ ६ ॥  
 तृट् तृषा च पिपासायां लिप्साया च स्त्रियामुभे ।  
 त्विट् कान्तौ रुचि भारत्या व्यवसायजिगीषयोः ॥ ७ ॥  
 दोषस्तु दूषणे पापे दोषा रात्रौ मुजेऽपि च ।  
 पौषो मासविशेषे स्यात्पौषमुद्धवयुद्धयो ॥ ८ ॥

कर्पू-वरिश ( अरना ) की अग्नि,	झपा-गंगेरन-औषधि, ( स्त्री० )
कर्पू-अस्थि ( स्त्री० )	झप-मत्स्य आदि ( पुं० )
कोप(श)-फूलकली, दिव्य, शेली, शब्द आदिका संग्रह ( पु० ) ॥ ३ ॥	तर्प-प्यास, बाछा ( स्त्री० )
द्रव्यना समूह, जातिकोप ( एक- जातिका संग्रह ), पात्र, खङ्गका कोश ( म्यान ), चमेलीका कोश, पनस आदिके फलका मध्यवर्ती भाग ( पु० ) ॥ ४ ॥	तुप-धान्यका तुप, बहेडा-औषधि ( पु० ) ॥ ६ ॥
घोषा-सौफ ( स्त्री० )	तृट्(त्र)-तृषा-प्यास, बाछा, ( स्त्री० )
घोष-काँसी-धातु, मेघकी ध्वनि ( शब्द ), घोषक ( गोपाल ) अ- हीरजानि, शब्द, अहीरोंना ग्राम, ( पुं० ) ॥ ५ ॥	त्विट्(प्)-कान्ति, प्रभा, सरस्वती, उद्यम ( वीर्यातिशय ), जीतनेकी इच्छा ( स्त्री० ) ॥ ७ ॥
	दोष-दूषण, पाप, ( पुं० )
	दोषा-रात्रि, भुजा ( बाहु ), ( स्त्री० )
	पौष-पौष-मास, ( पुं० )
	पौष-उत्पव, युद्ध, ( न० ) ॥ ८ ॥

पापी तु पापपौर्णम्या पुष्ययुक्ता भवेद्यदि ।  
 प्रैपस्तु प्रैपणोन्मानमर्दनश्लेशवाचक ॥ ९ ॥  
 भाषा गिरि सरस्वत्या विकल्पार्थे त्रिपूर्वके ।  
 मापो व्रीहन्तरे माने मूर्ध्ने त्वग्दूषणान्तरे ॥ १० ॥  
 मिषस्तु स्पर्द्धने व्याजे निमेषे तु निपूर्वकः ।  
 मेपः स्यादुरणे राशिभेदभैषज्यभेदयोः ॥ ११ ॥  
 मेप उत्पूर्वको वेधे वर्षाः स्यु माशुपि स्त्रियाम् ।  
 वर्षमस्त्री वर्षणेऽद्दे जम्बूद्वीपे घने पुमान् ॥ १२ ॥  
 विषा त्यतिविषाया स्याद्विषं तु गरले जले ।  
 विड् व्यापने पुरीषे च वृषो मूपकधर्मयोः ॥ १३ ॥  
 वृषभे वासके श्रेष्ठे राशौ शृङ्गचा च शुक्ले ।  
 शुके पुरपभेदेऽपि त्रतिनामासने वृषी ॥ १४ ॥

पापी-जो पुष्यनक्षत्रयुक्त होवे वह	उन्मेप-बीधना, ( पुं० )
पापभासकी पूर्णिमा, ( स्त्री० )	वर्षा-वरांशु ( स्त्री० ध० )
प्रैप-भोजना, उन्मान, मर्दन, श्लेश	वर्ष-वर्षा, वर्ष ( पु० न० ) जम्बू-
( पु० ) ॥ ९ ॥	द्वीप, मेप ( पु० ) ॥ १२ ॥
भाषा-बाणी, सरस्वती, ( स्त्री० )	विषा-अतीस-औषधि ( स्त्री० )
विभाषा-विकल्प ( स्त्री० )	विष-गरल ( जहर ), जल ( न० )
माप-व्रीहि (उद्द), तौल (मासाभर),	विड्(प)-प्रविष्ट होना, विष्टा, (स्त्री०)
मूर्ध्ने, त्वचा-दोषभेद (पु०) ॥ १० ॥	वृष-मूसा, धर्म, ॥ १३ ॥
मिष-स्पर्द्धा ( ईषां ), पहाना, ( पु )	वैल, बाँसा, श्रेष्ठ, वृष-राशि, का-
निमिष-निमेष ( कालभेद ) ( पु )	कटासीगी, वीर्यको चढानेवाला
मेप-मेंढा, मेप-राशि, औषधिभेद	दल, वीर्य, पुरुषभेद ( पु० )
( पु० ) ॥ ११ ॥	वृषी-वतियोंका आसन, (स्त्री०) १४



वृषा मूषकपर्ण्यां स्यात्कपिकच्छामपि स्मृता ।

शुषिः शोषे विले ख्यातः शेषः सङ्कर्षणे वधे ॥ १५ ॥

अनन्तेऽप्यवशिष्टेऽपि शेषा निर्माल्यभिद्यपि ।

षट्तीयम् ।

अभीषुः पुंसि भासि स्यादभीषुः प्रग्रहेऽपि च ॥ १६ ॥

आकर्षस्त्विन्द्रिये ख्यातो द्यूताकर्षणयोरपि ।

पाशके शारिफलके कोदण्डाभ्यासवस्तुनि ॥ १७ ॥

क्लीबमामिषमुत्क्रोचे मासे सम्भोगलोभयोः ।

आमिषं सुंदराकाररूपादौ विषयेऽपि च ॥ १८ ॥

उष्णीयं तु शिरोवेष्टे किरीटे लक्षणान्तरे ।

कल्मापो राक्षसे कृष्णकृष्णपाण्डरयोरपि ॥ १९ ॥

कलुषं किल्बिषे क्लीबमाविले कलुषं त्रिषु ।

किल्बिषं वृजिने रोगेऽप्यपराधेऽपि किल्बिषम् ॥ २० ॥

वृषा-मूसाकत्री, कौंच ( स्त्री० )

शुषि-शोष, विल ( पुं० )

शेष-बलदेव, वध ॥ १५ ॥ अनंत

( शेषनाग ), अवशिष्ट ( बाकीरहा )

( पुं० )

शेषा-निर्माल्यभेद, ( स्त्री० )

षट्तीय ।

अभीषु-क्रिण, अश्व आदिकी रस्ती

( पुं० ) ॥ १६ ॥

आकर्ष-इन्द्रिय, ज्ञा, आकर्षण,

पासा, चोपट, धनुषके समीपकी

वस्तु, ( पुं० ) ॥ १७ ॥

आमिष-खिलना, मास, संभोग,

लोभ, सुदर-आकाररूपआदि, वि-

षय ( न० ) ॥ १८ ॥

उष्णीय-शिरपर बंधनेका वस्त्र,

मुकुट, लक्षणभेद ( न० )

कल्माप-राक्षस, काला रंग, काला

और धौला रंग ( पुं० ) ॥ १९ ॥

कलुष-पाप ( न० ) मलिन ( त्रि० )

दुःख रोग, ( न० )

किल्बिष-पाप, रोग, अपराध,

( न० ) ॥ २० ॥

कुल्मापो यवके पुंसि चणके यवपटके ।

कुल्मापं फाञ्जिके क्लीन गण्डूषः प्रसूनोन्मिते ॥ २१ ॥

गण्डूषो मुखपूरेऽपि करिदस्त्राहुलावपि ।

जिगीषा जेतुमिच्छाया च्यवसायप्रकर्षयोः ॥ २२ ॥

तरीपः शोभनाकारे भेलेब्धिन्वयवसाययोः ।

ताविपन्तु सरिन्नाथे कनकस्वर्गयोरपि ॥ २३ ॥

नहुपो राजभेदे स्यान्नहुपो भुजगान्तरे ।

निकपः कपपापाणे निकपा यातुमातरि ॥ २४ ॥

निमेषनिमिषां कारुभेदे नेत्रनिमीलने ।

परुपं कर्बुरे रूक्षे त्रिषु निम्नुरवाच्यपि ॥ २५ ॥

पुरुषः पुत्रागमातङ्गे माधवे परमात्मनि ।

पौरुपं तेजसि क्लीवं पुंसो भावेऽपि कर्मणि ॥ २६ ॥

कुल्माप—जव, चना, आधा सीजाहुवा  
धान्य ( पुं० )

कुल्माप—कॉजी ( न० )

गण्डूष—एक अजलि प्रमाण, ॥ २१ ॥

मुखका जल आदिसे पूरना, हाथी-  
की सूँड और अगुली ( पुं० )

जिगीषा—जीतनेकी इच्छा, वीर्याति-  
शय, उचपन ( स्त्री० ) ॥ २२ ॥

तरीप—सुदर आकार, छोटी नाँका,  
समुद्र, वीर्यातिशय ( पु० )

ताविप—समुद्र, सुवर्ण, स्वर्ग ( पुं० )

॥ २३ ॥

नहुप—राजा नहुप, सर्पभेद ( पुं० )

निकप—कसौटीरूपर ( पु० )

निकपा—राक्षसोंकी माता ( स्त्री ) २४

निमेष—निमिष—कालभेद, नेत्रोंका  
मीचना ( पुं० )

परुप—कबरा रंग, रूखा, ( न० )

कटोर बोलनेवाला ( त्रि० ) ॥ २५ ॥

पुरुष—पुनाग—शृङ्ग, हस्ती, विष्णु, पर-  
मात्मा ( पुं० )

पौरुप—तेज, पुण्यका भाव और कर्म  
( न० ) ॥ २६ ॥

ऊर्द्धविस्तृतदोःपाणिनृमाने त्रिषु पौरुषम् ।  
 प्रत्यूपोऽहर्मुखे पुंसि प्रत्यूपो वसुदैवते ॥ २७ ॥  
 प्रदोषः पुंसि दोषे स्यान्नाद्योत्तयार्ये च मारिषः ।  
 रौहिपं कचृणे पुंसि मृगभेदे तु रौहिषः ॥ २८ ॥  
 विशेषो भेदमात्रेऽपि विशेषस्तिलकेऽपि च ।  
 विश्लेषः स्याद्विघटने विश्लेषो विधुरे तथा ॥ २९ ॥  
 व्याकर्षः शारिफलके घृताक्षारुर्पणेषु च ।  
 शुश्रूषा श्रोतुमिच्छायां परिचर्याकथानयोः ॥ ३० ॥  
 कुशीलवेपे शैलूपः शैलूपो बिल्वपादपे ।  
 सङ्घर्षः स्पर्द्धने घर्षे प्रमोदेऽपि प्रमज्जने ॥ ३१ ॥

पचतुर्थम् ।

अनुकर्षो रथस्याधोदारुण्यप्यनुकर्षणे ।

अनुतर्षः सुरापानपात्रे तृष्णाभिलाषयोः ॥ ३२ ॥

पौरुष-लंबी दोनों भुजाओंसे प्रमाण ( न० )	व्याकर्ष-चौपड़, जूवा, पाशा, आ- कर्षण ( पुं० )
प्रत्यूप-दिनका मुख ( प्रात काल ), वसुदेवतावाला ( पुं० ) ॥ २७ ॥	शुश्रूषा-सुननेकी इच्छा, परिचर्या ( टहल ), कथन ( पु० ) ॥ ३० ॥
प्रदोष-दोष ( पु० )	शैलूप-नट, बिल्वका वृक्ष ( पुं० )
मारिष-नाट्यकी उक्तिमें आर्य ( पुं० )	संघर्ष-झंझ, घिसना, आनंद, वायु ( पुं० ) ॥ ३१ ॥
रौहिष-रोहिण तृण, ( न० )	पचतुर्थम् ।
रौहिष-मृगभेद ( पुं० ) ॥ २८ ॥	अनुकर्ष-रथके नीचेके भागका काष्ठ, अनुकर्षण ( पुं० )
विशेष-भेदमात्र, तिलक ( पुं० )	अनुतर्ष-मदिरापीनेका पात्र, तृष्णा, अभिलाषा ( पुं० ) ॥ ३२ ॥
विश्लेष-वियोग, अत्यंत वियोग ( पुं० ) ॥ २९ ॥	

सुरे मत्स्येऽप्यनिमिषः सुरे मत्स्येऽनिमेपवत् ।  
 अम्वरीपो रणे श्राष्ट्रेऽम्वरीपो भूमृदन्तरे ॥ ३३ ॥  
 मार्त्तण्डे खण्डपरशौ कपीतनकिशोरयोः ।  
 अलम्बुपः पुमानेव मतदर्द्धनपादपे ॥ ३४ ॥  
 अलम्बुपा तु मुण्डीगीर्वाणवेद्याप्रभेदयोः ।  
 तुरङ्गवदने लोकभेदे किंपुरुपः पुमान् ॥ ३५ ॥  
 नन्दिघोषः पार्थरथे स्तुतिपाठरूपोपणे ।  
 परिघोषस्त्ववाच्ये म्याग्निनादे वारिदध्वनी ॥ ३६ ॥  
 पलङ्कपा गोकुलके लाक्षागुण्डकिंशुके ।  
 मुण्डीगीरास्ययोश्चैव राक्षसे तु पलङ्कपः ॥ ३७ ॥  
 शृङ्गीभेदे महाघोषा पुंसि हृष्टेऽतिघोषयोः ।  
 वातरूपस्तु वातूलेऽप्युत्कोचे शक्रक्रासुंके ॥ ३८ ॥

इति विश्वलोचनेऽनराभिधानाया मुक्तावन्त्या पान्तवर्गे ॥

अनिमिष-अनिमेप-मच्छ, देवता ( ५० )	परिघोष-नहीकहनेयोग्य शब्द, शब्द- मान, मेघका गर्जना ( पुं० ) ३६
अम्वरीप-रण, भाङ्, एक राजा ३३ सूर्य, महादेव, अवाडा-वृक्ष, कि- शोर ( जवान ) ( ५० )	पलङ्कपा-गोकुल, राख, गुण्ड, केसु, गोरखमुडी, रायमन ( स्त्री० )
अलंबुप-छर्दन ( वमन ) करनेका वृक्ष ( ५० ) ॥ ३४ ॥	पलङ्कप-राक्षस ( पुं० ) ॥ ३७ ॥
अलंबुपा- गोरखमुडी, स्वर्गवेद्या- भेद, ( स्त्री० )	महाघोषा-काकडासीगी, ( स्त्री० )
किंपुरुप-देवयोनिभेद ( किन्नर ), लोकभेद ( पुं० ) ॥ ३५ ॥	महाघोष-हाट, अनिशब्द ( पुं० )
नन्दिघोष-अर्जुनका रथ, स्तुतिररने- वालाका शब्द ( पुं० )	वातरूप-वायुको नहीं रहनेवाला, रिश्त, इद्रका धनुष ( पुं० ) ३८
	इसप्रकार विश्वलोचनकी भाषाटीकामें पान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ सान्तवर्गः ।

सैकम् ।

सा पुंस्यन्धौ रमायां स्याद्रत्यां से श्रीश्रुतेऽपि सः ।  
सोरच्युते तु पार्वत्यामंसस्कन्धविभूषयोः ॥ १ ॥

सद्वितीयम् ।

कासूर्विकलवाचि स्यात्कासूः शक्त्यायुधे स्त्रियाम् ।  
कंसो दैत्यान्तरे कांस्ये कांस्यभाजनमानयोः ॥ २ ॥  
स्याद्गुत्सः स्तबके स्तम्बे हारभिद्रन्धिपर्णयोः ।  
गोसः प्रभाते पुंस्येव गोसो गन्धरसेऽपि च ॥ ३ ॥  
चासः सुवर्णचूडे स्यात्प्रभेद इक्षुपर्षणः ।  
मणिदोषे भये त्रासो दासो भृत्येऽपि धीवरे ॥ ४ ॥  
शूद्रेऽपि दानपात्रेऽपि चेटीसिनकयोः स्त्रियाम् ।  
नांसा तु नासिकायां स्यान्नासा द्वारोर्द्ध्वदारुणि ॥ ५ ॥

अथ सान्तवर्गः ।

सैकम् ।

स-कुँवा (पुं०) लक्ष्मी, रति (स्त्री०)  
धीश्रुत (.....) (पुं०)  
सो-विष्णु (पुं०) पार्वती (स्त्री०)  
कंधा, कंधोंके भूषण (पुं०) ॥१॥

सद्वितीयम् ।

कासू-विकलवाणी, शक्ति आयुध  
(स्त्री०)

कंस-कंस-दैत्य, कांसी-धातु, कौ-  
सीका पात्र, प्रमाण (पुं०) ॥२॥

२५

गुत्स-गुच्छा, तृणआदिका समूह,  
हारभेद, प्रंधिपर्णा (गठिवन) (पुं०)

गोस-प्रभात, बोल, (पुं०) ॥ ३ ॥

चास-पक्षिभेद, ऊसभेद, (पुं०)

त्रास-मणिदोष, भय (पुं०)

दास-भृत्य, धीवर (स्त्रीमर) ॥ ४ ॥

शूद्र, दानपात्र, (पुं०)

दासी-टहलनी (स्त्री०)

नासा-नासिका (नाक), द्वाके

ऊपरवा बाण (स्त्री०) ॥ ५ ॥

प्रसूर्मातरि फन्दल्यानश्वायां पुंसि वीरधि ।  
 वसुर्ना देवभेदे च योक्ते बहौ शुभे त्रिषु ॥  
 वसु वृच्चौपधे रत्नेऽपि श्यामे हृदके धने ॥ ६ ॥  
 वाच्यवन्मधुरेऽपि स्याद्भाः प्रभावे रचि स्त्रियाम् ।  
 भासस्तु भासि गृध्रे च गोष्ठकुक्कुटेऽपि च ॥ ७ ॥  
 मांसं स्वादागिपे मांसी कफोलीजटयोः स्त्रियाम् ।  
 माः सुधीदीधितौ मासे चन्द्रे चन्द्रात्परोऽपि सः ॥ ८ ॥  
 मिसिः स्त्री मधुरीमाम्यो दत्तपुष्पाजमोदयोः ।  
 प्रसस्तु मुहिमूहे स्वान्मूसो मास्यामपि स्मृतः ॥ ९ ॥  
 रसः स्वादेऽपि तिक्तादौ शृङ्गारादौ द्रवे विषे ।  
 पारदे धातुवीर्याम्बुरागे गन्धरसे तनौ ॥ १० ॥  
 रसो वृताद्वावाहारपरिणामोद्भवेऽपि च ।  
 रसा जिह्वासुवापाटाशल्लभीकङ्कुषु स्त्रियाम् ॥ ११ ॥

प्रसू-माता, कला या वमल्पटा, अ-  
 श्वा ( घोड़ी ) ( स्त्री० )

प्रसू-बेल ( पु० )

वसु-देवभेद, जोता, अग्नि, शुद्ध  
 ( त्रि० )

वसु-शुद्धि औषधि, रत्न, श्यामरंग,  
 हाट, धन ( न० ) ॥ ६ ॥

वसु-मधुर ( त्रि० )

भासू-प्रभाव, प्रभा ( स्त्री० )

भासू-प्रभा, गृध्रपक्षी, गौर्वोके टानका  
 मुर्गा ( पु० ) ॥ ७ ॥

मांस-मास ( न० )

मांसी-कंबोल, जटामासी ( स्त्री० )

मासू-पंडित, शिखर, मास, चंद्रमा,  
 चंद्रमासे परेका लोठ ( पु० ) ॥ ८ ॥

मिसि-सोआ, जटामासी, सौंफ, अ-  
 जमोद ( स्त्री० )

प्रसू-... ( पु० )

मूसू-जटामासी ( पुं० ) ॥ ९ ॥

रसू-स्वाद, तिक्त आदि रस, शृंगार  
 आदि रस, द्रव, विष, पारा, धातु,  
 वीर्य, जल, राग ( अनुराग ), बोल,  
 शरीर ॥ १० ॥ घृत-आदि, भोज-  
 नदा परिपाकद्रव, ( पु० )

रसा-जिह्वा, सुवा, सोना पाटा, सा-  
 ल-शुश, मालकागनी ( स्त्री० )  
 ॥ ११ ॥

रासस्तु गोपक्रीडायां भाषाशृङ्खलके ध्वनौ ।

पुत्रादौ तर्णकै वपे वत्सो वत्सं तु वक्षसि ॥ १२ ॥

वासो गृहेऽप्यवस्थाने वासा स्यादाटरूपके ।

मुनिविस्तारयोर्व्यासः शंसा वचनवाञ्छयोः ॥ १३ ॥

हिंसा चौर्यादिवधयोः हंसः सूर्यमरालयोः ।

कृष्णेङ्गवाते निर्लोभनृपतौ परमात्मनि ॥ १४ ॥

योगिमन्त्रादिभेदे च मत्सरे तुरगान्तरे ।

सतृतीयम् ।

अलसा हंसपद्यां स्यादागः पापापराधयोः ॥ १५ ॥

आशीः स्त्री सर्पदंष्ट्रायां तथा स्त्री शुभशंसने ।

आख्यायिकापरिच्छेदेऽप्यावासो निर्वृतावपि ॥ १६ ॥

इप्त्रासः स्याद्धनुर्मात्रे स्यादिप्त्रासो धनुर्धरे ।

उच्छ्वासः शासनाश्वासगद्यबन्धगुणान्तरे ॥ १७ ॥

रास-गोपक्रीडा, भाषाकी शृङ्खला,  
ध्वनि, ( पुं० )

वत्स-पुत्रादि, वछडा, वप ( पुं० )

वत्स-छाती ( न० ) ॥ १२ ॥

वास-घर, स्थिति ( पुं० )

वासा-अहसा ( स्त्री० )

व्यास-मुनि, विस्तार, ( पुं० )

शंसा-वचन, वांछा ( स्त्री० ) ॥ १३ ॥

हिंसा-चोरीआदि, प्राणीका मारना  
( स्त्री० )

हंस-सूर्य, हंस पक्षी, श्रीकृष्ण, शरी-  
रका वायु, लोभरहित राजा, पर-

मात्मा, ॥ १४ ॥ योगिभेद, मन्त्र  
आदि भेद, मत्सरी, अश्वभेद ( पु० )

सतृतीय ।

अलसा-लाजरगका लजाल, ( स्त्री० )

आगस-पाप, अपराध ( न० ) १५

आशिस्-सर्पकी बाढ, शुभका कथन  
( स्त्री० )

आश्वास-वार्ताका विभ्राम, आनन्द  
( पुं० ) ॥ १६ ॥

इप्त्रास-धनुष, धनुष धारण करनेवाला  
( पुं० )

उच्छ्वास-शिक्षा, आश्वासना, गद्यब-  
न्धका विभ्राम ( पुं० ) ॥ १७ ॥

उत्तंसश्चावतंसश्च वतंसश्चेत्यमी प्रयः ।  
 अस्त्रियामेव वर्तन्ते कर्णपूरेऽपि देशरे ॥ १८ ॥  
 उरस्तु वक्षोवरयोरुपः सन्ध्याप्रभातयोः ।  
 एनोऽपराधे कटुपेऽप्योकस्त्वाश्रयसन्नोः ॥ १९ ॥  
 ओजो दीप्तौ च मामर्थ्येऽप्यवष्टम्भप्रकाशयोः ।  
 ओजस्तेजसि धातूनामिति पञ्चसु दृश्यते ॥ २० ॥  
 कीकसः क्रिमिजातौ स्यान्कीकसं क्रीममम्यनि ।  
 चमसः पिष्टभेदे स्यात्सर्प्ये चूर्णसंबले ॥ २१ ॥  
 छन्दः श्रुतीच्छयोः पद्ये न्याच्छन्द्ये ना तु वर्तते ।  
 ज्यायांस्त्रिष्विति वृद्धे म्यादपि श्रेष्ठातिशक्तयोः ॥ २२ ॥  
 गुणे कोपेऽप्यभिमतं तरः स्याद्दलवेगयोः ।  
 तामसी चण्डिनाया स्यात्तामसः खलसर्पयोः ॥ २३ ॥  
 तेजः पराक्रमे दीप्तौ प्रभावे बलशुक्रयोः ।  
 धनुः शरासने राशौ धनुर्दन्विपियालयोः ॥ २४ ॥

उत्तंस, अवतंस, वतंस—मुडुट  
 आदि, कर्णभूषण ( पु०न० ) १८  
 उरस्—छाती, धेष्ट, ( न० )  
 उपस्—संध्या, प्रभात ( न० )  
 एनस्—अपराध, पाप ( न० )  
 ओकस्—आश्रय, स्थान ( न० ) १९  
 ओजस्—दीप्ति, सामर्थ्य, रोक्नेवाला,  
 प्रकाश, धातुओंका तेज, ( न० ) २०  
 कीकस—क्रिमिजाति, ( पु० )  
 कीकस्—अस्थि ( दाँ ) ( न० )  
 चमस—पिष्टभेद, पापद, चूर्णलिपटाहु-  
 वा ( पुं० ) ॥ २१ ॥

छन्दस्—वैद, इच्छा, पद्य, स्वच्छन्द-  
 ता ( पु० )  
 ज्यायस्—अतिरुद्ध, धेष्ट, अतिप्रसं-  
 सनीय ( त्रि० ) ॥ २२ ॥  
 तरस्—गुण, कोप, बल, वेग ( न० )  
 तामसी—चंडिका, ( स्त्री० )  
 तामस—खल ( खोटा ), सर्प ( पुं० )  
 ॥ २३ ॥  
 तेजस्—पराक्रम, दीप्ति, प्रभाव, बल,  
 वीर्य, ( न० )  
 धनुस्—धनुष, धन—राशि, ( पु०न० )  
 धनुस्—चिरंजी, ( पुं० ) ॥ २४ ॥



धनुर्धनुर्धरेऽपि स्याद्धनुरर्जुनभूरुहे ।

नभो व्योम्नि, नभो मेघे विससूत्रे पतद्गहे ॥ २५ ॥

वर्षासु श्रावणे घ्राणे नभाः पलितमस्तके ।

पनसः कण्टकिफले कण्टके कपिलग्भिदो ॥ २६ ॥

दुग्धे नीरे वटादीना क्षीरेऽपि क्षीरवत्पयः ।

श्रीवासे पायसः पुसि परमान्ने तु पायसम् ॥ २७ ॥

पुष्कसी कालिकानील्यो पुष्कसः श्वपचेऽधमे ।

प्रहासः स्यान्नटवटौ हाम्यतीर्थविशेषयो ॥ २८ ॥

पुनरर्थेऽव्यय भूयो भूयांस्तु बहुषु त्रिषु ।

मनश्चित्ते मनीषाया महस्तूत्सवतेजसो ॥ २९ ॥

मानसं स्वान्तंसरमो रजः स्यादार्त्तवे गुणे ।

रजः परागे रेणौ तु रजवद्दृश्यते रजः ॥ ३० ॥

धनुषको धारण करनेवाला (त्रि०)	पुष्कसी-कालिका, नील-वृक्ष(स्त्री०)
अर्जुन (कोह) वृक्ष (पु०)	पुष्कस-बाडाल, नीच (पु०)
नभस्-आकाश, मेघ, कमलभँगीडा का तनु, पीकदान (न०) ॥२५॥	प्रहास-नटका लडका, ठढासे हँसना, तार्थविशेष (पु०) ॥ २८ ॥
वर्षा ऋतु, श्रावण-मास, नासिका, बुडापेचे सफेद मस्तकवाला (पु०)	भूयस्-पुन (दूसरीबार) (अ०)
पनस्-फनस-वृक्ष, काँटा, बानरभेद, रोगभेद, (पु०) ॥ २६ ॥	भूयस्-बहुत (त्रि०)
पयस्(पय)-दूध, जल, बडआदि वृक्षोंका दूध, (न०)	मनस्-चित्त, बुद्धि, (न०)
पायस-देवदारुकी घूप, (पु०) क्षीरान्न (सौर) (न०) ॥ २७ ॥	महस्-उत्सव, तेज (न०) ॥२९॥
	मानस-मन, एक सरोवर, (न०)
	रजस्-स्त्रीका आर्तव, गुण, पुष्पधूलि (न०)
	रजस्(रज)-धूलिमात्र (न०) ३०

हंपं वेगे च रभसमृत्त्वे गुणे रते रहः ।  
 दंष्ट्रायां राक्षसी स्याता राक्षमी राक्षसत्रियाम् ॥ ३१ ॥  
 रेतः शुक्रे रसे रेफाः क्रूरेऽपि कृपणेऽपमे ।  
 रोदश्च रोदसी चैव दिवि मूमौ द्वयोरपि ॥ ३२ ॥  
 लालमस्तु द्वयोन्मृष्णाविष्टे चीत्सुवययाचनयोः ।  
 वपुर्नपुंसकं देहे वपुर्मव्याहृतावपि ॥ ३३ ॥  
 वयन्तु यौवने वाल्यप्रभृतौ विहगे वयाः ।  
 वर्हिस्तु पुंसि दहने वर्हिः पुंसि कुजेऽपि च ॥ ३४ ॥  
 वरासिः म्यादसिश्चेष्टे वरासिः स्थूलग्राटके ।  
 वर्चो दीप्तौ पुरीषे च वर्चो रूपेऽपि न द्वयोः ॥ ३५ ॥  
 श्रीवासे वायसः पुंसि बलिपुष्टेऽपि वायसः ।  
 काहोदुम्बरिकायां च काकमाच्यां च वायसी ॥ ३६ ॥

रभस—हंपं ( आनंद ), वेग ( पुं० )  
 रहस्—तत्त्व, गुण ( गोप्य ), मंथन  
 ( न० )

राक्षसी—डाढ, राक्षसकी स्त्री ( राक्ष-  
 सी ) ( स्त्री० ) ॥ ३१ ॥

रेतस्—वीर्यं, रस ( न० )

रेफस्—क्रूर, कृपण, नीच ( त्रि० )

रोदस्—रोदसी—आकाश, पृथ्वी,  
 ये दोनो एकवार ( आकाशभूमि )  
 ( स्त्री० ) ॥ ३२ ॥

लालस—लालसा—चृष्णाव्यास,  
 उत्सुकता, यात्रा ( पुं० स्त्री० )

वपुस्—शरीर, सुंदर आकृति ( न० )  
 ॥ ३३ ॥

वयस्—यौवन, बालपनआदि अवस्था  
 ( न० )

वयस्—पक्षी ( पुं० )

वर्हिस्—अग्नि, कुशा, ( पुं० ) ॥ ३४ ॥

वरासि—श्रेष्ठतन्त्र, मोटी साडी या  
 धोती ( पुं० )

वर्चस्—दीप्ति, विद्या, रूप, ( न० )  
 ॥ ३५ ॥

वायस—श्रीवास—धूप, ( सरलवृक्षका  
 गोंद ), कोयल—पक्षी ( पुं० )

वायसी—कटुमर, मकोय, ( स्त्री० )  
 ॥ ३६ ॥

वासस्तु वसने ख्यातमोष्ठे दशनपूर्वकम् ।  
 वाहसोऽजगरे वारिनिर्माणे सुनिपण्णके ॥ ३७ ॥  
 विद्वान्धीरात्मवित्प्राज्ञे विलासो हावलीलयोः ।  
 वीतंसो बन्धनोपाये मृगाणां पक्षिणामपि ॥ ३८ ॥  
 तद्विश्वासाय वस्त्रे च वीतंसमपि न द्वयोः ।  
 वीभत्सो नाऽर्जुने हिंसे विकृते सघृणे त्रिपु ॥ ३९ ॥  
 पितामहे बुधे वेधा वेधा दामोदरेऽपि च ।  
 शिरस्तु मस्तके सेनाप्रभागेऽग्रप्रधानयोः ॥ ४० ॥  
 श्रेयस्तु मङ्गले धर्मे श्रेयाऽशस्तेऽभिधेयवत् ।  
 श्रेयसी करिपिप्पल्यामभयाराक्षयोरपि ॥ ४१ ॥  
 श्रीवासो वृकधूपेऽपि श्रीवासो विष्णुपद्मयोः ।  
 स्रोतोऽम्बुलेशे कर्णे च स्रोतो देहशिरास्वपि ॥ ४२ ॥

वासस्-वस्त्र, ( न० )

दशनवासस्-होठ ( न० )

वाहस्-अजगर-सर्प, जलका निकस-  
ना, अच्छीतरह स्थित हुवा ( पुं० )  
॥ ३७ ॥

विद्वस्-धैर्यवान, आत्मवेत्ता, पंडित,  
( पुं० )

विलास-हान, लीला ( पुं० )

वीतंस-मृग और पक्षियोंका बंधन-  
का उपाय, ( पुं० ) ॥ ३८ ॥

वीतंस-मृग और पक्षियोंके विश्वासके-  
लिये वस्त्र ( डरावा ) ( न० )

वीभत्स-अर्जुन ( पुं० ) हिंसाकरने-

वाला, विकारको प्राप्त हुवा, ग्लानि

करनेवाला, ( त्रि० ) ॥ ३९ ॥

वेधस्-ब्रह्मा, पंडित, श्रीकृष्ण ( पुं० )

शिरस्-मस्तक, सेनाका अप्रभाग  
( न० ) आगे होनेवाला, प्रधान  
( त्रि० ) ॥ ४० ॥

श्रेयस्-मंगल, धर्म ( न० )

श्रेयस्-श्रेष्ठ ( त्रि० )

श्रेयसी-गजपीपल, हरड, रायसन  
( स्त्री० ) ॥ ४१ ॥

श्रीवास-सरल रक्षका गोंद, विष्णु,  
कमल ( पु० )

स्रोतस्-जलका लेश ( थोडा जल ),  
कान, शरीरकी नाडी ( न० ) ४२

सह्येऽपि समासः स्यात्समानः स्यात्समर्थने ।  
 द्वन्द्वादौ च समासाख्या सरसोयतटांगयोः ॥ ४३ ॥  
 सहो ज्योतिष्मति बले सहा हेमन्तमार्गयोः ।  
 सारसं पद्मजे क्लीनं सारसः पद्मिचन्द्रयोः ॥ ४४ ॥  
 साहसं तु बलात्कारकरणे साहसं मदे ।  
 सुरसापधिभेदेऽपि हविम्बु वृत्तहव्ययोः ॥ ४५ ॥

सचतुर्थम् ।

अगौकाश्च नगौकाश्च शरमे सिंहपक्षिणोः ।  
 अधिवासस्तु वसतौ संस्कारे धूपनादिभिः ॥ ४६ ॥  
 अवध्वंसस्तु निंदायां परित्यागावचूर्णयोः ।  
 उदाचिः पुंसि दहने उदाचिंस्तूत्रमे त्रिषु ॥ ४७ ॥  
 कनीयाननुजेऽत्यल्पे त्रिषु स्यादतिपूनि वा ।  
 कलहंसस्तु कादम्बे राजहंसे नृपोत्तमे ॥ ४८ ॥

समास—संक्षेप, समर्थन करना, द्वन्द्व

आदि—समास ( पुं० )

सरस—जल, तालाब ( न० ) ॥ ४३ ॥

सहस—ज्योति, अतिबल, ( न० )

सहस—हेमन्त—शुक्र, मार्गशिर—मास  
( पु० )

सारस—कमल ( न० )

सारस—सारस—पक्षी, चंद्रमा ( पुं० )  
॥ ४४ ॥

साहस—जबरदस्ती करनी, मद ( न० )

सुरसा—शौपथिभेद ( तुलसी ),  
( स्त्री० )

हविस्—शुत, देवाग्र ( न० ) ॥ ४५ ॥

सचतुर्थम् ।

अगौकस्—नगौकस्—साबर, सिंह,  
पक्षी ( पुं० )

अधिवास—वसना, धूप देना आदिसे  
संस्कार ( पुं० ) ॥ ४६ ॥

अवध्वंस—निंदा, परित्याग, चूर्ण  
करना ( पुं० )

उदाचिंस्—अग्नि ( पु० )

उदाचिंस्—तीव्र प्रभाववाला ( त्रि० )  
॥ ४७ ॥

कनीयस्—छोटा भ्राता, बहुत थोडा,  
अठियुवा ( जवान ) ( त्रि० )

कलहंस—वक्त्रक, राजहंस ( जिसकी  
बोच और धरण रक्छो ) राजाओंमें  
थेष्ट राजा ( पुं० ) ॥ ४८ ॥

कुम्भीनसो विषज्वालाकुलदृष्टिभुजङ्गमे ।  
 भुजङ्गमेऽप्यथो कुम्भीनसी लवणमातरि ॥ ४९ ॥  
 भवेद्घनरसो नीरे दक्षिणावर्त्तपारदे ।  
 सान्द्रनिर्यासकर्पूरपीलुपर्णीषु मोरटे ॥ ५० ॥  
 चन्द्रहासो दशग्रीवखङ्गे खङ्गे च दृश्यते ।  
 क्लीबं तामरसं ताम्रे काञ्चने जलजेऽपि च ॥ ५१ ॥  
 त्रिस्रोता जाह्नवीनद्योर्दिवौकाश्चातके सुरे ।  
 दीर्घायुः पुंसि मार्त्तण्डकाकशाल्मलिजीवके ॥ ५२ ॥  
 निःश्रेयसं शुभे शुक्ले पुंसि निःश्रेयसो हरे ।  
 नीलाञ्जसाऽप्सरोभेदे नदीभेदे तडित्यपि ॥ ५३ ॥  
 पुनर्वसुःस्त्रियामृक्षे कृष्णे काल्यायने पुमान् ।  
 पौर्णमासी तु पौर्णम्यां पौर्णमासः क्रतौ नरि ॥ ५४ ॥

कुम्भीनस-विषज्वालासे आकुल दृष्टि-

वाला सर्प, सर्प, ( पुं० )

कुम्भीनसी-लवणासुरकी माता(स्त्री०)

॥ ४९ ॥

घनरस-जल, दक्षिणावर्त पारा, स-

घन, गौद, कपूर, सुरनहार, क्षीर-

मोरट, ( पुं० ) ॥ ५० ॥

चन्द्रहास-रावणका खङ्ग, खङ्गमात्र,

( पुं० )

तामरस-तौबा, सुवर्ण, कमल,(न०)

॥ ५१ ॥

त्रिस्रोता-गंगा, नदी, ( स्त्री० )

दिवौकस्-पपीहा-पक्षी, देवता(पुं०)

दीर्घायुस्-सूर्य, काग-पक्षी, शाल्म-

लि ( साल ) वृक्ष, जीवक औषधि

( त्रि० ) ॥ ५२ ॥

निःश्रेयस-शुभ ( न० ) शुक्ल (ख-

च्छ), महादेव ( पुं० )

नीलाञ्जसा-अप्सरोभेद, नदीभेद,

विजली ( स्त्री० ) ॥ ५३ ॥

पुनर्वसु-पुनर्वसु-नक्षत्र ( स्त्री० )

कृष्ण, काल्यायन- मुनि ( पुं० )

पौर्णमासी-पूर्णिमा तिथि, ( स्त्री० )

पौर्णमास-व्रत ( पुं० ) ॥ ५४ ॥

प्रचेताः पुंसि वरुणे मुनौ हृष्टे तु वाच्यवत् ।  
 योगे वरीयाञ् श्रेष्ठे च वरिष्ठे युवते त्रिषु ॥ ५५ ॥  
 मता मधुरस्ता सूर्वा द्राक्षादुग्धिकयोरपि ।  
 म्लाने मलीमसो लोहपुष्पकाशीशयोः पुमान् ॥ ५६ ॥  
 महारसस्तु खजूरे कोशफारे कसेरुणि ।  
 राजहंसस्तु कादम्बे कलहंसे नृपोत्तमे ॥ ५७ ॥  
 रासेरसस्तु रासे स्याद्रससिद्धिवलावपि ।  
 विभावसुर्वृहद्भानौ भानौ हारान्तरेऽपि च ॥ ५८ ॥  
 विभावसुः स्याद्गन्धर्वभेदे पुंसि निशि स्त्रियाम् ।  
 विहायाः पुंसि विहगे विहायः सुरवर्त्मनि ॥ ५९ ॥  
 श्वःश्रेयसं तु कल्याणे परानन्दे च शर्मणि ।  
 सप्तार्चिर्द्दहेनेऽपि स्यात्सप्तार्चिः क्रूरलोचने ॥ ६० ॥

प्रचेतस्-वरुण, मुनि, ( पुं० ) प्रस-  
 म् ( त्रि० )

वरीयस्-वरीयान्-योग, श्रेष्ठ, अति-  
 श्रेष्ठ, जवान ( त्रि० ) ॥ ५५ ॥

मधुरस्ता-मठोरफली, दाख, दधी  
 ( स्त्री० )

मलीमस-मलिन, लोहा, पुष्पकसीस  
 ( पुं० ) ॥ ५६ ॥

महारस-खजूर, ऊस ( इंद्र ), कसे-  
 रु ( पुं० )

राजहंस-वतक, कलहंस, राजाओं-  
 में श्रेष्ठ ( पुं० ) ॥ ५७ ॥

रासेरस-रास ( बहुतोंका नृत्य ),  
 रससिद्धिकेलिये बलि ( पुं० )

विभावसु-अग्नि, सूर्य, हारभेद,  
 ॥ ५८ ॥

गन्धर्वभेद ( पुं० ) रात्रि ( स्त्री० )

विहायस्-पक्षी ( पुं० )

विहायस्-आकाश, ( न० ) ॥ ५९ ॥

श्वःश्रेयस-कल्याण, परम आनन्द,  
 सुख ( न० )

सप्तार्चिस्-अग्नि, ( पुं० ) क्रूर नेत्र-  
 वाला, ( त्रि० ) ॥ ६० ॥

समञ्जसः स्यादुचितेऽप्यभ्यस्तेऽपि समञ्जसः ।  
 मतः सर्वरसो वीणाप्रभेदे धूनके पुमान् ॥ ६१ ॥  
 साधीयानतिसाधौ स्यादतिवादेऽपि वाच्यवत् ।  
 भवेत्सिद्धरसो व्याडिप्रभृतौ च रसेऽपि च ॥ ६२ ॥  
 सुमनाः पुष्पमालयोः स्त्रियां धीरे सुरे पुमान् ।  
 सुमेधास्तु स्त्रियां ज्योतिष्मत्यां दिव्यमतौ त्रिषु ॥ ६३ ॥  
 सपञ्चमम् ।

दिव्यचक्षुः पुमानन्धे सुगन्धेऽपि सुलोचने ।  
 सान्नभश्चमसश्चित्रापूपे चन्द्रेन्द्रजालयोः ॥ ६४ ॥  
 हिङ्गुनिर्यासशब्दोऽयं निम्बे हिङ्गुरसे पुमान् ।  
 सपष्टम् ।

हिरण्यरेताः सप्तार्चिःसप्तपण्योः पुमानयम् ॥ ६५ ॥  
 इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्या सान्तवर्गः ॥

समंजस-उचित, अभ्यास किया हुआ  
 ( त्रि० )  
 सर्वरस-वीणाभेद, धुननेवाला, (पुं०)  
 ॥ ६१ ॥  
 साधीयस्-अत्यंत साधु, अतिवाद  
 ( त्रि० )  
 सिद्धरस-व्याडि आदि, रस, (पुं०)  
 ॥ ६२ ॥  
 सुमनस्-पुष्प, मालती, ( स्त्री० )  
 धीर, देवता ( पुं० )  
 सुमेधस्-मालकाँगनी, ( स्त्री० ) श्रेष्ठ  
 बुद्धिवाला ( त्रि० ) ॥ ६३ ॥

सपञ्चम ।  
 दिव्यचक्षुस्-अन्धा, सुगंध, सुंदर  
 नेत्रोंवाला ( पुं० )  
 नभश्चमस-.....चंद्रमा, इंद्रजाल  
 ( पुं० ) ६४ ॥  
 हिङ्गुनिर्यास-नींब, हींगका रस(पुं०)  
 सपष्ट ।  
 हिरण्यरेतस्-अग्नि, लज्जावती औं-  
 पधि ( पुं० ) ॥ ६५ ॥  
 इसप्रकार विश्वलोचनकी भाषा  
 टीकामें सान्तवर्ग समाप्त हुआ ॥

## अथ हान्तवर्गः ।

ह्रस्वम् ।

सरोपवारणे हीरे हः स्यादीशारमजे तु हिः ।

ह्रद्वितीयम् ।

अहिर्दृत्राऽसुरे सर्पे स्यादीहा तूघमेच्छयोः ॥ १ ॥

नष्टेन्दुकलादर्गेपि पिकालापे म्रियां कुहूः ।

गह्वरे सिंहपुष्पां च गुहा स्कन्दे गुहः पुमान् ॥ २ ॥

गृहाः पुंसि गृहे पत्न्यां ग्राहो जलचरे पुमान् ।

ग्रहः सूर्यादिनिर्वन्धोपरागेषु रणोद्यमे ॥ ३ ॥

ग्रहणे पूतनादौ च सैहिकेयेऽप्यनुग्रहे ।

नाहस्तु बन्धने कूटेऽप्युपाद्वैरानुबन्धने ॥ ४ ॥

ग्राहो निपुणतर्केऽपि ग्राहो हस्त्याग्निपर्यणोः ।

बहुः स्याद्भ्यादिसंख्यासु बहुः स्याद्विपुलेऽन्यवत् ॥ ५ ॥

अथ हान्तवर्गः ।

ह्रस्वम् ।

ह्र-क्रोधवालेका नियारण करना, हीरा ( पुं० )

हि-शिवपुत्र ( पुं० )

ह्रद्वितीयम् ।

अहि-दृत्राऽसुर, सर्प, ( पुं० )

ईहा-उद्यम, बाँछा ( स्त्री० ) ॥ १ ॥

कुहू-नष्ट इंदुकलावाली अमावास्या, कोयलका शब्द ( स्त्री० )

गुहा-पर्वतकी गुहा, पिठवन या म-पवन भीषधि, ( स्त्री० )

गुह-स्वामिकार्तिक ( पुं० ) ॥ २ ॥

गृह-घर, छो ( पुं० बहु० )

ग्राह-ग्रहण करना, जलचर (ग्राहमा-दि) ( पुं० )

ग्रह-भूयंआदि ग्रह, दृठ, सूर्यचंद्रका ग्रहण, रणका उद्यम ॥ ३ ॥ ग्रहण करना, पूतना आदि बालग्रह, राहु, अनुग्रह ( पु० )

नाह-बंधन, लोहा कूटनेका घन(पुं०)

उपनाह-बैर, अनुबंधन, ( बीणाके तार बाधनेकी खैटी ) ( पुं० ) ५

ग्राहो-निपुण, तर्क, हस्तीका चरण, पर्य ( बोरी ) ( पु० )

बहु-तीन आदि संख्या, बहुत (त्रि०)

॥ ५ ॥



हृत्तीयम् । ] भापाटीकासमेतः ।

वाहावाहौ ह्ये वाहौ वाहः स्याद्रूपमानयोः ।  
 मही क्षितौ च नद्या च मह उत्सवतेजसोः ॥ ६ ॥  
 मोहो मूढत्वमात्रेऽपि स्यादहम्मतिमूर्च्छयोः ।  
 लोहस्तु शस्त्रे लोहं तु जोङ्गके सर्वतैजसे ॥ ७ ॥  
 बर्ह मयूरपिच्छेऽपि दलेऽपि स्यान्नपुसकम् ।  
 वहो गन्धवहे स्कन्धदेशे स्याद्रूपमस्य च ॥ ८ ॥  
 व्यूहस्तु बलविन्यासे वृन्दे निर्माणतर्कयोः ।  
 सहो बले च भूम्या तु मुद्रपण्यां नखौपधे ॥ ९ ॥  
 सहदेवाकुमार्योश्च सहः क्षान्तियुते त्रिषु ।  
 सिंहः कण्ठीरवे राशिभेदे श्रेष्ठे परस्थित ॥ १० ॥  
 सिंही बृहत्या वार्त्ताकौ राहुमातरि वासके ।

हृत्तीयम् ।

आरोहस्तु नितम्बे स्याद्दीर्घत्वे च समुच्चये ॥ ११ ॥

वाहा, वाह-अश्व, भुजा (स्त्री० पु०)

वाह-बैल, प्रमाणभेद ( १२८ सेर )  
( पु० )

मही-पृथ्वी, नदी ( स्त्री० )

मह-उत्साह, तेज ( पु० ) ॥ ६ ॥

मोह-मूढतामान, अभिमान, मूछा  
( पु० )

लोह-शस्त्र ( पु० )

लोह-अगर, सपूर्ण धातु ( न० )  
॥ ७ ॥

बर्ह-मोरपख, दल ( पत्ता ) ( न० )

वह-वायु, बैलका कथा ( पु० )  
॥ ८ ॥

व्यूह-सेनारचना, समूह, रचना, तर्क  
( पु० )

सह-बल ( पु० न० )

सहा-पृथ्वी, मुगवन, नख ॥ ९ ॥  
सहदेव, गुवारपाठा, ( स्त्री० )

सह-क्षमावान् ( त्रि० )

सिंह-शेर, राशिभेद, शब्दके आगे  
जुड़ा-श्रेष्ठ, ( जैसे पुरपसिंह ) ( पु० )

॥ १० ॥

सिंही-कटेहली, बैंगन, राहु ग्रहकी  
माता, बाँसा ( स्त्री० )

हृत्तीय ।

आरोह-नितम्ब ( चूतक ), ल्वादे,  
उँचादे, ॥ ११ ॥

अवरोहे हस्तिपके मानारोहणयोरपि ।

उत्साहस्तूद्यमे सूत्रतन्तावपि पुमानयम् ॥ १२ ॥

कटाहो घृततैलादिपाकामत्रेऽपि कर्परे ।

दीपेऽपि कूर्मपृष्ठेऽपि कटाहो महिषीशिशौ ॥ १३ ॥

कलहो मण्डने युद्धे खड्गकोपे वराटके ।

दात्यूहः कालकण्ठेऽपि तथा वन्दिविहङ्गमे ॥ १४ ॥

नवाहो नूतनदिने नवाहः प्रतिपत्तिथौ ।

निग्रहो भर्त्सने वन्द्ये मर्यादायां च निग्रहः ॥ १५ ॥

निर्यूहो द्वारि निर्यासे शिखरे नागदन्तके ।

निरूहो वस्तिभेदे स्यात्तर्कनिश्चितयोरपि ॥ १६ ॥

पटहस्तु समारम्भे न स्त्री पटहमानके ।

प्रग्रहस्तु तुलासूत्रे वन्द्ये च नियमे भुजे ॥ १७ ॥

उतारना, फीलवान, प्रमाण-भेद,  
चढना ( पु० )

उत्साह-उद्यम, सूत्रतन्तु, ( पु० )  
॥ १२ ॥

कटाह-घृत तेल आदिमें पाक करनेका  
पात्र, पटआदिका खप्पर, क्षीप,  
कछुवाकी पीठ, भैसका छोटा बच्चा  
( पु० ) ॥ १३ ॥

कलह-बहुत बोलना, युद्ध, खड्गको-  
ल, कौश, ( पुं० )

दात्यूह-जलकाक, पपीहा ( पुं० )  
॥ १४ ॥

नवाह-नवीन दिन, प्रतिपदा तिथि  
( पुं० )

निग्रह-सिद्धकना, बंधन, मर्यादा  
( सीमा ) ( पुं० ) ॥ १५ ॥

निर्यूह-दरवाजा, वृक्षका गोंद आदि,  
शिखर, हार्थीदांत ( पुं० )

निरूह-वस्तिभेद, तर्क, निश्चित ( पुं० )  
॥ १६ ॥

पटह-समारंभ ( आरंभ ) ( पुं० )  
( पुं० न० )

प्रग्रह-तराजूका सूत्र, ( चोटिया )  
बंधन, नियम, भुजा ॥ १७ ॥

रश्मौ ह्यादिरश्मौ च बन्धां स्वर्णालुनीपयोः ।  
 प्रग्राहस्तु तुलासूत्रे वर्षादिप्रग्रहेऽपि च ॥ १८ ॥  
 प्रवाहो जलवेगे स्यात्पारंपर्यानुवर्त्तने ।  
 वराहः किरिमुस्ताद्रिविष्णुमेघेषु मानके ॥ १९ ॥  
 वाराही मातृकाबुद्धदेव्योर्गृष्ट्याख्यमेपजे ।  
 कायसङ्घामविस्तारप्रविभागेषु विग्रहः ॥ २० ॥  
 विग्रहः स्यात्समासेऽपि विदेहो मिथिले पुमान् ।  
 विदेहा मिथिलाया स्याद्देहशून्येऽपि वाच्यवत् ॥ २१ ॥  
 वैदेही रोचनासीतावणिग्योपित्सु पिप्पलौ ।  
 सङ्ग्रहो बृहद्युत्तुङ्गे मुष्टौ सङ्ग्रहणेऽपि च ॥ २२ ॥  
 सुवहस्तु सुवाते स्यात्पुसि सम्यग्बहे त्रिषु ।  
 एलापण्यां तु सुवहा सल्लकीरालयोरपि ॥ २३ ॥

किरण, अश्वआदकी रस्ती, बदी,  
 अमलतास-वृक्ष, कदव-वृक्ष (पु०)  
 प्रग्राह-तराजूका सूत्र ( चोटिया ),  
 वर्षा आदिका रुकना ( पु० ) १८  
 प्रवाह-जलवेग, परपरतासे अनुव-  
 र्तन ( पु० )  
 वराह-सूकर, नागरमोथा, पर्वत,  
 विष्णु, मेघ, मान ( प्रमाण ) भेद  
 ( पुं० ) ॥ १९ ॥  
 वाराही-मातृका, ( देवी ), बुद्ध  
 भगवानकी देवी, वाराही कद-औ-  
 पधि ( स्त्री० )

विग्रह-शरीर, समाम, ( युद्ध ), वि-  
 स्तार, विभाग, ॥ २० ॥ पदोंका  
 समास ( पु० )  
 विदेह-मिथिल-देश, ( पु० )  
 विदेहा-मिथिलापुरी, ( स्त्री० )  
 विदेह-शरीररहित ( त्रि० ) ॥ २१ ॥  
 वैदेही-गोरोचन, सीता, बणिककी  
 स्त्री, पीपल ( स्त्री० )  
 सङ्ग्रह-बडा, ऊँचा, खजकी मूँटि,  
 पकड़ना ( पु० ) ॥ २२ ॥  
 सुवह-श्रेष्ठ वायु, ( पु० ) अच्छी त-  
 रह चलनेवाला, ( त्रि० )  
 सुवहा-रायसल ॥ २३ ॥

सुवहा वल्लकीहंसपदीशेफालिकासु च ।

हचतुर्थम् ।

अभिग्रहोऽभिग्रहणेऽप्यभियोगेऽपि गौरवे ॥ २४ ॥

अवरोहोऽवतरणे मतो मूलाहृतोद्गमे ।

शाखाशिफायां त्रिदिवेऽवग्रहस्तु गजालिके ॥ २५ ॥

वृष्टिरोधे प्रतिबन्धेऽप्यस्नातघ्न्येऽप्यवग्रहः ।

अवग्रहो भवेद्वृष्टिरोधहस्तिललाटयोः ॥ २६ ॥

अश्वारोहाऽधगन्धायामश्वारोहोऽश्वारके ।

पुमानुपग्रहो बन्धायुपयोगेऽनुकूलने ॥ २७ ॥

उपनाहस्तु वीणायां बन्धने म्रणलेपने ।

नासिकायां गन्धवहा वाते गन्धवहः पुमान् ॥ २८ ॥

तनूरुहं तु गरुति स्याल्लोमि च तनूरुहम् ।

तमोपहो जिने सूर्ये दहने मृगलक्ष्मणि ॥ २९ ॥

साल वृक्ष, नागदमनी,.....लाल

रंगका लज्जाल, निर्गुडी ( स्त्री० )

हचतुर्थम् ।

अभिग्रह-चोरीकरना, लहार्इमें पुका-  
रना आदि, गौरव ( बडप्पन )  
( पु० ) ॥ २४ ॥

अवरोह-उतरना, वृक्षकी जड़से  
बेलका ऊपरकी चटना, शाखाकी  
जड़, स्वर्ग ( पुं० )

अवग्रह-हस्तीका ललाट ॥ २५ ॥  
वर्षाका रुकना, प्रतिबंध, पराधी-  
नता ( पुं० )

अवग्रह-वृष्टिका रुकना, हस्तीका

ललाट ( पुं० ) ॥ २६ ॥

अश्वारोहा-आसगध-औषधि(स्त्री०)

अश्वारोह-धोड़ेका सवार ( पुं० )

उपग्रह-बन्दी ( कैदखाना ), उप-  
योग, अनुकूलता ( पु० ) ॥ २७ ॥

उपनाह-वीणाका बधन ( जहाँ तार  
बाधेजावे ), म्रणलेप ( पुं० )

गंधवहा-नासिका, ( स्त्री० ) गंधवह  
वायु ( पुं० ) ॥ २८ ॥

तनूरुह-पक्षीका पंख, लोम ( रोम )  
( न० )

तमोपह-जिनदेव, सूर्य, अग्नि,  
चंद्रमा ( पुं० ) ॥ २९ ॥

सूतो देवसहो देवसहा दण्डोत्पलौषधौ ।

परिग्रहः परिजने पत्न्यां स्वीकारशापयोः ॥ ३० ॥

मूलेऽपि परिवर्हस्तु राजयोग्ये परिच्छदे ।

परीवाहो जलोच्छ्वासे भूपालोचितवस्तुनि ॥ ३१ ॥

पितामहः पितुस्त्राते ब्रह्मण्यपि पितामहः ।

प्रतिग्रहः स्वीकरणे सैन्यपृष्ठे ग्रहान्तरे ॥ ३२ ॥

महद्भ्यो विधिवद्देये तद्गृहे च पतद्गृहे ।

घरारोहा कटौ नार्यां पुंसि साधवरोद्भवोः ॥ ३३ ॥

महासहा मासपर्ण्यामम्लानेऽपि महासहाः ।

हपञ्चमम् ।

पितामहेऽपि तातस्य विधौ च प्रपितामहः ॥ ३४ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुष्ठावत्या हान्तवर्गः ॥

देवसह-मून (सारथि), देवसहा-  
वृधाविशेष दानिकुनिदाक ( वग  
भाषा ) ( स्त्री० )

परिग्रह-परिजन ( परिवार ), पत्नी,  
अंगीकार, शाप ॥ ३० ॥

मूल, ( जड़ ) ( पुं० )

परिवर्ह-राजाके योग्य द्रव्य, उपस्कर,  
( पु० )

परीवाह-अलनिकसनेका भाग,  
राजाके योग्य वस्तु, ( पुं० ) ॥ ३१ ॥

पितामह-पिताका पिता ( दादा ),  
मदा, ( पु० )

प्रतिग्रह-अंगीकार करना, सेनाकी

पीठ, ग्रहभेद ॥ ३२ ॥ बर्होको  
विधिपूर्वक देनेयोग्य द्रव्य, उसी  
द्रव्यका विधिपूर्वक ग्रहणकरना,  
पोकदान, ( पुं० )

घरारोहा-कटि ( कमर ) स्त्री, ( स्त्री० )

घरारोह-पोकेका श्रवण, चटना,  
( पुं० ) ॥ ३३ ॥

महासह-भाषर्षणी, कर्दवा, ( स्त्री० )  
हपञ्चम ।

प्रपितामह-पिताका पितामह ( पर-  
दादा ), मदा, ( पुं० ) ॥ ३४ ॥

इस प्रकार विश्वलोचनमें हान्तवर्ग  
समाप्त हुआ ॥

क्षेपम् ।

राक्षसे क्षेत्रमात्रेऽपि क्षकारः परिकीर्तितः ।

क्षद्वितीयम् ।

अक्षस्तु पाशके चके शकटे च विभीतके ॥ १ ॥

आचारे व्यवहारे च सुहृदावात्मजकर्षयोः ।

अक्षं स्यादिन्द्रिये क्लीबं तुल्ये सौवर्चलेऽपि च ॥ २ ॥

ऋक्षस्तु पुंसि भल्लूके शोणके कृतवेधने ।

ऋषिभेदेऽद्रिभेदे च तारायामृक्षमस्त्रियाम् ॥ ३ ॥

कक्षः सैरिभदोर्मूलकच्छे शुष्कवने तृणे ।

गुल्मिन्यामपि कक्षा तु गृहे काञ्चीप्रकौष्ठयोः ॥ ४ ॥

परिधाने परीधाने पश्चादञ्चलपल्लवे ।

स्पर्द्धोद्धारवरत्रासु गजरज्जौ रथांशके ॥ ५ ॥

रौक्षं गीते त्वन्यवत् स्यादीक्षणे शुचिमनोजयोः ।

दक्षो मुनौ हरवृषे कुक्कुटेऽमौ च धातरि ॥ ६ ॥

दक्षः स्यादक्षिणभुजे प्रगल्भेऽनलसे त्रिषु ।

क्षेपः ।

क्ष-राक्षस, क्षेत्रमात्र, ( पुं० )

क्षद्वितीयः ।

अक्ष-पाशा, चक्र, गाडी, वहैजा,

॥ १ ॥ आचार, व्यवहार, चरहा,

ब्रह्मज्ञानी, २ शोले परिमाण, ( पुं० )

ऋक्ष-इन्द्रिय, नीलाधोया, काला

नमक, ( न० ) ॥ २ ॥

कक्ष-रीछ, सोनापाठा-आपधि, तोरई

या कराहे छिद्र जिसमे बह, ऋषि-

भेद, पर्वतभेद, ( पुं० ) तारा

( न० ) ॥ ३ ॥

कक्ष-भैया, भुजाना मूल ( वाख ),

तून-वृक्ष, सूखा वन, तृण, ( पुं० )

कक्षा-डगोडी, घर, करधनी, ओटा

या चौखट, ॥ ४ ॥ डुपटा, डुपटेवा

पिछला पहा, स्पर्द्धा ( ईर्ष्या ), टका-

रलेना, चर्मरज्जु, हस्तोर्का रज्जु,

रथका भाग ( स्त्री० ) ॥ ५ ॥

रौक्ष-गाना, तीक्ष्ण, पवित्र, सुंदर

( त्रि० )

दक्ष-मुनि, शिवराष्ट्रभ, सुर्गा, अग्नि,

महा, ॥ ६ ॥ दहिनी भुजा, ( पुं० )

प्रगल्भ ( चतुर ), सावधान ( त्रि० )

दक्षः पृथिव्यामाख्याता ध्वाङ्गी ककोलिकौपर्धा ॥ ७ ॥

ध्वाङ्गस्तु वायसे कङ्के गृहे तक्षकमिक्षुके ।

न्यक्षः परशुरामे स्वाव्युक्षः कार्कर्यनिकृष्टयोः ॥ ८ ॥

पक्षः केशात्परो वृन्दे पक्षो मासाद्धैपार्श्वयोः ।

गृहमितौ ग्रहे भृत्ये सख्यौ राजगजे बले ॥ ९ ॥

साध्ये गरुति देहाङ्गे चुहिरन्त्रविरोधयोः ।

न्यायानुसारके प्रेक्षः प्रेक्षा नृत्येक्षणे गतौ ॥ १० ॥

सृक्षस्तु पिप्पले जङ्घद्वारपार्श्वे गृहस्य च ।

द्वीपभेदे गर्दभाण्डे भिक्षुकीतिविशेषयोः ॥ ११ ॥

भिक्षा भृत्यर्थेनासेवास्तपि भिक्षितवम्भुनि ।

मोक्षोऽपवर्गे मृतौ च मोक्षो मुष्करुपादये ॥ १२ ॥

दक्ष-पृथ्वी, ( स्त्री० )

ध्वाङ्गी-ककोल औषधि, ( स्त्री० )

॥ ७ ॥

पक्षाङ्ग-वाग, करुणशी, पर, तक्षक  
सर्प, भिक्षुक ( पुं० )

न्यक्ष-परशुराम ( पुं० ) न्युक्ष-  
संपूर्ण, मिष्ट ( सखाय ) ( मि० )  
॥ ८ ॥

पक्ष-केशात्परो, पक्ष-नदीनाका  
अर्थभाग, शरीरका एक तरफका  
भाग, परकी भीम, ग्रह, भृत्य  
( नौकर ), भिय, राजाका हस्ती,  
॥९॥ सेना, मात्प्य ( न्याय-पक्ष ),

पक्षोरो पत्न, शरीरका -ग, चू-  
हेरा छिद्र, विरोध, ( पुं० )

प्रेक्ष-न्यायके अनुसार चलनेवाला  
( पुं० )

प्रेक्षा-नृत्य देयना, गमन ( स्त्री० )  
॥ १० ॥

सृक्ष-शोषल-वृक्ष, जेपाका ऊपर प-  
रका द्वार तथा पसवाडा, द्वीपभेद,  
पारगपीपल, भिक्षुकीभेद, शैवेभेद,  
( पुं० ) ॥ ११ ॥

भिक्षा-नौकरी, मांगना, भेका, माँगी  
हुई पशु, ( स्त्री० )

मोक्ष-मोक्ष, मृत्यु, मोक्षा-पक्ष, ( पुं० )  
॥ १२ ॥

कुबेरे गुह्यके यक्षो रक्षा रक्षणलाक्षयोः ।

रूक्षो वृक्षान्तरे प्रेमशून्यकर्कशयोस्त्रिषु ॥ १३ ॥

लक्षं न पुंसि सङ्घचायां क्लीबं छद्मशरव्ययोः ।

लक्षं वितस्तौ च क्लीबं वीक्षं दृश्येऽभिधेयवत् ॥ १४ ॥

सन्तृतीयम् ।

अध्यक्षः स्यादधिकृते प्रत्यक्षेऽप्यभिधेयत् ।

आरक्षं रक्षणीयेऽपि शिरोऋर्मणि दन्तिनाम् ॥ १५ ॥

उत्प्रेक्षा तु मता काव्याऽलङ्काराऽनवधानयोः ।

गवाक्षी त्विन्द्रवारुण्या पुंसि जालकक्रीशयोः ॥ १६ ॥

गोरक्षो नागरङ्गे स्याद्गवा च परिरक्षके ।

मृगाक्षी मृगनेत्रायामिन्द्रवारुणिकामिनोः ? ॥ १७ ॥

रक्ताक्षः सैरिभे क्रूरे पारावतचकोरयोः ।

समीक्षा तत्त्वे बुद्धौ स्याद्ग्रन्थभेदे नभालने ॥ १८ ॥

यक्ष—कुबेर, गुह्यरमान, ( पु० )

रक्षा—रक्षा करना, लाख, ( स्त्री० )

रूक्ष—शून्यभेद ( पु ) प्रेमशून्य, कठोर,  
( त्रि० ) ॥ १३ ॥

लक्ष—लाख—सत्या, ( न० स्त्री० )

लक्ष—कपट ( घहाना ), बाणका नि-  
शाना, बालिस्त, ( न० )

वीक्ष—देखनेयोग्य, ( त्रि० ) ॥ १४ ॥

क्षतृतीय ।

अध्यक्ष—अधिकार कियाहुवा, प्रत्यक्ष,  
( त्रि० )

आरक्ष—रक्षा करनेके योग्य, इस्ति-  
योका कुंभस्थल, ( त्रि० ) ॥ १५ ॥

उत्प्रेक्षा—काव्यका अलंकारभेद, विस्म-  
रण, ( स्त्री० )

गवाक्षी—गहूँभेकी बेल, ( स्त्री० )

गवाक्ष—सरोखा, बंदर, ( पुं० ) ॥ १६ ॥

गोरक्ष—नारगी, गौबोंकी रक्षा करने-  
वाला, ( पुं० )

मृगाक्षी—मृग सदृशनेत्रोंवाली, स्त्री,  
गहूँभेकी बेल, सधिनो, ( स्त्री० ) ॥ १७ ॥

रक्ताक्ष—भैंसा, क्रूर—मनुष्य, कटूतर,  
चकोर, ( पुं० )

समीक्षा—तत्त्व, बुद्धि, ग्रंथभेद, दर्शन  
( देखना ), ( स्त्री० ) ॥ १८ ॥



क्षचतुर्थम् ।

देववृक्षः सप्तपर्णे मन्दारादिषु गुग्गुले ।  
 वीरवृक्षस्तु भद्रातपादपे ककुभद्रुमे ॥ १० ॥  
 भूतवृक्षस्तु शाखोटयक्षशयोनाकपादपे ।  
 विख्यातो राजवृक्षस्तु सुवर्णालुपियाज्योः ॥ २० ॥  
 विशालाक्षो हरे ताक्ष्ये विशालाक्षी वरस्त्रियान् ।  
 सकटाक्षो धवद्रौ स्यात्कटाक्षसहिते त्रिषु ॥ २१ ॥  
 अणादितव्यादिगुणादियोगात्पदं बहुव्रीहिसत्त्वं च वीक्ष्य ।  
 अनुक्तलिङ्गं च समूहनीयं कृतं यदि क्वापि बहुत्वभीतोः ॥ २२ ॥

इति विश्वलोचनेऽपराभिधानायां मुपनादम्ब्यां क्षकारान्तपर्यायां ॥

क्षचतुर्थम् ।

सकटाक्ष-धव-वृक्ष, ( पुं० )

देववृक्ष-सातवण-वृक्ष, मन्दार इति  
 देववृक्ष, गुग्गुल, ( पुं० )

कटाक्षगदित, ( नि० ) ॥ ११ ॥

वीरवृक्ष-मिलावा-वृक्ष, कंद-वृक्ष,  
 ( पुं० ) ॥ १९ ॥

श्रीधरनेमशी पाहते हैं-

भूतवृक्ष-सहोरा-वृक्ष, इट-वृक्ष, गो-  
 नापाठा वृक्ष, ( पुं० )

अथादि-तव्यादि-अरण्य श्रीसुणारिषे.

राजवृक्ष-सुवर्ण-वृक्ष, विरांती-  
 वृक्ष ( पुं० ) ॥ २० ॥

योगे बहुव्रीहिके मतनी वैरावत

विशालाक्ष-महादेव, मद्र, ( पुं० )

वही मीने त्रिग मही कहाई मद्र

विशालाक्षी-सुंमनेद्रोंशायी श्री,  
 ( स्त्री० ) ( नि० )

जावनेना वशों कि प्रीथ बहुत बहु-

जाता ॥ २१ ॥

इत प्रकार विश्वलोचने अपराभिधाने

गुणावलीमें शकारान्तपर्याय

गणाम दृष्टा ॥

अभाव्यानि ।

अकारादिकमप्येवमिदानीं समनुकमात् ।

नया नानार्थकाण्डेऽस्मिन्विधीयन्तेऽव्ययानि च ॥ १ ॥

अः श्रीऋण्डेऽव्ययं तुल्याभावयोराः पितामहे ।

आ प्रगृह्यः स्मृतौ वाक्येऽत्यल्पेऽव्ययमथाऽव्ययम् ॥ २ ॥

आडीपदर्थेऽभिव्याप्तौ सीमायां धातुयोगजे ।

तन्तापे च प्रकोपे च भवेदाः स्मृतमव्ययम् ॥ ३ ॥

इस्तु कामे पुमान्खेदे रूपोक्तौ चाव्ययं भवेत् ।

ई लक्ष्म्यामव्ययं स्त्री स्याद्दुःखभावनकोपयोः ॥ ४ ॥

उः शिवे नाऽव्ययं तु स्यात्सम्बुद्धौ रोपभाषणे ।

ऊः स्यादनव्ययं रक्षारक्षसू त्रिषु रक्षके ॥ ५ ॥

सूतिक्रियायां सूतौ च वाग्धारम्भे त्वसङ्घचरुम् ।

ऋदेवमातरि स्त्री स्यादव्ययं वाक्यकुत्तयोः ॥ ६ ॥

श्री श्रीधरसेनजी कहते हैं—  
अब इस नानार्थकाण्डमें अनुक्रमसे अकारादिक अव्यय विधान करता हूँ ॥१॥

अथाऽव्ययानि ।

अ-वासुदेव या शिव, ( पु० ) तुल्य, अभाव ( अ० ) ।

आ-ब्रह्मा, ( पु० ) आ-स्मृति, वाक्य, अतिअल्प ( अ० ) ॥ २ ॥

आ( इ )-ईप्त् ( थोडा ) अर्थ, अभिव्याप्ति, सीमा, धातुयोगसे उपपन्न अर्थ, ( अ० )

आः-संताप ( पीडा ), क्रोध, ( कोप ) ( अ० ) ॥ ३ ॥

इ-कामदेव, ( पुं० ) इ-खेद, क्रोधमें धोलना, ( अ० )

ई-लक्ष्मी, ( स्त्री० ) ई-दुःखहोना, कोप ( क्रोध ), ( अव्यय ) ॥ ४ ॥

उ-महादेव, ( पुं० ) उ-संबोधन, क्रोधसे भाषण, ( अ० )

ऊ-रक्षा..... ( त्रि० ) ॥ ५ ॥

ऋ-देवमाता, ( स्त्री० ) ऋ-वाक्य, निंदा, ( अ० ) ॥ ६ ॥

ऋश्च स्त्री देवताम्बायां स्यादेः पुंसि चतुर्भुजे ।  
 स्मृतिसम्बोधनाहानेऽव्ययमैस्तु शिवे पुमान् ॥ ७ ॥  
 अव्ययं त्वै समाख्यातं स्मृत्यामन्नहृत्पु ।  
 ओः पुमान्ब्रह्मणि ख्यातेऽव्ययमामन्नहृद्योः ॥ ८ ॥  
 और्नभस्यव्ययं तु स्यात्सम्बुद्ध्याहानयोर्मसम् ।  
 परब्रह्मण्यनुमतावः स्यादश्च तथाऽव्ययम् ॥ ९ ॥  
 अः पुंसि शङ्करे ख्यातः कादिख्यातमतोव्ययम् ।

क०

कु निन्दायामीपदर्थं किल्विषे वारणेऽपि च ॥ १० ॥

ग०

निर्मर्त्सनेऽपि निन्दायां धिग् मनागल्पमन्दयोः ।  
 अङ्ग सम्बोधने हर्षे पुनरर्थेऽपि दृश्यते ॥ ११ ॥

च०

चः पादपूरणे पक्षान्तरे चापि समुच्चये ।  
 अन्वाचये समाहारेऽप्यन्योन्यार्थेऽवधारणे ॥ १२ ॥

ऋ-देवमाता, ( स्त्री० )

ए-विष्णु, ( पुं० ) ए-स्मृति, संबो-  
 धन, बुलाना, ( अ० )

ऐ-महादेव, ( पुं० ) ॥ ७ ॥ ऐ-  
 स्मृति, संबोधन, बुलाना, ( अ० )

ओ-ब्रह्मा, ( पुं० ) ओ-संबोधन,  
 बुलाना ( अ० ) ॥ ८ ॥

औ-प्रावण-मारु, ( पुं० ) संबोधन,  
 बुलाना ( अ० )

अ-परब्रह्म, अनुमति, ( पुं० अ० ) ॥ ९ ॥

अ-महादेव, ( पुं० ) इत्येके आगे  
 कादि अन्यथ कहुते हि ।

क०

कु-निन्दा, ईप्सु ( योडा ) अर्थ, पाप,  
 निवारणकरना, ( अ० ) ॥ १० ॥

ग०

धिक्-शिडकना, निन्दा ( अ० )

मनाक्-अल्प, मंद, ( अ० )

अंग-संबोधन, हर्ष, पुनः का ( वारवार )  
 अर्थ, ( अ० ) ॥ ११ ॥

च०

च-पादपूरण, पक्षांतर, समुच्चय, ॥ १२ ॥

अन्वाचय, समाहार, अन्योन्य अर्थ,  
 निषय, ( अ० )

किञ्चारम्भेऽपिसाकल्ये वस्तुहेतौ विनिश्चये ।  
तिर्यक्तिरोर्धे च कुले विहगादिष्वनव्ययम् ॥ १३ ॥  
ननुच प्रश्नदुष्टोक्त्योः प्राक् स्यादिग्देशकालतः ।  
प्रागप्रातीतपूर्वेषु प्रभाते चाप्यनन्तरे ॥ १४ ॥  
सम्यग् वाढे प्रशंसायां हिरुग् मध्यविनार्थयोः ।

ञ०

नञभावे निषेधे च तद्विरुद्धतदन्ययोः ॥ १५ ॥  
सादृश्ये चेपदर्थे च स्वरूपार्थेऽप्यतिक्रमे ।

ठ०

सुष्ठु प्रशंसनेऽत्यर्थेऽप्यु शोभानवचयोः ॥ १६ ॥

ण०

अन्तरेण विनामध्यार्थयोः स्यात् त्वति स्तुतौ ।

त०

नितान्ताऽसंप्रतिक्षेपप्रकर्षे लङ्घनेऽप्यति ॥ १७ ॥

किञ्च—आरंभ, सपूर्णता, वस्तुहेतु,  
निश्चय, ( अ० )

तिर्यक्—तिरछापना ( अ० ) कुल,  
पक्षी आदि, ( त्रि० ) ॥ १३ ॥

ननुच—प्रश्न, दुष्ट उक्ति, ( अ० )

प्राक् दिक्—देश—कालसे पूर्व, ( त्रि० )

प्राक्—अगाडी, बदीत हुआ, पूर्व,  
प्रभात, अनन्तर ( अतररहित ),  
( अ० ) ॥ १४ ॥

सम्यक्—रुद्ध, प्रशंसा, ( अ० )

हिरुक्—मध्य, विनार्थ, ( अ० ) ।

ञ०

नञ्—अभाव, निषेध, उससे विरुद्ध,

उससे अन्य ॥ १५ ॥ सादृश्य,  
ईपत् ( थोडा ) अर्थ, स्वरूपार्थ,  
अतिक्रम ( उलंघन ), ( अ० )

ठ०

सुष्ठु—प्रशंसा, अत्यर्थ ( बहुत ), ( अ० )

अप्यु—शोभा, दोपरहित, ( अ० )  
॥ १६ ॥

ण०

अन्तरेण—विनाअर्थ, मध्यअर्थ, ( अ० )

त०

अति—स्तुति, निरंतर, अन्यवाल,  
फेकना, प्रचर्ष, लंघन, ( अ० )  
॥ १७ ॥

अतोऽपदेशे निर्देशे पञ्चम्यन्ते च कारणे ।

अन्ततः शासने पञ्चम्यर्थे सम्भाषणाङ्गयोः ॥ १८ ॥

अस्तु स्यादभ्यनुज्ञानेऽप्यमूयामात्रयोरपि ।

अहोवत् मतं खेदे सम्बुद्धौ चानुकम्पने ॥ १९ ॥

अहोवताद्बुतेऽपि स्यादारादूरसमीपयोः ।

इतस्तु पञ्चम्यर्थे स्यादिते नियमभागयोः ॥ २० ॥

इति हेतौ प्रकारे च प्रकाशाद्यनुरूपयोः ।

इति प्रकरणेऽपि स्यात्समाप्तौ च निदर्शने ॥ २१ ॥

उत्त प्रश्ने वितर्क्येऽप्युतात्यर्थविकल्पयोः ।

किन्तु स्यात्प्रश्नमात्रेऽपि किन्तु कामवितर्कयोः ॥ २२ ॥

किमुताऽतिशये प्रश्ने विकल्पार्थेऽपि कीर्तितः ।

कुतः स्याद्बिहते प्रश्ने पञ्चम्यर्थे कुतः स्मृतम् ॥ २३ ॥

अतः—बहाना, निर्देश ( दिखाना ),  
पञ्चमी विभक्तिवाला कारण, (अ०)

अन्ततः—पञ्चमी विभक्तिवाली शिक्षा,  
समावना, अग, ( अ० ) ॥ १८ ॥

अस्तु—अभ्यनुज्ञान ( ... ), इपां-  
मात्र, ( अ० )

अहोवत्—खेद, सजोषन, दया, ॥ १९ ॥  
अद्भुत, ( अ० )

आरात्(इ)—इ, समीप, ( अ० )

इतः—पञ्चम्यर्थ, इति—नियम, विभाग,  
( अ० ) ॥ २० ॥

इति—हेतु, प्रकार, प्रकाश, अनुरूप,  
प्रकरण,समाप्ति,निदर्शन (दिखाना)

( अ० ) ॥ २१ ॥

उत्त—प्रश्न, वितर्क, अतिअर्थ, विकल्प,  
( अ० )

किन्तु—प्रश्नमात्र, काम इच्छा, (न०)  
वितर्क, ( अ० ) ॥ २२ ॥

किमुत्—अतिशय, प्रश्न, विकल्प,  
( अ० )

कुतः—गोप्य करना, प्रश्न, पञ्चमी-  
अर्थ, ( अ० ) ॥ २३ ॥

ते तवाथं त्वयाथं च मे च मममयार्थयोः ।  
 तु पादपूरणे भेदाऽवधारणसमुच्चये ॥ २४ ॥  
 पक्षान्तरे नियोगे च प्रशंसायां विनिग्रहे ।  
 तत आदौ परिप्रश्ने पञ्चम्यर्थे कथान्तरे ॥ २५ ॥  
 आनन्तर्येऽपि तावत्तु कार्त्तर्ये मानावधारणे ।  
 परिच्छेदे तु पश्चात्तु प्रतीच्यां चरमेऽपि च ॥ २६ ॥  
 पुरस्तात्प्रथमे प्राच्यामग्रतोऽर्थपुरार्थयोः ।  
 प्रति स्यात्प्रतिदाने च प्रति प्रतिनिधावपि ।  
 प्रधाने सम्भवे वीप्सालक्षणादौ प्रयोगतः ॥ २७ ॥  
 मात्रार्थे चाभिमुख्ये च प्रकाशे च स्मृतं प्रति ।  
 वत खेदे कृपानिन्दासन्तोपाऽऽमङ्गणाद्भूते ॥ २८ ॥  
 यतःशब्दस्तु नियमे पञ्चम्यर्थविभागयोः ।

ते—'तव'का अर्थ, और 'मया'का अर्थ,  
 मे—'मम'का अर्थ, त्वर 'मया'का अर्थ,  
 ( अ० )

तु—पादपूरण, भेद, निधय, समुच्चय  
 ( इच्छा करना ), ॥ २४ ॥ पक्षा-  
 तर (अन्यपक्ष), नियोग (जोड़ना),  
 प्रशंसा, पकटना, ( अ० )

ततः—आदि, बारबार पूछना, पंचमीका  
 अर्थ, अन्यकथा, ॥ २५ ॥ आनं-  
 तर्य (अनंतरभाव), ( अ० )

तावत्—सपूर्णभाव, नान (परिमाण)का  
 निधय, परिच्छेद (सामग्री),

पश्चात्—पश्चिमदिशा, अन्तिमसमय,  
 ( अ० ) ॥ २६ ॥

पुरस्तात्—प्रथम, पूर्वदिशा, अग्रत-  
 स्का अर्थ ( आगाडी ), पुराका  
 अर्थ ( पहले ), ( अ० )

प्रति—प्रतिदान ( वापिसदेना ), प्रति-  
 निधि ( बदला ), प्रधान, समव,  
 वीप्सा, व्याप्त होनेकी इच्छा, लक्षणा  
 आदि, ( अ० ) ॥ २७ ॥ मात्रा-  
 अर्थ, आभिमुख्य (संमुख करना),  
 प्रकाश, ( अ० )

वत—खेद, कृपा, निंदा, सन्तोष,  
 आमंत्रण ( संवोधन ), अद्भुत,  
 ( अ० ) ॥ २८ ॥

यत—नियम, पंचमीका अर्थ, विभाग,  
 ( अ० )

यद्वत्प्रश्ने वितर्के च यावन्मानेऽवधारणे ॥ २० ॥

सीम्नि कात्स्न्ये परिच्छेदे शश्वत्पुनःसहार्थयोः ।

स्वित्प्रश्ने च वितर्के च सकृत्सहैकवारयोः ॥ ३० ॥

युक्तार्थे बहुमात्रार्थेप्यधुनार्थेऽपि सम्प्रति ।

प्रत्यक्षवाचकः साक्षात्साक्षात्तुल्यार्थवाचकः ॥ ३१ ॥

स्वस्त्याशीःश्लेमपुण्येषु मते स्वस्ति सुखादिषु ।

हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविपादयोः ॥ ३२ ॥

विवादे शोभनार्थे च हन्तशब्दः प्रयुज्यते ।

थ०

अथाऽथो च शुभे प्रश्ने साकल्यारम्भसंशये ॥ ३३ ॥

अनन्तरेऽप्यन्यथात्वपरार्थवितथार्थयोः ।

तथा सादृश्यनिर्देशनिश्चयेषु समुच्चये ॥ ३४ ॥

यद्वत्-प्रश्न, वितर्क, ( अ० )

यावत्-मान(प्रमाण), निश्चय, ॥२९॥

सीमा, संपूर्णता, परिच्छेद (इयत्ता),

( अ० )

शश्वत्-पुनः अर्थ, सह अर्थ, (अ०)

स्वित्-प्रश्न, वितर्क, ( अ० )

सकृत्-सहअर्थ, एकवारअर्थ (अ०)

॥ ३० ॥

सम्प्रति-युक्तअर्थ,.....अधुनाअर्थ,

( अ० )

साक्षात्-प्रत्यक्ष, तुल्य, ( अ० )

॥ ३१ ॥

स्वस्ति-आशीर्वाद, श्लेम ( कुशल ),  
पुण्य, सुखआदि, ( अ० )

हन्त-हर्ष, दया, वाक्यका आरंभ,

विवाद ( दुःख ), ॥ ३२ ॥ विवाद,

शोभाअर्थ, ( अब्य० )

थ०

अथ-अथो-शुभ, प्रश्न, संपूर्णता,

आरंभ, संदेह ॥ ३३ ॥ अनन्तर,

( अ० )

अन्यथा-अपर अर्थ, वितथ (असत्य-

अर्थ) ( अ० ),

तथा-सादृशभाव, दिखाना, निश्चय,

समुच्चय, (अ०) ॥ ३४ ॥

कारणस्योपपत्तावप्युद्देशप्रतिवाक्ययोः ।

यथाऽनुमाने सादृश्ये निर्देशोद्देशयोरपि ॥ ३५ ॥

कारणस्योपपत्तौ च वृथा तु विधिवर्जिते ।

वृथा निष्कारणे बन्धे सर्वथा हेतु वादयोः ॥ ३६ ॥

उत्प्राधान्ये प्रकाशे च मोक्षबन्धोर्द्वैकर्मसु ।

प्राबल्यलामभावेषु विभागाऽत्वान्त्यशक्तिषु ॥ ३७ ॥

तत्कारणे तदात्वे च हेतुयद्यर्थयोस्तु यत् ।

न०

अनु त्वनुक्रमे हीने पश्चादर्थसहार्थयोः ।

आयामेऽपि समीपार्थे सादृश्ये लक्षणादिषु ॥ ३८ ॥

किञ्चु प्रश्ने वितर्के च ननु प्रश्नावधारणे ।

नन्वनुज्ञावितर्कायमन्त्रेष्वनुनये ननु ॥ ३९ ॥

नाना विनार्थेऽपि मतं नानाऽनेकोभयार्थयोः ।

कारणकी उपपत्ति ( सिद्धि), उद्देश,  
उत्तर, ( अ० )

यथा—अनुमान, सादृश्य, निर्देश,  
उद्देश, ॥ ३५ ॥ कारणकी सिद्धि,  
( अ० )

वृथा—विधिसे वर्जित, निष्कारण,  
निष्फल, ( अ० )

सर्वथा—कारण, वाद, ( अ० ) ॥ ३६ ॥

उत्—प्राधान्य, प्रकाश, मोक्ष, बन्ध,  
ऊर्ध्वकर्म, प्रबलता, लाम, भाव,  
अन्वस्यता, शक्ति ( अ० ) ॥ ३७ ॥

तत्—कारण, तदाह्य अर्थ, ( अ० )

यत्—हेतु ( कारण ), यदिका अर्थ,  
( अ० ) न०

अनु—अनुक्रम, हीन, पश्चात्का अर्थ  
( पीछे ), सहका अर्थ, ( सहित ),  
विस्तार, समीप, सदृशता, लक्ष-  
णादि, ( अ० ) ॥ ३८ ॥

किञ्चु—प्रश्न, तर्केना, ( अ० )

ननु—प्रश्न, निश्चय, आज्ञा, प्रश्न, लाम  
मंत्र ( सलाह ), नम्रता, ( अ० )  
॥ ३९ ॥

नाना—विनाका अर्थ, अनेक, दोओंका  
अर्थ, ( अ० )



निः स्यान्नित्यभृशाश्चर्यविन्यासक्षेपराशिषु ॥ ४० ॥  
 अन्तर्भावेऽप्यधोभावे दर्शने दानकर्मणि  
 बन्धोपरमसामीप्यमोक्षकौशलसंयमे ॥ ४१ ॥  
 निवेशेऽप्यथ नु प्रश्नेऽतीतेऽनुनयवार्थयोः ।  
 स्थाने तु युक्तसादृश्यकारणार्थेषु दृश्यते ॥ ४२ ॥

प०

अप स्यादपकृष्टार्थे वर्जनार्थे विपर्यये ।  
 वियोगे विकृतौ चौर्ये हर्षनिर्देशयोरपि ॥ ४३ ॥  
 अपि सम्भावनाशङ्काप्रश्नगर्हासमुच्चये ।  
 अपि युक्तपदार्थेषु कामकारक्रियास्वपि ॥ ४४ ॥  
 उप हीनेऽधिके व्याप्ति शक्तौ चारम्भपूजयोः ।  
 आचार्यकरणे दाने दाक्षिण्ये व्यत्ययेऽपि च ॥ ४५ ॥  
 तद्योगे दोषकथने मरणार्थोद्यमार्थयोः ।  
 समासन्नेऽपि लिप्सायामुपशब्दः प्रकीर्तितः ॥ ४६ ॥

नि-निल, अत्यत आश्चर्यं, विन्यास,  
 क्षेप, राशि ॥ ४० ॥ अतभाव,  
 अधोभाव, दर्शन, दानकर्म, बंधन,  
 उपराम, समीपता, मोक्ष, कौशल,  
 संयम, ( अ० ) ॥ ४१ ॥  
 नु-निवेश, प्रश्न, अतीत ( वर्दान ),  
 नप्रता, 'वा'का अर्थ  
 स्थाने-युक्त, सादृश्य, कारण अर्थ,  
 ( अ० ) ॥ ४२ ॥

प०

अप-अपकृष्ट, वर्जन, विपर्यय, वियोग,

विकार, चोरी, हर्ष, निर्देश, ( अ० )  
 ॥ ४३ ॥

अपि-युक्तपदार्थं, कामकार, क्रिया,  
 ( अ० ) ॥ ४४ ॥

उप-हीन, अधिक, व्याप्ति, शक्ति,  
 आरम्भ, पूजा, आचार्यकरण,  
 दान, चतुरार्थ, व्यत्यय ( उलट्य ),  
 ( अ० ) ॥ ४५ ॥

द्विसंज्ञा योग, दोषोद्य कथना,  
 मरणा, उद्यम, समीपता, स्वर  
 होनेकी इच्छा, ( अ० ) ॥ ४६ ॥

च०

चशब्द उपमायां स्याद्वरुणे चः पुमानयम् ।

वा स्याद्विकल्पोपमयोरेवार्थेऽपि समुच्चये ॥ ४७ ॥

चै पादपूरणे सम्बोधनेऽप्यनुनये ध्रुवे ॥

भ०

अभीक्ष्णं मूतकथनेऽप्यतिवीप्साऽभिमुख्ययोः ॥ ४८ ॥

अभीक्षणं तु मुहुःशीघ्रप्रकर्षेऽप्यतिसन्तते ।

स्यादभीक्षणं तथा पौनःपुन्यसन्ततयोर्मतम् ॥ ४९ ॥

म०

अमा सहार्थाऽन्तिकयोरमावास्याममा स्त्रियाम् ।

अलं भूषणपर्याप्तिशक्तिवारणनिष्फले ॥ ५० ॥

यत्ने नित्येऽप्यचश्यं स्यादास्मृतावधारणे ।

इदानीं वाक्यभूषायां सम्प्रत्यर्थे च सम्मतम् ॥ ५१ ॥

इं दुःखभावनने क्रोधे प्रत्यक्षे सन्निधावपि ।

च०

च-उपमा, ( अ० ) च-वरुण, ( पुं० )

चा-विकल्प, उपमा, एवका अर्थ,

समुच्चय, ( अ० ) ॥ ४७ ॥

चै-पादपूरण, संबोधन, नप्रता, ध्रुव,

( अ० ) भ०

अभि-इत्यंभूत कथन, अतिवीप्सा

( व्यासहोनेकी इच्छा ), अभि-

मुख्य, ( अ० ) ॥ ४८ ॥

अभीक्षणम्-मुहुस्तु ( बारवार ) अर्थ,

शीघ्र, प्रकर्ष, अतिनिरंतर, बारवार

निरंतर, ( अ० ) ॥ ४९ ॥

म०

अमा-सह अर्थ, समीप अर्थ, अमा-

अमावास्या तिथि, ( स्त्री० )

अलम्-आभूषण, पर्याप्ति ( सामर्थ्य ),

शक्तिनिवारण, निष्फल, ( अ० )

॥ ५० ॥

अचश्यम्-सबप्रकारसे स्मृति, निश्चय,

( अ० )

इदानीम्-वाक्यभूषण, सम्प्रति ( अब )

का अर्थ, ( अ० ) ॥ ५१ ॥

इम्-खोटा खभाव, क्रोध, प्रत्यक्ष,

सन्निधि ( समीपता ), ( अ० )

ॐ प्रश्नेङ्गीकृतौ रोपे ॐ प्रश्ने रोपमापणे ॥ ५२ ॥

एवं प्रकारोपमयोरङ्गीकारेऽवधारणे ।

ओं स्यादनुमती प्रोक्तं प्रणवे चाप्युपक्रमे ॥ ५३ ॥

कं शिरःसुरसनीरेषु कथं प्रश्नप्रदाययोः ।

सम्भ्रमे सम्भवे चाथ कामं त्वनुमती मनन् ॥ ५४ ॥

प्रकामानुगमाऽसूयास्त्वथ किं प्रश्नदृष्टयोः ।

जोषं तु तूष्णीमुन्वयोः प्रश्नप्रदायां च यद्भवे ॥ ५५ ॥

प्राध्वं नर्मेऽनुकूलेऽपि प्रकर्षात्यर्थयोर्भृशम् ।

शं कल्याणे सुखे चाथ स्माऽतीते पादपूरणे ॥ ५८ ॥

सं सङ्गार्थे शोभनार्थे प्रहृष्टार्थसमार्थयोः ।

सामि निन्दार्थयोर्युक्तेऽप्यधुनार्थेऽपि साम्प्रतम् ॥ ५९ ॥

हं रूपोक्तावनुनये हुं स्यात्प्रश्नवितर्कयोः ।

हूं विक्रमे चानुमतौ तज्जनेऽपि कचिन्मतम् ॥ ६० ॥

घ०

अये स्मृतौ विपादे स्यादये सम्भ्रमकोपयोः ।

अयि काकुकुलालापसम्बोधप्रेमभाषिते ॥ ६१ ॥

अयि प्रश्नानुनययोः समयाऽन्तिकमध्ययोः ।

ङ०

अन्तरा तु विनार्थे स्यान्मध्यार्थनिकटार्थयोः ॥ ६२ ॥

प्राध्वम्-नर्म ( टडा ), अनुकूल,  
( अ० )

भृशम्-प्रकर्ष ( उत्कृष्टता ), अत्यत,  
( अ० )

शम्-कल्याण, सुख, ( अ० )

स्म-बदीत होना, श्लोकके चरणही  
पूर्ति, ( अ० ) ॥ ५८ ॥

सम्-संग अर्थ, शोभन ( सुंदर ) अर्थ,  
प्रहृष्ट अर्थ, सम अर्थ, ( अ० )

सामि-निंदा, अर्द्ध, ( अ० )

साम्प्रतम्-युक्तार्थ, अपुना ( अब )  
अर्थ, ( अ० ) ॥ ५९ ॥

हम्-क्रोधसे बोलना, नम्रता, ( अ० )

हूं-प्रश्न, वितर्क, ( अ० )

हम्-पराक्रम, अनुमति ( अ० ) वहीं  
पराक्रम और अनुमतिवाला मनुष्य,  
( त्रि० ) ॥ ६० ॥

घ०

अये-स्मृति, विपाद, सम्भ्रम, कोप,  
( अ० )

अयि-वाकु ( भाषणभेद ), आलाप  
( रागका स्वर ), संबोधन, प्रेमसे भा-  
षण, ॥ ६१ ॥ प्रश्न, नम्रता, ( अ० )

समया-समीप, मध्य, ( अ० )

ङ०

अन्तरा-विना अर्थ, मध्य अर्थ, स-  
मीप अर्थ, ( अ० ) ॥ ६२ ॥

अन्तः प्रान्तार्थमध्यार्थलीकारार्थे तु वर्जने ।  
 उर्युरुरीवदूरी विस्तारेऽङ्गीकृतौ त्रयम् ॥ ६३ ॥  
 दुर्निषेधेऽपि कष्टेऽपि गताद्यर्थाऽप्रकर्षयोः ।  
 निर्निःशेषे निषेधे च क्रान्ताद्यर्थे च निश्चये ॥ ६४ ॥  
 परा गतौ वधे प्रातिलोम्यप्राधान्यधर्षणे ।  
 आभिमुख्ये विमोक्षे च भृशार्थे विक्रमेऽपि च ॥ ६५ ॥  
 परि स्यात्सर्वतोभावे वीप्सायां लक्षणादियु ।  
 आलिङ्गने निरसने व्यापने व्याधिशोकयोः ॥ ६६ ॥  
 पूजोपरमभूपासु दोषाख्यानेऽपि वर्जने ।  
 पुनर्भिदाऽप्रथमयोः पुरा भाविपुराणयोः ॥ ६७ ॥  
 प्रबन्धे निकटेऽतीते स्वः स्वर्गपरलोकयोः ।

ल०

किल त्वरुचौ वार्त्तायां सम्भाव्यानुनयार्थयोः ॥ ६८ ॥

अन्तर्-समीप अर्थ, मध्य अर्थ, अ- गीकार अर्थ, वर्जन अर्थ ( अ० )	परि-चारो तरफ, दो वार, लक्षण आदि, मिलना, दूर करना, व्याधि, शोक, ॥ ६६ ॥ पूजा, उपशम (शांति), आभूषण, दोषकथन, वर्जना ( अ० )
उररी १, उररी २, ऊररी ३, वि- स्तार, अंगीकार, ( अ० ) ॥ ६३ ॥	पुनर्-भेद, दूसरी बार ( अ० )
दुर्-निषेध, कष्ट, गतआदि अर्थ, अप्रकर्ष ( अ० )	पुरा-भावि (होनेवाला), पुराना, ॥ ६७ ॥ प्रबंध, समीप, बंदोब- दुवा ( अ० )
निर्-निःशेष, निषेध, क्रान्तआदि (उत्सर्जनआदि) अर्थ, निश्चय ( अ० ) ॥ ६४ ॥	स्वर्-स्वर्ग, परलोक ( अ० )
परा-गमन, वध, प्रातिलोम्य (उलटा पन), प्राधान्य, धर्षण (तिरस्कार), संभ्रम करना, छुटना, अति अर्थ, पराक्रम ( अ० ) ॥ ६५ ॥	ल० किल-असुवि, बर्ता, हतावग अर्थ, नम्रता अर्थ ( अ० ) ॥ ६८ ॥

खलु स्याद्वाक्यमूपायां खलु वीप्सानिपेययोः ।  
निश्चिते सान्त्वने मौने जिज्ञासादौ खलु स्मृतम् ॥ ६९ ॥

च०

अथ व्याप्तौ परिभवे वियोगालम्बशुद्धिषु ।  
ईषदर्धेऽपि विज्ञानेभ्येवौपम्येऽवधारणे ॥ ७० ॥  
वस्तु युष्माकमित्यर्थे वर्त्तते भेदने तु वि ।  
वि स्यादतीते नानार्थे श्रेष्ठे विस्तु खगे पुमान् ॥ ७१ ॥

प०

उपाऽसङ्गच ससङ्गच च निशान्तनिशयोर्मतम् ।  
दोषा रात्रिमुखे रात्रावत्रानव्ययमप्यसौ ॥ ७२ ॥  
निकषा त्वन्तिके मध्ये रक्षोमातर्यनव्ययम् ।  
विभाषा तु स्त्रिया कापि विकल्पार्थे समुच्चये ॥ ७३ ॥

स०

अग्रतः प्रथमेऽप्रे स्यादङ्गसा तत्त्वतूर्णयोः ।

खलु-वाक्यमूपायां, वीप्सा, (दो वा  
तीन बार कहना), निपेय, निश्चित,  
सान्त्वन, मौन, जाननेकी इच्छा  
आदि (अ०) ॥ ६९ ॥

च०

अथ-व्याप्ति, विरस्कार, वियोग,  
खालम्बन, शुद्धि, ईषत् (धोका)  
अर्थ, जानना (अ०)  
अथ-सदृशता, निषय (अ०) ॥ ७० ॥  
अथ- 'तुम्हारा' यह अर्थ, (अ०)

वदीतहुआ, नाना अर्थ,  
वि-पशी (पुं०) ॥ ७१ ॥

प०

उपा-श्रात काल, रात्रि (अ० क)  
दोषा-साय(सप्या)काल,  
(अ० खी०) ॥ ७२ ॥

निकषा-समीप, मध्य (अ०)  
निकषा-नाइसोकी माता (खी०)  
विभाषा-विकल्प अर्थ, समुच्चय  
कदा) करना (अ० खी०)

स०

अग्रतस  
अ-

( - )

अभितोऽन्तिकसाकल्यसम्मुखोभयतो द्रुते ॥ ७४ ॥  
 तिरोऽन्तर्द्वौ तिर्यगर्थे निस् निश्चयनिषेधयोः ।  
 साकल्यातीतयोश्चाथ नीचैः खैराल्पयोर्भ्रमत् ॥ ७५ ॥  
 पुरोऽग्रे प्रथमे च स्यात्पुरतः प्रथमाग्रयोः ।  
 प्रातर्दिनेऽपि पूर्वेषुः पूर्वेषुर्द्धर्मवासरे ॥ ७६ ॥  
 पूर्वत्रार्थेऽपि पूर्वेषुर्भूयस्तु स्यात्पुनःपुनः ।  
 अनव्ययं प्रमृतार्थे मिथोन्योन्यं मिथो रहः ॥ ७७ ॥  
 प्रादुः स्यात्प्रकटीभावे प्रादुः सम्भाव्यमात्रके ।  
 शनैः शनैश्चरे ख्यातं खैरेऽपि च शनैरिति ॥ ७८ ॥  
 सु पूजायां भृशार्थाऽनुमतिकृच्छ्रसमृद्धिषु ।  
 तत्कालमात्रे सहसा सहसाऽऽकलिकेऽपि च ॥ ७९ ॥

ह०

अहा शोके धिगर्थे च विपादकरुणार्थयोः ।

अभितस्-समीप, सपूर्णता, समुत्,  
 उभयतस् (दोनों तर्फ), शोध  
 - (अ०) ॥ ७४ ॥  
 तिरस्-डक्कना, तिरछा (अ०)  
 निस्-निषय, निषेध, साकल्य (संपू-  
 र्णता), बदीतहुवा (अ०)  
 नीचैस्-नयेच्छता, अल्प (अ०)  
 ॥ ७५ ॥  
 पुरस्-अग्र (आगे), प्रथम, (अ०)  
 पुरतस्-प्रथम, अग्र (अ०)  
 पूर्वेषुस्-प्रातःकाल, धर्मदिन ॥ ७६ ॥  
 पूर्वार्थं (अ०)

भूयस्-बारबार (अ०) भूयस्  
 बहुत (त्रि०)  
 मिथस्-परस्पर, एकांत (अ०) ॥ ७७ ॥  
 प्रादुस्-प्रकटीभाव, संभावनामा  
 (अ०)  
 शनैस्-शनैश्चर, यथेच्छा (पुं० अ०)  
 ॥ ७८ ॥  
 सु-पूजा, अत्यंत, अनुमति, कृ  
 (कष्ट), समृद्धि (अ०)  
 सहसा-तत्कालमात्र, अकस्मात् हे  
 (अ०) ॥ ७९ ॥  
 ह०  
 अहा-शोक, धिगर्थं, विपाद,  
 (अ०)

सब प्रकारके सब जगहके छपे हुए जैन  
ग्रन्थ हमेशाह तयार मिलते हैं। सूचीपत्र  
मंगाकर देखिये।

पता—

श्रीजैनमंथरलाकरकार्यालय

हीरानाग, पो० गिरगाव-पंचवई।

